'मुझे चाँद चाहिये' की भाषा संरचना का शैली तात्त्विक अनुशीलन

बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय, झाँसी की
पी-एच. डी. उपाधि हेतु प्रस्तुत

2002
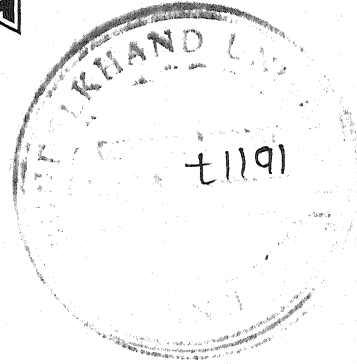
शोध निर्देशक :
डॉ. एन.डी. समाधिया
एम.ए., पी-एच.डी., डी.लिट.
प्राचार्य, दयानन्द वैदिक महाविद्यालय, उरई

शोधकर्त्री :
कु. शची द्विवेदी
एम.ए. (हिन्दी), बी.एड.
एम.एड.

शोध केन्द्र : गाँधी महाविद्यालय, उरई (उ.प्र.)

प्रमाण पत्र

प्रमाणित किया जाता है कि कु. शची द्विवेदी ने ''मुझे चाँद चाहिये'' की भाषा संरचना का शैली तात्त्विक अनुशीलन शीर्षक गवेषणात्मक प्रबन्ध का प्रणयन मेरे निर्देशन में किया है। वे मेरे साथ निर्धारित शोध केन्द्र पर (विशेषकर हिन्दी विभाग में) विश्वविद्यालय शोध परिनियमावली के अन्तर्गत दो सौ दिन उपस्थित रही हैं। प्रस्तुत शोध प्रबन्ध उन्हीं की मौलिक सारस्वत साधना का परिणाम है। इस अनुसंधानात्मक कृति की मौलिकता निर्विवाद है। इस कार्य से सुरेन्द्र वर्मा के बहुचर्चित उपन्यास ''मुझे चाँद चाहिये'' की भाषा संरचना का एक विशिष्ट पक्ष एक प्रदेय के रूप में उद्घाटित होगा। इस ग्रन्थ से इसी प्रकार के शोध कार्य की प्रेरणा भी मिल सकती है।

मैं एक निर्देशक के रूप में कु. शची द्विवेदी के उज्ज्वल भविष्य की कामना करता हुआ इस शोध प्रबन्ध के परीक्षण और मूल्यांकन के लिये विश्वविद्यालय में प्रस्तुत करने की सहर्ष अनुमति देता हूँ।

दिनांक ......जनवरी 2002..........

(डॉ. एन. डी. समाधिया)

डी. लिट्.

प्राचार्य, दयानन्द वैदिक कॉलेज, उरई

आभार

शैली विज्ञान सर्जनात्मक साहित्य के अनुशीलन की दृष्टि से एक मान्य समीक्षात्मक प्रविधि स्वीकृत हो चुकी है। इस दृष्टि से किसी भी सर्जनात्मक कृति अथवा एक ही लेखक की समस्त कृतियों की विवेचना की जा सकती है। भारतीय काव्यशास्त्र में कलापक्ष के अन्तर्गत शैली तात्विक अध्ययन को समेट दिया जाता था। प्रस्तुत रूप में शैली विज्ञान भाषा वैज्ञानिक अध्ययन की यूरोप से आगत एक प्रणाली है। इस प्रविधि के आधार पर सर्जनात्मक कृतियों विशेषकर काव्यकृतियों की भाषा संरचना का अध्ययन प्रस्तुत किया जाने लगा। इसमें कोई सन्देह नहीं कि शैली वैज्ञानिक दृष्टि से भाषा–संरचना को आधार बनाकर किसी सर्जनात्मक कृति की शैली के कई सूक्ष्म तत्वों का उद्‌घाटन किया जा सकता है। अगर सूक्ष्म ब्योरों में जाया जाये तो शैली वैज्ञानिक अध्ययन अत्यन्त जटिल और सूक्ष्म शास्त्र से सम्बन्ध रखता है और इस शास्त्र के अनेक पक्षों पर यूरोप के भाषा वैज्ञानिकों ने पर्याप्त प्रकाश डाला है। जिन दिनों 'मुझे चाँद चाहिये' उपन्यास का प्रकाशन हुआ और इसे साहित्य अकादमी पुरस्कार के लिये चुना गया उस समय मैं अपने अध्ययन में लीन थी। पर, पत्र–पत्रिकाओं में हुई चर्चा ने मेरा ध्यान इस उपन्यास की ओर खींचा। उसके पश्चात मेरे शोध प्रबन्ध के निर्देशक डॉ. एन. डी. समाधिया ने जब इस उपन्यास की भाषा–संरचना को केन्द्र बनाकर इसके शैली तात्विक अनुशीलन को ही मेरे शोध का विषय अनुमोदित किया तो मैं चमत्कृत रह गयी। क्योंकि इस उपन्यास की भाषा–संरचना की हिन्दी समीक्षा में उन दिनों खूब चर्चा थी।

अनुसंधान का प्रारम्भ करना बहुत सरल है पर उसे निभाना, अध्ययन–अनुशीलन के दौरान आने वाली बाधाओं का अतिक्रम करना बहुत कठिन है। मैं जैसे–जैसे अपने विषय का अनुशीलन करती गयी, वैसे–वैसे विषय की सूक्ष्मता, जटिलता मेरे सामने उजागर होती गयी। यह अनुशीलन एक ही कृति–केन्द्रित होने के कारण स्वभाव से ही गहराई लिये हुये है। इसमें केन्द्र का ही विस्तार है, विस्तार से केन्द्र को थहाना और केन्द्र से विस्तार में फैलना दोनों ही अत्यन्त कठिन किन्तु दुस्साध्य कार्य हैं। पर मेरे सहृदय निर्देशक डॉ. समाधिया ने शोध कार्य को आगे बढ़ाने, अध्ययन की गुत्थियाँ सुलझाने, सदा अपना अहेतुक मार्गदर्शन देने की जो उदारता दिखाई उसके फलस्वरूप मैं अपना कार्य आज परिणति पर पहुँचा सकी हूँ।

मेरा शोध प्रबन्ध उपसंहार को समेटते हुये छह प्रकरणों में विभाजित है। विषय प्रवेश के अन्तर्गत मैंने कथा भाषा की अवधारणा व उसके स्वरूप को स्पष्ट करने का प्रयास किया है। इसमें हिन्दी उपन्यास के बदलते रूप और भाषा के बहुस्तरीय प्रयोगों पर भी दृष्टिनिक्षेप किया गया है। लेखक की रचना दृष्टि और उसकी भाषा सम्बन्धी दृष्टि का संकेत करने के बाद शैली विज्ञान के स्वरूप और प्रकारों पर प्रकाश डाला गया है। इसी प्रकरण में अपने अनुशीलन की दिशा और सीमाओं का भी निर्धारण कर लिया गया है। फिर उन्हीं सीमाओं में अपने प्रतिपाद्य विषय का शैली तात्विक अध्ययन सम्पन्न किया गया है।

प्रकरण दो से लेकर पाँच तक ध्वनिगत, शब्दगत, अर्थगत और वाक्यीय शैली उपकरणों के माध्यम से मैंने अपने प्रतिपाद्य उपन्यास का शैली तात्विक अनुसंधान किया है। मेरे इस अनुशीलन के केन्द्र में रही है प्रस्तुत उपन्यास की भाषा–संरचना। और इसे दृष्टिगत रखते हुये लेखक द्वारा प्रयुक्त विभिन्न दृष्टियों से शब्दावली का भी अनुशीलन किया गया है। क्योंकि 'मुझे चाँद चाहिये' की शैली का यह शब्द–प्रयुक्ति एक बहुत बड़ा उपस्कारक तत्व है। अपने इस अनुशीलन में विचलन, चयन, समानान्तरता के विविध रूपों को ध्यान में रखकर 'मुझे चाँद चाहिये' उपन्यास की शैली का तात्विक अध्ययन प्रस्तुत किया गया है। वाक्यात्मक शैलीय उपकरणों की दृष्टि से प्रस्तुत उपन्यास में पात्रों के नामाभिधानों का प्रयोग अत्यन्त सार्थक, विचलन और विरोधाभासों से पूर्ण होने के कारण शैली का एक रोचक पक्ष उन्मीलित करता है। पात्रों के नामों का चुनाव भाषा संरचना और नामों के प्रति लेखक की एक गतिशील, आधुनिक और समकालीन सोच से प्रेरित दृष्टि का परिणाम है।

उपसंहार में अपने शोध निष्कर्षों का मैंने संहत रूप में उल्लेख किया है। परिशिष्ट में लेखक द्वारा प्रयुक्त व्यक्ति नामों, ग्रन्थों, पेड़–पौधों, पहाड़ों, नदियों के नामों की तालिकाओं से लेखक के शब्द–विस्तार का पता चलता है।

इस पूरे शोधकार्य के दौरान मेरा उत्साहवर्धन करने में मेरे परिवारीजनों का विशेष हाथ है इसलिये मैं उनके प्रति बहुत कृतज्ञ हूँ।

शोध कार्य करते समय जब अटक जाती थी तो मेरे शोध निर्देशक डॉ. एन. डी. समाधिया, संप्रति प्राचार्य दयानन्द वैदिक महाविद्यालय ने मेरा उत्साहवर्धन कर मेरे कार्य को आगे बढ़ाया। उनके कुशल मार्गदर्शन के कारण ही मैं अपना कार्य पूरा कर सकी एतदर्थ मैं उनकी हृदय से आभारी हूँ।

प्रसिद्ध भाषा वैज्ञानिक डॉ. कैलाश चन्द्र भाटिया ने समय–समय पर शैली तात्विक अनुशीलन के शैलीय पक्ष को बोधगम्य बनाकर मेरे अनुसंधान पथ को सहज बना दिया। उनके इस मार्गदर्शन के लिये मैं उनकी आभारी हूँ।

अपने अनुसंधान कार्य की सैद्धान्तिक गुत्थियाँ सुलझाने, अपने लिये एक आधार बनाने के लिये मैंने जिन–जिन मनीषियों के ग्रन्थों से लाभ उठाया है, मैं उनके प्रति विशेष कृतज्ञ हूँ। विशेषकर डॉ. सुरेश कुमार, डॉ. पाण्डेय शशिभूषण, 'शीतांशु', डॉ. भोलानाथ तिवारी, डॉ. रवीन्द्र नाथ श्रीवास्तव और डॉ. विद्या निवास मिश्र।

अन्त में जिनके आशीर्वाद और अहेतुकी कृपा से मैं यह जटिल कार्य पूरा कर सकी अपने उन श्रद्धेय गुरुजनों के प्रति मैं आभार व्यक्त करती हूँ और उस शक्ति के प्रति भी जो सदा कृपावंत रहती है।

निवेदक

नवम्बर 2001

कु. शची द्विवेदी

अनुक्रम

प्रकरण – 1

विषय प्रवेश

प्रकरण — 1

* विषय प्रवेश *

कथा भाषा की अवधारणा और स्वरूप

(क) कथा भाषा से तात्पर्य :–

"कथाभाषा" से तात्पर्य उपन्यास की भाषा से है। इसलिए यहाँ कथाभाषा उपन्यास की भाषा से लगाया जाए।

साहित्य मात्र का एक अभिव्यक्ति पक्ष होता है और एक उसका अभिव्यंग्य पक्ष होता है। अभिव्यंग्य पक्ष का सम्बन्ध रचनात्मक विधाओं में जीवन से होता है। इसी को "वस्तु" या "वक्तव्य" कहते हैं। इसी वस्तु को किस ढंग से व्यक्त किया जाता है उसे शैली कहते हैं। शैली का एक महत्वपूर्ण व प्रमुख उपादान भाषा है। इस भाषा का उपन्यास साहित्य में क्या स्वरूप या अवधारणा है। इस शोध प्रबध के प्रारम्भ में यही विचारणीय है। यहाँ संक्षेप में इसी का विवेचन किया जा रहा है। कथा साहित्य में भाषा का प्रयोग अथवा उसका रचनात्मक दोहन प्रयोक्ता के दृष्टिकोण और उसके कथात्मक रूप पर निर्भर होता है। मसलन उपन्यास यथार्थवादी दृष्टि से लिखा गया है या आदर्शवादी दृष्टि से। उसके उपन्यास का रूप सामाजिक है, आञ्चलिक है अथवा ऐतिहासिक है। फिर उस उपन्यास का सम्बन्ध ग्रमीण जीवन से है या शहरी जीवन से। उसके पात्र गँवई– गाँव के हैं अथवा "पाश" कालोनी में रहने वाले अभिजात वर्ग के हैं। कहीं वह नारी अथवा दलित विमर्श से टकराता उपन्यास तो नहीं है? उपन्यास पात्रों के आन्तरिक जीवन से सम्बद्ध तो नहीं है? उसका ट्रीटमेन्ट मनोवैज्ञानिक तो नहीं है? कहना न होगा उपन्यास का आयाम जैसा होगा उसमें भाषा का दोहन भी उसी प्रकार का हो जायेगा।

फिर कथाभाषा में बदलाव उपन्यास की शैली के आधार पर भी आ जाता है। जैसे उपन्यास की वर्णन शैली प्रत्यक्ष है या अप्रत्यक्ष। तृतीय पुरूष में कथा कही गई है या प्रथम पुरूष में। उसकी शैली आत्म कथात्मक है, पत्रात्मक है, डायरी पर आधारित है अथवा जीवनी मूलक है या नाटकीय है। उपन्यास वातावरण प्रधान है या राजनैतिक है अथवा वैज्ञानिक है।

उपन्यास में भाषा के रचनात्मक दोहन की बहुत अधिक सम्भावनाएं रहती हैं। इदमित्थं नहीं कहा जा सकता है। कारण उपन्यास को लचीली और हम्फन मौला विद्या कहा जाता है। यह अत्यन्त गतिशील और घटने बढ़ने वाली विद्या है।

उपन्यास में कथाभाषा की अवधारणा और स्वरूप के कुछ संकेत ऊपर किये गये हैं। यह स्वरूप निम्न विवेचन से और स्पष्ट हो जाएगा।

कथाभाषा को लेकर हिन्दी में कई शोध हुए हैं। कुछ शोध सीधे-सीधे उपन्यास की भाषा पर हैं और कुछ शोध सीधे भाषा पर तो नहीं है। पर आधारित हैं। किन्तु, उपन्यास के क्षेत्र में अब तक जो शिल्पगत् प्रयोग किये गये हैं, उन्हीं में भाषा- सम्बन्धी प्रयोगों की भी एक पड़ताल की गयी है। ऐसे शोध कार्यो में डॉ0 त्रिभुवन सिंह का "हिन्दी उपन्यासः शिल्प और प्रयोग, डॉ0 परमानन्द श्रीवास्तव का, उपन्यास का यथार्थ और रचनात्मक भाषा, डॉ0 जगदीश नारायण चौबे का, उपन्यास की भाषा, तथा सच्चिदानन्द वात्स्यायन द्वारा संपादित, "सामाजिक यथार्थ और कथाभाषा" है।

उपन्यास की भाषा अत्यन्त लचीली, यथार्थ- संक्रान्त और अपने कथ्य को प्रेषित करने में सक्षम होती है। डॉ0 त्रिभुवन सिंह के उपन्यास की भाषा के सम्बन्ध में जो प्रयोग किये गये तत्सम्बन्धी विचारों से कौन असहमत होगा।

उपन्यासकार शिल्प के माध्यम से जिस प्रभाव की सृष्टि करता है उसमें भाषा का अत्यन्त महत्वपूर्ण योग रहता है। उपन्यास में भाषा का महत्व इतना अधिक है कि शैली से कभी-कभी हम भाषा का ही अर्थ समझ बैठते हैं। भाषा के माध्यम से ही विषय एक निश्चित शिल्प के द्वारा उपन्यास में प्रस्तुत किया जाता है। उपन्यास को अर्थवक्ता प्रदान करने का कार्य भाषा का ही है। उपन्यास साहित्य के सन्दर्भ में जब हम भाषा का प्रयोग करते हैं तो उसका तात्पर्य सार्थक भाषा से है, न कि किसी भी ध्वनि से। यद्यपि आधुनिक उपन्यासों में निरर्थक ध्वनियों के प्रयोग से भी अर्थ सृष्टि का प्रयत्न किया जा रहा है। "भाषा ऐसे शब्द समूहों का नाम है जो एक विशेष क्रम से व्यवस्थित होकर हमारे मन की बात दूसरे के मन तक पहुँचाने और उसके द्वारा उसे प्रभावित करने में समर्थ होती है। अतएव भाषा का मूलाधार शब्द है जिन्हें उपयुक्त रीति से प्रयुक्त करने के कौशल को ही शैली का मूल तत्व समझना चाहिए। अर्थात् किसी लेखक या कवि की शब्द-योजना, वाक्यांशों का प्रयोग, वाक्यों की बनावट और उसकी ध्वनि आदि का नाम ही शैली है।" [1] शैली शिल्प का ही अंग है और इस प्रकार उपन्यास शिल्प को सार्थकता प्रदान करने में भाषा का अत्यन्त महत्वपूर्ण स्थान है।

विभिन्न साहित्य रूपों के अनुसार भाषा की प्रकृति में परिवर्तन होता रहता है। यह आवश्यक नहीं कि गीत महाकाव्य, नाटक, कहानी, एकांकी और उपन्यास की भाषा का स्तर एक समान हो। निश्चित रूप से उनमें विषमता होगा, क्योंकि उपर्युक्त सभी साहित्य रूप निम्न मानव प्रकृति एवं मनःस्थिति को अभिव्यक्त करते हैं। यहां तक कि सभी उपन्यासों की भाषा में भी असमानतायें

1. साहित्यालोचन - डा0 श्याम सुन्दर दास, पृ0 259

होती हैं। विषय, प्रतिपाद्य, देश–काल और समाज की भिन्नता उपन्यासों के भिन्न रूपों का निर्माण करती हैं, जिसमें भिन्न भाषा– प्रयोग का सिद्धान्त अपने आप लागू हो जाता। यहाँ तक कि एक ही उपन्यास में भिन्न–भिन्न भाषा का प्रयोग कृति की स्वाभाविकता का कारण बनता है। [1]

जिन उपन्यासों की रचना यथार्थवादी दृष्टिकोण से की जाती है, उनकी भाषा पात्रों के सामाजिक एवं वैयक्तिक स्तर के यदि अनुकूल हो तो अच्छा हो। "उपन्यासों के अंतर्गत सामान्यतः दो वर्ग के पात्र पाये जाते है"– एक व्यक्तिपरक (इन्डीवीजुअल) और दूसरे वर्गगत् (टाइप)। जिस पात्र में अपनापन पाया जाता है और वह अपने कतिपय गुणों के कारण समाज में विशिष्टता रखता है उसे व्यक्तिपरक और जिस पात्र में ऐसे सामान्य या विशिष्ट गुणों का विकास होता है जो सामान्यतः एकाधिक व्यक्तियों या वर्ग में पाये जाते हैं, तो उन्हें वर्गगत् पात्र की संज्ञा दी जाती है। व्यक्तिपरक पात्र अपने स्तर के अनुसार ही भाषा प्रयोग का अधिकारी है। यदि वह मनोवैज्ञानिक उपन्यास का नायक है और स्मृति के आधार पर आत्मपरक शैली में कथा कहता है तो कोई आवश्यक नहीं है कि उसमें भाषागत वैभिन्य के दर्शन हों। पर जहाँ वह स्मृति के आधार पर अन्य लोगों की घटनाओं का उल्लेख उनकी भाषा में करेगा, उसके लिए यह अनिवार्य हो जायेगा कि वह तद्नुरूप भाषा का व्यवहार करे।[2]

वर्गगत् विशेषताओं से युक्त पात्र देशकाल, परिस्थितियाँ और समाज को दृष्टि में रखकर भाषा का प्रयोग करता है। साहित्यकार की भी भाषा का एक स्तर होता है और उसकी भाषा का भी व्यवहार पात्रों से हटकर उपन्यासों में होता है। घटनायें और पात्र जब विषय को स्पष्ट कर पाने में असमर्थ होने लगते हैं तो उपन्याकार अपनी स्वयं की टिप्पणियों एवं भाषणों द्वारा उपन्यास की कथा को आगे बढ़ाता है। ऐसी स्थिति में उपन्यासकार की स्वयं की भाषा भी मूल्यांकन की अपेक्षा रखती है। इस प्रकार अन्य साहित्य रूपों की अपेक्षा उपन्यास की भाषा का विवेचन करना कठिन कार्य है।

भाषा की सर्वमान्यता और उसकी निर्दोषिता उपन्यास को उत्तमता प्रदान करती है। "प्रयुक्त भाषा में ऐसी स्पष्टता एवं प्रॉजलता होनी चाहिए कि अर्थबोध के लिए पाठक को किसी भी प्रकार का श्रम न उठाना पड़े। साथ ही वह ऐसी सहज संवेद्य हो कि अर्थ ही नहीं, लेखक का नियत अभिप्राय भी स्वयं ही स्पष्ट होता रहे। [3]

1. हिन्दी उपन्यास: शिल्प और प्रयोग पृ0 सं0 395
2. पृ0 सं0 396 (हिन्दी उपन्यास: शिल्प और प्रयोग)
3. The language should be so pellucied that the meaning should be rendered but the very sense; no more and no less which the writer has intended to put into his words. -Anthony, Novelist on the Novel, P.315 Miriam Allot.

भाषा और बोली के प्रयोग की समस्या आंचलिक उपन्यासों में सर्वाधिक जटिल है। आँचलिक उपन्यासों में स्वाभाविकता लाने के लिए पात्रानुकूल भाषा प्रयोग की आवश्यकता पर बल देना उपन्यासकार के लिए अति आवश्यक है।

पर इसमें एक खतरा है जिसका संकेत आचार्य शिव पूजन सहाय ने एक स्थान पर किया है– आजकल हिंन्दी मे आँचलिक उपन्यास की जो हवा चली है, वह बहुत अल्हड़ जान पड़ती है। उसके साथ मनमानी छेडछाड़ साहित्य की मर्यादा भ्रष्ट करती है। हमारा मत है कि कथा साहित्य की परख भाषा की कसौटी पर पहले होनी चाहिए। हिन्दी के साथ विभिन्न आँचलिक अथवा क्षेत्रीय भाषाओं की खिचड़ी पकाकर भाषा का स्वरूप बिगाड़ना बड़ा खतरनाक काम है। ऐसा काम बड़े धड़ल्ले से हो रहा है। [1] इसमें संदेह नहीं कि हिन्दी उपन्यास भाषा सम्बन्धी इन दोषों से अपने को नहीं बचा पा रहे हैं।

(ख). उपन्यास और भाषा :

उपन्यास एक भाषात्मक कला है। भाषा की समस्त कलाओं का उपन्यास में प्रदर्शन होता है। उपन्यासकार के पास, अपनी बातें प्रभावकारी ढंग से कहने के लिए, भाषा के अतिरिक्त कोई दूसरा साधन नहीं रहता। [2] भाषा की संपूर्ण शक्तियां [3] उपन्यास की रचना में कार्यरत् रहती हैं। इसीलिए उपन्यास विराट जीवन की स्वतन्त्र अभिव्यक्ति है। इसे अपनी सफलता-सिद्धि के लिए बाह्य उपकरणों की जरूरत नहीं पड़ती। काव्य श्रव्य है, नाटक दृश्य है और उपन्यास केवल पाठ्य है। कविता में शब्द–सौन्दर्य की महिमा है। नाटक में भावानुकृति दर्शनीय है। मगर, उपन्यास में शब्द–सौन्दर्य और भाव– प्रकाशन के अतिरिक्त वाक्य के स्थापत्य की गरिमा भी होती है। चूँकि उपन्यास में भाषा की समग्रता क्रियाशील रहती है, इसलिए काव्य और नाटक के गुण भी इसमें उपस्थित हो सकते हैं। [4]

1. साहित्य, वर्ष 11, अंक 4, फरवरी 1961, आंचलिकता की धूम, पृ0 101
2. The novelist's medium is language: Whatever he does, qua novelist, he does in and through language.
   - David Lodge; Language of Fiction, Preface, P. ix
3. It (language) must achieve its effects whithout the help of voice, facial expression or gesture. The Rhetoric for Exposition.
   - The language and the responsibility, P.I.
4. the novel and the tale, when their aim is to give the force of truth to stories, portraits, scenes, and other representations of real Life.- Ibid.

उपन्यास, साहित्य की अन्य विधाओं से अपेक्षाकृत अधिक समर्थ, अधिक सशक्त है– विषय की दृष्टि से भी, भाषा की दृष्टि से भी। गीतकाव्य जीवन के एक विशिष्ट क्षण की अनुभूति को लय–छन्द के साथ प्रस्तुत करता है। इसमें अतिशय वैयक्तिकता तथा भावपूर्ण भाषा की विशेष अपेक्षा रहती है। कहानी में जीवन की एक खास झलक को व्यापकता के साथ अभिव्यक्त किया जाता है। पात्र थोड़े रहते हैं और कथानक संक्षिप्त होता है। ये दोनों विधाएं सीमाबद्ध हैं, इसलिए भाषा–व्यापार भी सीमित रहता है।

महाकाव्य में विषय और भाषाकी विविधता के अवसर रहते हैं। मगर, आदर्श–प्रेरित होने और जीवनगत् उदान्त मूल्यों की स्थापना के लिए सचेष्ट रहने के कारण महाकाव्य में जीवन की यथार्थता और भाषा की वास्तविक्ता नहीं आ पाती। रावण के विरुद्ध राम की ही विजय हो– महाकाव्य का उद्देश्य होता है। परन्तु उपन्यास में होरी परास्त भी हो सकता है, मर भी सकता है और घनिया पछाड़ खाकर गिर भी सकती है। उपन्यास वस्तुतः जीवन की विभिन्नता को सम्पूर्णता के साथ उद्घाटित, व्याख्यापित करने का संकल्प है।

नाटक और एकांकी में समय के साथ– साथ विषय की भी सीमाएं हैं। निर्धारित अवधि में ही नाटक समाप्त हो जाना चाहिए। फिर मंच पर सारी बातें दिखाई नहीं जा सकती, जो उपन्यास में कही जा सकती हैं। मंच पर "सुनीता" अनावृत नहीं हो सकती। "शेखर" की रेल–यात्रा नहीं दिखाई जा सकती। "सागर, लहरें और मुनष्य" का समुद्र मंच पर नहीं लाया जा सकता। इतना ही नहीं, बहुत से ऐसे विषय भी हैं, जिन्हें नाटक का रूप नहीं दिया जा सकता। अपाहिजों– पंगुओं की कथा नाटक नहीं बन सकती। सर्कस, रेलवे, विज्ञान, युद्ध, आन्दोलन आदि से सम्बन्धित विषयों को भी नाटक का रूप देने में व्यावहारिक कठिनाइयाँ हैं। वीमत्स रस पर नाटक नहीं लिखा जा सकता। यूँ भी भारतीय नाट्यशास्त्रों ने मंच पर सम्भव और सुरूचिपूर्ण व्यापारों को ही प्रस्तुत करने की अनुमति दी है। पाश्चात्य थिएटरों में भी कई बाधाएं और सीमाएं हैं।[1] जिनके कारण नाटक की त्रि–ज्यात्मकता बँध जाती है और एच.जी. बेल्स का उपन्यास "इनविजिबुल मैन" मंच पर अभिनीत नहीं हो पाता। मगर, उपन्यास का क्षेत्र इतना व्यापक है कि संसार के सारे विषय उसमें समा सकते हैं।

----

1. Very little can be shown on the stage that can not be represented by physically normal adults.

- Marjorie Boulton, 'Anatomy of Drama', P.5

महाकाव्य और नाटक के रूढ़ नियमों, प्रतिबन्धों और नियन्त्रणों के विरूद्ध उपन्यास एक समर्थ विद्रोह है, जिसके पीछे भाषा की अपराजेय शक्तियाँ हैं और लोगों का कभी भी नहीं खत्म होने वाला जुलूस है। उपन्यास मुख्य: जन- जीवन की कथा है। [1]

महाकाव्य और नाटक में भी उपन्यास की भाँति कथा के तथ्व रहते हैं, मगर अन्तर के साथ। सम्पूर्ण उपन्यास की कहानी जिन उपकरणों से मिलकर बनती है, वह कथावस्तु है। कथासूत्र, मुख्य कथानक, प्रासंगिक कथाएं या अन्तर्कथाएं (एपीसोड) उपकथानक (अण्डरप्लॉट) के अलावा पत्र, डायरी के पन्ने, समाचार या प्रामाणिक लेख (डॉकुमेण्ट्स) आदि ऐसे उपकरण हैं, जिनका आवश्यकतानुसार उपन्यास लेखक प्रयोग करता है। महाकाव्य में ये कथोपकरण रह सकते हैं, मगर उपन्यासवाली प्रामाणिकता या विश्वसनीयता नहीं रहती। नाटक में ये कथोपकरण सर्वथा असम्भव है, यद्यपि कथा को विश्वस्त बनाने के माध्यम वहाँ है। उपन्यास, चूँकि सर्वाधिक स्वतन्त्र सर्वाधिक अनियन्त्रित साहित्य--रूप है, [2] इसीलिए निबन्ध जीवन की यथार्थता को भाषा की वास्तविकता के द्वारा रूपायिता करता है।

जिस प्रकार कथा की विविधता के कारण भाषा की विविधता आ जाती है, उसी प्रकार विभिन्न पात्रों की योजना से भाषा की व्यापकता भी और बढ़ जाती है। उपन्यास में सभी तबके के लोगों का प्रतिनिधित्व होता है। सामान्य- विशिष्ट, गरीब-अमीर, मालिक-मजदूर, किसान-कामगार, मूर्ख-पण्डित, ग्रामीण-नागरिक, सभी उपन्यास के पात्र होने की योग्यता रखते हैं, इसलिए उनकी अपनी भाषा, उनके अपने व्यावसायिक शब्द उपन्यास की भाषा सम्पत्ति बन जाते हैं। "मेहता" और मालती तथा होरी और घनिया के अपने संस्कारों से प्रभावित उनकी भाषाएं, वस्तुतः सम्पूर्ण "गोदान" की भाषा सम्पत्ति हैं। पात्रों की सजीवता, भाषा की सफलता है।

उपन्यास में परिस्थितियों का महत्वपूर्ण स्थान है और इन परिस्थितियों का स्वाभाविक चित्रण भाषा का उत्तरदायित्व है। परिस्थितियाँ कथा को गति और पात्रों को सजीवता प्रदान करती हैं। घटनाओं का ताना-बाना और उपन्यास का चरमोत्कर्ष इन्हीं परिस्थितियों के घात-प्रतिघात पर निर्भर है। उपन्यास में कर्मण्य भाषा की क्षिप्रता ऐसी ही स्थितियों में उदित होती है। जिन सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक एवं धार्मिक परिस्थितियों में लोग जी रहे हैं, उनके सप्राण चित्रों में भाषा की कलात्मकता प्रकट होती है।

----

1. ..... Novels are mainly about people.

   - Walter Allen : Reading a Novel, P. 12

2. It is because the novel of all literary genres, is the freest, the most lawless.

   -Andre Gide: Novelists on the Novel P. 78

उपन्यास सर्वाधिक वर्णनात्मक साहित्यि रूप है। इसमें वर्णन विवेचन के अलावा आलोचना भी हो सकती है, इसलिए सामान्य गद्यशैली के गुण भी औपन्यासिक भाषा में विद्यमान रहते हैं। उपन्यासकार घटनाओं का विवेचन कर सकता है। मुद्राओं और आचरणों का वर्णन कर सकता है। परिस्थितियों की आलोचना कर सकता है। और, इन कार्यकलापों से उपन्यास की रचना पद्वति वाधित नहीं होती, विकसित होती है। संवाद और कथोपकथन पात्रों के चरित्र निरूपण के लिए आवश्यक होते हैं, जबकि वर्णनात्मकता कथाके विकास के लिए अपेक्षित है।

उपन्यास की भाषा में कार्य कारण सम्बन्ध होता है। विश्वसनीयता होती है, प्रामाणिकता रहती है। उपन्यास की भाषा तर्कसंगत होती है, क्योंकि वह गद्य [1] में लिखा जाता है। कविता अमूर्त को मूर्त रूप प्रदान करती है, इसलिए इसकी भाषा का घनिष्ठ सम्बन्ध ध्वनियों से है। [2] कविता में रंगीन शब्दों [3] का बाहुल्य रहता है। चित्रात्मकता रहती है। परिणामतः काव्य भाषा को वाक्य संगठन में कृत्रिमता आ जाती है। ऋजुता के स्थान पर वक्रता आ जाती है।

"उपन्यास वास्तविक जीवन की काल्पनिक कथा है। [4] "मानव-चरित्र पर प्रकाश डालना और उसके रहस्यों को खोलना ही उपन्यास का मूल तत्व है।" [5] "वास्तविक जीवन के प्रतिनिधित्व का दावा करने वाले पात्रों और कार्यो को उपन्यास के कथानक में चित्रित कि' जाता है" [6]

----

1. Prose is essentially logical; Poetry creates non-logical patterns by means of metre, rhythen, alliteration, etc.
   - David Lodge : Language of Fiction, P.R.
2. This Phonology should be able to help throw light on such. features as alliteration, assonance, rhyme, pararhyme, onomatopoeia, rhythm and metre.
   -John spencer and michael Gregogy: Linguistics and style, P. 69
3. 'Tone-Color'- Sidney Lamier: The Science of English Verse (Discussion on poety- sound and Rhythm.)
4. डा0 दवेराज उपाध्याय
5. प्रेमचन्द
6. 'New English Dictionary' में उपन्यास की परिभाषा।
   उपन्यास की भाषा: पृ0 सं0 19

स्पष्टत: उपन्यास का यह संकल्प भाषा की वास्तविकता के द्वारा ही पूर्ण होता है। क्योंकि उपन्यास-लेखक के पास और कोई दूसरा साधन नहीं रहता। [1]

भाषा के साधनों [2] का उपन्यास में अधिकाधिक उपयोग होता है। प्रसंगानुसार सभी प्रकार के शब्द व्यवहृत होते हैं। वाक्य-रचना-पद्धति के विभिन्न स्तरों का प्रयोग होता है। उपन्यास की भाषा में अस्पष्टता की गुंजाइश कम रहती है। संवाद और वर्णन विराम- चिन्हें से युक्त होकर मूर्तिमान हो उठते हैं।

उपन्यास वह कृति है, जिसको पढ़कर ऐसा लगे कि यह हमारी है, इसमें हमारे ही जीवन का प्रतिबिम्ब हे, इसमें हमारी ही कथा, हमारी ही भाषा में कही गई है। और, उपन्यास निस्सन्देह, भाषा की समग्रता के माध्यम से जीवन की सम्पूर्णता का आंकलन है। जीवन का चित्रण उपन्यास का अभीष्ट हैं और उपन्यास की सर्वश्रेष्ठता भाषा की कलाओं पर निर्भर है।

उपन्यासगत जीवन की सफल अभिव्यक्ति के लिए केवल भाषा उत्तरदायी है। "होरी घर पहुँचा, तो रूपा पानी लेकर दौड़ी, सोना चिलम भर लाई, धनिया ने चबेना और नमक लाकर रख दिया और सभी आशा- भरी आँखों से उसकी ओर ताकने लगीं। झुनिया भी चौखट पर आ खड़ी हुई थी। होरी उदास बैठा था। कैसे मुँह- हाथ धोये, कैसे चबेना खाये। ऐसा लज्जित और ग्लानित था, मानो हत्या करके आया हो।" [4]

"धनिया ने पूछा- कितने की तौल हुई।"

"एक सौ बीस मिले, पर सब वहीं लुट गये। धेला भी न बचा। धनिया सिर से पाँव तक भस्म हो उठी। मन में ऐसा उद्वेग उठा कि अपना मुँह नोंच ले।..." [5]

----

1. We are concious of literary experiences which appear to transcend language: Plot, Character, Personality, form in other sense.... Yet all these experiences are communicated by linguistic means. This is the paradox with which we are confronted- R.A. Sayce: Literature and languare : 'Essays in Criticism', VII, P- 2
2. ध्वनि, वर्ण,शब्द, अर्थ, वाक्य, अलंकार,रीति,व्यंग्य, वक्रोक्ति और रस।
3. डा0 देवराज उपाध्याय : हिन्दी साहित्य कोश, पहला भाग पृ0 139
4. गोदान: प्रेमचन्द : पृ0 190
5. वहीं, पृ0 190

उपन्यास की भाषा: पृ0सं0 19, 23

हताश जीवन का दु:ख– दारिद्र्य इन पंक्तियों में साकार हो उठा है। हीरो का घर पहुँच कर रूक जाना, घर के अन्य लोगों को गतिशील बना देता है। सभी चंचल हो उठते हैं– सबके हाथ भरे हुए हैं– स्वागत– सत्कार के लिए रूपा पानी लेकर दौड़ी है, सोना के हाथ में चिलम है, धनिया के हाथ में चबेना और नमक है– सभी प्रफुल्लित हैं, आह्लादित हैं, आनन्दित हैं–सभी आशान्वित हैं, आशा भरी आँखों से होरी को देखने लगीं, नहीं, "ताकने लगी" "ताकने लगी"– "ताकने लगी" में आशान्विता भी है, याचना भी है– और, इस आशा उल्लास के समक्ष "लज्जित– ग्लानित" "होरी उदास बैठा था"– "मानो हत्या करके आया हो" – उसने सचमुच हत्या भले ही न की हो, मगर इन प्राणियों की आशा – अभिलाषा की गर्दन तो उसने दबा ही दी है, और इसी का नतीजा है कि " निया सिर से पॉव तक भस्म हो उठी। मन में ऐसा उद्वेग उठा के अपना मुंह नोंच ले।"

यहाँ तक किए गए विवेचन का यह निष्कर्ष है कि उपन्यास के उपादानों में भाषा एक महत्वपूर्ण उपादान है और उसकी उपेक्षा नहीं की जा सकती है। अन्य साहित्य रूपों की अपेक्षा उपन्यास की भाषा अत्यन्त लचीली और विविध धर्मी होती है। अन्य विधाओं से उपन्यास की भाषा की एक विभेदक रेखा भी है।

यथार्थ और उपन्यास की भाषा

आज उपन्यास को यथार्थ की बहुविद्य अभिव्यंजनकारी विद्या माना जाता है। फलत: उपन्यास की भाषा पर चतुर्दिक यथार्थ का बेहद दबाव है। इस दबाव को उपन्यासकार प्रतिक्षण अनुभव कर रहा है। इस सन्दर्भ में डॉ0 परमानन्द श्रीवास्तव के निष्कर्षो के रूप में कहा जा सकता है।

सामाजिक यथार्थ और कथा भाषा की अवधारणा और स्वरूप पर एक गोष्ठी का आयोजन वत्सलनिधि के अन्तर्गत गया में हुआ था। इस गोष्ठी में अज्ञेय समेत अन्य कई रचनाकारों और समीक्षकों ने समकालीन उपन्यासों में बदलते भाषा के रचनात्मक पक्ष पर गहन गम्भीर मैथन किया था। इसमें प्रेमचंद से लेकर जैनेन्द्र और बाद के उपन्यासकारों की भाषा पर विस्तार से विचार किया गया था। बाद में इन निबन्धों और लेखों का प्रकाशन सामाजिक यथार्थ और कथाभाषा शीर्षक से किया गया।

इस पुस्तक में संकलित निबन्धों के अनुशीलन से कथाभाषा की अवधारणा और उसके स्वरूप पर पर्याप्त प्रकाश पड़ता है। और इस मंथन से प्राप्त निष्कर्षो के आधार पर इस कारण की खोजबीन सहजता से की जा सकती है। कि मेरा जो प्रतिपाद्य है उस उपन्यास की भाषिक रचना इस तरह की क्यों है।[1]

1. सामाजिक यथार्थ और कथा–भाषा, सं0 सच्चिदानन्द वात्स्यायन, पृष्ठ 37

और अपनी भाषा के कसाव, रचना और भंगिमा के कारण यह उपन्यास यों चर्चा और विमर्श का केन्द्र बना।

"समकालीन यथार्थ और कथा भाषा की समस्या पर विचार करते हुए डा0 रामस्वरूप चतुर्वेदी का मानना है कि उपन्यास के विधान में भाषा- प्रयोग की दुहरी समस्या है। एक तो उसे वर्णन करना है दूसरे यथार्थ के सुक्ष्म और जटिल अनुभव को सम्प्रेषत करना है।[1] भाषा के इस दुहरे धर्म को निबाहने में उपन्यासकार का मुख्य कृति कार्य निहित है। यथार्थ से जूझने वाले आधुनिक उपन्यासकार के सन्दर्भ में यह बात अधिक संगति के साथ कही जा सकती है क्योंकि उसकी केन्द्रीय समस्या सम्प्रेषण करने की है। घटना और चरित्र अब अनुभव के स्तर पर निष्पन्न होते हैं।

समकालीन यथार्थ और कथाभाषा की समस्याएं, नामक अपने निबन्ध में डा0 चतुर्वेदी ने समकालीन उपन्यासों की भाषा के उस रचनात्मक पक्ष की ओर संकेत किया है जिसके कारण उपन्यास की भाषा में अब कविता के प्रग्रहणशील तत्वों का संकमण होने लगा है। उनका कहना है- भाषिक सर्जनात्मकता की कोई तराजू न होने पर भी, यह कहा जा सकता है कि उपन्यास की भाषा ऐसी हो जो कविता की सघन सर्जनात्मक भाषा और गद्य की सामान्य वर्णन प्रधान भाषा के बीच में हो।[2]

यूरोप में ऐसे प्रयोग लारेंस उदैल, ज्वायस, पास्तरनाक, कामू, गुंटर ग्रास और लैकेट ने किए हैं।

(ग). उपन्यास के बदलते रूप और भाषा के बहुस्तरीय प्रयोग :-

हमारे यहां अधिसंख्य उपन्यासकार यथार्थ को कुछ बाह्य स्थूल लक्षणों तक सीमित ओर इस प्रकार सरलीकृत करते आये हैं। उनकी कृतियाँ सर्जनात्मक व्यक्तित्व का कोई सार्थक स्पर्श प्राप्त करने से पहले भाषा का ऐसा वाचक- सामान्यता युक्त संसार रचकर संतुष्ट हो जाती हैं जिसमें क्या समय और क्या अपने ही सम्बन्ध में, किसी भी तरह के प्रश्न पूँछ पाना संभव नहीं? इसलिए आश्चर्य नहीं, उपन्यास के मूल्यांकन के प्रचलित आधारों (कथानक, चरित्र-चित्रण आदि) में भाषा को महत्वहीन उपकरण माना गया है। उपन्यास की आलोचनाके प्रसंग में भाषा की चर्चा नितान्त चलते हुए ढंग से की जाती रही है। पिछले वर्षो में, इसके विपरीत जो उपन्यास प्रकाशित हुए हैं, उनके मूल्यांकन की पद्धति

1. सामाजिक यथार्थ और कथा-भाषा, सं0 सच्चिदानन्द वात्स्यायन, पृष्ठ 37
2. वही, पृष्ठ 40

में भाषायी रूपाकार, भाषा की संवदेनक्षमता, तीखेपन और तराश, रंगहीन सपाटता और यथातथ्यता, सूक्ष्मता और नुकीलेपन, परिष्कार और अनगढ़पन की विशेषताओं पर अनिवार्य बल दिया गया है। इधर के ऐसे उपन्यासों में जिनमें यथार्थ और भाषा के बीच का सर्जनात्मक सम्बन्ध अधिक निजी और तीखे रूप में दृश्य है– "वे दिन" (निर्मल वर्मा), "दूसरी बार" (श्रीकान्त वर्मा), "आपका बन्टी" (मन्नू भंडारी), "बेघर" (ममता कालिया), "एक पति के नोट्स" (महेन्द्र भल्ला), "यात्राएं" (गिरिराज किशोर), "वह अपना चेहरा" (गोविन्द मिश्र), आदि कृतियों पर विचार किया जा सकता है। "राग दरवारी" (श्रीलाल शुक्ल) की भाषा में व्यंगयात्मक निबंध का –सा रूप– वैशिष्ट्य दिखाई देता है तो "सूरजमुखी अंधेरे के" (कृष्णा सोबती) की भाषा में कोमल गतिपरकता और "अपना मोर्चा" (काशीनाथ सिंह) की भाषा में रिपोतजि की–सी व्यंग्यधर्मी सपाटता प्रत्यक्ष है। पर जब हम भाषा की बनावट और उसके सर्जनात्मक उपयोग को केन्द्र में रखकर विचार करने जा रहे हों तो हमें कुछ पहले जाकर उस बिन्दु को पकड़ने की कोशिश करनी चाहिए जहाँ भाषा एकाधिक स्तरों पर पहले के उदाहरणों से अलग अपनी पहचार बना सकी। इस दृष्टि से एक बार "गोदान", "सुनीता", "त्यागपत्र", "शेखर एक जीवनी", "नदी के द्वीप", "मैला आँचल", परती परिकथा", "शह और मात", "यह पथ बंधु था","सोया हुआ जल", "काले फूलका पौधा", "सूरज का सातवाँ घोड़ा", जैसे उपन्यासों पर भी दृष्टि जानी चाहिए।

"गोदान" यदि मोह मंग का उपन्यास है तो स्वाभाविक है कि एक तरह की वस्तुगत कठोरता को स्वीकार करने के लिए प्रेमचन्द्र सरीखे लेखक को (जिसके मोह की गहरी जड़ें थीं, आदर्श थे, स्मृतियाँ थीं) एक बार प्रयत्न करना पड़ा होगा। इतने समय के बाद "गोदान" का मूल्यांकन करते हुए विजयमोहन सिंह का ध्यान प्रासंगिक ही नहीं, फिल्मी लटकों या दृष्टान्तों पर जाता है, पर एक संक्रमण–कालीन कृति के लिए ऐसे अन्तर्विरोधों की उपस्थिति कोई चीज नहीं। सच तो यह है कि यथार्थ की पहचान में यहाँ संदेह करने का कोई अवसर नहीं– जिन स्थलों पर हमारी दृष्टि टिकती है, वहां भाषा का सतर्क और कभी–कभीविडम्बनाओं को प्रत्यक्ष करने जेसा प्रयोग है। उपन्यास में ऐसे स्थल भी मौजूद हैं, जहाँ भाषा की सार्थक स्थिरता ही मोहमंग के अनुरूप पाठकों का ध्यान अपनी ओर खींचता है–"धनिया यंत्र की भाति उठी, आज जो सुतली बेची थी, उसके बीस आने पैसे लायी और पति के ठंडे हाथ में रखकर सामने खड़े दातादीन से बोली– महाराज,घर में न गाय है न बछिया न पैसा। यही पैसे हैं, यही इनका गोदान है। और पछाड़ खाकर गिर पड़ी। "भाषा की कठोरता, न्यूनतम भाषा के उपयोग पर

1. उपन्यास का यथार्थ और रचनात्मक भाषा– पृ0सं0 165, 166
लेखक डा0 परमानन्द श्रीवास्तव

ध्यान दें तो "यंत्र की भाँति" "ठंडे हाथ" और चरम अभाव के व्यंजक शब्द किस यथार्थ की ओर संकेत करते हैं। शब्द वही है, जो स्थितयाँ हैं। अकारण नहीं, कि नेमिचंद्र को होरी– धनिया "अजन्ता के भित्तिचित्र" जान पड़ते हैं।

जैनेन्द्र के उपन्यास सम्बन्धों की दुसरी दुनिया को प्रत्यक्ष करने वाले उपन्यास हैं, जिनमें सारा खिंचाव, "सुनीता" की भाषा में एक ओर एक ऐसी लापरवाही है जो घरेलूपन का स्वाद उत्पन्न करती है– "दीखा कि नमस्ते कहकर भाभी अचकचा नहीं रही हैं, सो नहीं है और पीछे लगी सत्या मानो जतला रही है कि जैसी मुझ से हो सकी वैसी नमस्ते मैने कर ली है। तुम नहीं जानते तो मैं भी नहीं जानती। मैं जोर से बोलकर नमस्ते करने वाली नहीं हूँ। वह भाभी की परछाईं में चल रही है कि "मैं कर चुकी हूँ जी नमस्ते"। दूसरी ओर वह सतर्कता भी है जो मन के भीतर की अनेक सूक्ष्य प्रतिक्रियाओं को अभिप्राय युक्त विवरणों में मूर्त करती है– "उसने सितार खींचा और स्वर मिलाने लगी। वह कुछ झंकार उठाएगी, जो गूँज–गूँज कर सब कहीं व्याप जाय। जो गूँजे और गूँजे और थक जाे तब सो जाय, अत्यन्त सबल राग में उसने सितार को बजाया। यहाँ तक कि सितार के टूटने का डर होने लगा। जितना खींच सकता उतना तार को खींच कर वह उसमें मोड़ देती थी। मानो अपने भीतर की झल्लाहट को उस अकारण अहेतुक खीझ को वह इस प्रकार खींच निकालकर ध्वनि में मूर्त करके भेज देना चाहती है कहीं दूर– कहीं पार।" एक अन्तर्मुखी, अपने से ही उत्कुद्ध स्वभाव को व्यक्त करने वाली इस भाषा की संरचना ध्यान देने योग्य है।

अज्ञेय के उपन्यासों की सर्जनात्मक उपलब्धि को भाषा की सूक्ष्मता और संवेदनशीलता के संदर्भ में देखना आवश्यक हो जाता है। हिन्दी गद्य की सूक्ष्य अभिव्यक्ति– क्षमता को समृद्ध बनाने वाली उनकी कृतियों (शेखर एक जीवनी, नदी के द्वीप, अपने–अपने अजनवी) ने हिन्दी उपन्यास को एक नयी संवेदना दी है, इसमें संदेह नहीं।" [1]

"मैला आँचल" और "परती परिकथा" में फणीश्वरनाथ रेणु एक रूप विशिष्ट आंचलिक भाषा का अधिक सतर्क सर्जनात्मक उपयोग कर सके हैं, जिसमें चित्रकला और संगीत के स्वभाव या रागधर्म की विशिष्टता निहित है। [2]

राजेन्द्र यादव की भाषा के घरेलूपन की चर्चा "उखड़े हुए लोग" की भाषा के सन्दर्भ में की गई है। इसका रचाव अधिक गहरे स्तर पर, मनोवैज्ञानिक जटिलताओं के साथ "शह और मात" में

1. उपन्यास का यथार्थ और रचनात्मक भाषा– पृ0 सं0 167, 168

2. वहीं पृष्ठ 168

दिखाई देता है जिसमें डायरी की निजता का सहारा लेकर एक ही चरित्र के चेतन्-अचेतन के द्वन्द्वों में संवाद कराने की कोशिश की गई है। यहां अवश्य ही भाषा का एक नया आकर्षण भी है जो कुछ आगे चलकर यादव के ही शौक चक्करदार शिल्प के कारण स्वाभाविक विकास नहीं पा सका। अक्सर उनके पात्र नकली हथियारों से एक- दूसरे से लड़ते हैं- जानते हुए कि हथियार दोनों के पास नकली हैं। "अनदेखे अनजाने पुल" में "भय" है तो "उलटे पड़े, तिलचट्टे की तरह हाथ -पॉव मारता रहता है"- "भीतर का सपना" है जो "मकड़ों के जाले की तरह फैला है।

"यह पथ बंधु था", "धूमकेतुः एक श्रुति", "नदी यशस्वी थी" आदि उपन्यासों के लेखक नरेश मेहता की काव्य संवेदना गद्य की भाषा को निजी सम्पृक्ति दे सकी है। परमपरा से लगाव भी नरेश मेहता की भाषा का एक अपना गुण है। कही- कहीं सहजता की ओट में सतर्क अलंकृति प्रभाव को क्षीण भी करती है। "अँधेरे बँद कमरे" और "अन्तराल" (मोहन राकेश की भाषा में तीखी संवेदनीयता, जो सम्बन्धों के द्वन्द्व की उपज है, देखी जा सकती है। इस तरह का अहसास "आपका बंटी" (मन्नू भंडारी) की भाषा भी कराती है। व्यक्तिगत् लगाव की गहनता इन उपन्यासों में समान रूप से उपलब्ध है। धर्मवीर भारती के महत्वपूर्ण प्रयोगात्मक उपन्यास "सूरज का सातवॉ घोड़ा" की अधिकतर चर्चा रूप -विधि या रचना-पद्धति के आधार पर की गयी है- जिसकी नवीनता पूर्ण श्रृंखला विहीन नये रचना प्रकार में नहीं है बल्कि "पुराने में नयी जान डालने में भी है" पर भाषा की दृष्टि से विचार करें तो एक स्तर के रूमानी और दूसरे स्तर के व्यंग्य के द्वन्द्वात्मक उपयोग में विशेष प्रकार का आकर्षण पैदा हो गया है। [1]

निर्मल वर्मा के उपन्यास "वे दिन" की भाषा उन ठोस व्यंजनाओं और अर्थो से सम्बन्ध रखती है जिनके सहारे मुनष्य अपनी नियति का, अपने अनिवार्य अकेलेपन का, प्रेम की व्यथा और प्रेम हीनता के साथ तीखे अहसास का सामना करता है। उनकी संवदेनीयता गहरी है- साथ ही इतनी पैनी कि गद्य का टेक्सचर ही अपने कलात्मक रचाव के बावजूद सख्त कठोरता का आभास देता है। [2]

श्रीकान्त वर्मा का उपन्यास "दूसरी बार" स्त्री -पुरूष सम्बन्धों की परिधि में चुनौती संदेह और प्रतारणा की अस्वाभाविक हद तक तनावपूर्ण गॉठों को लेकर लिखा गया है- एक चुस्त डायलेक्टिक्स सरौखी इस भाषा में एक अनोखी तटस्थता और तेवर है। आकर्षण और हिकारत के अनवरत द्वन्द्व के स्तर पर चलतीं हुई इस भाषा की चुस्ती और तराश देखने योग्य हैं। [3]

1. उपन्यास का यथार्थ और रचनात्मक भाषा- पृ0सं0 168, 169
2. उपन्यास का यथार्थ और रचनात्मक भाषा- पृ0सं0 169, 170
3. वही पृष्ठ 170

व्यंग्यकार के रूप में श्रीलाल शुक्ल के उपन्यास "राग दरवारी" को लेकर कितनी ही आपत्तियों की भाषा एक है– यह उपन्यास क्यों? श्रीलाल शुक्ल व्यंग्य करते हैं तो व्यंग्य सहते भी हैं। यह धारणा गलत होगी कि हिन्दुस्तानी स्वभाव की तमाम क्षुद्रताओं का वर्णन यहां अपने को कुछ दिखाने के लिये किया गया है। उपन्यास की टिप्पणी सरीखी भाषा में यहाँ व्यंग्य अपने को भी, लेखक को भी, लक्ष्य बना लेता है। ममता कालिया के उपन्यास "बेघर" की भाषा भी भावहीन विरस जिन्दगी की वास्तविकता को एक अनोखे ढ़ंग से व्यक्त करती है। भाषा के रूप में तोड़ती हुई इस भाषा में वे–बनाव का अपना आकर्षण है। भाषा की चुस्ती, यथातथ्यता यहां फिर ध्यान देने की चीज है। व्यंग्यकार के फैलाव से अधिक तीव्रता और नुकीलापन यहाँ प्रत्यक्ष है। [1]

"यात्राएं" उपन्यास के लेखक गिरिराज किशोर की यात्रा बाहर से भीतर की ओर है– बल्कि इसकी रचना प्राक्रिया में बाहर का सारा आयोजन नगण्य है। वह होकर भी नहीं है। वह भीतर की ही गुत्थी को सुलझाने– उलझाने वाला कोई तर्क है– जो जरूरी नहीं कि तर्क संगत भी हो। पराधीनता का दबाव वातावरण पर भी है। (उदाहरण :परिचितता के कारण उसे नीम कहना संभव था। वरना वह एक पेड़ था। वातावरण की ऐसी पराधीनता में नजर पहुँच ही कितनी दूर सकती है? ऐसे में पेड़ को पेड़ कहना ही काफी होता है) और व्यक्तियों पर भी ("मैं स्वयं नहीं जानता कि उसने रात–ही–रात में अपने को मुझसे कहाँ तक अलग किया था") इस उपन्यास की भाषा में एक तैयारी है– एक चौकन्नापन, कहीं ब्योरे सघन कलात्मक रचाव से परिचित कराते हैं जिसकी अपनी जटिलताएं हैं। [2]

गोविन्द मिश्र के दो उपन्यास "वह अपना चेहरा" और "उतरती हुई धूप" एक सीमित अनुभव संसार के दायरे में भाषा की व्यंजकता को अपने ढंग से अधिक सार्थक बनाते हैं। [3]

कृष्णा सोबती के उपन्यास "मित्रो मरजानी" में एक नंगे जीवन के साक्षात्कार के लिए निर्लिप्त अनासक्त भाषा का चुनाव किया गया था– यहां नग्नता के अनुभव ने भाषा को प्रतीकात्मकता से रहित ऐसी तटस्थ प्रखरता दी थी जो गद्य की सूक्षता, अकाव्यत्मकता, सपाटता का आदर्श है। [4]

इसके विपरीत "सूरजमुखी" अँधेरे में, उपन्यास की कोमल गीति कला की रागात्मकता अनुभव की एकान्त पूर्णता के कारण आकृष्ट करती है तो प्रतीकों की गोपनीयता रचना के प्रभाव को क्षीण भी करती है। [5]

1. वहीं पृष्ठ 170
2. उपन्यास का यथार्थ और रचनात्मक भाषा– पृ0सं0 170, 171
3. उपन्यास की यथार्थ और रचनात्मक भाषा– पृ0सं0 171, 172
4. वही पृष्ठ 171
5. वहीं पृष्ठ 172

इस प्रकार यथार्थ के साथ बनते हुए सम्बन्धों के घनत्व और वैविध्य के अनुरूप अभिव्यक्ति में इधर अधिक संरचनात्मक निखार आ सका है और यह बात साफ हो गयी है कि जीवन के विस्तार को संयोजित, संगठित या आत्मसात करने वाले उपन्यास को भी गहनता की ओर बढ़ना होगा ताकि उसकी रूपगत विशिष्टता समृद्ध हो सके और उपन्यास रोचक होने के साथ साथ हमारी समझ और संवदेना को विकसित करने का एक सार्थक माध्यम बन सके। इस गॉठ को खोलने– सुलझाने की जरूरत है कि प्रवाह रचनात्मक भाषा का आवश्यक गुण नहीं है। स्थिर तनाव की भाषा भी रचना की समूची क्षमता में सार्थक गुणात्मक अन्तर उपस्थित कर सकती है। यथार्थ से मुठभेड़ की विचारोत्तेजक सॅभावनाएं तो हो सकती हैं पर उपन्यास मात्र की भाषा से यह मांग करना कि वह इन्हीं संभावनाओं को चरितार्थ करे एक गलत मॉग होगी। यथार्थ की परिधि पर कायम रहकर भी भाषा अपने रचनात्मक अभिप्राय की सार्थकता प्रमाणित कर सकती है। [1]

डा0 परमानन्द के उपन्यासों की यथार्थ परक भाषा के अनुशीलन से निकले निष्कर्षों ने अब तक अपनी प्रामाणिकता सिद्ध की है। ओर उनके विश्लेषण से सहमत हुआ जा सकता है। कथाभाषा का स्वरूप और धारणा को उनकी स्थापनाएं बखूबी उजागर करती हैं।

हिन्दी में प्रेमचन्द के बाद उपन्यास की भाषा को नये ढंग से गलाने का काम किया जैनेन्द्र ने। प्रेमचन्द में भाषा–प्रयोग को समझना एक विशेष सावधानी की अपेक्षा रखता है। अनेक बार लगेगा कि प्रेमचन्द में भाषा है ही नहीं, सीधे, साक्षात् अनुभव है, बिना त्वचा के शरीर जैसा प्राकृतिक और लोभहर्षक। प्रेमचन्द पर गॉधी के प्रभाव का चर्चा बहुत बार होता है। जैसे गॉधी किसी भी प्रकार के अपव्यय के विरूद्व है, जैसे ही मुंशी प्रेमचन्द। इस का सबसे अच्छा प्रमाण मिलता है, मुंशी जी की रचना भाषा से जहां किसी भी प्रकार के अपव्यय की सम्भावना नहीं है। पूरा का पूरा अर्थ भाषा से रचनाकार स्वयं निचोड़ लेता है, आगे पाठक या समीक्षक के लिए वह बाकी कुछ नहीं छोड़ता।

प्रेमचन्द के इस भाषा प्रयोग की पीठ पर आते हैं जैनेन्द्र। इस संदर्भ में "त्यागपत्र" हिन्दी उपन्यास साहित्य को बेजोड़ और स्पृहणीय उपलब्धि है। यहॉ जैनेन्द्र शब्दों से उतना काम नहीं लेते जितना उनकी भंगिमा से। जैनेन्द्र के साथ अज्ञेय का नाम आता है। इन दोनों ने मिलाकर गद्य भाषा को वर्णन के प्राथमिक स्तर से ऊपर उठाया। "त्यागपत्र" और "शेखर" की पूरी भाषिक प्रक्रिया इसका प्रमाण है। [2]

1. उपन्यास का यथार्थ और रचनात्मक भाषा– ले0 डॉ0 परमानन्द श्रीवास्तव पृ0सं0 173

2. सामाजिक यथार्थ ओर कथा भाषा– पृ0सं0 41, 42

"अपने–अपने अजनबी" की भाषा स्वतः अज्ञेय के ही पिछले उपन्यासों की भाषा से भिन्न है। अपने इस नवीनतम उपन्यास में रचनाकार ने –जिसकी गद्य भाषा का अभिजात्य विख्यात है– बोलचाल के सामान्य और खड़े– खड़े शब्दों को रचना के स्तर पर प्रयुक्त किया है।

वर्णन का उपयोग करते हुए उससे ऊपर उठने का उपक्रम इधर के कई उपन्यासकारों ने किया है। कृष्ण बलदेव वैद, विपिन कुमार अग्रवाल और गंगा प्रसाद विमल के प्रयत्न इस दिशा मे उल्लेखनीय हैं, जहाँ वे कथा–भाषा को नये रूप में सिरजना चाहते हैं। गिरिराज किशोर ने "यथा प्रस्तावित" में भाषा सम्बन्धी बहुत मौलिक प्रयोग तो नहीं किये, पर वर्णन को हल्का कर के अनुभव को सघन बनाने का यत्न किया है। वर्णन और अनुभव, मिट्टी और पानी का बहुत सन्तुलित रूप फणीश्वरनाथ "रेणु" के "मैला आँचल" में बना था, जहां उन्होंने अपने बंगला गुरू सतीनाथ भादुड़ी की कला को अधिक समृद्ध और दक्ष बनाया है। [1]

अतएव निष्कर्षतः हम यह कह सकते हैं कि उपन्यास में वर्णन और सम्भाषण दोनों भाषा स्तरों का सानुपातिक प्रयोग होना अधिक आवश्यक हो गया है।

इस दृष्टि से "मुझे चाँद चाहिए" की भाषा संरचना वर्णन और सम्प्रेषण, वस्तु और संवेदना, गद्य भाषा और काव्य भाषा दोनों के बीच से होकर हमारे सामने प्रस्तुत होती है।

अन्त में यह निःसंकोच कहा जा सकता है कि वर्तमान यथार्थ और उसकी संवेदना को किसी नयी भाषा की तलाश है। भाषा का वर्तमान ढाँचा उसे वहन करने में नाकाफी है। इस के विरोध में रेणु के उपन्यास का उदाहरण दिया जा सकता है। लेकिन वे स्वयं ही अपनी भाषा को "मैला आँचल" और "परती परिकथा" के बाद आगे नहीं ले जा सके। यानी उनके कुल साहित्य की भाषा वह भाषा नहीं रही जिस भाषा के कारण उन्होंने अपनी पहचान बनायी थी। उनकी वह भाषा सीमित उपयोग के लिए थी। अतः रेणु के इन उपन्यासों की भाषा रचनाकार की स्थायी भाषा नहीं है। यही बात मटियानी के साथ भी हुई।

2. "मुझे चाँद चाहिए" उपन्यास का संक्षिप्त कथानक

इस उपन्यास की नायिका वर्षा वशिष्ठ एक मध्यम वर्गीय परिवार की लड़की है। इसके महादेव, किशोर, गायित्री और झल्ली भाई बहन हैं। यह अपनी पारिवारिक पृष्ठभूमि से असंतुष्ट होकर अपनी अंग्रेजी की शिक्षिका मिस दिव्या कत्याल के संपर्क में आती है। दिव्या उसे कालेज में होने वाले

1. सामाजिक यथार्थ और कथा– भाषा पृ0सं0 42, 43

वार्षिकोत्सव "अभिशप्त सौम्य मुद्रा" नाटक में भाग लेने के लिए प्रेरित करती है। बाद में वर्षा दिव्या के नाटक के ग्रुप में होने वाले नाटक में भाग लेने लखनऊ पहुँचती है और वहाँ के सदस्यों से मिलकर नाटक को ही अपने जीवन का लक्ष्य चुनती है। लेकिन उसके मध्यमवर्गीय पिता, भाई, माँ, बहिन सभी उसका विरोध करते हैं। उसे किशोर और झल्ली से ही सहानुभूति मिल पाती है। बाद में वर्षा दिल्ली के एन.एस.डी. का फार्म भरती है और उसके साक्षात्कार में सफल हो जाती है। वहाँ वह अपने ड्रामा स्कूल के डिक्टेटर डाक्टर अटल से प्रभावित होती है। प्रारम्भ में वर्षा दिल्ली स्कूल के नाटकों में असफल होती है, किन्तु चतुर्भुज के निर्देशन में होने वाले नाटक में सफल होती है। इस नाटक का नायक हर्षवर्धन है जो उच्च वर्गीय पारिवारिक पृष्ठभूमि वाला है। उसकी माँ, पिता, बहिन सभी वर्षा को पसन्द करने लगते हैं। वर्षा की मित्रता हर्ष से हो जाती है। हर्ष के अन्य मित्रों स्नेह, चतुर्भुज, आदित्य, इरा, कल्याणी, रीटा, अर्चना, अनुपमा, झुमकी सभी से वर्षा को स्नेह मिलता है। एक दिन हर्ष को फिल्म में काम करने के लिए बम्बई बुलाया जाता है। वहाँ वह धीरे- धीरे अपने अहंवादी स्वभाव के कारण टूट जाता हे। फिर एक दिन वर्षा से मिलने बम्बई से सिद्धार्थ आता है, वर्षा उसकी फिल्म में काम करके प्रसिद्ध पाती है। धीरे- धीरे वर्षा कला एवं भौतिक जगत की ऊँचाइयों को छूती है और बम्बई में अपने मित्रों, विमल के सहयोग से एक अच्छा फ्लैट खरीद लेती है। धीरे -धीरे वर्षा के दिल्ली के अन्य मित्र भी बम्बई आने लगते हैं और अपने आपको चरित्र कलाकार के रूप में स्थापित कर लेते हैं। हर्ष असफल होकर तरह- तरह के ड्रग्स लेने लगता है और एक दिन चतुर्भुज के गृह प्रवेश के समय अपने मित्रों के तानों से घबराकर आत्महत्या का लेता है। इससे वर्षा मानसिक रूप से परेशान हो जाती है। वह बाद में हर्ष के बच्चे को जन्म देती है और फिल्म में काम करते हुए नेशनल एवार्ड पाती है तथा विदेश फिल्म में काम करने का अवसर पाती है। बाद में उसके पिता एवं भाई उसे माफ कर देते हैं। दिव्या को गले का कैंसर हो जाता है किन्तु वे अब भी नहीं टूटी है। वर्षा का बेटा हेमंत बड़ा हो जाता है। वर्षा इस प्रकार कला के एक सफलतम लक्ष्य पर पहुँचती है।

(क). रचना का उद्देश्य और इसकी औपन्यासिक शैली

हिन्दी साहित्य में चाँद की बहुत लोकप्रियता रही है। चाँद पंत से लेकर मुक्तिबोध तक के आकर्षण का केन्द्र रहा है। "कला और "बूढा चाँद" के बाद "चाँद का मुँह टेढा है" हिन्दी कविता में एक बदलाव का प्रतीक बन गया। "मुझे चाँद चाहिए" के बाद डा० शिव प्रसाद सिंह का उपन्यास "नीला चाँद" एक मील का पत्थर साबित हुआ। अनुभव के आकाश में चाँद लीलाधर जगुड़ी के काव्य संग्रह ने भी तो चाँद की प्रतीकात्मकता प्रमाणित कर दी (साहित्य अकादमी पुरस्कार 1997)।

सुरेन्द्र वर्मा ने अपने इस बहु आकांक्षी, वृहदाकार वाले उपन्यास "मुझे चाँद चाहिए" में चाँद के इतने बहु आयामी एवं व्यंजनापूर्ण प्रयोग ऐसी खूबसूरती से किये हैं कि कृति के सभी अंग- उपादान एवं दृष्टि व कोण इसकी चाँदनी की छटा से आलोकित हो उठे हैं। यह प्रयोग अपनी प्रतीकात्मकता में कलात्मक तो है ही, गहन वैचारिकता से संबधित भी हैं।

यह शब्द हैं सत्यदेव त्रिपाठी के जो उन्होंने इस उपन्यास की समीक्षा करते हुए दस्तावेज 68, जुलाई- सितम्बर, 1995 ईसवीं में लिखे थे।

इस उपन्यास सृजन के पीछे लेखक का क्या उद्देश्य था उसका विवेचन करते हुए समीक्षक ने आगे कहा है:

"उपन्यास खोलते ही प्रथम पृष्ठ 91 "कालिगुला" के उद्धरण पर नजर पड़ती है, अचानक मुझमें असंभव की आकांक्षा जागी। अपना यह संसार काफी असहनीय है, इसलिए मुझे चन्द्रमा या खुशी चाहिए-- कुछ ऐसा, जो वस्तुतः पागलपन सा जान पड़े।"

और वर्षा वशिष्ठ का पूरा जीवन इसी असम्भव के चाँद को छूने का प्रयास है। ज्योतिष के अनुसार चन्द्रमा नक्षत्र से प्रभावित जातक पागलपन की सीमा तक किसी चाह का पीछा करते हैं। उनकी रूचि कलात्मक और प्रकृति प्रेमी की होती है। वर्षा वशिष्ठ का हर काम दूसरों को पागलपन लगता है। चाहे वह दशवीं में पढ़ते हुए यशोदा शर्मा से वर्षा वशिष्ठ का नाम परिवर्तन हो, चाहे घर के कार्य के साथ ट्यूशन नौकरी करने वाली शर्मा परिवार की सात पीढ़ियों में यह पहली लड़की हो अथवा शादी व्याह करके घर बसाने के बदले नाटक करने का दीवानापन हो। इसी तरह आगे चलकर फिल्मों की सफल तारिका बन जाने के बाद भी बँगले के बदले छोटे फ्लैट में रहना, छोटे बजट की सार्थक फिल्मों तथा नाटकों में समय गँवाना भी सबके बीच पागल पन ही समझा गया। और सबसे बड़ा पागलपन तो प्रेमी हर्ष के मर जाने के बाद अपने गर्भ में पलते उसे बच्चे की बिन व्याही माँ बनने के निर्णय को माना गया।

इन पागलपनों के केन्द्र में अभिनय प्रेम एवं हर्ष प्रेम वर्षा वशिष्ठ की वे खुशियाँ या चाँद हैं, जिनके बिना "कालिगुला" की तरह उसके लिए दुनिया काफी असहनीय होती।[1] वह उन्हीं दोनों के लिए पूरे उपन्यास में जीती दिखायी गयी है। हर्ष की मृत्यु पर "मेरे वास्ते चन्द्रमा हमेशा के लिए बुझ गया है।[2] के रूप में प्रतीक काफी स्पष्ट है। अभिनय प्रेम के

1. दस्तावेज 68, जुलाई सितम्बर 1995 ईसवी, पृष्ठ 51
2. मुझे चाँद चाहिए, पृष्ठ 547

लिये भी "चाँद" के प्रतीक का प्रयोग पूरी मनोहरता के साथ उभर कर आया है : पहली फिल्म "जलती जमीन" के शुरु हो जाने पर "चाँद" निकल आया था। दूर–दूर तक दिखाई देते बालू के ढूहों पर चाँदनी फैली थी।[1] और जब शूटिंग पूरी हो गयी तो "बगल में खेजरे के पेड़ थे। ऊपर गोलाकार चाँद"।[2] यूँ वे दोनों असम्भव आकांक्षायें नहीं हैं किन्तु, हर्ष को पाकर भी न पा सकना असम्भव का चाँद जरूर है।

(ख) लेखक की रचना दृष्टि और भाषा के प्रति उसकी मान्यता

'मुझे चाँद चाहिये' के पीछे लेखक की रचना दृष्टि क्या है और उसने इसमें उपन्यास का ढाँचा, भाषा शैली आदि से संबद्ध कितने प्रयोग किये हैं यह विचारणीय है। एक साक्षात्कार में उसने इन प्रश्नों का जवाब देते हुए कहा है :

इस उपन्यास की रोचकता के कारणों में एक कारण इस उपन्यास की रचना–शैली है। मैंने इसे रोचक शैली में लिखा है। कई बार ऐसा हुआ है कि मैं अच्छे और बड़े उपन्यास पढ़ नहीं पाया। जैसे 'मिडनाइट चिल्ड्रेन' .... मैंने तीन बार कोशिश की, मगर पचास–साठ पृष्ठों से आगे नहीं जा सका। इसके विपरीत मिलान कुन्देरा के उपन्यास देखे। मुश्किल विषय लेकर चलते हैं, मगर कहने का ढंग इतना रोचक होता है कि 'सत्ता और निजी स्वतंत्रता' जैसे बोझिल और दर्दनाक विषय को भी सार्वभौमिक बना देते हैं।[3]

इसे रोचक बनाने के लिये आपने क्या प्रयोग किये इसके उत्तर में सुरेन्द्र वर्मा ने कहा :इसमें मैंने तरह–तरह से उपन्यास के ढाँचे की सीमाओं को लचीला बनाते हुये बड़े सजग तरीके से तरह–तरह के प्रयोग किये। इसमें नाटक की विधा का इस्तेमाल किया, दो पात्रों की भिड़ंत और संवाद। सिनेमा की तकनीक का इस्तेमाल किया, खासकर 'जंप कटिंग'.........पता नहीं होता कि यहाँ से कहानी कहाँ जायेगी। इसमें मैंने सूत्रधार की टिप्पणी का इस्तेमाल किया। उपन्यासकार आता है और बीच–बीच में टिप्पणी करता चलता है। मेरे किसी नाटक तक में सूत्रधार नहीं है। लेकिन उपन्यास में लाया मैं।[4]

फिर आपने इसे नाटक के रूप में ही क्यों नहीं लिखा। इस प्रश्न के उत्तर में उन्होंने कहा : नाटक तो यह हो ही नहीं सकता था। इसका इतना बड़ा फैलाव था कि यह तो आठ घंटे का नाटक होता। यह सम्भव नहीं था। उपन्यास को मैं किसी कथाकार के लिये सबसे अधिक चुनौतीपूर्ण और प्रभावशाली विधा मानता हूँ। उपन्यास की शैली और रूप में प्रयोग करना चाहता

---

1. मुझे चाँद चाहिये, पृष्ठ 301
2. मुझे चाँद चाहिये, पृष्ठ 304
3. 'अमर उजाला' 4 जुलाई 1998 में प्रकाशित अजय ब्रह्मात्मज द्वारा लिया गया सुरेन्द्र वर्मा का साक्षात्कार।
4. अमर उजाला' 3 जुलाई 1998 में प्रकाशित अजय ब्रह्मात्मज द्वारा लिया गया सुरेन्द्र वर्मा का साक्षात्कार।

था। तब मुझे पता नहीं था कि यह प्रयोग कामयाब होने वाला है। इस उपन्यास में काफी मेहनत करनी पड़ी। लगभत सात ड्राफ्ट लिखे होंगे मैंने।[1]

इसी प्रेरणा ने 'मुझे चाँद चाहिये' के शिल्प में अनेक प्रयोगों की सृष्टि कर दी है। उसकी भाषा, उक्तियों, वाक्यबंधों में संस्कृत, अँग्रेजी और देशज शब्दों के कई रूप मिलते हैं। शैली विज्ञान की दृष्टि से उसमें अनेक स्तरों पर अन्तर्पाठों की योजना है। इसमें भाषा और शैली के कई स्तर मिलते हैं।

लेकिन इस उपन्यास के सृजन के पीछे सिर्फ वर्षा वशिष्ठ जैसी नारी की असम्भव आकांक्षा रूपी चाँद की ही प्रेरणा नहीं है, यह चाँद आज के मूल्यों के पतनोन्मुखी आकाश में असम्भव के चाँद का अस्त हो जाना भी है। "संभव आकांक्षाओं का, काबलियत के बावजूद असम्भव बनते जाना ही आज की त्रासद नियति है और जमाने के पतनोन्मुख मूल्यों की इस कहानी का पूरी शिद्दत के साथ अहसास कराता है। प्रस्तुत उपन्यास[2] इस उपन्यास पर सिर्फ वर्षा वशिष्ठ की दृष्टि से सोचा गया किन्तु, मूल्य चेतना का केन्द्र हर्ष है जो अन्त में अपनी आकांक्षा के चाँद को प्राप्त नहीं कर पाता है। अतः इस उपन्यास की रचना के मूल में हर्ष के चरित्र की त्रासदी भी एक महत्वपूर्ण तत्व है। अतः इस उपन्यास के उद्देश्य को जानने के लिये हर्ष के चाँद को भी समझना बहुत जरूरी है।

हर्ष सम्पन्न परिवार के अफसर का बेटा है। एम.ए. की शिक्षा अधूरी छोड़कर तथा कई–कई भौतिक सम्भावनाओं को ठुकराकर सिर्फ अभिनय की खुशी पाना चाहता है – उसे सिर्फ अभिनय की कला का चाँद चाहिये। अथक परिश्रमों–प्रयत्नों के बाद अपनी मनचाही फिल्म "मुक्ति" के शुभारम्भ के दिन सेट पर जाते हुये वर्षा से हाथ मिलाकर हर्ष "कालिगुला" का संवाद बोलता है, "होलिकॉन, मैं सिर्फ चाँद चाहता हूँ।"[3] और वह उसे नहीं मिला। "मुक्ति" बन नहीं पायी। उसे कई पुरस्कार मिल चुके थे। वह भारत का श्रेष्ठ अभिनेता माना जाता था[4] अब और क्या चाहिये। किसी भी दृष्टि से देखो, हर्ष को आकाश पर होना चाहिये था।[5] पर उसे आत्महत्या करनी पड़ी– "वह चौपाल के धूल भरे फर्श पर सूखी विष्ठा के बीच पड़ा था"[6] उसकी कलात्मक क्षमता और सफलता के बीच, "खलनायक की भूमिका निभाने वाले थे, उत्कृष्ट कला मूल्य और समझौता विरोधी कार्यशैली"[7]

---

1. अमर उजाला' 3 जुलाई 1998 में प्रकाशित अजय ब्रह्माम्रज द्वारा लिया गया सुरेन्द्र वर्मा का साक्षात्कार।
2. दस्तावेज 68, पृष्ठ 51
3. मुझे चाँद चाहिये, पृष्ठ 421
4. मुझे चाँद चाहिये, पृष्ठ 541
5. मुझे चाँद चाहिये, पृष्ठ 546
6. मुझे चाँद चाहिये, पृष्ठ 546
7. मुझे चाँद चाहिये, पृष्ठ 524

उत्कृष्ट कला मूल्यों के प्रति समर्पण और समझौता विरोधी कार्य शैली ही उसके विनाश का कारण बन जाती है।। यह युगबोध भी कितना भयावह है कि आज कोई एक–दो व्यक्ति खलनायक नहीं रहे। पूरा जमाना ही खलनायकत्व में इस कदर डूबा है कि मूल्य वत्ता की खलनायक बनने के लिए अभिशप्त हे। इससे जयादा त्रासद और क्या हो सकता है। सुरेन्द्र वर्मा ने इस रूप में आज के युग का सबसे ज्वलन्त एवं संवेदनशील (सेन्सिटिव) प्रश्न उठाया है और इसे यथार्थ की अधिकतम संभावनाओं के बीच पूरी सतर्कता के साथ प्रस्तुत किया है। [1]

"मुझे चाँद चाहिए" में मूल्यहीनता का यह अंश इसलिए जयादा गहरा व असरकारक है, क्योंकि लेखक ने इसे व्यापक स्तर पर उठाकर यथार्थ की वृहत्तर स्थितियों को उघाड़ दिया है। आज समझौता कविता का पूर्ण वर्चस्व है। कोई हर्ष शायद ही खोजे से मिले, वरना सभी समझौते के लिए तैयार या मजबूर हैं।

इस उपन्यास का एक प्रमुख तत्व वर्षा का अभिनय के चाँद को पाने के लिए संघर्ष करना भी है। अभिनय के इस चाँद को कलाकारों के कोण से देखा गया है– प्रमुखतः प्रशिक्षित कलाकारों के कोण से इसके लिए लेखक ने राष्ट्रीय नाट्य विद्यालयपर पूरे दो सौ पृष्ठ लिखकर कलाकारों की प्रशिक्षण प्रक्रिया में उनकी अनथक मेहनत, समर्पण, लगन व मुस्तैदी से मिली–जुली मशक्कत और उससे आती कला क्षमता का ऐसा सजीव चित्र उपस्थित किया है कि वह राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय का एक प्रवृत्तिगत् दस्तावेज तो बना ही है, पूरी रचना में विश्लेषित अभिनय कला की व्याख्या से यह उपन्यास रंगमंच के प्रशिक्षण के लिए एक जरूरी पाठ्य पुस्तक के रूप में भी पढ़ा जा सकता है।[2] इसी धरातल पर वर्षा और हर्ष के अभिनय प्रेम को प्रस्तुत करने के लिए लेखक ने पूरी पृष्ठभूमि रची है। इस प्रसंग का उल्लेख यहाँ इसीलिए किया गया कि इसनें इस उपन्यास की भाषा– संरचना को प्रमुख रूप से प्रभावित किया है। इसी कारण से इस उपन्यास के केन्द्रीय तत्व के रूप में यहाँ नाटक और नाट्य उपादानों का संक्रमण हुआ है। कहीं–कहीं तो संदेह होने लगता है कि हम नाटक पढ़ रहे हैं या उपन्यास। नाट्य विधा से अप्रत्यक्ष रूप से संवेदना के रूप में जुड़े होने के कारण इस उपन्यास की भाषा संरचना में कालिदास के उदाहरणों समेत अन्य अनेक यूरोपीय नाटकों के उदाहरणों की इसमें बहुलता है। पर पूरा उपन्यास नाटकों पर आधारित है। नाटकों से बना है। उपन्यास में नाटक है। [3]

----

1. दस्तावेज 68

2. "हँस" जुलाई 1994 में प्रकाशित रवीन्द्र त्रिपाठी की समीक्षा, पृ0 85

3. दस्तावेज 68, पृष्ठ 59

इसलिए कहा गया है कि "मुझे चाँद चाहिए" ने हिन्दी के उपन्यास साहित्य में "गोदान" "मैला आँचल", "राग दरबारी", "कुरू कुरू स्वाहा", के बाद एक नया क्षितिज खोला है, एक नए दौर की शुरूआत की है। [1] यह शुरूआत सिर्फ उपन्यास के विधागत रूप में ही नहीं उसकी प्रस्तुतीकरण शैली और भाषा संरचना में भी है। इसीलिए इसका शैली तात्विक अनुशीलन इसकी रचनात्मक शैली और भाषा के रचाव को उजागर करेगा। इसकी विशिष्टता वस्तु के चुनाव के साथ– साथ इसकी शैली में भी निहित है। इसकी भाषा के सम्बन्ध में कहा गया है: इस रचनात्मक रसायन से वस्तुतः हिन्दी में सर्वथा नयी भाषा ही नहीं, नये कथा– कौशल का आविष्कार हुआ है। [2]

कथा भाषा के स्वरूप और उसकी अवधारणा के स्पष्ट करने के बाद शैली तात्विक अध्ययन की सीमाएं व प्रतिपाद्य विषय के प्रस्तुतीकरण की सीमाओं को स्पष्ट किया जायेगा। यहाँ तक यह देखने को मिला कि "मुझे चाँद चाहिए" उपन्यास के पीछे कौन सी प्ररणाएं काम कर रही हैं और इस उपन्यास का स्वरूप, कथ्य व केन्द्रीय तत्व कौन सा है जिसने इसकी भाषा व शैली को प्रभावित ही नहीं, उसकी रचना भी की है।

3. शैली विज्ञान और भाषा संरचना

यह अध्ययन शैली तात्विक अनुशीलन तक सीमित है। इसमें न तो "मुझे चाँद चाहिए" उपन्यास की भाषा का व्याकरणिक अनुशीलन किया गया है, न समाज वैज्ञानिक, न भाषा वैज्ञानिक। इसमें तो सामान्य रूप से शैली विज्ञान के अन्तर्गत आने वाले तत्वों की दृष्टि से प्रस्तुत उपन्यास की भाषा का अनुशीलन किया गया है।

शैली और शैली विज्ञान

शैली (स्टायल) लिखने के ढंग को कहते हैं। यह शब्द रचना की एक पद्धति है। इसीलिए मध्यकाल में इसे रीति भी कहा गया है। संस्कृत काव्यशास्त्र में तो रीति पर आधारित एक वाद ही प्रचलित हो गया था। इसके अत्यधिक अनुकरण के कारण मध्यकालीन हिन्दी साहित्य का एक नाम रीतिकाल भी हो गया है।

यहाँ शैली विज्ञान यूरोप से आगत शैलीय अध्ययन की एक प्रणाली के रूप में व्यवहृत है।

---

1. वही पृष्ठ 59
2. वही पृष्ठ 60 पर उद्घृत डा0 विजय मोहन सिंह का कथन।

शैली विज्ञान पर पिछले तीस चालीस वर्षो से काफी शोध और चिन्तन मनन हुआ है। उसे एक विज्ञान समझकर उसकी कई शास्त्रीय व्याख्याएं की गई हैं। वर्तमान रूप में शैली विज्ञान पश्चिम से आगत भाषा संरचना के अध्ययन की एक प्रणाली है। हिन्दी में इसका प्रयोग स्टायलेस्टिक सांइस के स्थान पर किया जा रहा है। इसके दो रूप हैं। एक तो इसका सिद्धान्त पक्ष, दूसरा इसका अनुप्रयुक्त "एप्लाइड" पक्ष। मेरा विषय अपनी सीमा में शैली विज्ञान के कुछ सिद्धान्तों के आधार पर "मुझे चाँद चाहिए" उपन्यास की भाषा– संरचना का विवेचन है। इस विवेचन का लक्ष्य छपते ही हलचल मचा देने वाले इस उपन्यास की शैली और भाषा वैशिष्ट्य का उद्‌घाटन है। इसकी भाषा और शैली की सभी ने प्रशंसा की है। इस अध्ययन से उसकी भाषा संरचना के सौन्दर्य का उद्‌घाटन होता और उसकी कथन भंगिमाओं का अभिव्यंजन।

शैली

गद्य पाश्चात्य जगत की उपज हे। हमारे यहाँ इसका विकास बाद में हुआ। इसलिए यूरोप में गद्य शैली के विवेचन पर अरस्तु, डेमेटियस, लोंगिनुस, जैसे अभिजात लेखकों से लेकर वाल्टर कैले, हर्बर्ट रीड, मिडल्टन मरि और लूकस जैसे आधुनिक विद्वानों ने काम किया है।

स्टायल के लिए हिन्दी में शैली अभिधा का प्रयोग किया जाता है। इसका दूसरा पर्याय "रीति" या प्रणाली है। शैली की व्युत्पत्ति शील से हुई है। शील का सम्बन्ध व्यक्ति के निजी शील, उसकी व्यक्तिगत् विशेषताओं से है। इसलिए जब यह कहा जाता है कि किसी का स्टायल उसके व्यक्तित्व का ही दूसरा रूप है तब शील पर आधारित शैली शब्द की व्यंजकता का पता चलता है। "रीति" के अर्थ में शैली शब्द के प्रयोग का इतिहास पतज्जलि के महाभाष्य से शुरू होता है, जिसमें कहा गया है-- एषा हूयाचार्यस्य शैली लक्ष्यते....।" इसी अर्थ में इस शब्द का व्यवहार मुक्तिबोध के टीकाकार आचार्य दुर्गादास ने भी किया है– प्रायेणाचायणािमियं शैली, यत्सामान्यामिधाय विशेषण विवृणोति। [1]

"स्टायल" शब्द लातिन के स्टिलस से निकला है। जिसका अर्थ है लौह लेखनी या कलम। व्यंज्जना से यही शब्द शैली के अर्थ में रूढ़ हो गया।

लिखने या बोलने में अभि व्यंजन की रीति या प्रकार को "वचन– विन्यास–क्रम" अथवा वार्क् या लेखन– शैली का "स्टायल" कहते हैं। डा0 रामचन्द्र प्रसाद के शब्दों में " अभिव्यक्ति की वह विशिष्ट पद्धति जो अन्य पद्धतियों से भिन्न होती है शैली कहलाती है। [2]

----

1. शैली, डा0 रामचन्द्र प्रसाद, बिहार हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, पटना पृष्ठ क, अवतरणिका।

2. वही, पृष्ठ ग

शैली के सम्बन्ध में हर युग की अपनी निजी मान्यताएं होती हैं और हर युग की शैली के विशिष्ट लक्षण होते हैं। स्थानों के अनुसार भी शैलियाँ बदलती रहती हैं। शैली का आधार विभिन्न युगों और अंचलों में प्रचिलत वाक भंगिमाएं होती हैं। जैसे फ्लोरेण्टाइन, पर्सियन, एटिक, रोडेशियन, एशियाटिक, वैदर्मी, गौडीया, पांचाली ,अवन्ती, दक्षिणात्या इत्यादि। इसी प्रकार साहित्य की विभिन्न विधाओं की विभिन्न शैलियाँ होती हैं। संसार में जितने व्यक्ति उनकी जितनी अभिरूचियाँ हो सकती हैं उनकी उतनी ही शैलियाँ होती हैं–

अस्तयेकां गिरां मार्ग: सूक्ष्मभेद: परस्परम्" [1]

शैली व्यक्ति की ही मूर्त अभिव्यक्ति है और मानव व्यक्तित्व के समान जटिल तथा अविश्लेषणीय भी।

शैली के अधिकांश विवेचन व्याकरण के नियमों के निरूपण और विश्लेषण से भरे होते हैं। इसका कारण यह बताया जाता है कि शैली का सम्बन्ध भावाभिव्यक्ति की विधि या लेखक के विशिष्ट लेखन– प्रकार "विशिष्ट पद–रचना" से है। अभिव्यक्ति की प्रभविष्णुता और आर्जव विशुद्ध शब्द– प्रयोगों और संगठित वाक्य विन्यास पर निर्भर होता है। शैली विज्ञान इन्हीं तथा कुछ अन्य तत्वों का शास्त्रीय अनुशीलन है। इस शैली विज्ञान के मुख्य उपादान विचलन, समानान्तरता, प्रक्ति और चयन माने जाते हैं। ये सभी तत्व ध्वनिगत्, शब्दगत्, अर्थगत् और वाक्यगत् हो सकते हैं। इन्हीं उपादानों पर शैली विज्ञान आधारित है और किसी गद्य या काव्यात्मक रचना का अनुशीलन इन्हीं आधारों पर किया जाता है।

शैली विज्ञान अपने आप में एक अत्यन्त ऊहा–पोह युक्त जटिल विषय है। इसकी कई धाराएं और कई परिभाषाएं हैं। इस पर डा0 भोलानाथ तिवारी, डा0 रवीन्द्र नाथ श्रीवास्तव, डा0 विद्या निवास मिश्र, डा0 सुरेश कुमार, डा0 कृष्ण कुमार शर्मा तथा डा0 नगेन्द्र ने काम किया हे। इधर शैली विज्ञान को ही केन्द्र बनाकर सर्वाधिक शोध कार्य डा0 पाण्डेय शशिभूषण शीतॉशु ने किया है। डा0 पाण्डेय का कार्य अत्यन्त उच्च स्तर पर और विविधतापूर्ण है। इन्होंने पाश्चात्य जगत में हुए शैली विज्ञान सम्बन्धी कार्य में अपना कुछ जोड़कर हिन्दी में इस विषय का पल्लवन, प्रस्तुतीकरण ओर विश्लेषण किया है।

शैली विज्ञान: परिभाषा और स्वरूप

शैली विज्ञान साहित्यालोचन की वह नवीन विद्या है, जिसका प्रकार्य भाषिक उपकरणों के आधार पर साहित्य का वस्तुनिष्ठ एवं वैज्ञानिक विश्लेषण करना है। वस्तुत: साहित्यिक अभिव्यक्ति का माध्यम भाषा है। साहित्यकार कृति में प्रभावान्वित हेतु ऐसी माषिक संरचना का विधान करता है, जिससे मूल प्रतिपाद्य सुन्दर रूप में सम्प्रेषित हो सकें। अत: भाषावादी दृष्टिकोण से कृति का विश्लेषण करते हुए

उसके मर्म को अच्छी तरह उद्घाटित किया जा सकता है। शैली विज्ञान एक ऐसा ही आलोचना सिद्धान्त है, जो कृति के अर्थोन्मेष के लिए भाषावादी दृष्टि अपनाता है। [1]

शैली विज्ञान की जो भी परिभाषाएं दी गयी हैं वे या तोकृति के रूप पर आधारित हैं अथवा उसके कथ्य पर। किन्तु कृति के रूप का विश्लेषण उसके कथ्य के सौन्दर्य का विवचेन करना ही है। किसी अभिव्यक्ति भंगिमा से कृति के कथ्य में क्या सौन्दर्य, विशिष्टता आयी है इसी का विवेचन शैली विज्ञान का लक्ष्य है। इसलिए कुछ लोग जब भाषा संरचना पर दृष्टि केन्द्रित करते हैं, तब उन्हें शैली विज्ञान भाषागत प्रयोगों का अध्ययन [3] साहित्य के भाषिक विधान का रूपात्मक अध्ययन [3], शैली का वैज्ञानिक अध्ययन [4], मानते हैं तब उनका ध्यान शैली के आकारगत पक्ष पर केन्द्रित रहता है और जब कुछ लोग उसे कथ्य का प्रस्तुत करने वाले शेलीगत उपादानों के अनुशीलन को मानते हैं तब उनका ध्यान रचना से व्यंजित होने वाले अर्थ पर केन्द्रित रहता है।

दर–असल शैली विज्ञान आलोचना की ही एक पद्धति है, क्योंकि इसका मुख्य उद्देश्य किसी रचना के आन्तरिक मर्म अर्थ और सौन्दर्य का उद्घाटन ही है। अगर शैली विज्ञान किसी कृति के वाह्य रूप को ही अधिक महत्व देने लगे तब फिर यह व्याकरण्कि नियमों का विश्लेषणं अथवा अलंकार शास्त्र जैसा कोई यांत्रिक शास्त्र बनकर रह जाएगा।

इसलिए शैली विज्ञान साहित्यालोचन की ऐसी नवीन प्रणाली है जो रचना को केन्द्र में रखकर उसका वैज्ञानिक एवं वस्तु विश्लेषण करते हुए निहित सौन्दर्य और साहित्यिकता के स्तर को रेखांकित करती है। इसमें भाषा संरचना को केन्द्र बनाकर किसी कृति की मूल संवेदना अथवा उसके प्रतिपाद्य का उद्घाटन किया जाता है।

इस विज्ञान में सिद्धान्त और उन सिद्धान्तों का अनुप्रयोग दोनों निहित है। इसलिए यह एक तत्वदर्शन भी है और एक व्यावहारिक विज्ञान भी।

<u>अध्ययन की दिशा और सीमाएं</u>

प्रस्तुत उपन्यास में प्रतिपाद्य वस्तु के अनुशीलन की एक निश्चित दिशा और सीमा है। इसमें रहकर ही मैंने अपने अध्ययन को आगे बढ़ाया है। शैली तत्व अथवा शैली विज्ञान की दृष्टि से किसी भी गद्य कृति के अनुशीलन की कई दिशाएं हो सकती हैं। प्रस्तुत अनुशीलन की भी एक दिशा है। और वह इस प्रकार है :–

---

1. डा० कश्मीरी लाल सैनी, श्री लाल शुक्ल के उपन्यासों का शैली वैज्ञानिक विश्लेषण: पृष्ठ 3–4, गुरूनानक देव यूनिवर्सिटी, अमृतसर।

अनुशीलन

"मुझे चाँद चाहिए" की भाषा- संरचना का निम्न सारणियों के आधार पर किया जाएगा।

(क). ध्वनि मूलक शैलीय उपकरण

(ख). शब्द रूपात्मक शैलीय उपकरण

(ग). अर्थगत शैलीय उपकरण

(घ). वाक्यात्मक शैलीय उपकरण

(क). ध्वनिगत शैलीय उपकरणों के अन्तर्गत

"मुझे चाँद चाहिए" की भाषा- संरचना में "लय", "तुक", "आरोह-अवरोह", "अलंकारातमक लय", लय और अनुकार, ध्वनि समूह, रीतिया वृत्ति, गुणों की व्यंजकता, व्यक्ति वैशिष्ट्य सूचक व्यंजक ध्वनियाँ आदि उपादानों के सहारे प्रतिपाद्य उपन्यास में उसके ध्वनिगत् गुणों को खोजा जाएगा।

(ख). शब्छ रूपात्मक शैलीय उपकरणों में

भावात्मक प्रत्यय, भावात्मक रूप विकार, नव निर्मित शब्द, शब्दालंकार, विशिष्ट शब्द समूह, पारिभाषिक शब्द, अभिजात शब्द, वेशभूषा संबधी शब्द, सौन्दर्य सम्बन्धी शब्द, भोजन सम्बन्धी शब्द, कला- संस्कृति-सम्बन्धी शब्द, विदेशी शब्द, ग्राम्य शब्दों के आधार पर भाषा- संरचना का वैशष्ट्य खोजा जायेगा।

(ग). अर्थगत् शैलीय उपकरणों में

विचलन, चयन, समान्तरता, प्रोक्ति का विश्लेषण किया गया है

(घ). वाक्यगत् शैलीय उपकरणों में

वाक्य के अन्तर्गत आने वाली सभी व्याकरणिक कोटियों के आधार पर भाषा संरचना का अनुशीलन किया जाएगा। तदनन्तर वाक्य संरचना में शब्द क्रम, अन्विति, लोकोक्ति, सूक्ति, वाक्य बंध, अनुच्छेद, गीतों का अनुशीलन किया जाएगा।

शैली वैज्ञानिक विश्लेषण का महत्व

डा0 पाण्डेय शशिभूषण शीतांशु का मत है कि शैली के विश्लेषण संदर्भ में अब तक प्रतिमान विषयक गम्भीर चिंतन- मनन नहीं हो पाया है।[1] पर स्वयं डॉ0 शीतांशु ने अपने विविध ग्रन्थों के माध्यम से इस विषय का जो क्रमवार, शोधोपयोगी, मानक निर्धारण पूर्वक विवेचन किया है, वह विवेचन इस कथन को निरस्त करता है। फिर भी शैली विषयक प्रतिमान निर्धारण के अभाव में जो विवेचन

---

1. डा0 शीतांशु शैली और शैली विश्लेषण पृ0 131

हुए हैं उनके संदर्भ में डा0 रवीन्द्र नाथ श्रीवास्तव का यह कथन विचारणीय है कि कई विद्वानों ने इस पर न केवल पुस्तकें लिखने का काम आरम्भ कर दिया, बल्कि इस पर डॉक्टरेट उपाधि के लिए शोध निर्देशन का उत्तर दायित्व भी ले लिया, बिना यह ध्यान दिये कि शैली विज्ञान के वस्तुपरक चिंतन, भाषावादी दृष्टि, संक्रियात्मक प्रणाली और विश्लेषणात्मक तकनीकी की प्रकृति क्या है।[1]

हिन्दी में पहली बार डा0 शीतांशु ने 1984 तथा 1987 में क्रमशः शैली विज्ञान: प्रतिमान और विश्लेषण" तथा "शैली विज्ञान: प्रकार और प्रतिमान" ग्रन्थो के द्वारा शैली के प्रतिमानों का सम्यक रूपेण विवेचन कर उनकी प्रतिष्ठापना की।

शैली विषयक विश्लेषण में सबसे पहले यह प्रश्न उठता है कि शैली का विश्लेषण किन प्रतिमानों के आधार पर किया जाएगा इसके लिए कौन से प्रतिमान का चयन या ग्रहण उपयोगी होगा।

डा0 कश्मीरी लाल सैनी का मत है कि शैली वैज्ञानिक विश्लेषण की बात आते ही रचना की प्रकृति (विधा) की ओर ध्यान आकृष्ट होता है।.... गद्य संरचना और उसमें भी कथा साहित्य की गद्य संरचना एक विस्तृत विश्लेषण के प्रतिमान की अपेक्षा करती है। कथा साहित्य के विश्लेषण के लिए दूरगामी और हर दृष्टि से परिपूर्ण प्रतिमान की आवश्यकता होती है। इस क्रम में प्रश्न उभरते ही जो प्रतिमान हमारे सामने आता है, सम्यक, परिपूर्ण और सार्थक रूप से कृति के अभिप्राय, सम्वेदन, सौन्दर्य तथा उन विशिष्टताओं को उजागर करने में समर्थ जो सूक्ष्य प्रतिमान हैं, वह है "अग्रप्रस्तुति प्रतिमान।[2]

शैली वैज्ञानिक विश्लेषण के लिए इसी प्रतिमान को सर्वाधिक उपयोगी, समर्थ और दूरगामी कहा गया है। अग्रप्रस्तुति (Foregrounding) चित्रकला का शब्द है और वेक ग्राउण्ड, मिडिल ग्राउण्ड के वजन पर इसे फोर ग्राउण्ड आगे की पृष्ठभूमि के अर्थ में प्रस्तुत किया जाता है।

अग्रप्रस्तुति का अर्थ है आगे आकर अपना ध्यान खींचने वाला। इसमें ऐसी भाषा संरचनाएं आ जाती हैं जो वाक्य में प्रयुक्त होकर हमारा ध्यान सबसे पहले खींचती हैं।

एम.ए.के. हैलीडे के अनुसार अग्र प्रस्तुति एक ऐसी अभिप्रेरणाशील भाषिक प्रभुसत्ता है जो पाठ की अर्थ सत्ता से पूरी तरह जुड़ी हुई है।[3]

---

1. वही पृष्ठ 131 पर उद्धृत।
2. श्रीलाल शुक्ल के उपन्यासों– का शैली वैज्ञानिक विश्लेषण, पृष्ठ 147
3. एम.ए.के. हैलीडे, लिंग्विस्टिक्स फंक्शन एण्ड लिटरेरी स्टायल: ए. सिम्पोजियम, सं0 सेमूर चैटमैन (लंदन : ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, 1971) पृष्ठ 339

रवीन्द्रनाथ श्रीवास्तव के अनुसार "पेशबन्दी (फोर ग्राउडिंग) वस्तुतः अभिव्यक्ति की वह भंगिमा है, जो अपनी वक्रता के कारण हमारा न केवल ध्यान आकर्षित करती है, वरन् यंत्रस्थ होती जा रही हमारी सम्वेदनाओं में एक नया रंग भरती है और वस्तु जगत् के प्रति हमारे रूढ़िगत् बोध में एक नवीनता का उन्मेष करती है। [1]

पाण्डेय शशि भूषण शीतांशु के अनुसार भाषिक अग्र प्रस्तुति तब सामने आती है जब कोई अप्रत्याशित भाषिक प्रयोग स्वतः पाठक का ध्यान आकर्षित करने लगे, उसे असामान्य रूप में गृहीत होने लगे और अपना नोटिस लेने को बाध्य करने लगे। [2]

डॉ0 पाण्डेय ने शैली विषयक सारे प्रतिमान अग्र प्रस्तुति के ही अन्तर्गत विवेचित किए हैं। अग्र प्रस्तुति वाक्य में भाषिक इकाई की प्रस्तुति भर है जो पाठक का स्वतः ही ध्यान खींचकर उसके समक्ष शैली की प्रयोग गत विशिष्टता को उद्घाटित कर देती है। इसके आधार तत्व स्मरणीयता, असाधारण प्रभावशालिता, महत्ता, विमर्शात्मक मूल्य वत्ता होते हैं।

अग्र प्रस्तुति विचलन, विपथन, समान्तरता, विरलता, चयन और प्रोक्ति के स्तर पर होती है। फिर इन्हीं को ध्वनि, शब्द रूप, अर्थ, वाक्यगत् प्रयोगों में खोजा जाता है। इसी आधार पर किसी कृति की भाषा– संरचना का विश्लेषण विधेय है।

विचलन भाषा के मानक प्रयोग से किया जाने वाला अतिक्रमण, उल्लंघन या व्यतिक्रम है।

डा0 पाण्डेय के अनुसार शैली के अध्ययन के लिए विचलन की संकल्पना महत्वपूर्ण है। इसका अनुप्रयोग व्यापक स्तर पर होता है। यह शैली की परिभाषा से लेकर "शैली" के अभिलक्षण और प्रतिमान तक में सक्रिय दिखने वाली संकल्पना है। इसका व्यवहार ऐसे भाषिक एकक को निर्दिष्ट करने के लिए किया जाता है, जो अव्याकरणिक अथवा अप गठित होता है, साथ ही जो भाषा के नियम के अनुसार प्रयुक्त नहीं हो पाता है। [3]

<u>विचलनः भेद निरूपण</u>

डा0 शीतांशु ने अनेक शैलीविदों की विचलन सम्बन्धी अवधारणाओं का गहन मंथन करने के बाद उसके आन्तरिक और बाह्य दो विभाग किए, फिर बाह्य चिलन को भी गुणात्मकता और आनुपातिकता के आधार पर स्पष्ट और सांख्यिकीय इन दो उपविभागों में बाँटकर विवेचित किया है। फिर

----

1. संरचनात्मक शैली विज्ञान, डा0 रवीन्द्र नाथ श्रीवास्तव, आलेख प्रकाशन पृष्ठ 43 , 1979
2. डॉ0 पाण्डेय शशि भूषण शीतांशु, शैली और शैली विश्लेषण, पृष्ठ 135
3. वहीं, पृष्ठ 165

इन्होंने विचलन के इन प्रकारों को चार मुख्य भाषिक स्तरों पर विवेचित किया है। वे हैं – ध्वनि (लेखिमिक और औच्चारिक), शब्द, वाक्य और प्रोक्ति स्तर पर तथा अर्थ स्तर पर।

चयन

चयन का अर्थ छाँटना है अर्थात् भाषिक स्तर पर लेखक किस शब्द का चयन करता है, इससे लगाया जाता है। विचलन के समान चयन भी भाषा को एक विशिष्टता प्रदान करता है। भाषा में चयन साभिप्राय होता है। इसके भेद ध्वनि, रूप, शब्द और वाक्य स्तर पर होते हैं। प्रतिपाद्य उपन्यास में इन सभी स्तरों पर चयन उपलब्ध होता है।

समानान्तरता : अवधारणा

डॉ. रवीन्द्र नाथ श्रीवास्तव के शब्दों में ''समानान्तरता का अर्थ है किसी भाषिक लक्षण या विधान की पुनरावृत्ति की नियमितता।[1]

डॉ. शीतांशु के मत से ''समानान्तरता में समता और विरोध की दो दिशायें खुलती हैं। विविध प्रकारों की आवृत्ति – निर्भर समानान्तरता समता मूलक समानान्तरता बनकर आती है और विरोध निर्भर समानान्तरता विरोध निर्भर समानान्तरता बनकर आती है। समानान्तरता की इन दोनों ही दिशाओं में भाषा के सभी स्तर क्रियाशील होते हैं।[2]

समानान्तरता ध्वनि, शब्द, रूप, वाक्य, अर्थ, प्रोक्ति आदि स्तरों पर सक्रिय रहती है।

गद्य रचना में लय आदि के रूप में जिस ध्वनीय समानान्तरता के दर्शन होते हैं, वह लय, तुक, गीतों की आवृत्ति अनुप्रासादात्मकता के रूप में विवेचित की जाती है। मेरे प्रतिपाद्य उपन्यास ''मुझे चाँद चाहिये'' में यह समानान्तरता पुष्कल रूप में मिलती है।

डॉ. शीतांशु ने पाठ आधारित समानान्तरता के दो भेद किये हैं : एक पाठीय समानान्तरता, दूसरा अन्तर पाठीय समानान्तरता। पाठीय समानान्तरता में एक ही पाठ दो बार उपस्थित होता है और अन्तर पाठीय समानान्तरता में पाठ की समानान्तरता तुलनात्मक सन्दर्भ के रूप में आवर्तित होती है। यह पाठ अपने पहले पाठ की तुलना में अन्तर्लय या रूपान्तरित हुआ करता है। इसकी सात[3] कोटियाँ हैं :

भावहरण – इसमें पूर्व पाठ के भाव को ग्रहण किया जाता है।

अनुकूलन – इसमें पूर्व पाठ की संवेदना में किसी उच्चतर एवं निम्नतर परिवर्तन न कर उसे अपने पाठ के अनुकूल बनाकर प्रस्तुत किया जाता है।

---

1. रवीन्द्र नाथ श्रीवास्तव, ''संरचनात्मक शैली विज्ञान (दिल्ली, आलेख प्रकाशन 1979 ई.) पृष्ठ 1
2. पाण्डेय शशि भूषण शीतांशु, ''शैली विज्ञान : प्रतिमान और विश्लेषण'' पृष्ठ 31 (देवदार प्रकाशन, दिल्ली)
3. शिवप्रसाद सिंह : स्रष्टा और सृष्टि : पाण्डेय शीतांशु, में डॉ. बल्देव कुमार का आलेख, उपन्यासों में अन्तर पाठीय शिल्प, पृष्ठ 267

पुर्नकथन – इसमें किसी दूसरे पाठ को बिना किसी परिवर्तन के ज्यों का त्यों प्रस्तुत किया जाता है।

विदूषिका (पैरोडीज) – इसमें पूर्व पाठ की संवेदना को व्यंग्य अथवा परिहासात्मक लहजे में उपस्थित किया जाता है।

प्रत्यालोचनात्मक – इसके अन्तर्गत किसी दूसरे पाठांश को वर्तमान पाठ में खण्डनात्मक प्रवृत्ति के आधार पर उत्सर्जित किया जाता है।

संशोधन – इसमें पूर्व पाठ को उच्चतर दृष्टिकोण से परिवेष्ठित कर उपस्थापित किया जाता है।

विस्तारण – इसमें पूर्व पाठ को विस्तृत रूप में कहा जाता है।

मेरे प्रतिपाद्य उपन्यास में इस प्रकार के अन्तरपाठ भूरिशः उपलब्ध हैं।

डॉ. शीतांशु ने अग्रप्रस्तुति के चौथे मानक को विरलता के रूप में परिभाषित किया है। यह उनकी विचलन, विपथन से परे मौलिक धारणा है। यह समतापरक समानान्तरता की विरोधी अवधारणा है। इसमें किसी भाषिक इकाई का सिर्फ एक बार विरल प्रयोग होता है और उस विरलता पर ही शैली का पूरा सौन्दर्य निर्भर होता है। यह विरलता विशेष ध्वनि, विशेष रूप, विशेष शब्द, विशेष वाक्य, विशेष प्रोक्ति, विशेष अर्थ, विशेष लेखिम पद्धति के साभिप्राय विरल प्रयोग से उजागर होती है।[1]

उपर्युक्त् अग्र प्रस्तुति के विभिन्न प्रतिमान प्रकारों के आधार पर मैंने "मुझे चाँद चाहिये" की भाषा–संरचना के अनुशीलन का प्रयास किया है।

1. शैली और शैली विश्लेषण, पृष्ठ 297

प्रकरण – 2

प्रतिपाद्य उपन्यास में ध्वनिगत शैलीय उपकरण

प्रकरण–2

प्रतिपाद्य उपन्यास में ध्वनिमूलक शैलीय उपकरण

ध्वनि का अर्थ व भेद :

'ध्वनि' शब्द की एक विशिष्ट भंगिमा है, भाषा की सूक्ष्मता है। ध्वन्यालोककार आनन्दवर्द्धन ने सर्वप्रथम ध्वनि तत्व का परीक्षण–प्रतिपादन किया[1] और वाच्य से अधिक उत्कर्षक – चारुताप्रतिपादक व्यंग्य को ध्वनि कहा।[2] साहित्य दर्पणकार विश्वनाथ ने भी इसी सिद्धान्त का समर्थन किया है।[3] काव्य में ध्वनि को प्रेरणा, व्याकरण के स्फोटवाद से प्राप्त हुई है। भाषा द्वारा मूलतः संप्रेषण किया जाता है और अर्थ इसका केन्द्रीय तत्व है, जो व्याकरण एवं शब्द समूह के ढाँचे में व्यवस्थित होता है और ध्वनि (खंडीय तथा खंडेतर) या लिपि चिह्नों के माध्यम से अभिव्यक्त होती है। अतएव हम यह कह सकते हैं कि ध्वनि के द्वारा भाषा को व्यक्त किया जा सकता है। मूलतः इसका अर्थ से प्रत्यक्ष रूप से सम्बन्ध नहीं होता है। हम यह नहीं कह सकते हैं कि कोई निश्चित खंडीय ध्वनि हमेशा वही निश्चित अर्थ नहीं देती है और खंडेतर ध्वनियाँ भी शब्दार्थ और वाक्यार्थ की पूरक बनकर प्रस्तुत हो सकती हैं। वे स्वतंत्र रुप से सार्थक नहीं होती हैं। जब हम किसी विशेष शब्द को चुनते हैं तो उसका खंडीय ध्वनि पक्ष सन्दर्भ के प्रभाव से अभिव्यंजना करता है तथा खंडेतर ध्वनियाँ संदर्भ विशेष में अपने सहगामी शब्दार्थ या वाक्यार्थ की पूरक हो जाती हैं। शैली के वैज्ञानिक विश्लेषण में इन स्थितियों की अभिव्यंजना की क्षमता का अध्ययन किया जाता है। खंडेतर ध्वनियों की अभिव्यंजकता का अध्ययन हम मौखिक रुप से कर सकते हैं लेकिन खंडीय ध्वनियों की शैलीगत सम्भावनाओं के अध्ययन के लिये हमें विभिन्न उपकरणों की आवश्यकता पड़ती है। जैसे – लय, अनुकार, ध्वनि समूह, अनुप्रास, रीति, व्यक्तिवैशिष्ट्य सूचक ध्वनियाँ। सुरेन्द्र वर्मा की भाषा में ऐसे अनेक स्थल विद्यमान हैं जिनमें ध्वनिमूलक शैलीय उपकरणों से अभिव्यंजना की गयी है।

लय : अर्थ व स्वरुप

1. कविता और संगीत में गति या प्रवाह और यति और विराम पर आश्रित वह तत्व जो नियमित रुप से होने वाले उतार चढ़ाव तथा आपेक्षिक पुनरावृत्तियों से उत्पन्न होता है और कृतियों (कविता, पाठ, गायन, नृत्य आदि) में विशेष प्रकार की कोमलता, माधुर्य और लावण्य का आविर्भाव करता है।

2. गति सामंजस्य (रिदिम) : संगीत में लगने वाले समय के विचार से जल्दी, धीरे या सहज में गाने का ढंग या प्रकार जिसके ये तीनों भेद – विलम्बित, मध्य और द्रुत हैं।[4]

---

1. काव्यस्यात्मा ध्वनिरिति।
2. चारुत्वोकर्षनिबन्धना हि वाच्यव्यंग्योः प्राधान्यविवक्षा। – ध्वन्यालोक
3. वाच्यातिशायिनि व्यंग्ये ध्वनिस्तत्काव्यमुत्तमम्। – साहित्य दर्पण
4. मानक हिन्दी कोष भाग 4, रामचन्द्र वर्मा, पृ. 562

3. संगीत में स्वरों के उच्चारण की दृष्टि से गाने का एक प्रकार।[1] संगीत में लय पर आधारित विलंबित मध्य और द्रुत तीनों लय सुर के आरोह–अवरोह पर ही निर्भर हैं।

Rhythm - 1. A strong regular repeated pattern of sounds or movements dance to the rhythm of the drums.

2. A constantly repeated sequences of events or processes.[2]

लय – आरोह–अवरोह क्रम, ढंग, तर्ज, धुन, प्रवाह, बहाव, लहजा, सुर, स्वर, स्वतः आरोह–अवरोह क्रम।[3]

लय – संगीत (स्त्रीलिंग)

1. गति, सामंजस्य (जैसे – एक लय में कविता पढ़ना)

2. गाने का प्रकार (जैसे – मधुर लय में गाना)

ताल (पुल्लिंग) – संगीत का सुर तालबद्ध (वि.) स्वरयुक्त।

लय II - संगीत (पुल्लिंग)

1. समा जाना, विलय होना।

2. मिलना, संश्लिष्ट होना।

3. परिणत होना, समाविष्ट होना।

4. प्रलय (जैसे – सृष्टि लय)

5. विनाश

6. वंचित होना

7. ध्यान मग्न होना। (जैसे – आत्मलय)

8. स्थिरता

9. मूर्च्छा (जैसे चेतना का लय होना)[4]

पन्त जी ने कहा भी है "जिस प्रकार अपने आरोह–अवरोह में रागवादी स्वर पर बार–बार ठहर कर अपना विशेष रुप व्यक्त करता है। उसी प्रकार वाणी का राग भी तुक की पुनरावृत्ति से स्पष्ट तथा परितुष्ट होकर लययुक्त हो जाता है।"[5]

कथावस्तु और लय :

उपन्यास साहित्य का सौन्दर्य और उसका मूल स्वर मुख्यतः कथावस्तु पर आधारित

---

1. मानक हिन्दी कोष भाग 4, रामचन्द्र वर्मा, पृ. 562
2. Oxford Advanced Learner's Dictionary, P. 1009 Fifth edition.
3. समांतर कोश भाग 1.2 अरविन्द कुमार कुसुम कुमार पृ.सं. 255
4. राजपाल, हिन्दी शब्द कोश, डॉ हरदेव बाहरी, पृ. सं. 717
5. पल्लव की भूमिका – पन्त पृ. 40

रहता है। जिसके उत्पन्न होने में उपन्यास के चरित्र तथा उसके अन्य तत्व भी समान रुप से सहयोग प्रदान करते हैं। जिस प्रकार उपन्यास में कहानी हमारी जिज्ञासा को प्रभावित करती है और वस्तु विन्यास हमारी बुद्धि को, उसी प्रकार 'पैटर्न' (Pattern) हमारे सौन्दर्य बोध को प्रभावित करता है और इसमें वह शक्ति होती है कि हम पुस्तक को सम्पूर्ण रुप से देखने को विवश हो जाते हैं।

'पैटर्न' (सांचा) मूलतः चित्रकला का शब्द है जो चित्रकला को निश्चित आयाम देने वाले हल के लिए प्रयुक्त होता हैं इसके द्वारा दिया गया यह वह आयाम होता है, चित्रकार जिसके बाहर अपना ब्रश नहीं ले जा सकता। चित्रफलक के सीमित विस्तार में चित्रों, रंगों, रेखाओं, लकीरों और छायांकन का एक निश्चित 'पैटर्न' रहता है। जिससे हर चीज अपने निश्चित स्थान पर ठीक–ठाक रहती है। उनमें हेर–फेर या बदलाव की कोई सम्भावना नहीं रहती।

उपन्यास में जिस चीज को हम पैटर्न (सांचा) कहेंगे वह कुछ ऐसा है जो कथावस्तु का स्वाभाविक विकास या परिणाम है। यह निश्चित है कि जिस उपन्यास में 'कथावस्तु' नहीं होगी उसमें 'पैटर्न' का अभाव हो जायेगा। जिस उपन्यास में पैटर्न का अभाव होगा उसकी पूर्ति के लिए उपन्यास में जिस कला का प्रयोग होता है उसके लिये चूंकि साहित्य में कोई शब्द नहीं है। अतः हम संगीत से लिये गये एक शब्द के माध्यम से इसे व्यक्त कर सकते हैं। जिसे 'लय' (रिद्‌म) कहते हैं।[1]

एक निश्चित कथावस्तु के अभाव में उपन्यास की कथा में आये प्रसंगों अथवा घटनाओं में बिखराव न आ जाये और एक का दूसरे से सम्बन्ध विच्छेद न हो जाये उसके लिये उपन्यास में एक ऐसी ध्वनि, गूंज या लय प्रवाहित हाती है जो सारी घटनाओं, पात्रों तथा वातावरण के बहुरूपी पहलुओं को एक सूत्र में बांधे रहती है। एक सूत्र में बांधने वाली इस शक्ति अथवा तत्व को लय या रिद्‌म के नाम से अभिहित किया जाता है। रिदम को समझना कभी कभी बड़ा सरल होता है। कुछ उपन्यास किसी विशेष ध्वनि से ही आरम्भ होते हैं जिन्हें हम सुन भी सकते हैं और 'टेप' भी कर सकते हैं। इसके अतिरिक्त सम्पूर्ण उपन्यास का भी एक रिद्‌म होता है। जिसका सम्बन्ध उपन्यास में चित्रित गतिविधियों और उनके पारस्परिक सम्बन्धों से होता है। इसे केवल कुछ मर्मज्ञ ही सुन सकते हैं पर वे भी इसे टेप नही कर सकते।

डॉ. त्रिभुवन सिंह ने उपन्यास के ढाँचे के सन्दर्भ में इस लय का विस्तार से विवेचन किया है।[2] उनके अनुसार ''इस 'लय' (रिद्‌म) को भी दो वर्गों में विभक्त किया जा सकता है। एक लय तो वह होती है जो सीधे सादे ढंग से चलती है। जैसे कि हारमोनियम या तबले की ताथा दाधा, किट, किट, धिन्ना। इस लय में घटनाओं का सिलसिला पात्रों की सहायता से एक समान आरोह–अवरोह पर चलता है।

यह आरोह और अवरोह बहुत सूक्ष्म या जटिल नहीं होता। फणीश्वर नाथ रेणु के

---

1. हिन्दी उपन्यास : शिल्प और प्रयोग, डॉ. त्रिभुवन सिंह, पृ.सं. 378
2. हिन्दी उपन्यास : शिल्प और प्रयोग, डॉ. त्रिभुवन सिंह, पृ. सं. 392

आंचलिक उपन्यास 'मैला आंचल' में यह आरोह–अवरोह देखा जा सकता है।

इसके अतिरिक्त पूर्ण उपन्यास की भी एक लय अथवा उसका एक 'रिद्म' होता है जिसका मुख्य आधार उपन्यास में चित्रित गतिविधियाँ होती है। यह 'रिद्म' पूर्व चित्रित 'रिदम' की भाँति अत्यन्त सरल और सुबोध नहीं होती जिसे कुछ मर्मज्ञ सुन तो सकते हैं पर उसे टेप नहीं कर सकते। इसका श्रवण अनुभूति के धरातल पर ही सम्भव हो पाता है।

इसे संगीतज्ञ ही बतला सकते हैं न कि साधारण श्रोता। इस प्रकार 'रिद्म' में जब काफी अबोधता, सूक्ष्मता या अस्पष्टता होती है तो निश्चित रुप से उपन्यास में विभिन्न घटनाओं को जोड़ने वाला सूत्र अदृश्य रहता है। पर अदृश्य होकर भी 'रिद्म' उपन्यास की सूक्ष्मता में ध्वनित होता रहता है जिसके कारण उपन्यास की बिखरी घटनायें कहानी का अंग बनी रहती हैं। रूपक की भाषा में यदि कहें तो कह सकते हैं कि जिस प्रकार अदृश्य सूत्र में गुंथे हुए माला के पुष्प अलग दिखाई पड़ते हुये भी अलग नहीं रहते, उसी प्रकार रिद्म के कारण उपन्यास में बिखरी घटनायें एक सूत्रता में बँधी रहती हैं।''

इस 'रिद्म' को ई. एम. फार्स्टर ने 'सिम्फनी' (Symphony) के नाम से अभिहित किया है। उसके अनुसार यह उपन्यास के अन्तराल में एक अदृश्य सूत्र के रूप में विद्यमान रहता है और उसकी सम्पूर्णता के बाद भी (उपन्यास पढ़ने के बाद) यह एक रंग (वेदना) पाठक के ह्रदय पर छोड़ जाता है। उपन्यास में यह ऐसा प्रभावकारी सिद्ध होता है कि अन्य उसके बिखरे घटनाक्रम को एक सुर या ताल से बाँधे रहता है।

यद्यपि 'लय' गीत काव्य का अंग है फिर भी गद्य की भी अपनी एक लय होती है। गद्य को प्रायः रूखा, तथ्यपूर्ण समझा जाता है लेकिन रचनात्मक साहित्य जैसे ललित निबन्ध, कहानी, उपन्यास आदि में लयात्मक वाक्यों की संरचना खूब की जाती है। ऐसा प्रायः संवेगात्मक अभिव्यक्ति के स्थलों पर होता है। नाटक के संवादों की जान तो आरोह–अवरोह पूर्ण लयात्मक वाक्य ही होते हैं। चूंकि 'मुझे चाँद चाहिये' में नाटकीयता का भरपूर समावेश है अतः इसके संवादों में और वाक्यबंध ों में पर्याप्त लयात्मकता का संयोजन घटित हुआ है। अगले विवेचन से यह स्पष्ट हो जायेगा।

प्रतिपाद्य उपन्यास में कलात्मक लय के कुछ उदाहरण दृष्टव्य हैं :–

कलात्मक लय (तुक पूर्ण लय) :

इसे पढ़ने से ऐसा लगता है जैसे हम कविता का कोई टुकड़ा पढ़ रहे हों। प्रायः ऐसे स्थलों पर वाणी फिसलती हुई चली जाती है। ऐसे दृष्टान्तों में शैली वैशिष्ट्य अपने आप फूट पड़ता है।

(1) जीवन में मिश्री घोल गये तुम मिश्रीलाल **पालरवाले**।
जड़ता के फाटक खोल गये तुम ज्ञान जड़ी **झालर वाले**।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 13)

इसमें लय से सेठ मिश्रीलाल की दानशीलता अभिव्यक्ति की जा रही है।

(2) 'वृक्ष अपने सिर पर गर्मी **सह लेता है** परन्तु अपनी छाया से दूसरों को **बचाता है**।'

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 21)

इसमें लय द्वारा 'सह लेता है–बचाता है' अपने बच्चों को बड़े व्यक्ति आश्रय देकर विपत्तियों से बचाते हैं इसी की अभिव्यक्ति की गयी है। यहाँ पर लयात्मक प्रयोग द्वारा एक और काम लिया गया है और वह वर्तमान स्थिति को और भयानक बना देना। सिलबिल के पिता यहाँ सोच में पड़ जाते हैं कि वृक्ष तो छायाश्रित व्यक्ति की रक्षा करता है, पर मैं अपनी बेटी को ही नहीं बचा पा रहा हूँ।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 22)

(3) "मधुरभाषिणी, तुम्हारे वचन अमूर्त **ध्वनियाँ** नहीं, पुष्पों की **लड़ियाँ** हैं, जो तन–मन को सुवासित कर देती हैं।"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 30)

यहाँ ध्वनियाँ–लड़ियाँ लयात्मक प्रयोग द्वारा प्रेम की अभिव्यक्ति की गयी है।

(4) "बरसाती बाबड़ी गंगा की ओर **देखेगी** तो मलिन ही **होगी**।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 34)

यहाँ पर 'देखेगी तो मलिन ही होगी' की लय द्वारा अपवित्रता की ओर संकेत किया गया है। 'बरसाती बावडी तथा गंगा' विरोधी स्थितियों के द्योतक हैं। इनमें सामंजस्य के स्थान विरोध ही अधिक हैं। कहीं कहीं लयात्मक प्रयोग विरोध ही रेखांकित करता है।

(5) तुम्हारे विछोह की पीड़ा के दंश के साथ वे **सुलगते अंगारे–सी दहक उठेंगी**। आठों प्रहर मेरी भावनाओं को झुलसायेंगी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 36)

यहाँ पर "सुलगते अंगारे–सी दहक उठेंगी...... भावनाओं को झुलसायेंगी" के लयात्मक प्रयोग द्वारा विरह को और गहराई दी गयी है। यही कारण है कि यह संवाद बोलते–बोलते वर्षा के कपोलों पर एक बूँद आंसू ढुलक पड़ता है।

(6) "बस गये द्वारका में मोहन,
वृंदावन **आना छोड़ दिया**।
वंशीधर क्यों वंशीवट पर,
वंशी का **बजाना छोड़ दिया**।
वे सपनों की–सी बातें थी,
जो अपनों को **तुम भूल गये**।
वेदना सही नहीं जाती है,

तुम छेद हृदय में **शूल गये**।

तुम सच्चे प्रेमी बनते हो,

पर प्रेम **निभाना छोड़ दिया**।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 105)

यह तो पूरा गीत ही लयात्मक है। इसके द्वारा हृदय में विरह वेदना घुमड़ती हुई और तीखी हो जाती है। इसमें प्रेमी के प्रति उलाहना भी है।

(7) "जैसे ही मैं **धरती पर आया**,

मादर ने यमपुर का **टिकट कटाया**।

जिस दाई ने **दूध पिलाया**,

उसको **काल ने खाया**।

वालिद ने **पाला**

तो उनकी जान का **निकल गया दिवाला**।

किस्मत से एफ. ए. का इम्तिहान दिया,

तो बीबी ने अदम को कूच किया।

रेलवे में जो नौकरी पायी,

तो सुबह शाम रिश्वत खायी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 105)

'मुझे चाँद चाहिये' उपन्यास में लेखक ने 'लय' के विभिन्न मजेदार प्रयोग किये हैं उदाहरण '7' में विचित्र शब्दों में लयात्मक प्रयोग से व्यंग्य और विनोद की सृष्टि की गयी है। यहाँ पात्र के भाग्य की विडम्बना और उसकी हंसोड़ प्रकृति दोनों व्यक्त हो रहे हैं। 'धरती पर आया', 'टिकट कटाया', 'दूध पिलाया', 'काल ने खाया', 'पाला',' निकल गया दीवाला' आदि लयात्मक प्रयोग एक पैरोडी की सृष्टि कर देते हैं।

(8) "इन्कार की अदा है इक

इकरार बहुत है।

सच तो ये है कि प्यार में

आजार बहुत हैं।

फरहाद जूये शीरी में डूबा,

तो क्या किया।

यां डूबने की चाह में,

तैयार बहुत हैं।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 105)

प्रस्तुत उदाहरण में उर्दू शब्दावली में लयात्मक प्रयोग द्वारा डींग हाँकने वाले प्रेमियों की मर मिटने की प्रवृत्ति को और गहराई से लेखक ने अभिव्यक्ति दी है।

(9) वर्षा गंभीर थी, "अगर तुम सच्चे **दोस्त होगे** तो अपना सीना **खोल दोगे**।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 134)

'नीना' के अभिनय को लेकर कसमकस चल रही है वह नीना के अकेलेपन दुख और हताशा के जख्म को समझना चाहती है, इस पर हर्ष कहता है मेरी बाहों में आ जाओ तो मैं समझा दूँ। वह कहती है, मुझे छुओ मत मेरे पास भी मत आओ। हर्ष कहता है, यह तर्कसंगत नहीं है और इमोशनल रिकाल थ्योरी के विरुद्ध है। कल के दिन अगर तुम 'द क्राइसिस' में जेन की भूमिका करोगी तो पहले मेरी हत्या करना चाहोगी ? वर्षा गम्भीर थी अगर तुम दोस्त होगे तो अपना सीना खोल दोगे।

यहाँ पर 'दोस्त होगे' 'अपना सीना खोल दोगे' इस लयात्मक प्रयोग द्वारा वर्षा हर्ष की दोस्ती की गहराई नापना चाहती है। वह भाव–तरंगों में बह रही थी तभी उसके मुख से यह तुकपूर्ण वाक्य निकलता है।

(10) स्नेह निराला काव्य को समझने की कुंजी इन पंक्तियों को मानते थे :–

'स्नेह–निर्झर **बह गया है**, रेत ज्यों तन **रह गया है'** जो कालान्तर में उनकी नयी पहचान बनी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 144)

प्रस्तुत उदाहरण के द्वारा स्नेह निर्झर के व्यक्तित्व को उभारा गया है। यहाँ लेखक ने निराला की उपर्युक्त पंक्तियों का उपयोग किया है। लेखक का मंतव्य है कि स्नेह निर्झर बह जाने के बाद जैसे रेत भर रह जाती है वैसे ही स्नेह से वंचित उनकी ये पंक्तियाँ ही अभिधा अर्थात उनकी पहचान बन गयी थीं।

(11) कहीं प्रेम–कहानी है, कहीं क्रांति है, कही साला राजा का साला है।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 168)

यहीं लय की सहायता से वर्ण विषय के वैविध्य को उभारने की चेष्टा की गयी है।

(12) "भई पोस्टिंग जहाँ **होती** है, निभानी **पड़ती** है। भार्गव ने सिगार का क़श खींचा और वर्षा से मुखातिब हुये।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 174)

यहाँ पर लयात्मक शब्द प्रयोग के कारण विवशता व लाचारी के भाव में गहरायी आ गयी है।

(13) मैं रंग अजगर हूँ।'' स्नेह हँसे **''न मैं चाकरी कर सकता हूँ, न मंडी हाउस की सांस्कृतिक बांबी के बाहर साँस ले सकता हूँ।''**

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 187)

यहाँ लयात्मक शब्द को प्रयोग की सहायता से अभिनय–प्रेम को अभिव्यक्ति दी जा रही है। साथ ही यहाँ हास्य विनोद की योजना में लय ने सहायता की है।

(14) मम्मी ने ठंडी साँस ली, "सोचा था, बाप से भी **आगे जायेगा**, खानदान का नाम **रोशन करेगा** पर ईश्वर की लीला देखो।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 192)

यहां लय द्वारा दुःख के आवेग की अभिव्यक्ति की गयी है।

(15) खेमका ने तन्मयभाव से पाठ किया, "एक बार अंबर में लगी नुमाइश भारी। गीतकार को ईश्वर का **आमंत्रण आया**। आओ स्वर के साधक, बेटे सरस्वती के। तुमने कविता का प्रकाश **जग में फैलाया**।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 247)

"मुझे चाँद चाहिये" के लेखक नें तुक पूर्ण लय के अलावा लय के भी प्रयोग किये हैं। प्रस्तुत उदाहरण में तुकपूर्ण लय एक ही स्थान पर है पर पूरी कविता एक विशिष्ट लय से पूर्ण है। इसमें कवि और कविता के महत्त्व की व्यंजना इस अगीत के द्वारा की गयी है।

(16) "तुम्हें आभारी होना है अपनी प्रतिभा का'', "अपनी लगन का अपने व्यवहार और अपने व्यक्तिगत गुणों का। आज तुम जहाँ हो उन्हीं के कारण हो।"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 276)

ऊपर इसी तरह का उदाहरण है। इस गद्य खण्ड में तुकात्मक लय नहीं है, फिर भी पूरे वाक्य विन्यास का तुक इतना लय पूर्ण है कि पूरा गद्य खण्ड काव्य जैसा आनन्द देता है। ऐसे स्थलों पर लय की सृष्टि लेखक के शैली वैशिष्ट्य का द्योतक है।

(17) तन्मय जुगुनी सारंगी की लय पर गा रही थी उसने थोड़ी सी देर में **"जय गोगाजी पीर की जय दरेरा के बलवीर की जय मेड़ी की धजाधीर की"** हाँक लगाने के बाद केसर–कस्तूरी की आधी बोतल गटक ली थी। अब स्वर में स्वच्छंद मस्ती आ गयी थी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 303)

यहाँ काव्यात्मक तुकबन्दी और लयात्मक वाक्यों की लड़ी द्वारा तन्मयता की भाव को व्यक्त किया गया है। लय पर आधारित शैली वैशिष्ट्य लेखक की सहज सिद्धि है। यह गुण उसके उपन्यास में आद्यन्त व्याप्त है।

लेखक ने काव्यात्मक तुक के अलावा भी लय सर्जना के अन्य फार्मूले आजमाये हैं जैसे उदाहरण क्र. 18 में 'अपनी –अपने' 'सीमा तक छोर तक' ये दोनों शब्द बन्ध यद्यपि भिन्न भिन्न हैं पर इनके समवेत प्रयोग से यहाँ हर्ष के कथन में एक आरोह–अवरोह सृष्ट हो जाने से लयात्मकता आ गयी है।

(18) "तर्क, कालीगुला।" हर्ष नाटकीय भंगिमा से दरवाजे पर खड़ा था, "देखो, तर्क कहाँ ले जाता

है। शक्ति अपनी सर्वोच्च सीमा तक, इच्छाशक्ति अपने अनन्त छोर तक।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 380)

यहाँ लय तर्क की अनंत शक्ति को व्यंजित कर रही है।

(19) "इस समंदर में मौजें बिखरती रही कुछ तमन्ना–ए–रंगी निखरती रहीं।
ऐसे गुलजार जंगल में मारे गये..........।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 420)

यहाँ लय प्रेम की अभिव्यक्ति को उत्पन्न करने में सहायता करती जान पड़ती है। यहाँ तुकपूर्ण लय के प्रयोग से एक रवानगी, एक प्रवाह आ गया है। ऐसे प्रयोग संवाद को नाटकीयता देते हैं और उपन्यास को एक चाक्षुष आभास ! प्रेम में विभोरता की सृष्टि ऐसे ही प्रयोगों से होती है।

(20) अब तक के बम्बई प्रवास में उसके मन में हर्ष के प्रति काफी आक्रोश जमा हो चुका था– खुलेआम चरस और असंयमित ड्रग्स के प्रति उद्दंड अहं के प्रति पैसा न होने के बावजूद भूमिकायें ठुकरा देने के प्रति।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 432)

यहाँ लय आक्रोश के भाव की अभिव्यक्ति में सहायता दे रही है। लेकिन आक्रोश की घनीभूत अभिव्यक्ति के लिए यहाँ लेखक वाक्य बंधों की जिस लड़ी का प्रयोग करता है और उन्हें जिस शब्द पर तोड़ता है। उसके कारण यहाँ एक लयात्मकता उत्पन्न हो गयी है। अगर सुरेन्द्र वर्मा सिर्फ तुकपूर्ण वाक्यों की ही आवृत्ति करते जाते तो शैलीय तत्वों में एकरसता आ जाती। इसलिए लेखक लय को बदल–बदल कर प्रयोग करता है।

उदाहरण क्र. 21 में भी इसी का प्रयोग है।

(21) मजेदार भूमिका है पांडेजी। घोड़ा दौड़ाऊँगी, बंदूक चलाऊँगी, गाँव के रास्ते पर जमींदार को घसीटने के बाद कटार से उसकी नाक काटूँगी। ये तीनों काम मैंने आज तक नहीं किये।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 435)

यहाँ लय से आक्रोश के भाव को उपहास्यात्मक पुट दे दिया गया है।

(22) और ये अगले लोन के लिए फिर निगम के दरवाजे पर 'दायम पड़ा हुआ तेरे दर पर नही हूँ मैं।' खाक ऐसी जिंदगी पर कि पत्थर नहीं हूँ मैं। गुनगुनाते हुए दस्तक देने लगते थे।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 439)

यहाँ भी लय सृष्टि के लिये उसी फार्मूले का प्रयोग किया गया है। याचना भी कर रहे हैं और स्वाभिमान को भी बचाये रखना चाहते हैं। वाक्य बंध तो तुकपूर्ण हैं ही। यहाँ माँगने के प्रति एक उपहास का भी भाव है। ऐसे प्रयोगों से पात्रों के मन की बोरियत साथ में पाठकों की भी कम होती है।

(23) "डोरोथी चुपचाप बैठी है।" जॉन ने कहा, "अब वह जिम के सपनों से चिन्तित होने लगी है। इन सपनों की प्रकृति विस्तार एवं नियमितता ऐसी है, जो उसे विचलित करने लगी है।"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 466)

यहाँ चिन्ता के भाव की सातिशय व्यंजना में लय का योगदान उल्लेखनीय है। इस उदाहरण में सपनों की प्रकृति, विस्तार एवं नियमितता विन्यास इस क्रम से किया गया है कि एक लय की सृष्टि हो गयी है।

उदाहरण '24' में लय–सृष्टि के लिए लेखक एक दूसरे क्रम विन्यास का प्रयोग कर रहा है 'जैसे' तथा 'होते हैं' क्रिया बन्ध की आवृत्ति के द्वारा यहाँ लय सृष्टि की गयी है। सृष्टि के पदार्थों का अस्तित्व जैसे सहज और स्वाभाविक है, वैसे ही बच्चे भी होते हैं। बच्चों के प्रति किसी विशेष भाव की जरुरत नहीं है यहाँ यही व्यंजित किया गया है। पर, लय के प्रयोग से सामान्य कथन भी विशिष्ट हो गया है।

(24) अभी तक बच्चों के प्रति उसने विशेष ध्यान नहीं दिया था। धारणा यही बनी हुई थी कि जैसे फूल पौधे होते हैं, पंछी होते हैं, वैसे ही बच्चे भी होते हैं।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 556)

वर्मा जी की भाषा में कलात्मक गद्यलय के ऐसे उदाहरण भी दर्शनीय हैं जो लघु वाक्यखंडों द्वारा लयात्मकता की सहायता से सम्पूर्ण वाक्य के प्रभाव की वृद्धि करते हैं। कुछ उदाहरण दृष्टव्य हैं–

(25) उनके हर प्रदर्शन की शुरुआत में सारे कलाकार मंच पर आकर सामूहिक रुप से ब्रेख्ट की कविता 'ड्रामानिगार का नग्मा' का पाठ करते थे,

"मैं हूँ नाटककार
दिखाता हूँ।
जो मैंने देखा है,
देखा है मैंने
कैसे इंसान को बेचा जाता है।
इन्सानों के बाजारों में
मैं वही दिखाता हूँ।"....

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 164)

यहाँ लय सृष्टि का भिन्न तरीका अपनाया गया है। ब्रेख्ट की कविता का अनुवाद लयात्मक गद्य में करके उसके प्रवाह को गति दी गयी है। लय के सारे शैलीय प्रयोग काव्य की माँग के अनुसार हैं। ये वातावरण सृष्टि में भी सहायक होते हैं।

(26) चपल प्रफुल्लता से आगे–आगे चलती हुई वर्षा मुस्करायी, "बस नरेश, आ ही गया समझिये।

इस उपवन के बाद निर्मल निर्झर है उसके बाद हरित अमराई है। फिर सरसों के पीले–पीले खेत हैं, फिर पावन सरोवर है, फिर गणेश जी का मन्दिर। उसके बाद फिर निर्मल निर्झर है, फिर हरित अमराई है, फिर सरसों के पीले–पीले खेत हैं, फिर पावन सरोवर है, फिर योग माया का मंदिर। .... बस, आ ही गया समझिये........... ।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 167)

ऐसा लगता है जैसे हम कविता पढ़ रहे हैं। वाक्यों का क्रम–क्रम से आवर्तन–मूर्तन दृश्य को तो सजीव कर ही देता है, मन एक–के–बाद एक वाक्य उत्सुकता के साथ पढ़ता भी जाता है। इस वाक्य बंध के क्रमिक विन्यास से थकान दूर होती है और पैर अपने आप आगे बढ़ते जाते हैं। यहाँ लय द्वारा लघु वाक्य खंडों की सहायता से वातावरण का सजीव चित्र प्रस्तुत किया गया है।

(27) श्री मेनन ने अंग्रेजी में ही उत्तर दिया, "**एक** राजा जो अपनी राजधानी से सुदूर जंगल में आया है, **एक** प्रकृति पुत्री को अपने परिवेश से जुड़ा देखकर अभिभूत है यह भोलीभाली युवती कोयल की बोली सुनकर वैसी ही प्रतिध्वनि देती है, सरसों को हवा में झूमते देखकर अपनी देह को वैसे ही थिरकाती है ....

यह देखकर राजा की प्रतिक्रिया क्या होनी चाहिये ?"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 167)

यहाँ लय प्रकृति पुत्री का प्रकृति के प्रति प्रेम की अभिव्यक्ति में योगदान दे रही है।

(28) "गवाक्ष हैं ये दो सलोने नैन; इन्हीं से होकर प्रियतम की ऊष्मा भीतर आयेगी और उदासी के धुंये को आह्लाद की सुगंधि में बदल देगी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 30)

'आयेगी' और 'बदल देगी' द्वारा लय उत्पन्न की गयी है।

यहाँ लय उदासी के भाव को हटाकर खुशी के भाव में बदलने की अभिव्यक्ति में सहायता देती प्रतीत हो रही है।

(29) अंक 1 से लेकर अंक 4 तक की नीना की दिनचर्या उसकी नोटबुक में थी – वह सुबह कितने बजे सोकर उठती होगी, क्या और कैसे खाती होगी, क्या पढ़ती होगी, हर अंक में उसकी गतियों में कैसी चपलता, दुविधा तेजी और तनाव होगा, वह कहाँ और कैसे बढ़ेगी, किस तरह और कितना मुड़ेगी, कैसे गहरी साँस लेगी, कैसे भाव से मृत हंसिनी को देखेगी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 137)

यहाँ एक क्रम से लय पूर्ण वाक्य बंधों का प्रयोग किया गया है। इस वाक्य के लय खण्डों का आधार समध्वनि वाले क्रियापदों का प्रयोग है। 'उठती होगी' 'खाती होगी' पढ़ती होगी अथवा एक ही कर्त्ता से सम्बद्ध भाववाचक संज्ञा पदों का प्रयोग, 'कैसी चपलता, दुविधा तेजी और

तनाव' का प्रयोग लय सृष्टि के लिये उत्तरदायी है।

(30) हर्ष ने राय दी,"अपना शौक **पूरा हो रहा** है और **गुजारा चल रहा** है **शादी करेगी** तो मुख्य **जिम्मेदारी** पति **की होगी**।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 187)

'पूरा हो रहा है', 'गुजारा चल रहा है', 'शादी करेगी', 'जिम्मेदारी पति की होगी' वाक्यखंडों द्वारा यहाँ एक लय उत्पन्न की गयी है। इसमें एक प्रवाह है, स्वरमयता है जो इस वाक्यगत लय का आधार है।

यह परिच्छेद कई वाक्य खण्डों से बना है और इसमें लयात्मकता की पकड़ नजदीक नहीं हो सकती है। पर पूरे वाक्य खंड में लय तरल प्रवाह की तरह व्याप्त है जो मन को एकरसता से बचाती है।

(31) वह उसकी आलोचना और मूल्यांकन करता है और आकार को सही बनाने वाले संकेतों को पकड़ने की कोशिश करता है। ये संकेत उसकी कल्पनाशीलता के आकार को और प्रभावी तथा बेहतर बनाने का सुझाव देते हैं, जिसका स्वप्न वह तब देखना शुरू करता है। अपनी भूमिका के आकार की इस स्वप्न के साथ तुलना करके वह इसमें संशोधन करता है, ताकि उसे समृद्धतर, और प्रभावी तथा अधिक संप्रेषणीय बनाया जा सके।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 251)

इन सम्पूर्ण लघु वाक्य खंडों में लय द्वारा अभिनेता के चरित्र को आत्मसात करने की प्रक्रिया का वर्णन किया गया है।

(32) दाखाँ झोपड़ी में लालटेन जला रही थी...... दाखाँ बालू के ढूंहों के बीच बौरायी हुई–सी भाग रही थी........ दाखाँ चाँदनी रात में सुध–बुध भूलकर नाच रही थी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 322)

यहाँ समान क्रिया पदों की आवृत्ति के कारण लय उत्पन्न हो गयी है। 'जला रही थी', 'भाग रही थी', 'नाच रही थी' एक कर्त्ता के साथ इन क्रिया–पदों का प्रयोग जीवन के उल्लास को व्यक्त कर रहा है। ललित कलाओं में संगीत और नृत्य में वैसे भी लय होती है इसलिये यहाँ लेखक ने अपने शैली–वैशिष्ट्य के कारण चित्रण में भी लय उत्पन्न कर दी है।

(33) मैं इस बारे में कुछ नहीं कर सकती। पहले मुझे लगा कि वह अजीब हैं, फिर मुझे उसके लिए दुख हुआ। फिर मैं उससे प्रेम करने लगी– उसकी आवाज से, उसके शब्दों से, उसकी मुश्किलों से, उसकी दोनों बच्चियों से ....

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 251)

एक व्यक्ति के प्रति हमारे भावों में कैसा क्रम–परिवर्तन होता जाता है, उसका संकेत यहाँ लय के द्वारा किया गया है।

यहाँ लय उत्पन्न करने के लिये वाक्यों की एक लड़ी का प्रयोग किया गया है। इस लड़ी में 'फिर मैं उससे प्रेम करने लगी' – इसमें निहित भाव आगे के कई वाक्यबंधों के द्वारा विस्तार देकर लय उत्पन्न की गयी है और प्रेम के भाव को सघन से सघनतर बनाया गया है – 'उसकी आवाज से, उसके शब्दों से, उसकी मुश्किलों से, उसकी दोनों बच्चियों से......'' ऊपर संकेत किया जा चुका है कि 'मुझे चाँद चाहिये' के लेखक को लय उत्पन्न करने के कई तरीके मालूम हैं। इसलिये इस उपन्यास में शैली के ध्वनीय उपकरणों में विविधता है।

(34) फिर वर्षा ने उस लंबे चौड़े पूर्वाभ्यास कक्ष को देखा.......... मानवीय सभ्यता के प्रादुर्भाव से लेकर बीसवीं सदी के उत्तरार्द्ध तक के कैसे–कैसे मानवीय मनोभावों को यहाँ **वाणी मिली है**, नवरसों से घुले–मिले हर्ष और विषाद के कैसे–कैसे इन्द्रधनुष यहाँ **झिलमिलाये हैं**..यहाँ यौवन का उमंग भरा **नर्तन हुआ है**, यहाँ आक्रोश का संहार भरा **तांडव हुआ है**, यहाँ करुणा की उजली **किरणें बिखरी हैं**.......... क्या रात के अँधेरे में इन दीवारों पर इफीजीनिया, रानी हेकुवा, और किंगलियर की अभिशप्त आत्मायें रेंगती होंगी, हाथ में दीप लिये लेडी मैकवेथ चलती होगी ? माँ और भार्या ने अनजाने में बेटे–भाई का वध किया होगा ? रात को सहसा जग गये भरत को शकुन्तला थपथपाकर सुलाती होगी ?

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 252)

इस बहु वाक्यबंधों वाले परिच्छेद में लेखक ने उपर्युक्त विधि का इस्तेमाल किया है। यहाँ भी वाक्यबंधों की लड़ी और उनके प्रति प्रयोगकर्त्ता पात्र का मनोभाव लय सृष्टि का आधार बन गया है।

अब तक मैंने लय पूर्ण गद्यखण्डों का जितना अनुशीलन किया है मैं इस परिणाम पर पहुंची हूँ कि 'मुझे चाँद चाहिये' उपन्यास में लय के अधिकतर उदाहरण समध्वनि वाले क्रिया पदों पर आधारित हैं। कहीं–कहीं एक ही स्थानवाची क्रिया विशेषण के प्रयोग से भी लय सृष्टि की गयी है। जैसे उपर्युक्त उदाहरण में 'यहाँ' की आवृत्ति। पर लय सृष्टि में लेखक समान क्रिया पदों का सहारा ही अधिक लेता है। कहीं प्रश्नवाचक वाक्यों की लड़ी द्वारा यह सृष्टि की गयी है जैसे उदाहरण 34 में।

आरोह–अवरोह और लय

कहीं–कहीं लेखक ने भाषा में आरोह–अवरोह के क्रम की सुव्यवस्था के द्वारा लय उत्पन्न करने का प्रयास किया है।

(35) "वर्षा जी, न आप मेरे यहाँ आती है। न मुझे अपने यहाँ बुलाती है। सुमंत बोले।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 420)

कहीं–कहीं लेखक ने लघु वाक्यों के स्थान वैषम्य मूलक और समीकृत वाक्यों के प्रयोग से गद्यलय की अभिव्यंजकता को मूर्त करने में सफलता पायी है। जैसे –

(36) आन्तरिक बिम्बों को मंच पर प्रभावी बनाने के लिए उन पर कृत्रिम ढंग से बल **देना होता है**। उनका विवेचन **करना होता है** और उन्हें प्रदर्शनीय **बनाना होता है**। इस क्षण अभिनेता **क्या महसूस कर रहा है, यह महत्वपूर्ण नहीं है, बल्कि उसे देखता हुआ दर्शक क्या महसूस कर रहा है। यह महत्वपूर्ण है।**

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 250)

प्रस्तुत गद्यखण्ड में लेखक ने एक ही कर्मवाची वाक्य बंध ''आन्तरिक बिम्बों'' को भिन्न क्रियात्मक संज्ञा पद, समान क्रिया पद के प्रयोग द्वारा आरोह–अवरोहपूर्ण लय पैदा की है। कभी–कभी एक ही क्रिया पद को दो भिन्न संज्ञा पदों से जोड़कर इस विधि का उपयोग किया गया है। कहीं–कहीं एक ही सर्वनाम पद के साथ एक ही क्रिया के विधि और निषेधवाची रूपों के प्रयोग द्वारा **'आरोह–अवरोह'** पैदा किया गया है।

(37) अपना मखमली परिवेश **पसंद था** चित्रनगरी में जो भाव मिलता था वह **पसंद था**। मित्रों के लिए कुछ सकने की शक्ति **पसंद थी** पर 'प्राइवेसी' का विलोप **पसंद नहीं था**। सिने पत्रिकाओं की उच्छृंखलता **पसंद नहीं थी** और जलती जमीन के बाद अभिनय सामर्थ्य का क्षय **पसंद नहीं था**।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 43)

इस उद्धरण में 'पसंद था' क्रिया पद के निषेधवाची और विधि वाची प्रयोगों के द्वारा लय और आरोह–अवरोह उत्पन्न करने की विलक्षण पद्धति का प्रयोग किया गया है। प्रतिपाद्य उपन्यास में ऐसे उदाहरण अत्यल्प नहीं हैं।

अलंकारात्मक लय : शब्द स्तर

अनुप्रास :

अनुप्रास – सं. (पु.) एक शब्दालंकार जिसमें वर्ण विशेष या वर्णों की आवृत्ति होती है।[1] वर्णसाम्य।[2]

अनुप्रास – पु. (सं. अत्या. स.) वह शब्दालंकार जिसमें किसी पद में एक ही अक्षर या वर्ण अथवा स्वर सहित अक्षर या वर्ण कई बार आते हैं वर्ण वृत्ति। वर्ण मैत्री (एलिटरेशन)।[3]

अनुप्रास अलंकार – अनुप्रास, दोहराव, ध्वन्यावृत्ति, पद मैत्री, प्रास, वर्ण साम्य।[4]

अलंकार काव्य का एक आवश्यक उपकरण है। अलंकार का शाब्दिक अर्थ है "आभूषण" काव्य के शोभा बढ़ाने वाले वर्णों को ही अलंकार कहते हैं जिस प्रकार आभूषण से विभूषित कामिनी

---

1. हिन्दी शब्द कोश डॉ हरदेव वाहरी पृ.सं.31 प्रथम संस्करण
2. मानक हिन्दी कोश रामचन्द्र वर्मा पृ.सं.109
3. समान्तर कोश अरविंद कुमार कुसुमकुमार पहला एवं दूसरा खंड (पृ.सं.45–49)
4. हरदेव बाहरी – हिन्दी सेमैटिक्स पृ. 306

के सौन्दर्य में वृद्धि हो जाती है उसी प्रकार अलंकारों से अलंकृत कविता में भी सौन्दर्य की वृद्धि हो जाती है।

अलंकार दो प्रकार के होते हैं – शब्दालंकार और अर्थालंकार। जहाँ शब्दों द्वारा चमत्कार होता है वहाँ शब्दालंकार और जहाँ अर्थ द्वारा चमत्कार प्रदर्शित होता हैं वहाँ अर्थालंकार होता है। अनुप्रास, यमक, वक्रोक्ति और श्लेष मुख्य शब्दालंकार है और अर्थालंकार की संख्या सौ से भी अधिक है।

अनुप्रास ध्वनिमूलक शैलीय उपकरण है, जिसके द्वारा खंडीय ध्वनियों की अभिव्यंजना की जाती है। आचार्य कुंतक़ ने अनुप्रास को वर्ण विन्यास वक्रता कहा है तथा वर्णविन्यास वक्रता की व्याप्ति वे अनुप्रास से भी अधिक मानते हैं। लेकिन यहाँ पर हमने अनुप्रास को व्यंजनों की आवृत्ति तक ही सीमित रखने का प्रयास किया है।

हरदेव बाहरी के अनुसार, "अनुप्रास शब्द और अर्थ में सामंजस्य स्थापित करता है। माधुर्य, प्रभविष्णुता, बलात्मकता और विशदता की सृष्टि करता है।"

पद्य के साथ–साथ गद्य में भी अनुप्रास की विविध योजनाओं के उत्कृष्ट नमूने मिलते हैं। सुरेन्द्र वर्मा जी ने अपने उपन्यास "मुझे चाँद चाहिये" में अनुप्रास का प्रयोग ध्वनि सौन्दर्य तथा सन्दर्भ को उभारने के लिए किया है। कुछ उदाहरण दृष्टव्य हैं –

(1) उन्होंने वर्षा के **संकरे से** संसार में नये क्षितिज खोले थे।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 19)

(2) शिकोहाबाद की मुंगेरी देवी को अपने चिरंजीव दीनदयाल उपाध्याय के लिए **दो साल से सुन्दर, सुशील और सात्विक** कन्या की तलाश थी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 25)

(3) मयंक इतना **सुदर्शन, सुप्रसिद्ध** कवि है।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 31)

(4) **बरसाती बावड़ी गंगा** की ओर देखेगी तो मलिन ही होगी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 34)

(5) बहुत **सुन्दर, संवेदनशील, परिष्कृत**।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 51)

(6) नीना ! **सुन्दर, संवेदनशील, उदास**।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 134)

(7) नयी स्कूल की **संगीत शिक्षिका शांति** से उसकी भेंट होती है। **सुन्दर, सरल और स्नेहमयी**।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 366)

इन उदाहरणों में 'स' की आवृत्ति के साथ–साथ 'ए' 'अ' 'उ' 'इ' कार ध्वनियों की आवृत्ति से शैली में विलक्षण सौन्दर्य आ गया है। इनके प्रयोग से शिल्प और शैली का सौन्दर्य बढ़ जाता है।

प्रभाव की बलात्मकता की निष्पत्ति 'स' और 'र' के अनुप्रास से प्रकट होती है–

(8) बदरंग और अभावों से जर्जर 54, सुल्तानगंज की उपेक्षित विपन्न सिलबिल अपने माध्यम से रेशम तथा **स्वर्णाभूषणों से सुसज्जित, लावण्यमयी, सुसंस्कृत, राजकुमारी** को रूपाकार दे रही थी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 32)

यही धनीभूत शक्ति निम्नलिखित उदाहरण में 'क' के अनुप्रास से प्रकट हो रही है–

(9) अगर मिस दिव्या कात्याल उसके जीवन में न आतीं, तो वह या तो आत्महत्या कर चुकी होती या रूँ–रूँ करते चार–पाँच बच्चों को सँभालती। **किसी क्लर्क की कर्कश** वोसीदी जीवनसंगिनी होती।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 32)

इसी प्रकार 'म' वर्ण की आवृत्ति से सुन्दर अनुप्रास उपस्थित हो रहा है–

(10) वह जानती थी कि वह बहुत संकोची, **मितभाषी** और **मंचभीरू** है .... प्रकाश वृत्त की करतल ध्वनि से उसका कोई सरोकार नहीं।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 27)

(11) वह कुछ खिन्न लगी, "तुमने कौन सा **कूटनीतिक–कौशल** अपनाया है ?

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 209)

(12) कपोल के भीगेपन को उँगली पर लेकर वर्षा पल भर देखती रही पहले आतंकित हुई, **फिर विस्मित फिर विभोर** .... सौम्यमुद्रा का आँसू मेरी आँखों में आ गया है।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 36)

(13) तभी रुचि का **स्वर सुनायी** दिया, "अरे देवि यहाँ है। मैंने तो उद्यान का **कोना–कोना छान मारा।**

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 38)

(14) **पीछे–पीछे पुछल्ले** की तरह झल्ली आ रही थी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 40)

(15) **मुझे मँझधार में** मत छोड़ो।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 56)

(16) वह किंचित असमंजस में लगती थी कि **कौन है कहाँ है क्यों है** ....

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 60)

(17) उसके हामी भरने पर उसने **'कष्ट करने का कारण'** पूछा।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 63)

(18) "आ **हा हा हा** बड़ी धन्ना सेठ बनी हैं पिता भड़क उठे।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 65)

(19) **अनुराधा अंतर्मुखी है, अल्पभाषी है।**

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 69)

(20) **बड़े** लान का **बड़ा बंगला बिल्कुल** खामोश था।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 119)

(21) विशेषकर **बड़ी बड़ी बेधक** आँखें................।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 137)

(22) **बेहतर** हूँ वर्षा। **ब्रेन** हैमरेज से **बाल–बाल बची** हूँ।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 280)

(23) **मेरी मीठी माशा। मेरी** प्यारी **माशा** चिंतामणि सन्तोष की मुस्कान से पास आया।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 244)

(24) अपनी **पुरानी, पीली पड़ी पोथियों** की तरह दीमक लगी जर्जर स्मृतियाँ पलटी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 410)

उपर्युक्त उदाहरणों में अनुप्रास की छटा देखने योग्य है। यहाँ वर्मा जी ने 'म', 'फ', 'व', 'न', 'क', 'प', 'ह', 'अ', 'ब' वर्णों की कई बार आवृत्ति की है जिससे इन वाक्यों का ध्वनीय सौंदर्य देखते ही बनता है। लेखक ने अपने उपन्यास में कई स्थानों पर अनुप्रास का प्रयोग ध्वनि सौन्दर्य की सृष्टि के लिए किया है।

(25) स्वर में कुछ ऐसी अपमानजनक ध्वनि थी कि वह अपने पर नियंत्रण नहीं रख पायी, **मेरी टीचर मेरी सहेली........ मेरी सब कुछ**। उसने सीधे भाई से निगाह मिलाई।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 47)

'टीचर' 'सहेली' 'सबकुछ' के साथ मेरी की आवृत्ति से विशेष आत्मीयता ध्वनित हो रही है।

(26) यह बहुत कुछ **सँभल सकता था, अगर आँखों** का व्यवहार **थोड़ा और** कल्पनाशील **थोड़ा और** प्रभावी होता।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 50)

(27) घंटी के बटन पर उसका स्पर्श हमेशा की तरह नाजुक उमंग भरा नहीं, बल्कि **विचलित और व्यग्र** था।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 56)

(28) जब अर्कांडीना ने कहा, "**ऐसी सूरत** और **ऐसे सुन्दर स्वर** के होते हुये अपने को देहात में दफनाना अपराध होगा" तो वर्षा ने फौरन सहमति में सिर हिलाया।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 180)

(29) **मुझसे** क्षमा **माँग** कर **मुझे** काँटों **में** मत घसीटो।" वर्षा मुस्करायी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 140)

(30) **कहीं** प्रेम **कहानी** है, **कहीं क्राँति** है, **कहीं साला** राजा **का साला** है...........

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 168)

(31) तकिये में मुँह छिपाये वर्षा सिसकती रही – **अपनी** मजबूरी पर, **अपने** अकेलेपन पर **अपनी** कलात्मक **आकांक्षाओं पर** ....

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 200)

(32) दिल्ली आने के बाद **मेरी विचारधारा**, **मेरा व्यक्तित्व** सब बदल गया है।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 225)

(33) फिर मैं उससे प्रेम करने लगी **उसकी** आवाज **से**, **उसके** शब्दों **से उसकी** मुश्किलों **से** उसकी दोनों बच्चियों **से** ....

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 251)

इन सभी उदाहरणों में ध्वनियों की आवृत्ति से अनुप्रासमयता तो आयी ही है लेकिन इस अलंकरण पद्धति का प्रयोग रूढ़ि से हटकर किया गया है। इससे पाठकों का ध्यान अनुप्रासमयता की ओर उतना नहीं जाता है, जितना ध्वनिमयता, लय अथवा शैली–सौन्दर्य की ओर। 'मुझे चाँद चाहिये' की शैली–संरचना का यह एक विशेष पक्ष है।

लय और अनुकार ध्वनि समूह

प्रत्येक भाषा में कुछ अनुकारजन्य ध्वनि समूह होते हैं। प्राकृतिक ध्वनियों का भाषण ध्वनियों द्वारा अनुकरण ऐसे ध्वनि समूहों को जन्म देता है। ये ध्वनि समूह अर्थ ग्रहण कराने में सक्षम होते हैं। अनुकार ध्वनि समूह दो प्रकार के होते हैं –

(1) स्थूल ध्वनि समूह ये व्यंजन पर आश्रित होते हैं।

(2) सूक्ष्म ध्वनि समूह ये स्वर पर आश्रित होते हैं। स्थूल ध्वनि समूह, स्थूल प्राकृतिक ध्वनियों अथवा चाक्षुष एवं अन्य प्रभावों का अनुकरण करते हैं और सूक्ष्म ध्वनि समूह, सूक्ष्म वस्तुओं सामान्य रूप से भौतिक एवं नैतिक गुणों का अनुकरण करते हैं। स्थूल अनुकार ध्वनि समूह के दो प्रकार हैं – शब्दरूपात्मक और गुच्छात्मक। भौंकना, गुनगुनाना, हिनहिनाना, बलबलाना आदि शब्द रूपात्मक ध्वनि समूह होते हैं एवं धक, धक–धक, धड़–धड़, खट–खट, झरझर, मर्मर, चमचम, झलमल आदि गुच्छात्मक, जिनमें ऐसा लगता है मानों ध्वनियाँ गुच्छाकार रुप में एकत्र हो गयी हैं।

ये अनुकार ध्वनि समूह अभिव्यंजकता की उत्पत्ति और वृद्धि में अत्यन्त महत्वपूर्ण

भूमिका निभाते हैं। डॉ. हरदेव बाहरी के अनुसार भावोप्रेक आन्तरिक प्रेरणा और इन्हें प्रयुक्त करने की विवशता आदि लेखक को इनके प्रयोग के लिये उत्तेजित करती है। इनका प्रभाव भी त्वरित, प्रत्यक्ष और आशु होता है। ये अभिव्यक्ति के सहज और साथ–साथ ही प्रभावशाली उपकरण हैं।[1] प्रो. उल्मान के मत से भाव प्रधान तथा अलंकरण प्रधान प्रसंगों में इनके प्रयोग से उनकी प्रभाव समष्टि में वृद्धि होती है।[2]

बालसाहित्य की भाषा में संलापोचित सहज जनभाषा में बोलियों में और अपभाषा (स्लैंग) के प्रयोग के प्रसंग में भाषा का जो सहज, प्रकृत और अभिव्यंजक रुप दिखाई पड़ता है, वहाँ इनका उपयुक्त स्थान होता है। कवि और गद्यकार स्वभावतः इनका पूरा उपयोग करते हैं इसलिए ध्वनिमूलक शैलीय उपकरणों में ये महत्वपूर्ण स्थान रखते हैं। सुरेन्द्र वर्मा ने अनुकार ध्वनिगुच्छों का प्रयोग 'मुझे चाँद चाहिये' में कई स्थलों पर किया है जो प्रसंग की उत्कृष्टता को और भी बढ़ा रहे हैं। इन्होंने गुच्छात्मक ध्वनियों का प्रयोग बड़े ही सुन्दर ढंग से किया है जो निम्नलिखित उदाहरणों से स्पष्ट प्रतीत होता है। धुक–धुक का प्रयोग वर्मा जी ने हृदय की घबराहट को व्यक्त करने के लिए किया है जो सौन्दर्य में वृद्धि कर रहा है–

(1) "धंधे की बात है वर्षा जी। जब दिल में **धुक–धुक** हो रही हो तो जोखिम कैसे ली जा सकती है ?

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 516)

इसी प्रकार इन्होंने धुकधुकी शब्द का भी प्रयोग किया है। जो हृदय की दशा को प्रकट कर रहा है–

(2) शाम हो रही थी, जब वर्षा सूटकेस लिये घर में घुसी। मन में **धुकधुकी** थी कि पता नहीं, क्या घटने वाला है।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 74)

(3) हल्की–सी **धुकधुकी** थी मन में।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 29)

उल्लास की भावना की अभिव्यक्ति 'ओहो' और 'हाहाहा' के द्वारा प्रकट हो रही है।

(4) **"ओहो"** हर्ष हँसा, "जरा शाहजहाँपुर की सिलबिल का सेंस ऑफ ह्यूमर तो देखो।"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 174)

(5) **हा ! हा ! हा !** दीपावली से जगमगाते स्टेज पर वर्षा वशिष्ठ सधे कदमों से आकर संवाद बोलेगी ?

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 27)

---

1. डॉ हरदेव बाहरी, हिन्दी सेमैंटिक्स, पृ.सं. 306
2. एम. उल्मान, सेमैंटिक्स, पृ. 88

इसी प्रकार से गुस्से में चलने को **धमधम** की ध्वनि द्वारा अभिव्यक्ति दी गयी है। जो इन वाक्यों के सौंदर्य में वृद्धि कर रही है–

(6) वर्षा मुड़ी और **धमधम** करती हुई जीना चढ़ गयी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 41)

एक स्थल पर सुरेन्द्र वर्मा ने 'दहल गया' शब्द का प्रयोग हृदय के आतंक मिश्रित भय को प्रकट करने के लिए किया है–

(7) जब उसने विद्यार्थियों और अभिभावकों से खचाखच भरे हाल को देखा, तो उसका दिल **दहल गया**।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 27)

नीचे गिरते आंसुओं की दयनीयता में अनुकार ध्वनिगुच्छ के प्रयोग द्वारा और भी वृद्धि हो रही है।

(8) जरा–सी बात पर **टप–टप** उसके आँसू बहने लगते थे।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 203)

(9) देखते–देखते सतवंती की आँखों से **टप–टप** आँसू बहने लगे, "मेरे जैसी नसीबजली, चिराग लेकर ढूंढने से भी नहीं मिलेगी..............

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 204)

'थरथराना', 'थरथरायी' शब्द काँपने के भाव को प्रकट करते हैं जिससे वाक्यों के सौन्दर्य में वृद्धि हुई है। यहाँ पर आनन्द के अतिरेक का प्रभाव–अंकन थरथराने ध्वनि मूलक शब्द के द्वारा किया गया है।

(10) वर्षा एक तरह के अपरिभाषित आनन्द से **थरथरा** गयी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 38)

(11) बड़ी बेटी की शादी पर 54 सुल्तानगंज में छुटकारे तथा आह्लाद की जो तरंगें **थरथरायी** थीं, उनकी जगह फिर पुरानी दुश्चिन्ता की बोझिल जकड़न ने ली थी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 39)

(12) वर्षा आशंका से दो दिन **थरथराती** रही। (मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 77)

इस उदाहरण में थरथराती रही ध्वनिगुच्छ द्वारा आशंका की निरंतरता और उसकी सतत उपस्थिति की अनुभूति से हृदय के कंपित होने को व्यक्त किया गया है।

(13) जी हल्का नहीं होता बल्कि माँ तृप्ति से **थरथरा** जाती है, उसका जीवन धन्य हो जाता है।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 100)

(14) माशा दिन भर रात के ख्याल से **थरथराती** रहती होगी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 255)

(15) रिपर्टरी के मुख्य द्वारा से बाहर निकलते हुये वर्षा का मन यकायक ऐसे कांपा, जैसे निर्वासन के दिन प्रातःकाल कुबेर के प्रसाद में घुसते हुये यक्ष **थरथराया** था।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 290)

(16) दरवाजा खुला और उसे आहिस्ता से बंद करते हुये झुमकी निकली। उसकी आँखें सूखी जरूर थी, पर उनमें भी बेटी की विदाई का संकट **थरथरा** रहा था।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 496)

(17) हर्ष के चेहरे पर इस यंत्रणा के चिन्ह थे........ सूखे विकृत होंठ, चेरे की लकीरों में दर्द की **थरथराहट**......

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 546)

(18) हर्ष के चेहरे पर कई भाव आये और गये, पर बोझिल बेचारगी बराबर चेहरे की रेखाओं में **थरथराती** रही।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 351)

उपर्युक्त उदाहरणों में **थरथराना** ध्वनि गुच्छ प्रयोग की विशिष्टता भिन्नार्थ रूपी होने से प्रसंग विशेष की अर्थवत्ता और सौन्दर्य में वृद्धि करती है। जैसे उदाहरण 10, 11 में थरथराना का प्रयोग आनन्द अथवा आह्लाद की अतिशयता को व्यक्त करता है। वहीं 12,14,15,16,17 तथा 18 में थरथराने का प्रयोग संकट की आशंका से हृदय के काँपने अर्थात भय से भर जाने के अर्थ में किया गया है। ये ध्वनिगुच्छ शैली में चमक के साथ–साथ अर्थ व्यंजकता में सहायक हैं।

रुनझुन भी ऐसा ही ध्वनिगुच्छ है जो धीमी आवाज के भाव को प्रकट करती है। साथ ही प्रभाव की लघुता को भी धीमी वर्षा अच्छी लगती है। रुनझुन शब्द इसी का द्योतक है।

(19) अंधेरे में ट्रैफिक की मद्धिम **सीत्कार** सुनायी दे रही थी। उसके ऊपर बारिश की धीमी **रुनझुन**।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 350)

भनभन की ध्वनि से मधुमक्खियों द्वारा की गयी आवाज का परिचय मिलता है। किसी सभागार में होने वाले समवेत किन्तु धीमी ध्वनिमयता के लिये मधुमक्खियों की भनभनाहट ध्वनि एक सटीक शब्द है।

(20) फिर असिस्टेंट चिल्लाया साइलेंस। मधुमक्खियों की सी **भन–भन** कम हो गयी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 146)

'मुझे चाँद चाहिये' में कुछ अन्य अनुकार ध्वनिसमूह भी मिलते हैं जो भौतिक एवं नैतिक गुणों का अनुकरण करते प्रतीत हो रहे हैं।

(21) आसपास हल्की हवा में पत्तों की **सरसराहट** थी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 236)

(22) कुछ देर चुप्पी रही क्यारियों में हल्की, नम **सरसराहट** हुई। शायद ओस की बूंदें टपकी थीं।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 316)

(23) कुशन पर सिर रखे कुछ क्षण लेटी रही। फिर अनमने भाव से टू–इन वन का बटन दबा दिया। स्पूल के घूमने की मद्धिम **सरसराहट** के बाद बायोलिन का सुर उभरा और फिर दर्द भरा स्वर 'ईट–पत्थर के जंगल में मारे गये......... (मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 420)

(24) दरवाजा खुलते ही भीनी सुगंध का झोंका आया, फिर रेशम की मुलायम **सरसराहट** के साथ पायलों की **रुनझुन** सुनायी दी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 37)

'सरसराहट' का सटीक प्रयोग वर्मा जी ने ध्वनि–सौन्दर्य में वृद्धि करने के लिये किया है, जो हवा द्वारा उत्पन्न होती है। सरसराहट एक ध्वनिमूलक शब्द है जिसका अर्थ है हवा के टकराने या किसी वस्तु के रगड़ने से उत्पन्न आवाज। वर्मा जी ने इसके विविध प्रयोग किये हैं। सन्दर्भ परिक्र्तन से **सरसराहट** के अर्थ बदल गये हैं और ध्वनीय वातावरण मुखरित हो उठता है। इन प्रयोग में पत्तों की **सरसराहट**, बूँदों के टपकने से हल्की, नम **सरसराहट**, स्पूल के घूमने की मद्धिम **सरसराहट**, रेशम की मुलायम **सरसराहट** का हर सन्दर्भ नया अर्थ देता है और शाब्दिक शैलीय उपकरण अर्थ को उद्भासित करता है। प्रयोग की यह विविधता शब्द चयन व प्रयुक्ति की मौलिकता का प्रमाण है।

धधकना ध्वनि से जलने की प्रक्रिया की ओर संकेत मिलता है जिसका सटीक प्रयोग वर्माजी ने यहाँ पर किया है–

(25) जो आग मेरे भीतर **धधकती** रहती है, वह कुछ समय के लिये शान्त हो जाती है।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 46)

'भनभनाहट' से धीमी–धीमी ध्वनि की ओर संकेत मिलता है। इसका प्रयोग वर्मा जी ने अनेक स्थलों पर किया है–

(26) पर्दे के पार लोगों की बातचीत की हल्की **भनभनाहट** सुनायी दे रही थी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 37)

(27) कर्दम–वाटिका की च्युंगम चबाने वाली भंवरियों में सहसा **भनभनाहट** होने लगी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 396)

'चहचहाना' चिड़ियों द्वारा की गयी ध्वनि का प्रतीक हैं इसका प्रयोग वर्माजी ने अपने उपन्यास में सटीक रूप से किया है–

(28) बंद आंखों के पार पहले चिड़ियों की मद्धिम **चहचहाहट** सुनाई दी, फिर एक कोमल स्वर "वर्षा तुम ठीक तो हो न ?"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 205)

'गड़गड़ाना' ध्वनि की आवाज की गूंजने की प्रक्रिया की ओर संकेत करती है जो यहाँ सटीक रूप से किया गया प्रयोग है–

(29) तालियों की **गड़गड़ाहट** खत्म नहीं हो रही थी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 452)

(30) तालियों की **गड़गड़ाहट** से स्टूडियो का सजा हुआ फ्लोर गूंज उठा।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 366)

'फड़फड़ाना' ध्वनि का प्रयोग यहां पर वर्माजी ने बड़े ही सुन्दर ढंग से किया है जो पक्षी के परों की आवाज की ओर सटीक संकेत कर रहा है।

(31) "तो कैसा है ?" उसकी आकुलता घायल पंछी के परों की **फड़फड़ाहट** की तरह वातावरण में भर गयी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 403)

घायल पक्षी की आकुलता, उसके फड़फड़ाते पंख बखूबी व्यंग्य करते हैं। इसी तरह वर्षा की आकुलता घायल पंछी की परों की फड़फड़ाहट की तरह वातावरण में भर गयी। आकुलता की चाक्षुष अभिव्यक्ति के लिये 'फड़फड़ाते परों' का प्रयोग जितना सटीक है उतना ही व्यंजक है।

'फुसफुसाना' ध्वनि के धीमेपन की ओर संकेत करती है। जिसका प्रयोग वर्माजी ने निम्नलिखित उदाहरण में किया है।

(32) "जिज्जी की आँखों में .... झल्ली **फुसफुसायी**।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 528)

आँखों में फुसफुसाना अपने आप एक सवाक् चित्र है। आँखों की ओर देखकर संकेत से सब कुछ कह देना।

'सुगबुगाना' ध्वनि का प्रयोग वर्माजी ने बड़े ही सुन्दर ढंग से किया है–

(33) रसोई में कुकर की **सुगबुगाहट** हो रही थी। ड्राइंगरूम में टी.वी. चल रहा था।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 36)

'सुगबुगाहट' हलचल भरी हल्की ध्वनि होती है, इसे इन दोनों उदाहरणों में व्यक्त किया गया है। ये ध्वनियां श्रोता–सापेक्ष्य हैं और इनके प्रभाव की गहराई को व्यक्त करती है।

(34) हर्ष के निधन के बाद जब पंक–प्रभाव में सुगबुगाहट शुरू हुई थी, तो सिद्धार्थ ने उसे छोटा–सा पत्र भेजा था।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 566)

निम्न उदाहरण में **'झिलमिलाहट'** ध्वनि एक प्रकार से चमकने की प्रक्रिया की ओर संकेत कर रही है, तत्पश्चात उदास होने के भाव को भी प्रकट कर रही है। वर्माजी ने यहाँ पर इस **'झिलमिलाहट'** शब्द का प्रयोग बड़े ही व्यंजक ढंग से किया है।

(35) ''फिल्म के अधूरे रह जाने में उसका नुकसान नहीं आखिर वह प्रोड्यूसर है।'' हर्ष के चेहरे पर छाया–सी **झिलमिला** गयी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 512)

मन की अन्तर्दशा को प्रकट करने के लिये वर्माजी ने कड़वाहट शब्द का प्रयोग बड़े ही उत्कृष्ट ढंग से किया है।

(36) वर्षा ने नाहीं में सिर हिलाया भीतर से **कड़वाहट** उभरी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 516)

'झुँझलाहट' ध्वनि से मन की गुस्से वाली अवस्था को व्यक्त किया जाता है। यहाँ पर वर्माजी ने इसी ध्वनि का प्रयोग मन की दशा को प्रकट करने के लिये किया है।

(37) ''यह जिन्दगी की कोई दार्शनिक पहेली है, जिसके लिये जिज्ञासा हो ? पिता कुछ **झुँझलाहट** से बोले।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 525)

मन में किसी कार्य को करने और न करने के बीच में जो स्थिति उभरती है वह 'हिचकिचाहट' कहलाती है। यहाँ पर 'हिचकिचाहट' ध्वनि का प्रयोग इस निश्चय की स्थिति को उभारने के लिये किया गया है।

(38) ''मैं जरा हर्ष का कमरा देख सकती हूँ ?'' कुछ पलों की **हिचकिचाहट** के बाद आखिर वर्षा ने कह ही दिया।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 422)

'हँसने' की क्रिया को **'खिलखिलाने'** की ध्वनि द्वारा बड़े सटीक ढंग से व्यक्त किया गया है।

(39) वर्षा उन्मुक्त भाव से हँसी। बम्बई से दिल्ली तक की लाइन **खिलखिलाहट** की तरंगों से आलोड़ित हो उठी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 387)

(40) आज की यह पार्टी वह रद्द कर देना चाहती थी, पर दिव्या ने विरोध किया, ''इसी बहाने इन लोगों से फिर मिल तो लूँगी। वैसे भी मुझे पार्टी, संगीत और **खिलखिलाहट** अच्छी लगती है .... इसी क्रम में।''

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 570)

निम्न उद्धरण में स्थिति की अस्पष्टता को **'झुँझलाहट'** की ध्वनि की संज्ञा दी गयी है–

(41) नैन–नक्श में अभी आकर्षण की **झुँझलाहट** थी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 388)

'लड़खड़ाहट' शब्द 'चाल' के टेड़ेपन और असन्तुलन की ओर संकेत करता है।

जिसका प्रयोग वर्माजी ने यहाँ सटीक रूप से किया है।

(42) आखिरकार आते–आते मम्मी की आवाज **लड़खड़ायी** और सीने पर ऐसे हाथ रखा जैसे सांस लेने में तकलीफ हो रही हो।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 361)

(43) वर्षा को याद आया कि कमरे में घुसते हुये हर्ष अपनी चाल को संतुलित कर रहा था, पर बैठते समय थोड़ी **लड़खड़ाहट** झलक गयी थी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 372)

चूँकि हर्ष नशे की स्थिति में है अतः उसकी चाल में **लड़खड़ाहट** झलकना स्वाभाविक था।

नीचे लेखक ने 'झनझनाना' ध्वनि का प्रयोग बड़े सटीक ढंग से किया है। जो नसों के अन्दर नशे की तरंग के प्रवेश करने की ओर संकेत कर रहा है।

(44) वर्षा ने उसके हाथ से सिगरेट ले ली और दो कश लिये। अब नशे की मद्धिम तरंग भीतर **झनझनाने** लगी थी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 353)

(45) हर्ष एकदम चिहुंक उठा वर्षा ने अंतिम शब्द के साथ अपना खाली गिलास कोने की दीवार पर मार दिया था। ऊँची **झनझनाहट** के साथ वह टकराया और छोटे–बड़े टुकड़े नीचे बिखर गये।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 354)

यहाँ एक ही ध्वनि की मात्रा परिवर्तित प्रसंग के कारण कैसे घट–बढ़ गयी है यह देखने योग्य है। इन्ही स्थलों पर लेखक का शब्द मूलक शैली–वैशिष्ट्य उजागर होता है। मद्धिम तरंग का **झनझनाना** नशे के हल्के प्रभाव को व्यक्त करता है और गिलास के दीवाल से टकराने के बाद उत्पन्न **झनझनाहट** उसकी तीखी आवाज को व्यक्त करती है। एक ध्वनि के दो बिम्ब दो प्रभाव।

'गुनगुनाना' गीत को धीरे–धीरे गाने की ध्वनि की ओर संकेत करती है जिसका प्रयोग वर्माजी ने यहाँ पर किया है।

(46) पर गलियारे में आते ही बाहर मीरा की **गुनगुनाहट** सुनायी दी, 'वर्षा आयी वर्षा आयी। झूम उठी मेरी अमराई' ....

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 363)

'बुदबुदाना' धीरे–धीरे किसी शब्द को उच्चरित करने की ध्वनि की ओर संकेत करता है जिसका प्रयोग वर्माजी ने वर्षा के पिता द्वारा करवाया है अर्थात वे धीरे से बोले, लेखक यही बात यहाँ पर प्रकट करना चाहता है।

(47) शर्माजी ने **बुदबुदाकर** सिलबिल का औपचारिक नाम लिया।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 492)

चारुश्री के प्रति हुसैन अत्यधिक गुस्सा प्रकट करना चाहते हैं जिससे वे तिलमिला गये हैं। जिसका प्रयोग वर्माजी ने यहाँ पर बड़े ही सुन्दर ढंग से किया है।

(48) "वह अभी सेट छोड़कर चली जायेगी। बहुत अनप्रोफेशनल रुख पर खामियाजा हमें भुगतना होगा। हुसैन के चेहरे पर विवशता थी और उससे उपजी **तिलमिलाहट**।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 347)

जब व्यक्ति अपना क्रोध किसी पर खुलकर प्रकट नहीं कर पाता, तो वह क्रोध के कारण तिलमिला जाता है। यहाँ लाचार और विवश क्रोध की अभिव्यक्ति के लिये तिलमिलाना ध्वनि के अलावा और किसी शब्द का प्रयोग विधेय न होता।

'कसकना' शब्द से एक प्रकार के दर्द के अनुभव की ओर संकेत मिलता है। यहाँ पर वर्षा की कमी उसकी मित्र को अत्यधिक दुःखी कर रही है अतः वह उसको पत्र लिखती है–

(49) यहाँ तुम्हारी कमी बहुत **कसकती** है। (मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 344)

कमी का कसकना रह–रह कर अभाव का अनुभव करना इससे अच्छा शब्द नहीं हो सकता था।

रीता अत्यधिक तनाव में है अतः उसके चेहरे पर तनाव उभरता है जिससे उसके चेहरे पर **कंपकपाहट** की झलक मिलती है–

(50) "वर्षा पता है, पिछली बार मैंने तुम्हे फोन किया, तो क्या हुआ ?" रीटा के चेहरे पर फिर तनाव की **कंपकपाहट** थी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 195)

कंपकपाहट कई प्रकार की होती है एक तनाव से उत्पन्न **कंपकपाहट** होती है जिसे व्यक्ति तनाव न झेल पाने के समय महसूस करता है।

जब सुजाता विदा हुई तो वह रो रही है इस भाव को प्रकट करने के लिये वर्मा जी ने हिलक–हिलककर ध्वनि का बड़ा ही सटीक प्रयोग किया है–

(51) जब विदाई हुई, तो सुजाता हर्ष से लिपट कर **हिलक–हिलक** कर रोयी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 163)

नाग जब गुस्से में होता है तो उसके फन से आवाज निकलती है जो **'फुँकारने'** की होती है। यहाँ पर आदित्य के क्रोध की अभिव्यंजना करने के लिये वर्मा जी ने इसी शब्द का प्रयोग बड़े ही सटीक ढंग से किया है–

(52) आदित्य के प्रभावशाली चेहरे पर आयु, थकान एवं आक्रोश की रेखायें इस तरह **फुँकारते** हुये खड़ी हो गयीं, जैसे सोये हुये नाग को निर्ममता से छेड़ दिया गया है।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 148)

आयु, थकान एवं आक्रोश की रेखाओं का फुंकारना एक ऐसा बिम्बधर्मी प्रयोग है जिससे

क्रोध, क्षोभ और विवशता तीनों की तस्वीर खिंच जाती है। ऐसे प्रयोग लेखक की शैली के शब्द रूपात्मक पक्ष को उजागर करते हैं।

आँखों में आँसू भरे हों तो दुःख की पराकाष्ठा की अभिव्यक्ति होती है। यहाँ पर वर्माजी ने दिव्या कत्याल की दुःखी मनःस्थिति को प्रकट करने की चेष्टा की है–

(53) वर्षा सीधी हुई। अपने दुपट्टे के छोर से उनकी अश्रु रेखा पोंछी। वह **छलछलाई** आंखों से उसे देख रही थी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 57)

वर्षा अत्यधिक परेशान है और इस परेशानी को व्यक्त करने के लिये वर्माजी ने **'चिड़चिड़ाहट'** ध्वनि का प्रयोग किया है।

(54) दरवाजे की घंटी बजी–चिड़िया की मीठी चहक के सुर में। इस समय कौन है ? भीतर **चिड़चिड़ाहट** भर गयी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 350)

अनचाही स्थिति अथवा ध्वनि की उपस्थिति के कारण व्यक्ति में **चिड़चिड़ाहट** पैदा हो जाती है। यहाँ इसी का संकेत है।

खट–खट अनुकार ध्वनि का प्रयोग प्रस्तुत उपन्यास में किया गया है।

(55) तभी जीने पर हर्ष के बूटों की **खट्–खट्** हुई।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 156)

इस प्रकार मुझे चाँद चाहिये उपन्यास में लय के विभिन्न प्रयोग और अनुकार ध्वनि समूह से शब्द और अर्थगत सौन्दर्य की वृद्धि हुई है। इससे इसके शैली में एक विशेष भंगिमा संक्रान्त हो गयी है।

रीति या वृत्ति

अर्थ एवं स्वरूप :

रीति शब्द के व्युत्पत्तिगत अर्थ के अलावा कोशों में इसके विभिन्न अर्थ दिये गये हैं। यहाँ पर इसका अर्थ लिखने की विशिष्ट शैली या रचना–पद्धति अभिप्रेत है। यहाँ देखना हैं कि रीति में जिन शैलियों को परिगणित किया गया है उनके अनुसार 'मुझे चाँद चाहिये' की शैली में वे विशिष्टतायें मिलती हैं या नहीं। यहाँ पहले रीति का विस्तार से विवेचन किया जायेगा बाद में उस कसौटी पर प्रतिपाद्य उपन्यास की शैली का परीक्षण किया जायेगा।

स्त्री सं. री (गति) + क्तिन् वा क्तिच्

1. गति में आना, चलना या बहना
2. पानी का झरना या नदी।
3. सीमा सूचित करने वाली रेखा।

4. मार्ग, रास्ता।

5. काम करने का विशिष्ट ढंग या प्रकार।

6. पहले से से चली आई हुई प्रथा या रस्म–रिवाज

6. कायदा/नियम

8. संस्कृत साहित्य में, विशिष्ट प्रकार की ऐसी पद–रचना या लेख, शैली जो ओज प्रसाद, माधुर्य आदि गुण उत्पन्न करती हो या कृति में जान लाती हो।

मानक हिन्दी शब्द कोश, तथा समान्तर कोश में रीति के निम्नलिखित अर्थों पर विचार किया गया है।

विशेष – हमारे यहाँ भिन्न–भिन्न देशों के संस्कृत कवि तथा साहित्यकार अपनी अपनी रचनाओं में कुछ अलग और विशिष्ट प्रकार या शैली में ओज, प्रसाद आदि गुण लाते थे, इसी से उन देशों की शैलियों के आधार पर ये चार रीतियां मुख्य मानी गयी थीं– वैदर्भी, गौड़ी, पांचाली या पंचालिका और लाटी। परवर्ती साहित्यकारों ने मागधी और मैथिली नाम की रीतियाँ भी मानीं थी। मध्ययुगीन हिन्दी साहित्य में काव्य रचना की यह प्रणाली या शैली जो आचार्यों द्वारा निरूपित शस्त्रीय नियमों, लक्षणों सिद्धान्तों आदि पर आश्रित होती थी और जिसमें अलंकार, ध्वनि, पिंगल, रस आदि बातों का पूरा ध्यान रखा जाता था। इधर कुछ दिनों से इस प्रकार की काव्य रचना क्रमशः घटती जा रही है, और इसका प्रचलन उठता जा रहा है।[1]

रीति – सं. (स्त्री.) 1. कायदा, नियम 2. रस्म रिवाज 3. ढंग, तरीका (जैसे उचित रीति से कार्य करना)।[2]

रीति – परपाटी, अनुक्रम, आचार, आन, चर्या, चलन, चलावा, जाब्ता, ढंग, तौर तरीका, दस्तूर, पद्धति, परम्परागत विधि, पोत, प्रणाली, प्रथा, बंधन, बहुप्रचलित विधि, राह, रिवाज, रिवायत, रीति, शैली, सिलसिला, सुन्नत।[3]

प्राचीन भारतीय साहित्य शास्त्र में 'रीति' का प्रयोग और प्राचीन भारतीय नाट्य–शास्त्र में 'वृत्ति' शब्द का प्रयोग मिलता है। 'रीति' वामन द्वारा प्रतिपादित साहित्य शास्त्रीय शब्दों में निश्चित अर्थ में ही अधिक प्रसिद्ध है और उसका क्षेत्र केवल 'विशिष्ट पद–रचना रीति' है, अर्थात् पद–रचना की विशिष्टता मात्र ही रीति है। इसके अन्तर्गत भाषा में संकेत गत विभिन्न स्तरीय विशेषतायें नहीं लाई जा सकती हैं।

नाट्यशास्त्र में वृत्ति शब्द का प्रयोग मिलता है। इसका अर्थ है – रस–विषयक व्यापार, और यह मुख्यतः 'चित्त' का व्यापार है, जो क्रमशः दर्शक के चित्त को विकास, विक्षेप, संकोच, विस्तार

---

1. मानक हिन्दी कोश, चौथा खंड, सं. रामचन्द्र वर्मा, पृ. सं. 512
2. हिन्दी शब्द कोश, डॉ. हरदेव बाहरी पृ. सं. 703
3. समान्तर कोश प्रथम, द्वितीय खण्ड (514.9) अरविन्द कुमार, कुसुम कुमार

के रूप में अनुवर्तित करता है। भरत ने कौशिकी, सात्वती, आरभटी और भारती ये चार वृत्तियाँ गिनायी हैं, जो इन चार चित्त वृत्तियों के प्रकाशन के लिए ही निर्दिष्ट की गयी है। श्री कान्ति चन्द्र पाण्डे के मत से, 'भोज ने सरस्वती कण्ठाभरण में चित्त की चार अवस्थायें मानी हैं[1] – विकास, विक्षेप, संकोच और विस्तार। भोज ने 'वृत्ति' की व्याख्या तीन प्रकार से करने का यत्न किया है–

1. 'वृत्ति' रस–व्यापार है।
2. इसके द्वारा चित्त–वृत्तियों का द्योतन होता है।
3. ये चित्तवृत्तियों को, वर्तित करती है, इसलिए 'वृत्ति' है।

इन वृत्तियों को आनन्द वर्धन ने शब्द वृत्ति न मानकर अर्थ वृत्ति माना है और अभिनव गुप्त पाद और धनंजय इस सम्बन्ध में बताते हैं कि कौन सी वृत्ति किस रस के अभिनय के अनुकूल होगी। किसी न किसी रूप में इन वृत्तियों का सम्बन्ध रसों के साथ–साथ प्रादेशिक वृत्तियों से भी था। दूसरे अभिधा, लक्षणा, और व्यंजना को भी वृत्ति नाम से पुकारा जाता है।[2]

ध्वनि मत में रीति का अर्थ शब्द योजना विशेष है जबकि आचार्य वामन के अनुसार रीति गुणों (दस शब्द गुणों और दस अर्थ गुणों) के अनुसार स्वरूप लाभ करती है। उनके अनुसार–

1. वैदर्भी रीति में सभी गुणों का समावेश रहता है।
2. गौड़ी रीति में केवल ओजस् और कान्ति गुण रहते हैं।
3. पांचाली में माधुर्य और सौकुमार्य गुणों का ही योग रहता है।

अर्थात् वामन शब्दार्थ योजना को रीति मानते हैं।[3]

अभीष्ट प्रभाव के अनुकूल ध्वनियों का संगठित होना रीति या वृत्ति है। शास्त्रीय विधान के अनुसार माधुर्य और ओज गुण की निष्पत्ति प्रधानतः ध्वनिमूलक होती है तथा प्रसाद की शब्दार्थ मूलक। शैलीय उपकरणों में माधुर्य तथा ओज का और उनसे सम्बन्धित उपनागरिका और पुरुषावृत्ति का या वैदर्भी और गौड़ी रीति को ग्रहण किया जाता है। वर्मा जी की भाषा में माधुर्य गुण के पर्याप्त उदाहरण मिलते हैं और ओजगुण भी कई स्थलों पर दृष्टिगोचर होता है। माधुर्य गुण को प्रकट करने की प्रवृत्ति इस उदाहरण में देखी जा सकती है।

(1) जब सौम्यमुद्रा ने गुलाब का फूल तोड़ा उसे सूँघते हुए झूले पर बैठी और दो तीन पेंगें लीं तो परिवार के दोनों छोटे सदस्य मोहाविष्ट थे।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 38)

सौम्यमुद्रा की चेष्टाओं के वर्णन में माधुर्य गुण की प्रभविष्णुता दिखायी पड़ रही है। शिवानी के रूप सौन्दर्य के वर्णन में भी माधुर्य गुण का आश्रय लिया गया है।

---

1. कम्परेटिव एस्थेटिक्स खण्ड 1 पृ. 466 से 477 तक
2. रीति विज्ञान : परिधि और प्रयोजन, विद्यानिवास मिश्र पृ.सं.14,15
3. ध्वनि सिद्धान्त तथा तुलनीय साहित्य चिंतन, डॉ बच्चूलाल अवस्थी ज्ञान (पृ.सं. 37)

(2) पर शिवानी न सिर्फ बड़े पावन ढंग से गोरोचन–सी गोरी थी, बल्कि उसमें गहरा सहज आकर्षण भी था। शिवानी ने बैलबॉटम फ्रिल वाला टॉप पहन रखा था, कानों में बड़े–बड़े कुंडल। पीठ पर लहराते कटे हुए बाल। काले लाइनर से हाइलाइट की गयीं आँखें और स्वप्निल से 'लुक' के लिए ग्रे शैडो सनसेट पिंक लिपस्टिक में भरे–भरे होंठ ऐसे लगते थे जैसे पकी हुई फलियाँ टूटने को मचल रही हों।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 160)

निम्न उदाहरण में युवती के भोलेपन को उभारने के लिए वर्मा जी ने माधुर्य गुण का आश्रय लिया है–

(3) यह भोली–भाली कोयल की बोली सुनकर वैसी ही प्रतिध्वनि देती है, सरसों को हवा में झूमते देखकर अपनी देह को वैसे ही थिरकाती है........

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 167)

यहाँ पर झुमकी वर्षा का स्वागत करते हुये कहती है –

(4) "वर्षा दीदी न ?" वह हँसी "आप तो बारिश लेकर आयीं। 'आइए न।' वर्षा कोने के सोफे पर बैठ गयी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 261)

यहाँ पर वर्षा के लिए पुनः 'बारिश' शब्द का प्रयोग कितने माधुर्य की सृष्टि कर रहा है।

चारुश्री के चरित्र चित्रण के सन्दर्भ में भी माधुर्य का आश्रय लिया गया है–

(5) अन्दर कोई नारी स्वर फोन पर बात कर रहा था। बीच–बीच में खिलखिलाहट। फिर मोटे कालीन पर हल्की आहट सुनायी दी। फिर खुशबू के झोंके के साथ साड़ी पहने बहुत आकर्षक युवती आयी "हमें चारुश्री कहते हैं।" उसने मोहक नजाकत से हाथ आगे बढ़ाया।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 266)

हेमलता के व्यक्तित्व के वर्णन में भी माधुर्य गुण के दर्शन होते हैं–

(6) हेमलता भारी साड़ी में आत्मसजग–सी आयी और नमस्ते की। छोटी–सी सजी धजी गुड़िया जैसी लग रही थी। तनिक–सी मुस्कान चेहरे पर आ गयी थी, जिसे शायद माँ की टेढ़ी भौहों का विचार करके तुरन्त दबा लिया।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 289)

इसी प्रकार से वर्षा द्वारा अभिनय में प्रयुक्त संवाद में भी माधुर्य गुण को प्रयुक्त किया गया है–

(7) 'एक्शन' के आदेश पर विमल की ओर मीठे ढंग से देखते हुए वर्षा एक कदम आगे बढ़ी, "आज की शाम बहुत सुहानी लग रही है। हवा की अठखेलियों में कशिश कुछ ज्यादा है।

दिल में उमंगों की घटायें छा रही हैं। आँखों के सपने कुछ ज्यादा ही दिलकश हो उठे हैं। उसने भावभरी आँखों से विमल को देखा, "तुम क्या सोचते हो मोहन ?"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 340)

नन्हें निक्की के व्यक्तित्व के वर्णन में वर्मा जी ने माधुर्य गुण का आश्रय लिया है–

(8) वर्षा ने निक्की को गोद में लिया तो वह पहचान के भाव से मुस्कराया। फिर उसके गले की चेन पकड़ने लगा। चंचल आँखें कहीं स्थिर नहीं होती थीं। गोरी, गुदगुदी देह असंयत ढंग से मटक रही थी। मुँह से दूध की सुगंध। नन्हें–नन्हें दो दाँत दिखायी दे रहे थे। वर्षा के भीतर वात्सल्य की बारीक–सी रेखा सुगबुगायी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 454)

यहाँ पर वातावरण के चित्रण में माधुर्य गुण का आश्रय लिया गया है–

(9) शैम्पेन का प्याला लिये वर्षा बाहर आ गयी। तरणताल की सुगबुगाती सतह पर चाँदनी का वर्क लगा हुआ था आसपास शांति थी। उद्यान से आते हुए निर्मल झोंकों में फूलों की गंध बसी थी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 477)

नैनरंजन के व्यक्तित्व के सौंदर्य को उभारने के लिए वर्मा जी ने माधुर्य गुण का उपयोग किया है–

(10) पहली बार नैनरंजन से मिलकर ही वर्षा प्रमुदित हो गयी थी। उसका मनोहारी रूप, निश्छलता और विनयशीलता देखते ही बनती थी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 488)

सौम्य मुद्रा और मयंक के बीच के दृश्य वर्णन में वर्मा जी ने भयानक और जुगुप्सापूर्ण वर्णन में ओजपूर्ण शब्दों का प्रयोग किया है–

(11) यह सौम्यमुद्रा और मयंक के बीच का दृश्य था। वह बोलने लगी, "मयंक, मेरे जीवन को निपट अंधकार बनाकर चले गये तुम। तुम तो हमारे वंश का इतिहास लिखने आये थे। उस वंश को बचाने के लिए तुमने अपने प्राणों की आहुति दे दी। कितने सपने देखे थे हमने साथ–साथ अब क्या होगा ? ....प्रेत बनकर विकराल गिद्धों की तरह मेरी कामना नोच–नोच कर खायेंगे।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 36)

वर्षा के पिता सरयूपारीण ब्राह्मण हैं। जब वे वर्षा के घर पर कुत्ते को देखते हैं तो जुगुप्सा से कहते हैं।

(12) "घर में श्वान .... " पिता जुगुप्सा से बोले।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 485)

वर्षा के पिता उससे नाराज हैं इसलिये वे उससे कहते हैं–

(13) पिता का चेहरा तमतमा गया, "सिलबिल, लाज–शर्म बिल्कुल बेच खायी है तुमने.........." आवेश में वह उठकर खड़े हो गये।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 533)

हर्ष जब गुस्से में है तो उसके वर्णन के लिए ओजगुण का आश्रय लिया गया है–

(14) तुम उस कुतिया को जानती नहीं हो। हर्ष के नथुने फड़कने लगे थे, मुझे अपने दरवाजे पर देखकर वह पाँच के छह लाख कर देगी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 537)

यहाँ हर्ष की मृत्यु के बाद उसके चेहरे पर जो वीभत्सता का भाव है उसके वर्णन के लिए ओजगुण का आश्रय लिया गया है–

(15) वर्षा फटी आँखों से देखती रही। हर्ष के जर्द चेहरे पर मक्खियाँ भिनक रही थीं। यह सेंट स्टीफेंस का बहुत होनहार छात्र था। वाशिंगटन डी.सी. और मास्को में देश का राजदूत तो नहीं, पर अन्तर्राष्ट्रीय स्तर का अभिनेता जरूर बन गया था। शिवानी और चारुश्री जैसी अनेक आकर्षक एवं सम्पन्न युवतियाँ इसकी जीवनसंगिनी बनने को लालायित थीं। किसी भी दृष्टि से हर्ष को आकाश पर होना चाहिये था, पर वह चौपाल के धूल भरे फर्श पर सूखी विष्ठा के बीच पड़ा था। हर्ष के चेहरे पर इस यंत्रणा के चिन्ह थे......... सूखे, विकृत होंठ चेहरे की लकीरों में दर्द की थरथराहट..............

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 546)

वर्षा गुस्से का अभिनय कर रही है तो उसके संवाद में ओजगुण दृष्टिगोचर होता है–

(16) ''याद कर उजागर सिंह'' वर्षा ने दाँत पीसे ''उस अमावस की रात तूने क्या किया था हरामजादे?" और उसका हाथ हवा में लहराया।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 552)

वर्षा हर्ष की बहिन सुजाता से गुस्से में कह रही है–

(17) "आपसे मदद माँगी किसने है ?" वर्षा का मुँह तमतमा उठा, मैं जैसी दीन–हीन पैदा हुई थी, मेरा बच्चा वैसे पैदा नहीं होगा।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 556)

इस प्रकार 'रीति' और वृत्ति के विशेष प्रयोगों से इस उपन्यास के ध्वनि मूलक शैलीय पक्ष की विशेष अभिवृद्धि हुई हैं 'मुझे चाँद चाहिये' का गद्य इसीलिए चर्चा का विषय बना।

व्यक्ति वैशिष्ट्य सूचक भाषण ध्वनियाँ

पात्रों की भाषा द्वारा उनके भौगोलिक, सामाजिक परिवेश एवं ध्वनि वैशिष्ट्य का परिचय मिलता है जो अभिव्यंजना में वृद्धि करता है। इसमें विशिष्ट सामाजिक वर्ग की तथा विदेशियों की उच्चारण विशेषताओं का अन्तर्भाव होता है। शैलीविज्ञान में भाषण ध्वनियों के उक्त

मूल्य की खोज भी करनी होती है।[1]

अशिक्षित व्यक्ति भाषा को विशेषकर विदेशी या मातृभाषा की ध्वनियों का सही उच्चारण नहीं कर पाते हैं जैसा कि शिक्षित लोग करते हैं। इस अन्तर को स्पष्टतः देखा जा सकता है। वर्मा जी ने अशिक्षितों एवं निम्न सामाजिक वर्ग के लोगों द्वारा ध्वनि की इस विशेषता की ओर अपनी भाषा में संकेत किया है।

इन भाषण ध्वनियों के कारण ध्वनिमूलक शैलीय उपकरणों के प्रयोग की एक विशेष दिशा उद्घाटित होती है और पात्रों के स्थानीय मूल और उनके वर्गीय चरित्र, शिक्षा आदि के स्तर का पता चलता है। इसके साथ ही जो अन्य भाषा–भाषी लोग किसी भाषा विशेष की ध्वनियों का उच्चारण सही रूप में नहीं कर पाते हैं जैसे बिहारी, बंगाली, बम्बईवासियों का वार्तालाप इसी के अन्तर्गत आ जाता है। वे हिन्दी भाषा का सही उच्चारण नहीं कर पाते हैं और अपने वार्तालाप में अपने प्रादेशिक पुट को प्रधानता देते हैं।

अशिक्षित व्यक्ति संस्कृत, अंग्रेजी, उर्दू, बांग्ला आदि भाषाओं की ध्वनियों का उच्चारण सही नहीं कर पाते हैं। वर्षा की माँ की सहेली जो एक अशिक्षित महिला है संस्कृत एवं हिन्दी भाषा का उच्चारण ठीक ढंग से नहीं कर पाती है। वह उसकी माँ से कहती है–

(1) महोबा वाली, तुमने सारी **उमर** हड्डियाँ घिसी हैं। अब वो घड़ी आ गयी है कि तुम पीढ़े पर बैठी–बैठी बीड़ा चबाओ और बहू की चुटिया खेंचो।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 39)

यहाँ पर उमर, चुटिया खेंचों शब्दों का उच्चारण इसी ओर इंगित करता है।

अशिक्षित नाइन झुनियां के द्वारा गायत्री के सौंदर्य के वर्णन में यही पुट देखने को मिलता है–

(2) नाइन झुनियां को यह कसीदा तोते की तरह रट गया था, 'लड़की क्या है साच्छात उर्वशी है। सीता मैया–सा तेज है चेहरे पर। अन्नपूर्णा की तरह पूरी गृहस्थी संभालती है। जिस घर में जायेगी, उजाला हो जावेगा।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 23)

वर्षा के पिता किशनदास शर्मा संस्कृत के अध्यापक हैं किन्तु अपनी पत्नी से बात करते हैं तो लक्षण को लच्छिन कहते हैं–

(3) रात को जब वह सोये तो एक ठंडी साँस लेकर पत्नी से बोले, 'मुझे इस लड़की के लच्छिन ठीक दिखायी नहीं देते। करोंदे की झाड़ी दोहद के बाद का खिला अशोक बनना चाहती है........'

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 34)

इसी प्रकार साहब का उच्चारण साब कर रहा है–

---

1. एस. अल्मान : स्टाइल इन दि फ्रेंच नावेल, पृ. 11

(4) अपराह्न में जब वह छात्राओं के कॉमन रूम में थी तो चपरासी ने आकर कहा, 'मैडम कत्याल साब ने आपको बुलाया है..... बंगले पर'

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 19)

इसी प्रकार से बिहार के रहने वाले स्नेह का डॉक्टर अटल से किया गया वार्तालाप देखिए–

(5) इसके दो महीने बाद वह अपना टीन का ट्रंक लिये नयी दिल्ली स्टेशन पर उतरते देखे गये, पर सप्ताह भर बाद ही उन्होंने अपने ठेठ बिहारी लहजे में डॉक्टर अटल को नोटिस दे दिया, 'आंग्ल भाषा के व्याख्यान हमारे पल्ले नहीं पड़ते। अनुमति दी जाय कि हम वापस भागलपुर लौट जावें।'

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 145)

इसी प्रकार एक बंगाली महिला का वार्तालाप देखिये–

(6) कलकत्ते से बहुरूपी राजा लेकर आया। शंभु मित्र मध्यांतर के खिलाफ हैं। एक घंटा बीता, 'तो ड्रामा क्रिटिक बेचैन होने लगे। उन्होंने बगल की महिला से फुसफुसा कर पूछा तो वह बोली, मध्यान्तर होवे ना।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 172)

अर्थात मध्यान्तर नहीं खेला जायेगा। इतना अंश बंगला में है।

इसी प्रकार मिसेज सिंहल वर्षा से कहती है–

(7) 'वर्षा, हमने जो समझा था कि तुमने हमें विसार दिया।' मिसेज सिंहल उसे गले लगाते हुए बोलीं।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 180)

इसी प्रकार बम्बईवासियों के हिन्दी उच्चारण के कुछ उदाहरण देखने योग्य हैं–

(8) "इदर से चला गएला है।"

"....कब...."

"मय उसकी हिस्ट्री नईं रखता बाई।"

"अपुन कूँ नईं पता।"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 322)

(9) बैठते ही छोकरा सामने आकर अक्खड़ ढंग से पूछता, 'क्या मांगता ?'

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 326)

(10) मैरी ने अपना बॉक्स और आइसपेल मेज पर रखा, 'मिस्टर हुसैन ने बोला, आपका बुफो हेयर स्टाइल मांगता।'

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 336)

(11) अजीम भाई ने बोला 'अभी होल्ड करने का। मुलाजिम ने लिफ्ट में बताया, "अक्खा बिल्डिंग

में बस तीन फ्लैट दिएला है– वो भी फ्रैंड लोग का वास्ते।''

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 373)

इसी प्रकार अशिक्षित किशोर के वार्तालाप का उदाहरण देखिये जिसमें उसने जुल्म को अंग्रेजी पुट देने के लिए जुल्म्स का प्रयोग करता है।

(12) बड़े और कमाऊ हो जाने पर किशोर ने महादेव के मुंह पर कह दिया, "आई हैव सीन आल योर जुल्म्स बेचारा अंग्रेजी पर्याय नही जानता था, ऑन छोटी जिज्जी।'

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 479)

अशिक्षित झुमकी का अनुपमा का उच्चारण उपमा करना एक प्रकार से हास्य को उत्पन्न करता है–

(13) उपमा दीदी नहा रही है सुबह की निकली अभी लौटी हैं।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 26)

यहाँ तक इस उपन्यास की भाषा संरचना का ध्वनिमूलक शैलीय उपकरणों में लय, अनुकार ध्वनिसमूह, रीति या वृत्ति, गुण, व्यक्ति, वैशिष्ट्य सूचक भाषण ध्वनियों के आधार पर अनुशीलन किया गया। इस अनुशीलन से 'मुझे चाँद चाहिये' की भाषा में ग्रथित ध्वनीय उपकरणों का उद्घाटन बखूबी हो जाता है और इस उपन्यास की भाषा का एक समृद्ध पक्ष उजागर होता है। अगले प्रकरण में प्रतिपाद्य उपन्यास में शब्द रूपात्मक शैलीय उपकरणों का अनुशीलन किया जायेगा।

प्रकरण – 3

प्रतिपाद्य उपन्यास में शब्द रूपात्मक शैलीय उपकरण

प्रकरण—3

प्रतिपाद्य उपन्यास में शब्द रूपात्मक शैलीय उपकरण

शब्दरूपात्मक शैलीय उपकरण मुख्यतः अभिव्यंजकता की उत्पत्ति करने में सहायक होते हैं। किन्तु इनका क्षेत्र विस्तृत न होकर सीमित होता है। प्रमुख शब्दरूपात्मक शैलीय उपकरणों में भावात्मक प्रत्यय, भावात्मक रूप विकार, नवनिर्मित शब्द एवं शब्दालंकार आते हैं।

'मुझे चाँद चाहिये' उपन्यास में सुरेन्द्र वर्मा जी ने इन उपकरणों का प्रयोग किया है, किन्तु, बहुत ही कम।

भावात्मक प्रत्यय

भावात्मक प्रत्ययों में पूर्व प्रत्ययों (उपसर्ग) एवं परप्रत्ययों का प्रयोग किया जाता है जो अभिव्यंजकता की दृष्टि से वैशिष्ट्य पूर्ण हों। पूर्वप्रत्यय (उपसर्ग) का प्रयोग विशेष भाव पर बल देने के लिये किया जाता है। व्यंग्यात्मक प्रभाव उत्पन करने के लिये इनका प्रयोग किया जाता है और परप्रत्यय भी इसी अर्थ में ग्रहण किये जाते हैं। वर्मा जी के उपन्यास में इसके उदाहरण बहुत ही कम मिलते हैं।

अल्ला—अल्ली—अल्ले प्रत्यय के योग से अपकर्ष व्यंजना सफल रूप में हुआ करती है। तुच्छता, तिरस्कार एवं उपहास के द्योतन के लिये भावात्मक प्रत्यय अभिव्यंजक उपकरण के रूप में प्रयुक्त होते हैं। वर्माजी की भाषा में इसके उदाहरण दृष्टिगोचर होते हैं। उपहास की व्यंजना के लिये 'अल्ला' का प्रयोग इस वाक्य में किया गया है—

(1) पीछे—पीछे **पुछल्ले** की तरह झल्ली आ रही थी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 40)

(2) धवन ने कहा, ''मैं हर्षजी की बात माने लेता हूँ कि ऊँचे दर्जे के कलाकारों को सँभालना पांड्या के बूते का नहीं है। पर क्या ऐसी बात खुल्लम—**खुल्ला** इंटरव्यू में कहनी चाहिये।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 269)

तिरस्कार की अभिव्यंजना निम्नांकित प्रयोग में भी दृष्टिगोचर रही है।

(3) ''एंटन पावलोविच, सच—सच बताना, ओल्गा निपर में तुमने क्या देखा जो वह तुम्हारी प्रेमिका भी बनी और पत्नी भी। उस छुटकी, मुटल्ली में ऐसा कुछ नहीं, जो उसे श्रेष्ठ अभिनेत्री बनाये।''

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 48)

'कु' उपसर्ग का प्रयोग भी बहुत ही व्यंजनापूर्ण ढंग से हुआ है—

(4) भर्त्सना की विवशता में माँ को उससे सीधे बात करनी पड़ी ''देखो तो कुलच्छिनी को...... अब बुढ़ापे में मुझे कुजात के हाथ का ठुसायेगी ....

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 65)

'सु' उपसर्ग का प्रयोग भी उन्होंने व्यंग्यपूर्वक किया है—

(5) "मैं अपने काम की कमियाँ और गलतियाँ जानने को उत्सुक हूँ सिर्फ सुपात्र से।

भावात्मक रूपविकार

भावावेश में सामान्य भाषा में परिवर्तन हो जाता है। क्रोध या स्नेह के आवेश में शब्दों के रूप में परिवर्तन हो जाना स्वाभाविक है। व्यक्तिवाचक नामों पर इसका सीधा प्रभाव पड़ता है। वर्मा जी की भाषा में भावात्मक रूप विकार के कुछ उदाहरण मिलते हैं। चूंकि इसमें साहित्यिक हिन्दी का विशुद्ध रूप प्रयुक्त हुआ है अतएव रूपविकार के उदाहरण अशिक्षितों के वार्तालाप में ही अधिक दिखायी देते हैं। स्नेहावेश में ही रूप विकार का प्रयोग वर्मा जी ने अधिक किया है, एक–दो उदाहरण क्रोधावेश के भी मिलते हैं वर्माजी के उपन्यास की भाषा में मिलने वाले रूपविकार के कुछ उदाहरण निम्नलिखित हैं–

वर्षा को प्यार से सिलबिल रानी, बिटिया आदि कहा जाता है। यहाँ पर चतुर्भुज की पत्नी सुशीला वर्षा को प्यार से रानी कहती है–

(1) "तकलीफ काहे की **रानी**।"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 122)

(2) "**सिलबिल**....." सौम्यमुद्रा किंचित चौंकी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 32)

वर्षा को हर्ष की माँ प्यार से बिटिया कहती है–

(3) "इधर आ **बिटिया**।" मम्मी ने पुचकारा।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 270)

दिव्या की माँ उसे प्यार से बिटिया कहती है–

(4) उसमें कोई खोट हो तो मन को समझा भी लूँ, "रूप में, ज्ञान में, गुण में....... सोने–सी है मेरी **बिटिया**......." मम्मी पल्लू से आँखें पोंछने लगीं।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 72)

वर्षा के जीजा जी हेमलता को बिटिया कहकर सम्बोधित कर रहे हैं–

(5) "पाण्डे जी, **बिटिया** हमें पसन्द है" जीजा जी ने घोषणा की।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 28)

महादेव की माँ महादेव से प्यार से बड़े कहती है

(6) **बड़े** ! बहू क्या मेरी अर्थी उठने के बाद लाओगे ? माँ ने अपनी चिरंतन महत्वाकांक्षा दुहरायी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 63)

हर्षवर्धन को सभी प्यार से बेटा, हर्ष कहते हैं –

(7) वर्षा, **हर्ष** से एक जरूरी बात कहना।' मम्मी बोली।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 361)

(8) **बेटा**, इस घर में तो तुम डोली लेकर आने वाले थे।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 546)

वर्षा रीटा के बच्चे को प्यार से राजा बेटा कहती है–

(9) वर्षा ने बच्चे को बाहों में लेकर पुचकारने की कोशिश की, "हाय, कितने बड़े–बड़े आँसू..... **राजा बेटा** की आँखों में.....

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 201)

किशोर अपनी पत्नी हेमलता को 'हेमा' कहता है–

(10) "**हेमा**, मुझे जिज्जी से बात करनी है।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 502)

"अच्छा .... " **हेमा** तत्परता से बाहर चली गयी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 503)

वर्षा अपने छोटे भाई को प्यार से 'पगले' कहती है –

(11) "**पगले**, मेरी वजह से पहले ही तुमने बहुत सहा है।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 286)

गौरी को सभी प्यार से ज्वैल, झल्ली कहते हैं –

(12) "**झल्ली**, भोग के लिये आधापाव, बताशे ले आ।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 40)

(13) मैं टू–इन–वन यहीं लगा दूँगी और **ज्वैल** के साथ डाँस करूँगी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 570)

नैन रंजन को उसके घर के सभी लोग व परिचित प्यार से "नैन" कहते हैं।

(14) "**नैन**", मुझे एक काली कॉफी ला दोगे ?"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 551)

(15) "तुम पगले हो **नैन**।" वर्षा हँसने लगी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 490)

वर्ष, सौम्यदत्ता का पात्र निभा रही है जो कि एक राजकुमारी है, वर्षा सोचती है यदि वह सिर्फ सौम्या होती तो–

(16) प्रसेनजित क्रोधित स्वर में – "देख **सौम्या**, रामजी की गाय की तरह जिस खूँटे पर ले जाया जाये, चुपचाप बँध जा।"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 31)

नवनिर्मित शब्द

नवनिर्मित शब्द (नियालाजिज्म) का शब्दरूपात्मक शैलीय उपकरण के रूप में कम प्रयोग होता है। विशिष्ट अभिप्राय अभिव्यंजना के लिए कभी–कभी नया शब्द गढ़ लिया जाता है और फिर वर्मा जी तो नये शब्दों के गढ़ने में माहिर हैं। यथा–

(1) गायत्री **बौड़म**–सी पल भर को उन्हें देखती रही तो सजल आँखों से भैया बोले, ''पगली, अपनी सास के चरण छुओ।''

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 25)

(2) इस बार पत्नी ने उन्हें सहारा दिया, ''इस छोकरी का कुछ ओर–छोर ही नहीं मिलता। कैसे बाप के सामने तू–**तड़ाक** किये जाती है...........

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 41)

(3) ''जो एक सम्मानित कवि की प्रेरणा है उसे रूखे, खुरदुरे अहलकार के साथ बाँधना चाहती हूँ। अपने बिस्तर पर बैठ कर सिलबिल **कुड़बुड़ाई**।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 41)

(4) फिर तकिये के नीचे से मसला–**तुसला** कागज निकाल कर पढ़ने लगी, 'प्यारी–प्यारी कितनी तुम्हारी मुद्रायें प्रिये....'

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 41)

(5) ''मंच–साम्राज्ञी को शब्द **चितेरे** की तुच्छ भेंट.........

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 42)

(6) सड़क पर चलते हुए वर्षा का चेहरा **वीर बहूटी** हो गया।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 42)

(7) फौरन साहब के कमरे में गया और एक मिनट बाद **बुलाहट** हो गयी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 62)

(8) एक शाम को लौटते हुए वह दिव्या की **बंगलिया** से छोटा सूटकेस ले आयी तो पिता ने भौंहें टेढ़ी करके उसकी ओर देखा, ''यह क्या है ?''

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 64)

(9) उसके कच्चेपन को देखते हुए उसमें थोड़ी **मुलामियत** एवं प्रोत्साहन जरूर घोल देती थीं।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 81)

(10) वे **टिल–टिल** करके हँसने लगे, और उनके साथ वह भी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 91)

(11) चतुर्भुज धन सोखिया की **धज** देखकर एकबारगी वह भी चौंक उठे।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 107)

(12) "नमस्ते वर्षा जी। नमस्ते स्नेहजी।" खेम का हाथ जोड़े खड़े हो गये, "आइए, **विराजिए**।"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 47)

(13) लोग **बतियाते** हुए यहाँ से वहाँ लाइटें धकेल रहे थे।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 295)

(14) ऐसे शादी करना **हँसी–ठट्ठा** है ?

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 362)

(15) "दीदी, हर्ष भैया आ गये।" थोड़ी देर बाद **उमगी** हुई झुमकी वर्षा के साथ आकर बोली।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 380)

इस प्रकार नवनिर्मित शब्दों में वर्मा जी ने बौडम, तू–तड़ाक, कुड़बुड़ाई, मसला–तुसला, चितेरे, वीर बहूटी, बुलाहट, बंगलिया, मुलामियत, टिल–टिल करके, धज, आइए, विराजिए, बतियाते, ठट्टा, उमगी हुई शब्दों का प्रयोग किया है। इस शब्दात्मक शैलीय उपकरणों में बोलचाल में प्रचलित इन शब्दों के प्रयोग से भाषा का एक लोकधर्मी पक्ष प्रकट हुआ है जो इसकी शिष्ट, अभिजात शब्दावली के साथ इसके सहज रूप को भी उद्घाटित करता है।

शब्दालंकार

वर्मा जी की भाषा में शब्दालंकारों के कुछ उदाहरण दृष्टिगोचर होते हैं जिनमें से कुछ निम्नलिखित हैं –

वर्षा से उसकी टीचर दिव्या कत्याल कहती है इसके लिए उन्होंने 'पानी' शब्द का प्रयोग किया है–

(1) सुबह नाट्य–समीक्षक की कृपा से आप यह नहीं जान सकते कि आप कितने **पानी** में हैं।"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 49)

'पानी' के दो अर्थ होते हैं– एक प्रकार का द्रव्य, जिसे व्यक्ति, प्राणी पीते हैं एवं दूसरा सामर्थ्य, योग्यता से है। यहाँ पानी शब्द का प्रयोग दूसरे अर्थ में किया गया है।

(2) यह कहते हुये सिलबिल को रत्ती भर हिचक नहीं कि अगर उसे अपनी 'एक्स्ट्रा कैरीकुलर एक्टिविटी' छोड़कर घूँघट संभालते हुये अनमोल भूषण के साथ बिजनौर जाने के लिए विवश किया गया, तो वह खुशी–खुशी **देवदास** के जैसा आत्मसंहार का पथ अपना लेगी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 51)

यहाँ 'देवदास' पारो के प्रेम में पागल शरत् के देवदास उपन्यास के नायक का सन्दर्भ लेकर एक दृष्टान्त के रूप में प्रयुक्त, हुआ है। जैसे उसने अपने को धीरे–धीरे मृत्यु की ओर धकेला था वैसे ही मैं भी अपने को मृत्यु की ओर धकेल लूँगी। इसी को आधार बनाकर यहाँ देवदास शब्द का प्रयोग किया गया है वैसे 'देवदास' के दो अर्थ हैं– पहला–देवता का दास एवं दूसरा–प्यार में पागल। यहाँ पर दूसरे अर्थ में यह शब्द प्रयुक्त हुआ है। वर्षा को ड्रामा करने में बहुत दिलचस्पी है।

(3) लघु विस्फोट सहित काग खुलने के साथ जब झाग के **ज्वार** को प्यालों में उड़ेला गया तो वर्षा रोमांचित हो उठी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 72)

ज्वार दो अर्थों में प्रयुक्त होता है। इसका एक अर्थ – खरीफ की फसल में होने वाला एक मोटा अनाज और इसका पौधा होता है एवं इसका दूसरा अर्थ है – समुद्र के जल का ऊपर उठना। यहाँ पर इसको दूसरे अर्थ (ऊपर उठने) में प्रयुक्त किया गया है इसका अर्थ है आवेग का तीव्र उभार। इसकी अभिव्यक्ति के लिए सटीक शब्द ज्वार ही है।

(4) **मोहिनी** ने अपने नाम को चरितार्थ किया था।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 75)

मोहिनी दो अर्थों में प्रयुक्त होता है। एक – मोहित करने वाली, दूसरी मायामोह। यहाँ इसका दूसरे अर्थ में प्रयोग हुआ है।

(6) वर्षा ने संतोष के भाव से लक्ष्य किया कि शिवानी की आँखें और वक्ष रेखायें भी उसके आगे वैसी ही हैं जैसे उज्जयिनी की **श्री** के सामने विदिशा।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 160)

'श्री' शब्द के दो अर्थ हैं – पहला ऐश्वर्य, यश, वैभव आदि एवं दूसरा योग्य, शुभ, सुन्दर, श्रेष्ठ यहाँ यह शब्द द्वितीय अर्थ में प्रयुक्त हुआ है।

विशिष्ट शब्द समूह

वर्मा जी ने शब्दरूपात्मक शैलीय उपकरणों के अन्तर्गत अपने उपन्यास की भाषा में विशिष्ट शब्द समूह के अन्तर्गत अनेक प्रकार के शब्दों का प्रयोग किया है। जिनमें संस्कृत, अंग्रेजी, अरबी, फारसी, तुर्की, उर्दू भाषा के शब्द आते हैं। साथ ही इनकी बोलियों के शब्दों का भी आ जाना स्वभाविक है। वर्मा जी ने प्रसंगानुसार भाषा में पारिभाषिक, अभिजात, सौन्दर्य सम्बन्धी, कला संस्कृति, ग्राम्य शब्दावली का प्रयोग किया है। इस शब्दावली के कारण इनके उपन्यास के शब्दरूपात्मक शैलीय उपकरणों का भाषा–सम्बन्धी पक्ष उद्घाटित होता है। विविध भाषाओं और विशिष्ट शब्दावली के प्रयोग से शैली के शब्द सम्बन्धी वैशिष्ट्य में वृद्धि हुई है। यहाँ हमारा विवेच्य यही है।

पारिभाषिक शब्द :

वर्मा जी ने अपने उपन्यास की भाषा में पारिभाषिक शब्दों के प्रयोग द्वारा विशिष्ट साहित्यिक प्रभाव की सृष्टि की है। नाट्यशास्त्र में मंगलाचरण का पाठ सर्वप्रथम किया जाता है। यह मंगलाचरण शब्द का प्रयोग यहाँ पर बहुत ही सटीक रूप में हुआ है। मिश्रीलाल डिग्री कालेज में मंगलाचरण के समान संस्थापक दिवस पर कविता पढ़ी जाती है। जिस प्रकार से नाटक का प्रारम्भ मंगलाचरण से किया जाता है –

(1) संस्थापक दिवस पर अब तक सेठ मिश्रीलाल की दानशीलता पर भाषण होते थे, जिसके प्रारम्भ में **मंगलाचरण** के समान यह कविता पढ़ी जाती थी, ''जीवन में मिश्री घोल गये तुम मिश्रीलाल पालर वाले। जड़ता के फाटक खोल गये तुम ज्ञान...जड़ी झालर वाले।''

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 13)

मनुष्य अपनी इच्छापूर्ति हेतु ईश्वर से प्रार्थना करता है। शर्मा जी भी अपनी बेटी के विवाह के प्रति चिन्तित होकर ईश्वर को सम्बोधित कर रहे हैं और उनका यह सम्बोधन 'निरंकार नरोत्तम' बड़ा ही सटीक है।

(2) अपने वयस्क जीवन में पहली बार, वर्षा ने पिता की आँखों में आँसू देखे, जो रुँधे स्वर में कह रहे थे, ''मुझे विश्वास था, ईश्वर है... कवि कुलगुरु ने कहा है, मेघ बिना गरजे हुये भी चातक को वर्षा जल से तृप्त करता है। नरोत्तम का स्वभाव ही यही है कि बिना कुछ कहे याचकों की माँग पूरी करें। फिर मैंने तो याचना भी की थी और वह भी **निरंकार नरोत्तम** से.....''

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 26)

संस्कृत साहित्य में **दोहद** शब्द का प्रयोग अशोक के वृक्ष के पल्लवित और पुष्पित होने के सन्दर्भ में किया जाता है। यहाँ पर वर्षा के पिता द्वारा प्रयुक्त यह शब्द वर्षा के नाटक में भाग लेने पर की गयी प्रतिक्रिया का द्योतक है–

(3) रात को जब वह सोये, तो एक ठंडी साँस लेकर पत्नी से बोले, ''मुझे इस लड़की के लच्छिन ठीक नहीं दिखायी देते। करोंदे की झाड़ी **दोहद** के बाद का खिला **अशोक** बनना चाहती है.....''

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 34)

'हाल' एक ऐसी दशा की अवस्था का प्रतीक है जिसमें व्यक्ति को अपना ज्ञान नहीं रहता वह किसी और ही लोक में खोया हुआ अपने को पाता है। 'अभिशप्त सौम्यमुद्रा' नाटक मैं अभिनय करते समय वर्षा की मनोदशा को 'हाल' की स्थिति से उपमा दी गयी है–

(4) तीसरी घंटी के बाद दो घंटों के लिये वर्षा जैसे **हाल** की स्थिति में थी। देवी आये हुये एक–दो लोगों को उसने मुँह में त्रिशूल चुभोये हुये देख रखा था। बताया गया था कि थोड़े समय उन्हें पीड़ा का अहसास नहीं होता। वर्षा ने अपने भावोन्माद की प्रकृति थोड़ी भिन्न महसूस की। वर्षा के अपने दुःख–दर्द भावतंत्र के तल में रह गये थे, ऊपर लबालब भरे सौम्यमुद्रा के विषाद का आलोड़न था। पर इस विषाद की भी प्रकृति भिन्न थी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 38)

'ठूँठ' उस वृक्ष को कहा जाता है जिसमें पत्तियाँ, शाखायें हरी–भरी नहीं होतीं। यहाँ पर वर्षा के लिये **ठूँठ** शब्द का प्रयोग किया गया है। चूँकि वर्षा अपनी टीचर दिव्या से बहुत लगाव रखती है और जब वह दिव्या के लखनऊ जाने की बात सुनती है तो उसकी स्थिति हरे–भरे वृक्ष

के स्थान पर 'ठूँठ' हुये वृक्ष जैसी हो जाती है–

(5) वर्षा ने कभी देखा नहीं था कि ऊँचे, हरे–भरे पेड़ पर कड़कती बिजली के गिरने से वह किस तरह देखते–देखते जले, बदरंग **ठूँठ** में बदल जाता है। पर यह बात सुनने के बाद उसने अपने में ऐसा ही रूपांतर महसूस किया।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 49)

भारतीय समाज में ग्रामीण परिवेश के लोगों में '**धन्ना सेठ**' शब्द व्यंग्य के रूप में प्रचलित है, यहाँ पर इस शब्द का प्रयोग वर्षा वशिष्ठ के लिये किया गया है–

(6) "आ हा हा हा, बड़ी **धन्ना सेठ** बनी है।" पिता भड़क उठे, "बहुत हो गयी रामलीला। चुपचाप बैठ घर में........."

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 65)

'**शल्य–क्रिया**' शब्द मुख्यतः चिकित्साशास्त्र में प्रयुक्त होता है। यहाँ पर इसी शब्द का प्रयोग नाटक के एक–एक अंग के विश्लेषण के सन्दर्भ में हुआ है–

(7) चाय और गप्पों के मध्यांतर के साथ दिन में रिहर्सल होती और देर रात तक नाटक की **शल्य–क्रिया**।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 68)

'**कोल्ड स्टोरेज**' में वस्तुओं को सुरक्षित रखा जाता है, यहाँ पर वर्षा वशिष्ठ के पुराने विवाह–प्रस्ताव को पुनः प्रस्तावित करने के प्रसंग की तुलना कोल्ड स्टोरेज में रखे सामान से की गयी है –

(8) मोहिनी के सौजन्य से अनमोल भूषण के सौजन्य से अनमोल भूषण का **कोल्ड स्टोरेज** में रखा हुआ प्रस्ताव पुनर्जीवित हुआ, बल्कि उसकी एक बड़ी बहन के दूर के विधुर देवर भी दृश्य पर प्रकट हुये।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 76)

'राजा' एक ऐसे व्यक्ति से सम्बन्धित संबोधन है जो सभी सुख सुविधाओं से युक्त होता है। यहाँ पर नर्मदा शंकर को राजा कहा जाना सटीक है क्योंकि वे तहसीलदार हैं–

(9) "इतना बड़ा अफसर है। **राजा** है तहसील का–जो चाहे स्याह–सफेद करे। रानी बनकर रहोगी।" पिता बोले, "और क्या चाहिये तुम्हें ?"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 76)

शरीर के नये रूप को धारण करने को **कायाकल्प** कहते हैं। और यहाँ पर वर्षा वशिष्ठ को एक ऐसे व्यक्तित्व से सम्पन्न माना गया है जो भास्कर का कायाकल्प करने के लिए उपयुक्त है–

(10) मंच पर की कन्या ने जब अंधे पति के भाग्य को बाँटते हुये अपनी ज्योति–सम्पन्न आँखों पर पट्टी बाँध ली, लोकापवाद से विचलित पति को मुक्ति देने के लिये धरती माँ के फटने का

आह्वान किया और पति के प्राण–पखेरू बचाने के लिये निर्मम यमराज को भी पिघला दिया, तो अवस्थी जी बिल्कुल निश्चिंत हो गये कि अगर यह सती–साध्वी बहू उनके घर आ गयी, तो भास्कर का **कायाकल्प** हो जायेगा।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 84)

'अग्नि परीक्षा' शब्द का तात्पर्य बहुत ही कठोर परीक्षा से गुजरना होता है। वर्षा वशिष्ठ के लिये कला–विकास का प्रत्येक चरण 'अग्नि परीक्षा' के सोपानों से कम कठोर साबित नहीं होता है।' अग्नि परीक्षा' शब्द वर्षा के अभिनय के राह में किये गये कठोर संघर्ष का परिचायक है–

(11) वर्षा के सामने स्कूल के दाखिला–इंटरव्यू की बौखलायी स्थिति से लेकर अब तक के कितने ही क्षण कौंध गये.... अवहेलना के, पराजय के, हताशा के। वह कितनी बार टूटी, कितनी बार लहूलुहान हुई, कैसे तन–मन की पूरी एकाग्रता से अपने को कला–कुंड में झोंका। अगर इन तीखी आँखों की प्रेरणा और डर न होता, तो शायद वह इस **अग्नि परीक्षा** में खरी साबित न हो पाती। पर वह कह कुछ नहीं पायी। बस, एक छोटा–सा आँसू आँख में झिलमिला गया।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 276)

'भक्त' शब्द किसी व्यक्ति, या ईश्वर के प्रति श्रद्धा का प्रतीक है। यहाँ पर चतुर्भुज ने पसंद करने वाले लोगों को 'भक्त लोग' की संज्ञा दी है–

(12) ''बहुत अच्छा।'' चतुर्भुज पैग बनाते हुये उमंग से बोले, ''छोटे शहरों की नयी पीढ़ी में इतना जोश है कि कुछ पूछिये मत। काम के घंटे मैंने चार रखे थे..... शाम पाँच से नौ तक। पर आधी रात से पहले कभी नहीं छूटा। सुबह सोकर नहीं उठता था कि **भक्त** लोग आने लगते थे।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 279)

'विभीषण' की संज्ञा उस व्यक्ति को दी जाती है जो अपने घर का भेद दूसरे व्यक्ति को देना अपना मुख्य कर्तव्य मानता है। यहाँ विमल ने अपनी बेटी मीता को 'विभीषण' की संज्ञा दी है।

(13) ''लो, मेरे घर में ही **विभीषण** बैठा है।'' विमल हँसे, ''हर्ष कहाँ है वर्षा ? उसके साथ मेरा बूजिंग कंपटीशन होना है।''

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 378)

'भँवरा' एक ऐसा जीव है जो फूलों पर मँडराता है। और यहाँ पर वर्षा वशिष्ठ ने नये फिल्म–पत्रकारों को इस संज्ञा से मंडित किया है–

(14) अभी तक वर्षा सिने–संसार के हाशिये पर थी, पर राष्ट्रीय पुरस्कार ने उसे कम–ये–कम 'नयी लहर' की हलचल बना दिया। कर्दम–वाटिका की च्युइंगम चबाने वाली **भँवरियों** में सहसा भनभनाहट होने लगी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 396)

अभिजात शब्द

आधुनिक भाषाओं की रचनाओं में अभिजात शब्दों के प्रयोग की प्रवृत्ति भी दिखाई पड़ती है। अभिजात भाषा के प्रति इस प्रकार का आकर्षण एक व्यापक प्रवृत्ति है। अभिजात भाषा के स्पर्श से आधुनिक भाषा की अभिव्यंजना में गरिमा का समावेश होता है। यूरोपीय भाषाओं की रचनाओं में लैटिन और ग्रीक भाषा के शब्दों या पदों का प्रयोग इसी प्रवृत्ति का द्योतक है। आधुनिक भारतीय भाषाओं की रचनाओं में यह स्थान संस्कृत को प्राप्त है।[1]

वर्माजी के पूरे उपन्यास में हर महत्वपूर्ण प्रसंग पर विविध रूपों में व्यंग्य–विनोदमय प्रयोग में संस्कृत के महाकवि कालिदास के कथनों–चित्रणों का समायोजन किया गया है। इस पूरे उपन्यास में रघुवंश, मेघदूत, शाकुन्तल, मालविकाग्निमित्रम् आदि के वाक्यों प्रसंगों के ढेरों–ढेर प्रयोगों के अविस्मरणीय उदाहरण पूरे उपन्यास में भरे पड़े हैं। अतएव वर्माजी ने अपने उपन्यास में अभिजात शब्दों का प्रयोग प्रसंगानुसार ही किया है। कुछ उदाहरण दृष्टव्य हैं–

जब वर्षा वशिष्ठ प्रथम बार नाटक में भाग लेती हैं तो वह उस समय को याद करती है –

(1) क्षणांश के लिये उसे लगा कि यह पल स्थिर हो गया है और चारों ऊँची दीवारों से उसका स्वर टकरा–टकरा कर गूँजने लगा है, "जो आज्ञा देवि! जो आज्ञा देवि! जो आज्ञा देवि!"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 29)

वर्षा वशिष्ठ नाटक 'अभिशप्त सौम्यमुद्रा' में अभिनय कर रही है उसके संवाद में संस्कृत शब्दावली का प्रयोग किया गया है–

(2) मधुर भाषिणीय, तुम्हारे वचन अमूर्त ध्वनियाँ नहीं, पुष्पों की लड़ियाँ हैं, जो तन–मन को सुवासित कर देती हैं।"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 30)

वर्षा दिव्या कत्याल से अपनी भूमिका के विषय में जानना चाहती है। अतएव वह दिव्या से 'शाकुन्तल' के नायिका सखी दृश्य की पैरोडी में पूछती है–

(3) उसने 'शाकुंतल' के नायिका–सखी दृश्य की पैरोडी की "हे कोमलांगी, इसीलिये तो मैं आपके मोहक मुखड़े को यह कष्ट दे रही हूँ।"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 49)

वर्षा के पिता संस्कृत के अध्यापक हैं अतएव वे वर्षा को पत्र लिखते समय कवि कालिदास के उद्धरण को अपने पत्र में स्थान दे रहे हैं–

(4) कविकुल–गुरु की परंपरा में आरम्भ ही उपमा से हुआ था, 'संतान–कमान से छूटा तीर है, जो

---

1. शैली विज्ञान और प्रेमचन्द की भाषा, डॉ. सुरेश कुमार (पृ.सं. 110)

कभी प्रत्यावर्तन नहीं करती, ऐसा वाङ्मय में कभी दृष्टिगत नहीं हुआ।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 112)

वर्षा 'अपने–अपने नर्क' नाटक में नीना की भूमिका कर रही हैं इसके लिये उसने संस्कृत साहित्य के इस उद्धरण का आश्रय लिया है–

(5) जैसे मध्यकालीन रणबाँकुरे रनिवास की रम्य कामनियों के सामूहिक जौहर के साथ शत्रु–संहार के लिये युद्धोन्मत हो जाते थे, वैसे ही वर्षा निजी आशंकाओं और निजी राक्षसों से आँखें मूँदने की कोशिश के साथ नीना को साधने में पूरी तरह तल्लीन हो गयी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 133)

वर्षा संस्कृत नाटक 'पझपंखुरी की धार और शमी का पेड़' में अभिनय कर रही है जिसके लिये यह संस्कृत शब्दावली का प्रयोग करती है–

(6) "देखिये, नृत्य में मस्तमयूर" कहते हुए वर्षा ने मोर के जैसी भाव–भंगिमा अपना ली।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 167)

ये दूसरा उदाहरण भी इसी प्रसंग में दृष्टव्य है–

(7) चपल प्रफुल्लता से आगे–आगे चलती हुई वर्षा मुस्करायी, "बस नरेश, आ ही गया समझिये। इस उपवन के बाद निर्मल निर्झर है, उसके बाद हरित अमराई है, फिर सरसों के पीले–पीले खेत हैं, फिर पावन सरोवर है, फिर गणेशजी का मंदिर।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 167)

एक संस्कृत की अध्यापिका के वार्तालाप में संस्कृत कवि के उद्धरण आना स्वाभाविक ही है। इस सन्दर्भ में यह उदाहरण दृष्टव्य है–

(8) बहन मुस्करायी, "कर्त्तव्य का पालन व्यक्ति के लिये उतना ही आवश्यक है, जितना क्षत्रिय के लिये शस्त्र और वैश्य के लिये व्यापार–वृद्धि ऐसा किसी संस्कृत कवि ने कहा।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 214)

वर्षा के पिता संस्कृत के अध्यापक हैं अतएव उनके द्वारा सामान्य वार्तालाप में भी संस्कृत के उद्धरणों का प्रयोग किया जाना स्वाभाविक ही है–

(9) "जीवन–चक्र चलता रहता है।" पिता बोले, "दुःख के काँटे उगते हैं। फिर उल्लास के अंकुर फूटने लगते हैं। कवि कुल गुरु ने कहा है कि एक ज्योति का बुझना और दूसरी का उभरना. ..... यही जीवन का नियम है।"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 286)

दुर्वासा ऋषि अत्यंत क्रोधी थे, इसलिये उन्होंने शकुन्तला को शाप दिया था, उस प्रसंग का प्रयोग यहाँ दिव्या कर रही है–

(10) "जो तितली को सताता है उसे तितली का शाप लगता है।" दिव्या ने स्थिर स्वर में कहा,

"जैसा मुनि दुर्वासा का शकुन्तला को लगा था।"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 313)

वर्षा वशिष्ठ अपने अतीत को याद करते हुए सोच रही है–

(11) वर्तमान की इस ऊँची प्राचीर से अतीत का वह क्षण कितनी दूर जान पड़ता था, जैसे किसी प्राचीन युग का ध्वंसावशेष हो। क्या सचमुच आज की सम्पूर्ण जीती–जागती वर्षा हजारों साल पहले की उस खंडित, जर्जर अनुभूति से निकली है ? और अगर दिव्या का सहारा न होता, तो वह ऐसे समग्ररूप में यहाँ तक पहुँच सकती थी ?

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 315)

वर्षा बम्बई पहुँकर सागर को देखकर राजा सगर की याद करते हुए 'रघुवंश' का उद्धरण देती है–

(12) वर्षा को 'रघुवंश' की याद आयी, 'जब सम्राट सगर अश्वमेघ यज्ञ कर रहे थे, तब कपिल उनका घोड़ा चुराकर पाताल लोक में ले गये। तब सगर के पुत्रों ने उस घोड़े की खोज के लिये सारी धरती खोद डाली थी। इसी से यह सागर बना।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 329)

वर्षा को बम्बई में सिद्धार्थ और मीरा से मिलकर जो अनुभूति होती है उसे वर्षा ने एक संस्कृत भाषा के उद्धरण के माध्यम से अभिव्यक्त किया है–

(13) 'मास्टर सीन' के त्रासद माहौल के बाद दोनों से मिलना वर्षा को ऐसा ही लगा, जैसे 'अनुरागी जनों को निर्मल सुगन्धित जल, धुले हुए भवन का तल और मनोहारी वीणा के गीत मिल गये हों।'

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 363)

विमल वर्षा को प्रोत्साहित करते हुए 'सौम्यमुद्रा' के उद्धरण को दे रहे हैं–

(14) "चुका लोगी।" विमल मुस्कराये, "वह तुमने 'सौम्यमुद्रा' का संवाद सुनाया था न........ 'मेरे जीवन का अश्रु–युग समाप्त हो रहा है। अब मुस्कान–युग की बेला है।"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 375)

वर्षा के पिता उसे पत्र लिख रहे हैं जिसमें वे संस्कृत शब्दावली का प्रयोग करते हैं–

(15) 'यह समाचार ऐसे ही हैं, पिता ने लिखा, "जैसे कोई ताँबे का पैसा ढूँढ़ रहा हो और उसे स्वर्ण–मुद्राओं से भरी मंजूषा मिल जाये।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 379)

वर्षा के पिता वर्षा को पत्र लिख रहे हैं जिसमें वे कविकुल गुरु की उक्ति को उद्धृत कर रहे हैं–

(16) 'तुम्हारी प्रसिद्धि ऐसे–ऐसे रूपों में मेरे सामने पहुँची हैं कि मैं हतप्रभ, किंकर्त्तव्यविमूढ़ तथा स्तब्ध

ा रह गया हूँ।' पिता ने लिखा था, ''कविकुलगुरु ने लिखा था, 'कविकुलगुरु ने कहा है, गर्मी में बरसाती वायु का स्पर्श पाकर मोरनी के प्राण धीरे–धीरे लौटने लगते हैं। जीवन पर्यन्त तुम्हारे व्यवहार से संतप्त हम ऐसा ही अनुभव कर रहे थे कि एक नये आघात ने मरणासन्न कर दिया।''

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 405)

वर्षा के पिता जी तीर्थयात्रा पर जाते हैं वहाँ लौटते समय वे बम्बई पहुँचते हैं और 'रघुवंश' का उद्धरण कहते हैं–

(17) ''बताऊँ ?'' ऐसे विनोदी ढंग से नयी पीढ़ी को वह पहली बार संबोधित कर रहे थे, ''जैसे अश्वमेघ यज्ञ के समय रघु का अश्व पहली बार राज्य से बाहर निकला, वैसे ही मैंने भी पहली बार उत्तर प्रदेश से बाहर पाँव रखा। दक्षिण के पांड्य राजाओं ने ताम्रपर्णी और समुद्र–संगम से बटोरे मोती रघु को ऐसे सौंप दिये थे, मानों अपना बटोरा हुआ यश ही उन्हें दे डाला हो। मैंने भी सोचा थोड़ा–सा पुण्य बटोर लूँ। सो मद बहाते गजराज के समान बौराया–सा घुमता रहा........ तंजौर, महाबलीपुरम् मदुरै।.....

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 494)

वर्षा के पिता उसके घर में कुरुबक जो उसका पालतू जानवर है, को देखकर क्रोधित होते हैं इस प्रसंग में ये दो उदाहरण दृष्टव्य है–

(18) कुरुवक की धवल ऊष्मा वैसे ही काली पड़ गयी,'' जैसे इंद्र नीलमणि डाल देने पर दूध का रंग काला पड़ जाता है।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 495)

(19) ''सिलबिल, तुम्हें हो क्या गया है ? पिता स्तब्ध रह गये, ''कविकुल–गुरु के प्रिय पुष्प को तुमने श्वान के साथ जोड़ दिया ? काव्य–शास्त्र में औचित्य नाम का अलंकार भी होता है।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 494)

वर्षा कुरुबक को दूसरी जगह देना चाहती है इसका मार्ग उसे झुमकी दिखाती है–

(20) वर्षा ने झुमकी को ऐसे देखा, जैसे कुरुक्षेत्र में अक्षौहिणी सेना के सामने कंधे पर गाँडीव टाँगे किंकर्तव्यविमूढ़ अर्जुन को मार्ग–निर्देश मिल गया हो।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 497)

वर्षा के पिता उसकी बहिन 'झल्ली' का विवाह शीघ्र करना चाहते हैं इस बात पर बल देने के लिये वह रघुवंश का उद्धरण देते हैं–

(21) पिता आवेश में आकर 'रघुवंश का उद्धरण देने लगे, ''राजा दशरथ के समान अब मेरी दशा प्रातःकाल के उस दीपक जैसी हो गयी है, जिसका तेल चुक गया हो और जो बस बुझने ही वाला हो।''

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 499)

वर्षा के पिता वर्षा और झल्ली के विवाह की तुलना करते हुए संस्कृत साहित्य का आश्रय लेते हुए कह रहे हैं–

(22) ''जाति–भेद हिन्दू धर्म का आधार है।' पिता ने कहा था, ''झल्ली ने प्रेम करने की भूल जरूर की है, पर किया तो ब्राम्हण से है, इसलिये उसका गठबंधन विवाह के आठ प्रकारों में सर्वोच्च 'ब्राम्ह' माना जायेगा, जो माता–पिता की सहमति से होता है। पर हर्ष के साथ तुम्हारा परिणय सबसे नीची किस्म का 'पैशाचिक' ही रहेगा।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 533)

उपरोक्त उदाहरणों के सम्यक् अध्ययन करने से ज्ञात होता है कि सम्पूर्ण उपन्यास में वर्मा जी की दृष्टि अतीत तक जाती है और उससे ज्योति प्राप्त करके उससे प्रकाश लेकर वर्तमान को प्रकाशित करने का प्रयत्न करती प्रतीत होती है।

वेशभूषा सम्बन्धी शब्दावली

वर्माजी ने वेशभूषा से सम्बन्धित शब्दों में साड़ी, शाल, कार्डिगन, मिनी, डिस्को ड्रेस, लुंगी–कुर्ता, सलवार, जींस, गाउन, बैलबॉटम, चूड़ीदार पजामा, टी–शर्ट, टोपी, स्कर्ट, ब्लाउज, फ्राक, मिनी स्कर्ट, मैक्सी, टॉप, ट्राउजर, चोली, नाइटी, बटन डाउन, धोती, कुर्ते, शर्ट इत्यादि शब्दों का प्रयोग किया है। निम्नलिखित उदाहरण द्रष्टव्य है–

(1) इतवार की एक सुबह चपरासी मिस कत्याल का पुर्जा लेकर आया। वह गयीं, तो उन्होंने उसे बहुत नफीस कांजीवरम् साड़ी पहनने को दी और अपनी फुलवारी में अलग–अलग मुद्राओं में उसकी पाँच–छः फोटो खींची।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 47)

(2) फिर बाहर जाने की इच्छा को दबाने के लिय मिस कत्याल ने कंधों पर शॉल डाल लिया था और वर्षा ने कॉर्डिगन पहन लिया था।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 52)

(3) दिव्या बाथरूम से निकली– रेशमी लुंगी–कुर्ते में।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 71)

(4) दूसरे हाथ में सिलबिल का एयर बैग था, जिसमें उसने अपनी ढीली शलवार, कुर्ता, स्नो पाउडर, कंघी इत्यादि रख ली थी। (मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 89)

(5) ज्यादातर जींस, बैलबॉटम और चूड़ीदार ही दिखायी दे रहे थे।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 91)

(6) जींस–टीशर्ट के साथ रंगीन चश्मा लगाये रीटा ने हमेशा की तरह पथ–प्रदर्शन किया, ''तुम उस तरफ ध्यान मत दो।'

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 96)

(7) एक विदेशी लिपिस्टिक के साथ सुरमई ब्लाउज था, 'कपड़े का इतना टुकड़ा था कि प्रिया का फ्रॉक बना लिया और तुम्हारी चोली।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 139)

(8) ढीली–ढाली मैक्सी पहने उसे देखते ही ड्रांइगरूम में उठकर खड़ी हो गयीं और गले लगकर सिसकने लगीं।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 139)

(9) शिवानी ने बैलबॉटम और फ्रिल वाला टॉप पहन रखा था।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 160)

(10) शिवानी चटक बनारसी साड़ी के साथ जेवरों से लदी हर्ष की मम्मी के ठीक पीछे बैठी थी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 162)

(11) वर्षा रीटा की नाइटी पहनकर गुसलखाने से निकली।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 195)

(12) वह स्ट्रेच पेंट के साथ लम्बी–ढीली बटन डाउन शर्ट पहने थी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 207)

(13) मैं तब से सिर्फ बाथरोब पहने हूँ, वर्षा को कौतुक से भान हुआ।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 354)

(14) दुबला–पतला, काला आदमी तंग पाजामा और बाँहों वाली बनियान पहने उसे देखकर उलझन में था।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 388)

(15) वर्षा ने थूक–सा गटका, "गोरे, लम्बे। नीली जींस पहने हैं।"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 388)

(16) आज हेमलता ने भी झल्ली की देखादेखी स्कर्ट ब्लाउज पहन लिया था।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 412)

(17) कदली स्म्भा–सी जाँघों की झलक दिखाने वाली गहरी नीली मिनी स्कर्ट। पीली जमीन पर चौड़ी काली धारियों का जिप वाला टॉप।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 445)

(18) तीखे नक्श, बड़ी–बड़ी आँखें और माइकेल जैक्शन जैसे बालों के साथ वह लॉर्ड जिम की कमीज और पियर कार्डिन की ट्राउजर में अतिथियों की अभ्यर्थना कर रहा था।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 488)

(19) दद्दा के पास मैने दो से ज्यादा धोती, कुर्ते कभी नहीं देखे। टोपी फटती जाती थी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 540)

(20) गाउन पहनते हुए अपने अक्स पर निगाह पड़ी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 561)

(21) नीली–पीली मिनी डिस्को ड्रेस की जेबों में हाथ डाले प्रिया ने घूर कर हेमंत को देखा, ''गंदा लड़का ...''

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 568)

इस प्रकार हम देखते हैं कि वर्माजी ने परम्परागत परिधानों से लेकर आधुनिक परिधानों तक की यात्रा की है। एक ओर तो वे सामान्य व्यक्ति की वेशभूषा से जुड़े हैं तथा दूसरी ओर वे धनाड्य–वर्ग के नवयुवक एवं नवयुवतियों के परिधानों के चित्रण की ओर भी अपनी समान दृष्टि रखे रहे हैं।

सौन्दर्य सम्बन्धी शब्दावली

वर्माजी ने सम्पूर्ण उपन्यासों में सौन्दर्य के उपमान संस्कृत साहित्य से लिये हैं एवं विभिन्न प्रकार के आभूषणों, तथा सौंदर्य–सामग्री का वर्णन किया। इसके कुछ उदाहरण दृष्टव्य हैं–

(1) गवाक्ष हैं ये सलौने नैन।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 30)

(2) स्टेज पर कलाकार की बहुत बड़ी शक्ति है......... उसकी आँखें वर्षा रानी, तुम्हारे तो ऐसे सुन्दर, मन में सेंध लगाने वाले खंजन नैन हैं।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 50)

(3) कमलेश की अनुराग भरी आँखों में जो आहत भाव उभरा, वह वर्षा के मन को मथता रहा।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 43)

(4) बस में हरकत हुई, तो उसने सूनी आँखों से झाँका।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 74)

(5) मिट्ठू मोहाविष्ट एक कदम आगे आया ''तुम्हारी इन झील–सी आँखों में कभी मैंने अपने सपनों के अक्स ढूँढे थे..........''

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 67)

(6) अपनी बड़ी–बड़ी आँखों से वर्षा ने प्रणय–व्यथा झलकायी, ''विदा मोहित ....''

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 67)

(7) वह कह तो रही है कि 'तुम्हारी रागभरी आँखों ने मन में कामना–कोष की अर्गलायें तोड़ दी हैं, लेकिन उसकी अपनी आँखों में भावनाओं का ज्वार दिखाई नहीं देता।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 50)

(8) ''समीर सेन की कामना भरी आँखें मुझे बेध रही हैं''

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 220)

(9) आपका फिगर बहुत अच्छा है, आँखें बहुत सुदर, और चेहरा फोटोजनिक ....हर्षजी ठीक कहते हैं।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 268)

(10) सूनी, उदास आँखें।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 298)

(11) छाया के नैन–नक्श बहुत सलोने थे।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 299)

(12) वर्षा की चिबुक उठायी। "तुम्हारी आँखें बहुत सुन्दर हैं।" उसने बिना मुस्कान के कहा।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 210)

(13) सड़क पर चलते हुए वर्षा का चेहरा वीरबहूटी हो गया।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 42)

(14) बीच–बीच में चेहरे पर गहरे लगाव की लाली जरूर झलकती थी, लेकिन वह और तीव्र होकर पारावार नहीं तोड़ पायीं।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 50)

(15) तुम्हारा चेहरा भी कम पारदर्शी नहीं।" हर्ष का प्रसिद्ध स्वर सुनायी दिया।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 114)

(16) डॉक्टर अटल अंग्रेजी में भड़के, "तुम चन्द्रमुखी बनने की कोशिश करती हुई पारो लग रही हो – जबकि तुम्हें काक–गीजर बनना है।"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 98)

(17) वर्षा ने इंगित किया, तो उन्होंने नर्म–नर्म होंठ वहाँ रख दिये, "लो, तुम फिर से शुद्ध हो गयी।"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 54)

(18) मिट्ठू यकायक मुड़ा और उसे आलिंगन में लेकर अधरों पर चूम लिया।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 70)

(19) लता–वितान के भीतर यह अनुभूति गहरायी, जब मिट्ठू ने उसके होठों पर तप्त दबाव बढ़ाया. .....यौवनावेग के अनेक स्पंदन अचानक देह में चमक उठे।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 70)

(20) फिर यकायक सुदर्शना को बाँहों में भरकर' अधरों पर चूम लेता है।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 226)

(21) चित्त झकझोर, ओ सलोने चितचोर हो।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 42)

(22) एक नन्हा–सा आँसू उसके कपोल पर बह आया।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 36)

(23) जैसे हवा में तैरती हुई जब वह विंग्स में मिस कत्याल से टकरायी, तो इस बार उसने उन्हें जोर से बाहों में भरा और कपोल को चूम लिया।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 39)

(24) और अचानक उसका बाँध टूट गया......दिव्या का वक्ष उसके आँसुओं से भीग गया था, पर उसका आवेग था कि रुकने में नहीं आ रहा था।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 72)

(25) सुदर्शन पुरुष !

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 53)

(26) आलता–लगे पाँवों में रुनझुन पायलें, कमर पर चौड़ी करधनी, जिसकी लड़ियाँ जंघाओं एवं नितंबों पर इठलाती हुई, सुडौल उभारों को कसे चुस्त कंचुकी वक्ष की मध्यरेखा पर दपदप करती मणिमाला, बाहुमूलों में भुजबंध, कलाइयों में चूड़ियाँ और सोने के कड़े, दायीं अनामिका में बड़े नग की अंगूठी, कानों में बड़े–बड़े गोल कर्णफूल, पीठ पर लहराते बालों में गुँथी कलियाँ, माँग के बीचों–बीच चमकती लड़ी वाला माथे का झूमर और काजल से तीखे किये नैन।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 37)

(27) कमरा बंद करके सिलबिल ने उज्जयिनी की अभिसारिका के समान कदली स्तंभ–सी जंघाओं का चिकनापन महसूस किया, मालविका के समान वक्ष पर चंदन का लेप लगाया, इंदुमती के समान कमलनाल को दोनों उरोजों के बीच रखकर सौंदर्य का प्रतिमान निर्धारित किया और चोटी खोल कर मुआयना किया कि काले, मुलायम कुन्तल–गुच्छ काम–कलशों के कितने निकट जा सकते हैं.........

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 43)

(28) "मेरे पास नकली कुछ भी नहीं" के साथ इतराते हुए उसने अपने कंगन खनकाये थे।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 97)

(29) यह दृश्य करते हुए रीटा ने अपनी युवा–देह के सौंदर्य, चाल एवं भाव–भंगिमा का चपलता के साथ प्रभावी इस्तेमाल किया। संवाद अदायगी के कृत्रिम भोलेपन ने अदाओं को मोहक धार दी। "मेरे पास नकली कुछ भी नहीं।" कहते हुए उसने हल्की लचक से अपने वक्ष की मूल्यवत्ता रेखांकित कर दी। "ऐसी भी क्या प्यास के साथ उसने निसार के पास आ अपने अधखुले हाठों को चुंबनामंत्रण के लिये प्रस्तुत कर दिया, पर निसार के लपकने से पहले ही सीत्कार भरती हुई तुरन्त पीछे हट गयी" और मैं दुपट्टा हटाकर एक झलक दिखा दू" कहते हुए उसने सचमुच अपने पुष्ट उरोजों का क्षणिक पर भरपूर नजारा दिखाकर निसार को

उत्तेजना के चरम तक पहुँचा दिया।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 97)

(30) वर्षा की तुलना में शिवानी का कद काफी छोटा था। वर्षा ने संतोष के भाव से लक्ष्य किया कि शिवानी की आँखें और वक्ष–रेखायें भी उसके आगे वैसी है, जैसे उज्जयिनी की श्री के सामने विदिशा। पर शिवानी न सिर्फ बड़े पावन ढंग से गोरोचन–सी गोरी थी, बल्कि उसमें गहरा सहज आकर्षण था। शिवानी ने बैल–बाटम और फ्रिल वाला टॉप पहन रखा था। कानों में बड़े–बड़े कुंडल। पीठ पर लहराते कटे हुये बाल, काले लाइनर से हाइलाइट की गयीं आँखें और स्वप्निल–से 'लुक' लिये ग्रे शैडो। सनसेट पिंक लिपिस्टिक में भरे–भरे होठ ऐसे लगते थे, जैसे पकी हुई कलियाँ टूटने को मचल रही हैं।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 160)

(31) तो कला–संग्राम की तैयारी के लिये यह मेकअप रूम है, वर्षा ने मंद स्मित से सोचा। बिल्कुल सामने ड्रेसिंगटेबिल थी, ऊपर फोल्डिंग शीशा। ऊपर बल्ब झूल रहे थे। मेज पर भाँति–भाँति के पाउडर और क्रीम के डिब्बे व शीशियाँ क्लिप, कर्लर, हेयर ब्रशेज, ब्लोडायस और विग।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 336)

(32) मैरी ने क्लिप्स और कर्लर के सहारे उसके सिर पर बालों की अट्टालिका–सी बना दी थी। अपना केश–विन्यास निहारते हुये वर्षा को वर्ली में देखी हुई सिएट टायर की इमारत याद आयी....... एक के ऊपर एक मंजिलें और बाहरी ओर काँच की एक–के–बाद एक खिड़कियाँ। उसे लगा, वह रस्सी पर चलने वाली नटी की तरह अपने सिर पर काँच की इमारत लिये बैठी है। सौम्यमुद्रा अभिनय करेगी या अपनी हेयर स्टाइल सँभालेगी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 337)

(33) ढलती उम्र और ढलते सौंदर्य की गोरी–सी स्त्री सामने खड़ी थी। रखरखाव में आयु के चिन्हों को छिपाने की कोशिश। बाल डाई किये गये थे और मैक्सी में देह की अनचाही मांसलता को ढाँपा गया था। नैन–नक्श में अभी भी आकर्षण की धुँधलाहट थी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 388)

(34) वहाँ रंजना से सम्बन्धित कोई चीज दिखायी नहीं दी ...... न चूड़ी, न बिंदी, न सेंट की शीशी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 422)

(35) नवेली ग्लैमर–कामिनी के अनुरुप रमा ऐसी सजी–धजी थी जैसे पाँच सितारा की पार्टी में आयी हो। कदली स्तंभ सी जाँघों की झलक दिखाने वाली गहरी नीली मिनी स्कर्ट पीली जमीन पर चौड़ी काली धारियों का जिप वाला टॉप। खूब चौड़ी छल्ले–जड़ी चमड़े की पेटी। अधखुले जिप से झलकती वक्ष–रेखा। दायीं कलाई में लगभग कुहनी तक भरी चूड़ियाँ। गहरी वर्ण की लाल लिपस्टिक। बहुत कम स्प्रे के साथ पीछे से कंघी किये गये बाल। उसकी देह

की ललक, चाल और आँखें यौवन–भद से चूर थीं।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 445)

इस विशद् अध्ययन से हमें ज्ञात होता है कि वर्माजी ने सौदर्य सम्बन्धी शब्दावली में, आँखों, चेहरा, होंठ, देह, कपोल, वक्ष, पैर, जंघाओं, वक्ष–रेखा, कमर, नितंब, उरोजों, बाहुमूल, कान, बाल, माथे, केश, एवं विभिन्न प्रकार के आभूषणों को बड़े ही रोचक ढंग से स्थान दिया है। जो उनके दृष्टि–विस्तार को आलोकित करता है। सौन्दर्य सम्बन्धी शब्दावली के प्रयोग से शैलीगत सौन्दर्य की वृद्धि हुई है। आखिर शब्द ही तो अपनी सटीक प्रयोगधर्मिता से शैली का श्रंगार करते हैं।

भोजन–सम्बन्धी शब्दावली

वर्माजी ने अपनी भाषा में भोजन सम्बन्धी शब्दों, विभिन्न प्रकार के भोज्य पदार्थों– दूध, मक्खन, घी, पनीर,–परांठे, अंडा–करी, सैंडविच, कॉफी, चाय, लड्डू, रोटी, मूँग की दाल, पेस्ट्री, बिस्किट, फल, बड़ा–साँवर, पॉपकॉर्न, तंदूरी, मुर्गी, मटन, बिरयानी, काजू–वैफर्स, सब्जी, केक, भरवाँ बैंगन, अरहर की दाल, सरसों का साग, राजमा–चावल, विभिन्न प्रकार के अचार, चटनी, मटर भरी कचौड़ी, मठरी, पूड़ी, सूखे आलू, रायता, सलाद, पापड़, मिर्च, खीर, मुगलाई, चायनीज, मक्की की रोटी, आलू–प्याज, ऑमलेट आदि को प्रयुक्त किया है। इनमें से कुछ उदाहरण निम्नलिखित हैं–

(1) पोते की लौ लगाये सास रामजी की गाय को दूध, मक्खन व घी की खूब सेवा करवा रही थी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 45)

(2) कभी रसोई में पनीर–परांठे या अंडा–करी का कार्यक्रम बनता। कभी सैंडविच व कॉफी का थर्मस लिये शहर से पचास–साठ मील दूर किसी उजाड़ खंडहर में बैठती या हरी–भरी अमराई में घूमती।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 50)

(3) एक कश खींचकर मिट्ठू भीतर दरवाजे की ओर मुखातिब हुआ, "मम्मी, चाय दे दो और बेसन के लड्डू रखे हैं कि खतम हो गये ?

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 68)

(4) सिलबिल चुपचाप रोटी के टुकड़े से मूँग की दाल खाती रही।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 75)

(5) जब तक सिंहल दंपति वर्षा को स्टेशन पर चाय के साथ पेस्ट्री खिलायें, गाड़ी आ गयी थी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 88)

(6) डॉ. सिंहल ने बिस्किट का पैकेट, फल व दो पत्रिकायें उसके पास रख दीं।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 89)

(7) "वर्षा, दोपहर के शो में 'आन द वाटर फ्रंट चलेंगे' इतवार की सुबह उसकी रूममेट रीटा

साहनी बड़ा—सॉबर के नाश्ते के बीच बोली।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 95)

(8) अकेली दो लड़कियाँ कनाट प्लेस में घूम रही हैं, पिक्चर देख रही हैं, कॉफी हाउस के बाहरी, सामान्य कक्ष में सैंडविच खा रही हैं— ऐसी गतिविधि सिलबिल को खूब उत्तेजित कर देती थी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 95)

(9) तुम पॉपकॉर्न ले आओगी ?'' रीटा ने पर्स से एक नोट निकाला।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 96)

(10) इसके पहले चतुर्भुज ने कनाट प्लेस की 'काके दी हट्टी' में तंदूरी मुर्गी का अंतराल रखा।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 106)

(11) मटन बिरयानी खाते हुए सिलबिल ठिठक गयी, ''मुझे तो ऐसा कभी नहीं लगा।''

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 125)

(12) स्नेह ने गिलास मेज पर लगा दिये और फ्रिज से पानी की बोतल व बर्फ निकाली।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 145)

(13) स्नेह ने काजू—वैफर्स की प्लेट सामने करते हुए पूछा, ''इरा ने रंगमंच—निर्वासन को स्वीकार कर लिया है ?''

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 147)

(14) सुबह छह बजे वह सोकर उठती। मिसेज सहगल का नौकर दिल्ली मिल्क स्कीम की आधे लीटर की बोतल दे जाता। छत के किसी कोने पर आ, वह एक कप चाय पीती। फिर दो टोस्ट, एक अंडा और एक गिलास दूध का नाश्ता करती। फिर दो परांठे और सब्जी बनाकर लंच बॉक्स में रख लेती।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 158)

(15) ''वर्षा।'' सुजाता ने केक के छोटे—छोटे टुकड़ों की प्लेट उसकी ओर बढ़ायी, मेहमानों में बाँट दो।'

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 161)

(16) ''वर्षा, तुम्हारी पसंद के भरवां बैंगन बनवाये हैं और अरहर की दाल, सरसों का साग भी रखा है। चलेगा रीटा ने मसालेदार काजू की प्लेट उसके सामने बढ़ायी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 194)

(17) ''मैं तो आपसे यह कहना चाहती थी कि आज मैंने राजमा—चावल बनाये हैं।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 204)

(18) वर्षा तश्तरियों की संख्या पर चकित थी .... आम, नीबू, मिर्च व कटहल के अचार, पौदीने की चटनी, मटर भरी कचौड़ी, मठरी, पूड़ी, सूखे आलू, रायता, सलाद, तले हुये पापड़ और

मिर्च, सूखे मेवे पड़ी खीर।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 248)

(19) "मैडम, एक मिनट ...." प्रोडक्शन कंट्रोलर आप्टे पास आया, "आपके लिये लंच क्या मँगवाऊँ ? मुगलाई, चायनीज या कुछ और ?"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 338)

(20) वर्षा और बच्चों के लिये सरसों का साग और मक्की की रोटी बनवायी है।"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 368)

(21) आलू–प्याज के ताजा भाव भी मालूम नहीं थे।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 400)

(22) झुमकी बगल में आरे डेरी के स्टॉल से मक्खन पनीर ले रही थी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 402)

(23) "गुडमार्निंग!" रूप दो टोस्टों के बीच ऑमलेट की परत जमाते हुए मुस्कराया, "आप तो जानती हैं, मुझे स्ट्रगल में भूख ज्यादा लगती है।"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 561)

इस शब्दावली के प्रयोग से 'मुझे चाँद चाहिये' उपन्यास की भाषा और शैली का जायका ही बढ़ा है और उसे एक घोलूपन की हवा मिल गयी है।

कला–संस्कृति सम्बन्धी शब्दावली

वर्माजी ने अपनी भाषा में कला–संस्कृति से सम्बन्धित शब्दावली को अत्यंत विस्तृत रूप में स्थान दिया है। बल्कि इसका अध्ययन करने पर यह ज्ञात होता है कि सम्पूर्ण उपन्यास में ही कला–संस्कृति सम्बन्धी उदाहरण भरे पड़े हैं। यह सम्पूर्ण उपन्यास ही सांस्कृतिक गतिविधियों पर केन्द्रित उपन्यास है। पूरे उपन्यास में विभिन्न नाटकों का मंचन किया गया है। इनमें से कुछ उदाहरण निम्नलिखित हैं–

(1) 'ऋतुसंहार' का नाम सुनकर पिता अवाक् रह गये।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 17)

(2) अगले तीन दिनों में वर्षा ने 'अभिशप्त सौम्यमुद्रा' कई बार पढ़ डाला।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 28)

(3) मंचाग्र पर एक ओर वीणा थी, दूसरी ओर तीन आसनों के साथ मदिरा कोष्ठ। मंचपृष्ठ पर बायीं तरफ झूला था और दायीं तरफ चित्रफलक। उसके पीछे गावाक्ष था और झूले से थोड़ी दायीं ओर दीप स्तंभ।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 37)

(4) उसे अफसोस था तो सिर्फ यही कि अब वह रंगमंच पर एंट्री नहीं ले पायेगी– गांधारी,

चारुलता और वसंतसेना जैसी भूमिकायें उसके चरित्र–निरूपण से आलोकित हुए बिना यहीं छूट जायेंगीं।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 59)

(5) दिव्या 'महानारी' नाम से छह पात्रों के एकालापों की प्रस्तुति तैयार कर रही थीं.......... कुंती, सीता, गांधारी, राधा, द्रोपदी और सावित्री।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 81)

(6) आपको सुखांत नाटक पसंद हैं या दुखांत ?

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 92)

(7) फिर नाट्य समीक्षक ने निर्देशक से अंग्रेजी में पूछा, "प्लेन जेन के बारे में आपका क्या विचार है ?"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 93)

(8) पहले वर्ष की कक्षा में अभिनय के प्रशिक्षार्थी पंद्रह थे, निर्देशन के छह और रंगतकनीक के चार। नाट्य–सिद्धान्त और नाटक के इतिहास के साथ चार संस्कृत नाटक, छह आधुनिक भारतीय नाटक, चार एशियाई नाटक और छह पश्चिमी नाटकों का अध्ययन करना था। व्यावहारिक पक्ष में अभिनय के अंग थे– शरीर के लिये योग, नृत्यगतियाँ मूकाभिनय, इंप्रोवाइजेशन, जूडो, मणिपुरी, युद्धकलायें और आधुनिक नृत्य। स्वर के लिये स्पीच, संगीत वॉयस प्रोडक्शन, व्याख्या, नाट्य–प्रदर्शन और हर वर्ष एक पारंपरिक लोकनाट्य में प्रशिक्षण। इसके साथ मंच–रचना, वेशभूषा–रचना, प्रकाश–व्यवस्था और मेकअप। थिएटर आर्कीटेक्चर में संस्कृत, ग्रीक, रोमन, मध्यकालीन, एलिजाबेथ, उन्नीसवीं, शताब्दी का तथा पारंपरिक भारतीय एवं आधुनिक प्रोसेनियम, मुक्ताकाशी और एरीना थिएटर का लेखा जोखा।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 93)

(9) दूसरे अंक में दुमेगो उत्साहित है कि शान्या पूँजीवादी एवं उपभोक्ता संस्कृति के शिखर–बिंदु को देख पायेगी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 109)

(10) 'आज के कार्यक्रम' पढ़ते हुए वह हमेशा की तरह विभोर हो गयी–कमानी में रूसी बैल था, तो फाइन आटर्स में पोलिश कठपुतलियों का तमाशा। श्रीराम सेंटर में सितार–वादन था, तो सप्रु हाउस में कत्थक। फिकी में गजलों की शाम थी, तो महाराष्ट्र रंगायन में लावणी। विज्ञान भवन में 'तीसरे महायुद्ध के खतरे' पर भाषण था, तो अशोका में भावी फैशन की वेशभूषा–प्रदर्शनी। कब मेरे पास इतना समय और साधन होंगे, जब में इस 'सांस्कृतिक–सरोवर' में जी भरकर किलोलें कर सकूँगी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 144)

(11) स्नेह हँसे, '' 'साहब बीबी गुलाम' के नाट्य–रूपांतर में छोटी बहू का रोल कैसे करोगी ?''

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 148)

(12) ''मिट्टी डालो 'मिट्टी की गाड़ी' पर दरअसल एब्सर्ड थिएटर वालों को उसे क्लेम करना चाहिए।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 168)

(13) रिपर्टरी कंपनी का दूसरा समूह रॉयल शेक्सपीरियन थिएटर से आये एंडरसन के निर्देशन में 'किंग लियर' का पूर्वाभ्यास कर रहा था।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 168)

(14) संस्कृत नाटक 'पझपंखुरी की धार और शमी का पेड़' की रिहर्सल दो सप्ताह पहले शुरू हुई थी और मेनन ने सारे कलाकारों के पाठन के बाद अपनी कास्ट का चुनाव किया था।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 169)

(15) ''कलकत्ते से 'बहरूपी राजा' लेकर आया। शंभुमित्र मध्यांतर के खिलाफ हैं।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 172)

(16) निर्देशक ने आकर प्रकाश व्यवस्था का जायजा लिया। फिर असिस्टेंट चिल्लाया 'साइलेंस।' 'लाइट्स'। मेकअप वाले ने दौड़कर दोनों अभिनेताओं को आईना दिखाते हुए पसीने की नमी पोंछी। नायक ने पफ लगाया। क्लैप दिया गया। 'साउंड' पर टेपरिकार्डर चालू हुआ और कैमरा–पर–कैमरा।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 146)

(17) स्नेह ने काजू–वैफर्स की प्लेट सामने करते हुए पूछा, ''इरा ने रंगमंच–निर्वासन को स्वीकार कर लिया है ?''

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 146)

(18) जो शक्ति रचनात्मक काम में लगनी चाहिए, वह ब्रोश्योर के लिये विज्ञापन और स्पांसर पाने में चली जाती थी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 147)

(19) स्नेह रंगसंत हैं।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 148)

(21) जिस समाज के सांस्कृतिक पर्यावरण के लिये हमने अपना सब कुछ होम दिया, 'क्या उसका हमारे प्रति कोई दायित्व नहीं ?'' स्नेह बोले, पर अपने समतल स्वर में, ''आदित्य को कितने पहले संगीत नाटक अकादमी का एवार्ड मिलना चाहिये था, पर तत्कालीन सचिव अपने अहं के चलते रोड़ा बने रहे। दो बार इसे पद्मश्री मिलने की बात हुई, पर फाइल कहीं धूल खाती रही।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 148)

(21) कालिदास, ईडीपस, नंद, कंजूस, क्रियान, कृष्ण, किंगलियर, और कालिगुला / मेघदूत, फीरोजशाह

कोटला, पुराना किला और त्रिवेणी थिएटरों की आँखें नम हैं/बंगाली मार्कीट का जर्रा–जर्रा सुलगता अंगारा है/'स्टेट्समैन' के नाट्य–समीक्षक और रवीद्र भवन/तुम्हें दे रहे हैं शाप ओ अभिशप्त तेजस्वी अभिनेता/अपने ओजस्वी स्वर से/प्रेक्षागृहों को थरथराने वाले/तुम्हारी आवाज घुट जायेगी फिल्म स्टूडियो के गर्म फ्लोर और डबिंग थिएटर में/परिष्कृत संवेदना और कलात्मक मूल्य/भड़कीली पोशाकों और सुनहरी विग में/साँस तोड़ते कीड़ों–से कुलबुलायेंगे/शूद्रक, प्रसाद और शेक्सपियर की आत्मायें कराहेंगी/ जब तुम माफिया डॉन, डॉक्टर, फैक्ट्री–मालिक और काइयाँ वकील का रूप धारण करोगे/हीरोइन के पिता बनोगे और हीरो के विश्वासघाती चाचा/पाली हिल के अपने एयरकंडीशनर फ्लैट में दर्शकों की तुमुल करतल–ध्वनियाँ/तुम्हें सोने नहीं देंगी चैन की नींद/अपने ही पुराने संवादों की अनुगूँजें/सुबह–शाम तुम्हारे कानों के पर्दे फाड़ती रहेंगी/

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 149)

(22) गर्मियों में हम पुंटिला कर रहे हैं।''

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 164)

(23) वामपंथी शशांक 'युगान्तर' के संचालक थे और अपनी विचारधारा के अनुरूप सिर्फ प्रतिबद्ध मंचन करते थे। उनके हर प्रदर्शन की शुरुआत में सारे कलाकार मंच पर आकर सामूहिक रूप से ब्रेश्ट की कविता 'ड्रामानिगार का नग्मा' का पाठ करते थे, 'मैं हूँ नाटककार, दिखाता हूँ/जो मैंने देखा है, देखा है मैंने/कैसे इंसान को बेचा जाता है/इंसानों के बाजारों में मैं वही दिखाता हूँ ....

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 164)

(24) ''माफ करें, 'ब्रेश्ट के नाट्य सिद्धांत' में मुझे विश्वास नहीं।''

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 164)

(25) ''तुम कहना चाहती हो कि 'ऐलिनेशन' से ब्रेश्ट की मंचोपयोगिता कम हुई है ?'' हर्ष ने पूछा।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 163)

(26) स्नेह रिपर्टरी के लिये 'चन्द्रगुप्त' करना चाहते थे, पर उनके तीन वर्ष पहले किये गये 'मुद्राराक्षस' का अनुभव अच्छा नहीं माना गया, इसलिये यह प्रस्ताव स्वीकृत नहीं हुआ।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 165)

(27) वर्षा टैनिसी विलियन्स की प्रशंसा करती, तो वह आर्थर मिलर की श्रेष्ठता प्रतिपादित करने लगा।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 166)

(28) ''नाटक में कैसी मोहक विजुअल पोयट्री है।'' वर्षा ने प्रतिवाद किया।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 168)

(29) वर्षा स्तंभित रह गयी, " 'शाकुंतल और 'मुद्राराक्षस' क्लैसिक्स नहीं हैं ?"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 168)

(30) सुबह 'अंधेर नगरी' के सेट पर फाँसी के फंदे से लटका मधुकर जुत्शी का शव पाया गया था।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 185)

(31) सेवक ने जयपुर के विश्वविद्यालय में रंगकला का विभाग 'हॉबीसेंटर' के नाम से खुलवा लिया और विद्यार्थी–समुदाय में रंगचेतना का विकास होने लगा।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 187)

(32) एक बड़ा घूँट भरा, "प्रतिशोध में मेरा काम कैसा लग रहा है ?"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 195)

(33) हीरेश पांड्या पिछले वर्षों में हर्ष के तीन नाटक देख चुके थे। दो–तीन बार भेंट भी हुई थी। हीरेश ने अब तक पाँच फिल्में बनायी थीं। तीन को राष्ट्रीय पुरस्कार मिले थे।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 198)

(34) दिल्ली दूरदर्शन से 'हंसिनी' का प्रसारण हुआ था।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 199)

(35) कंपनी का एक समूह 'मालविकाग्नि मित्र' की रिहर्सल शुरु करने वाला था।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 200)

(36) स्टीरियो पर सितार एवं सरोद के स्वर एक–दूसरे से गुँथ रहे थे।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 211)

(37) बहन ने अनुमोदन किया, "भैया भी साहित्य रसिक और कला–अनुरागी है। इतना बड़ा अफसर है परन्तु पुस्तकालय नियमित रूप से जाता है। नृत्य, रंगमंच, संगीत सभी विधाओं का ज्ञानी है।" (मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 215)

(38) 'विषकन्या' में ऐसे प्रसंग थे, जो उसके व्यक्तिगत जीवन में प्रतिबिम्बित होते थे।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 220)

(39) "वह सिर्फ कमिटिड थिएटर करना चाहती है। गोरखपुर में 'बल्लभपुर की रूपकथा' को बीच में ही छोड़कर आ रही थी। अब चतुर्भुज उज्जैन में 'विक्रमोर्वशी करेंगे। अनुपमा ने कहा है, अगर तुम 'खड़िया का घेरा' करो, तो मैं जाऊँगी, वरना नहीं।"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 236)

(40) उसने सिगरेट जलायी, फिर यहाँ–वहाँ देखकर एक गमले में तीली रख दी, "मैंने फिल्म इंस्टीट्यूट से डायरेक्शन का कोर्स किया है....पाँच साल पहले। बम्बई में हूँ। अब पहली फीचर फिल्म बना रहा हूँ। इसमें लीडिंग रोल के लिये आपको लेना चाहता हूँ।"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 287)

(41) "पहले मेरे पास फिल्मोत्सव निदेशालय से फोन आया।" सिद्धार्थ की मुस्कान ऐसी भरीभरी थी कि अब वर्षा को विश्वास होने लगा, " 'जलती जमीन' को दो पुरस्कार मिले हैं....... सर्वश्रेष्ठ अभिनेत्री और सर्वश्रेष्ठ फिल्म।"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 364)

(42) "तब मैंने साहित्यिक कृतियों पर आधारित कई पटकथायें लिखी थीं।"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 371)

(43) बायीं ओर पूरी दीवार पर स्लाइडिंग कांच के केस में किताबें लगी थीं ..... 'कालिदास–ग्रंथावली' से लेकर चुनिंदा नाट्य–साहित्य, सिनेमा और कविता। सचित्र डीलक्स संस्करण में 'कामसूत्र' भी था।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 379)

(44) "खुशहाल जिन्दगी गुजारने के लिये दस 'डर्टी हैरी' बनाने से भूखे रह कर एक 'गॉन विद द विंड' बनाना बेहतर है," कहकर उन्होंने अपनी कलादृष्टि प्रतिपादित की थी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 422)

इस प्रकार कला, संस्कृति से जुड़े शब्दों के प्रयोग से 'मुझे चाँद चाहिये' का वातावरण सजीव, साँस लेता हुआ हो गया है। इससे उनकी शैली को भी एक सांस्कृतिक आभा मिल गयी है।

विदेशी शब्द

विदेशी शब्दों के अन्तर्गत अंग्रेजी, फारसी, उर्दू, अरबी के शब्द आते हैं। वर्माजी ने अपनी भाषा में विभिन्न अंग्रेजी भाषा के शब्दों के साथ–साथ, उर्दू शब्दावली का प्रयोग किया है। अंग्रेजी भाषा के शब्दों में वर्माजी ने–डॉक्टर, प्रोजेक्टर, डेस्क, लुकिंग, ग्रेसफुल, रिकॉग्नाइन्ड, लवली, वॉयस, वैलकम, बॉम्बे, लव, गुड, सिटी, व्हिच, हैज, डिसबिलीव्ड, शी, बिकम, डियर, यू, गो, इनसाइड, एण्ड, रिपोर्ट, द, डिमांडिंग, लाइक, लवर, मच, रिसैप्शन, इज, शी, माई, इमोश्नल, एंकल, गैंडसन, नॉन, रिकरिंग फिनॉमिनन, ऑब्जेक्टिबली, ऑब्जेक्ट, सर, द, सिप्ली, राइट, नाउ, बिजी, प्लीज, इट्स कॉल, मी, गर्ल दैट्स, ए, नाइस, नेम, रिक्रियेशन, करैक्टर, इनर, स्ट्रैंग, डिगनिटी, थिंक, व्हाट, डू, यू, फ्रेंड, आस्क, रिटर्न, बॉल, क्सि, सो व्यूटीफुल, जैसे कई अंग्रेजी शब्दों का प्रयोग किया है। कुछ उदाहरण निम्नलिखित हैं–

(1) उनकी खाँसी बढ़ गयी थी, पर वह **डॉक्टर** के पास नहीं जा रहे थे, जैसे बीस–पच्चीस रुपये बचाकर सब कुछ सँवार लेंगे।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 18)

(2) खुले मैदान में **प्रोजेक्टर** लगाया गया था। (मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 24)

(3) उन्होंने अपने **डेस्क** से एक किताब निकाली, "यह है नाटक अच्छी तरह पढ़ लेना।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 28)

(4) **लाइटिंग बूथ** में।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 37)

(5) यह तो उनके **ट्यूशन** का समय था।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 40)

(6) **'थ्री इयर्स शी ग्रियु इन सन एंड शॅवर दैन नेचर सैड, ए लवलियर प्लॉवर ऑन अर्थ वाज नेवर सीन........'**

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 42)

(7) हो सकता है मिस कत्याल कहें, **फर्स्ट कम, फर्स्ट सर्व**।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 26)

(8) वह अलग–अलग लोगों को **ट्राई आउट** करेंगी, **टेस्ट** लेंगी।"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 26)

(9) सिलबिल ने आवेग से कहा, "दद्दा, **टु बी ऑर नॉट टु बी, दैट इज द क्वैश्चन**।"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 32)

(10) "**बाई बाई** वर्षा।" "**टेक केयर डियर**।"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 73)

(11) सामने दरवाजे की ओर संकेत करते हुये उसने कहा, "**यू गो इन साइड एंड रिपोर्ट एट द रिसेप्शन**।"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 90)

(12) कांपते स्वर में कहा, "**शी इज माई इमोशनल एंकल**।"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 100)

(13) "**आई ऑब्जेक्टिवली ऑब्जेक्ट सर**," वर्षा ने नरमी से व्यक्तिगत जीवन में चेखब का प्रिय मुहावरा दुहरा दिया।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 136)

(14) "**दे सिंप्ली कॉल मी–द गर्ल..........**"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 161)

(15) "**दैट्स ए नाइस नेम...........**" (मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 161)

(16) "**आस्क योर फ्रेंड टु रिटर्न माई बॉल प्लीज**।"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 116)

(17) 'वर्षा **इज डीसेंट**।" पाइप का कश खींचकर डैडी धीमे स्वर में सुजाता बोली "**दैट गर्ल हैज करैक्टर, इनर स्ट्रैंथ एंड डिगनिटी**।"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 162)

(18) "**थैंक्स**!" गले के हार की लड़ियाँ समतल करते हुए शिवानी बोली, **यू टू आर लुकिंग ग्रेसफुल**।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 162)

(19) शिवानी ने वर्षा को देखा, "सुबह फोन पर मुझसे बोल रही थी, **आई रिकॉग्नाइज्ड योर लवली वॉयस**......"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 272)

(20) "**वैलकम टु बाम्बे** ! सिद्धार्थ मुस्कराया।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 319)

(21) फर्माते हैं, '**लव इज ए गुड रिक्रियेशन** !"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 387)

(22) जॉन मुस्कराया, "**टु माइ सिटी, व्हिच हैज टु बी सीन टु बी डिसबिलीव्ड** !"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 477)

(23) "**आइ रियली हेट दिस संस्कृत शिट** !" हर्ष ने तीन चार बड़े घूँटों में गिलास खाली कर दिया।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 168)

(24) "**जीसस.......शी हैज बिकम डिमांडिंग लाइक ए लवर**!" झल्ली ने टिप्पणी की।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 486)

(25) "**यू आर टू मच** जिज्जी !........ तुम्हारे पास कितनी बार आया है........'माखनचोर' का **ग्रैंडसन**........."

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 487)

(26) "आपको अभी से पता है कि 'मुक्ति, '**नॉन–रिकरिंग फिनामिनन**' नहीं होगी ?"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 517)

(27) "यश ?" झुमकी रसोई से भागती हुई आ गयी, "**राइट नाउ शी इज बिजी। प्लीज कॉल टुमौरो**।"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 502)

(28) फिर मुग्ध भाव से बोली, "**इट्स सो ब्यूटीफुल** !"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 571)

इस प्रकार अध्ययन करने से हमें ज्ञात होता है कि वर्माजी ने जिन अंग्रेजी शब्दों का प्रयोग किया है वे सभी देवनागरी लिपि में ही हैं।

वर्माजी ने अपनी भाषा में अंग्रेजी भाषा के अतिरिक्त अरबी–फारसी–तुर्की शब्दों का भी प्रयोग किया है। इन्होंने इनके लिये नागरी लिपि का प्रयोग किया है। इनमें से प्रयुक्त होने वाले

शब्दों में से कुछ शब्द इस प्रकार हैं – उजागर, आलमारी, पर्दा, दरवाजा, मेजपोश, दुकान, खुद, हस्बे मामूल, दीवार, कतार, कुर्सी, किताब, इशारा, जर्द, चेहरा, कतार, किरदार, दर्जी, शिकायत, इज्जत, गमला, जरूरी, नफीस, बेचैन, रेशम, आदमकद, आइने, गुलाब, हवा, तम्बाकू, नजर, सफेद, आब, बदन, उफक, हुजूर, आहो, फूंगां, दर्दो–तबीयत, गम, कतरे, मुर्तजा, सितार, पैगाम, दिलफरेब, जंगेविरासत, फतेह, परचम, इल्तिजा, मजार, फर्मायें, दिल, कुर्बान, खूबसूरत, शमा, दोबाला, हुस्न, ताव दिलफरेब, रिजल्ट, इब्तिदा, गलती, जिन्दगी, गुसलखाना, इम्तिहान, सिगरेट, नग्मा, अल्फाज, समंदर, दर्द, नासूर, मौजे, तमन्ना–ए–रंगी, गुलजार, कलेजा, रुख्सारों, जन्नत, लाश, अखबार।

इनके उदाहरण निम्नलिखित हैं–

(1) बस, इतना भलीभांति **उजागर** हुआ कि मुद्दा उनके अधिकार–क्षेत्र से बाहर है।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 17)

(2) चौखंबा सुरभारती से छपी 'ग्रन्थावली' उनकी **आलमारी** के ऊपरी खाने में 'गीता' के बाद शोभा पाती थी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 18)

(3) उसने वर्षा के पूरी बाँहों वाले पुलोवर को **खुद** बुन देने के प्रस्ताव के स्वीकार के साथ अपना धरना समाप्त करते हुये अपनी इच्छा को कोल्डस्टोरेज में स्थानांतरित कर दिया।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 18)

(4) दरवाजे पर मोटा, रंगीन **पर्दा** लहरा रहा था।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 19)

(5) तितलियाँ काढ़ा हुआ **मेजपोश** भी सामने रहता।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 24)

(6) पिता के निधन के बाद दीनदयाल अपनी बिजली के सामान की **दुकान** पर बैठता था।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 25)

(7) वह **हस्बेमामूल** अंदर घुसी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 26)

(8) वर्षा **दीवार** तक आयी और पढ़ा।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 26)

(9) अंत्याक्षरी, वाद–विवाद, कविता–पाठ.....हर समारोह में वह श्रोताओं की सबसे पिछली **कतार** में सबसे कोने की **कुर्सी** पर पायी गयी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 27)

(10) मिस कत्याल के **इशारे** पर वह उनके डेस्क के बगल की **कुर्सी** पर बैठ गयी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 28)

(11) उन्होंने अपने डेस्क से एक **किताब** निकाली, ''यह है नाटक ! अच्छी तरह पढ़ लेना।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 28)

(12) एक हाथ में छाता, दूसरे में **थैला**।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 32)

(13) किंचित **जर्द** चेहरे के साथ शर्माजी भीतर घुसे, तो मिस कत्याल ने तुरन्त खड़े होकर उनका अभिवादन किया।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 33)

(14) मयंक दत्त का कुर्ता कंधों पर बहुत चौड़ा हो गया था। यह **किरदार** निभाने वाले मुरली ने **दर्जी** का कॉलर पकड़कर उसे इस तरह झकझोरा था कि वह रुआँसा हो 'हमारी भी कोई इज्जत है का राग अलापते हुए, कुर्ता ठीक करने से पहले डॉ. सिंहल से शिकायत करने के लिये **बेचैन** था।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 35)

(15) **गमलों** के पौधों को हिलाने के लिये हवा **जरूरी** थी ....

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 35)

(16) **नफीस**, मुलायम **रेशम** का बदन पर स्पर्श बहुत भला लग रहा था।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 36)

(17) जब **आदमकद आईने** के सामने बह खड़ी हुई, तो उसे विश्वास नहीं हुआ कि यह बचपन की जानी–पहचानी सिलबिल है।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 36)

(18) उसने **कूची** उठाकर रेखायें खींची।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 38)

(19) जब सौम्यमुद्रा ने **गुलाब** का फूल तोड़ा, उसे सूँघते हुये झूले पर बैठी और दो–तीन पेंगें लीं, तो परिवार के दोनों छोटे सदस्य मोहाविष्ट थे।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 38)

(20) शर्माजी एक चुटकी **तंबाकू** फाँकने से पहले अवसाद से रुँधे स्वर में कहते।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 39)

(21) पृष्ठभूमि में स्टीरियो पर धीमा **सितार** चल रहा था।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 68)

(22) ''नहीं.........मेरी **नजरों** को क्या हो गया है आज ....ताजमहल मुझे सुफेद दिखायी नहीं दे रहा। संगेमरमर की कबूतर के परों जैसी **आब** पर खून के छींटे हैं ....दूर **उफक** पर अम्मी हजूर ने **आहों–फूगां** से थकी पलकें बंद की हैं और **दर्दो गम** के **कतरे** टप–टप करके

नीचे गिर रहे हैं.........**मुर्तजा**, तुम कब आये ? क्या शाहजहानाबाद से कोई **पैगाम** है ? क्या **जंगेविरासत** में दाराशिकोह ने अपनी **फतेह** का **परचम** लहरा दिया ?" वर्षा ने अपना संवाद बोला, "अब्बा **हुजूर**, आपकी **तबीयत** नासाज है। मेरी **इल्तिजा** है कि आप आराम **फर्मायें**।"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 51)

(23) "**कुर्बान** जाऊँ। कैसा **खूबसूरत** जोड़ा पहना है तुमने।" ईद पर रेहाना की **पोशाक** देखकर निसार उसे देखता ही रह जाता है, "मेरा दिल तुम्हारे **दोबाला** हुये **हुस्न** की **ताब** नहीं ला पा रहा........और उस पर ये **दिलफरेब** हीरों के बटन ....असली हैं न ?"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 97)

(24) दुखी दृश्य का उसका अंतिम संवाद था, 'अपने **अरमानों** के **मजार** पर **दिल** की **शमा** जलाने आयी हूँ।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 341)

(25) छोटे–बड़े बेडौल अक्षरों और आड़ी–तिरछी **लकीरों** में संवाद लिखे थे, 'यह **इम्तिहान** का **रिजल्ट** नहीं, मेरे **अरमानों** की चिता है।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 393)

(26) "अगर मैं कहूँ कि फेयर कॉपी की **इब्तिदा** ही बड़ी **गलती** से हो रही है, तो ?"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 225)

(27) मम्मी बोलीं, "मैं **जिन्दगी** में कभी अकेली नहीं रही।"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 238)

(28) थोड़ी देर बाद स्नेह **गुसलखाने** से निकली।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 253)

(29) फिर हमने एक **सिगरेट** पी थी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 315)

(30) **दिल** से **नग्मा** फूटता तो है, पर उसे **अल्फाज** नहीं मिलते।"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 339)

(31) 'इस **समंदर** में **मौजें** बिखरती रहीं। कुछ **तमन्ना–ए–रंगी** निखरतीं रहीं। ऐसे **गुलजार** जंगल में मारे गये।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 420)

(32) तुमने हीरो का पहला डायलॉग– 'तुम्हारे **रुख्सारों** में मेरी **जन्नत** है – पढ़ते ही उसने **दरवाजा** दिखा दिया।'

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 447)

(33) "सर्वोवा बीच पर हर्षजी की **लाश** मिली ..... (मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 547)

(34) "रूप सारे **अखबार** लेकर आया है।" झुमकी ने मुस्कान के साथ सूचना दी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 561)

(35) "इसी घर में तो तू दुल्हिन बनकर आने को थी।" मम्मी ने उसे वक्ष से चिपका लिया था, "रो ले अभागी, नहीं तो यह दर्द **नासूर** बनकर **कलेजे** से टूटेगा।"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 550)

ग्राम्य शब्द

सामान्यतः समाज के निम्न स्तर पर प्रयोग किये जाने वाले वे शब्द जो शिष्ट समाज में प्रयोग के अयोग्य समझे जाते हैं, ग्राम्य शब्द कहलाते हैं। इन शब्दों का प्रयोग अपकर्ष भाव का व्यंजक होता है। इन्हें शिष्ट एवं निम्न दोनों ही समाजों में स्वीकृति प्राप्त है। शिष्ट समाज में अपकर्ष व्यंजना के उद्‌देश्य से इनका प्रयोग किया जाता है एवं निम्न स्तर के समाज में ये सहज शब्द कोष के अंग हैं। जैसे दो किसान आपस में बात करते समय बाप, शब्द का उच्चारण करें तो यह उनके सहज वार्तालाप का अंग हैं। नीच वृत्ति के लोगों की उक्तियों में ग्राम्यशब्दों का प्रयोग उपयुक्त होता है। शैली विज्ञान की शब्दावली में अधम व्यक्तियों की भाषा में ग्राम्य शब्दों के प्रयोग से व्यक्ति–वैशिष्ट्य की व्यंजना होती है तथा अधम स्तर की उक्तियों में अभिव्यंजक प्रभाव की।[1]

वर्माजी की भाषा में ग्राम्य शब्दों की अभिव्यंजना शिष्ट समाज के व्यक्तियों की उन उक्तियों में पायी जाती है, जहाँ उनके क्रोध, निंदा आदि भावों के आवेश की तथा संबोधित व्यक्ति की हीन एवं निम्नकोटि का समझने की भावना की अभिव्यक्ति होती है। इनसे एक व्यक्ति की दूसरे के विषय में विचारों की अभिव्यक्ति को बल मिलता है तथा इनके पारस्परिक सम्बन्धों की भी अभिव्यक्ति होती है।

क्रोध के आवेश में तथा तुच्छता की अभिव्यक्ति के लिये उच्च वर्ग के व्यक्तियों एवं सामान्यवर्ग के व्यक्तियों की भाषा में 'बाप' शब्द का प्रयोग वर्माजी की भाषा में अनेक स्थलों पर हुआ है। वर्षा का तिरस्कार करते हुए उसकी माँ कहती है–

(1) कैसे **बाप** के सामने तू–तड़ाक किये जाती है।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 41)

अनुपमा फिल्म स्टार विमल को देखकर कहती है –

(2) "बाप रे, इतने बड़े स्टार को सामने देखकर मेरी तो सिट्टी–पिट्टी गुम हो गयी।" अनुपमा बोली।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 380)

वर्षा के जीजा जी उससे मिलने दिल्ली आते हैं तो वह अपने जीजाजी के लिये 'बाप' शब्द का प्रयोग कर रही है–

(3) बच्चा मौसी को 'ए बी सी डी' सुनाने की आतुरता में **बाप** की डाँट खा चुका था और मुँह

1. शैली विज्ञान और प्रेमचन्द की भाषा, डॉ. सुरेश कुमार, (पृ.सं. 111)

बिसूरता कोने में चुपचाप बैठा था।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 117)

हर्ष आई.ए.एस. पिता का पुत्र है किन्तु उसकी माँ दुःखी हैं अतएव वे वर्षा से कहती हैं–

(4) मम्मी ने ठंडी साँस ली, "सोचा था, **बाप** से भी आगे जायेगा, खानदान का नाम रोशन करेगा .... पर ईश्वर की लीला देखो........"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 192)

(5) वर्षा की माँ वर्षा से बहुत नाराज है वह वर्षा से कहती है भले हैं तेरे **बाप** कोई और होता, तो दुरमुट से कूट कर रख देता .....

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 65)

वृद्ध व्यक्ति को 'बुड्ढा कहना उसका अपमान करना ही है। वर्षा के पिता तीर्थ यात्रा करके उसके पास बम्बई पहुँचते हैं तो वर्षा का चौकीदार उन्हें अनजान व्यक्ति समझकर 'ओ बुड्ढा' कहता है–

(6) "**ओ बुड्ढा** कहाँ घुसता है ?" वर्दीधारी चौकीदार ने डपटकर पूछा।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 494)

'छोकरा' 'छोकरी' शब्द भी इसी प्रकार से आवेशभाव की सशक्ति अभिव्यक्ति करते हैं। वर्षा बम्बई के होटल के बेटरों के रवैये से बहुत क्रोधित है। सामान्यतः वह अत्यन्त शिष्टाचार के साथ वार्तालाप करती है। लेकिन क्रोधवश किया गया उसका यह वार्तालाप देखिये–

(7) बैठते ही छोकरा सामने आकर अक्खड़ ढंग से पूछता, "क्या माँगता ?"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 326)

(8) उसने चाय का आखिरी घूँट लिया ही था कि छोकरे ने लपक कर प्लेट उठायी और मेज पर गीला कपड़ा मार दिया।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 326)

वर्षा की माँ उसके अभिनय–प्रेम को लेकर अत्यंत क्रोधित हैं साथ ही वह विवाह का भी विरोध करती रहती है अतएव वह क्रोध के वशीभूत होकर अपने पति से कहती हैं–

(9) इस बार पत्नी ने उन्हें सहारा दिया," इस छोकरी का कुछ ओर–छोर ही नहीं मिलता।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 40)

वर्षा अतिरंजनापूर्वक अपनी माँ की सहेली एवं पड़ोसन फूलवती मौसी की नकल उतार रही है–

(10) वर्षा ने दो बड़े घूँट लिये, "अभी फूलवती मौसी देखें तो ?" उसने अतिरंजना से नकल उतारी, "देखें तो महोबा वाली की छोकरियों को .... आसमान पै थिगली लगावे हैं।"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 412)

निष्कर्ष

इस प्रकार प्रस्तुत प्रकरण में शब्द रूपात्मक शैलीय उपकरणों के अन्तर्गत भावात्मक प्रत्यय, भावात्मक रूप विकार का अनुशीलन किया गया है। इस अनुशीलन से लेखक की भाषा संरचना और शैलीय उपकरणों की वह दिशा संकेतित होती है जिससे यह पता चलता है कि शब्द रूपात्मक शैलीय पक्ष में उसकी प्रयोगगत अमीप्सा किस प्रकार की है। कैसे उसने भावात्मक प्रश्नों और भावात्मक रूप विकारों का प्रयोग कर अपने शैली वैशिष्ट्य का परिचय दिया है।

आखिर शैली की आन्तरिक रचना का आधार ध्वनीय और शब्दात्मक सम्पत्ति होती है। इस दृष्टि से शब्दात्मक शैलीय उपकरणों में शब्द प्रयोगों की ही बहुलता होती है। इस दृष्टि से लेखक ने अपने उपन्यास को नवनिर्मित शब्दों, शब्दालंकारों, विशिष्ट शब्द समूहों यथा पारिभाषिक शब्दों, अभिजात शब्दों, वेशभूषा और भोजन सम्बन्धी शब्दावली, सौन्दर्य सम्बन्धी शब्दावली, कला–संस्कृति–सम्बन्धी शब्दावली, विदेशी शब्दों और ग्राम्य शब्दों से सजाया है। इस अपरिमित शब्दावली से उसकी शैली का निर्माण हुआ है। यह उसके व्युत्पत्ति विस्तार, शब्द विस्तार, शास्त्र विस्तार का भी द्योतक है। इससे 'मुझे चाँद चाहिये' के शब्द भण्डार की एक दिशा का भी संधान मिलता है। लेखक ने अपने उपन्यास में जिस कलात्मक, नाटकीय और फिल्मों से जुड़े जीवन और उस क्षेत्र में प्रतिमान निर्मित करने को उत्सुक जिन प्रतिमाओं ने सामाजिक जीवन से कटकर जिन कलात्मक मूल्यों के चाँद को छूना चाहा है उनके इस अभियान से पारिवारिक, सामाजिक जीवन में जो द्वन्द्व पैदा हुआ उस संघर्ष को अभिव्यंजित करना चाहा है उसका रूपायन उसकी यही शब्दावली करती है। जीवन शैली बदलने पर भाषा बदलती है और भाषा बदलने पर अभिव्यक्ति की शैली। शब्द रूपात्मक शैलीय उपकरणों की दृष्टि से मेरे प्रतिपाद्य उपन्यास में विशिष्ट शब्द समूह शैली की अभिजात और लोकजीवन से जुड़ी दोनों दिशाओं का उद्घाटन करता है।

अगले प्रकरण में अर्थमूलक शैलीय उपकरणों की दृष्टि से प्रतिपाद्य उपन्यास का अनुशीलन किया जायेगा।

प्रकरण – 4

प्रतिपाद्य उपन्यास में अर्थमूलक शैलीय उपकरण

प्रकरण – 4

प्रतिपाद्य उपन्यास में अर्थ मूलक शैलीय उपकरण

शब्द रूप की तुलना में शब्द–अर्थ का सूक्ष्म अर्थ होता है। इसके अतिरिक्त अर्थ एक व्यवहारिक वस्तु है तथा इसके निर्धारण में प्रयोक्ता का भी हाथ होता है। सूक्ष्म और व्यवहारिक हाने से अर्थ में व्यंजना का बाहुल्य तथा लचीलापन आ जाता है। अर्थ का महत्व बड़ा वैशिष्ट्यपूर्ण हो जाता है जिससे कि शैली की दृष्टि से अर्थ के क्षेत्र में लेखक विभिन्न शैलीय उपकरणों से भाषा को पात्रानुकूल बना सकता है। यहाँ पर निम्नलिखित शैलीय उपकरणों की चर्चा की जायेगी जैसे– पर्यायवाचिता, आवृत्ति, अर्थालंकार, मुहावरा आदि।

पर्यायवाचिता

पर्यायवाचिता शब्द को प्रतिशब्द भी कहते हैं। जिन शब्दों के अर्थ में समानता हो, उन्हें पर्यायवाची शब्द कहते हैं।(1) भाषा को हम देखते हैं तो ऐसा प्रतीत होता है कि एक शब्द के अनेक अर्थ होते हैं तथा एक के लिए अनेक शब्दों का प्रयोग किया जा सकता है। जब एक अर्थ के लिए जिन अनेक शब्दों का प्रयोग किया जाता है वे पर्यायवाची कहलाते हैं और ऐसी स्थिति को पर्यायवाचिता कहते हैं। ब्लूमफील्ड का मत है – "भाषा के प्रत्येक रूप का स्थिर तथा विशिष्ट अर्थ होता है। यदि ध्वनिग्रामीय दृष्टि से उन रूपों में अन्तर है, तो हम उनके अर्थों में भी अन्तर मानते हैं...............सारांश यह है कि हम मानते हैं कि वास्तविक पर्यायवाची नहीं होते।(2)

अतएव पूर्ण पर्यायवाचिता के स्थान पर आंशिक सापेक्ष पर्यायवाचिता की संकल्पना को वैध मानते हैं और उसी से 'पर्यायवाचिता' शब्द को ग्रहण किया जाता है। वर्मा जी की भाषा में पर्यायवाचिता के अनेक प्रयोग मिलते हैं। इनमें कुछ उदाहरण निम्नलिखित हैं–

(1) शहर, जो एक सलोनी युवती के कुशल कार–चालन से **चौंका** हुआ था, इस नाटक के प्रदर्शन से **स्तब्ध** रह गया। (मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 13)

यहाँ पर लेखक ने पहले **चौंका** हुआ शब्द को रखा किन्तु जब वह सन्तुष्ट नहीं हो सका, तो बाद में समानार्थी शब्द **स्तब्ध** रह गया का भी प्रयोग किया है। चौंकने का थोड़ा प्रभाव पड़ता है। पर 'स्तब्ध रह गया' में चौंकने का गहरा भाव है। उसकी अभिव्यक्ति के लिये लेखक ने चौंकने के साथ 'स्तब्ध' का भी प्रयोग किया है। यहाँ पर लोगों के आश्चर्य में पड़ने को ही लेखक वर्णित करना चाहता है।

(2) 'मैं तुम्हें **आजादी** दूँगा' और 'स्वतंत्रता हमारा जन्म सिद्ध अधिकार है।'

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 17)

---

1. आधुनिक हिन्दी व्याकरण और रचना, डॉ. वासुदेव नन्दन प्रसाद, पृष्ठ 146
2. एस. उल्मान, सेमेंटिक्स, पृष्ठ 152

यहाँ पर ये दोनों शब्द एक ही अर्थ का बोध कराते हैं। आजादी का अर्थ है – मुक्ति, स्वतंत्रता एवं स्वतंत्रता का अर्थ आजादी है। परन्तु यहाँ लेखक दोनों ही शब्दों को प्रयुक्त कर रहा है। लेखक जिस भाव को स्पष्ट करना चाहता है वे भाव आजादी से स्पष्ट नहीं हुये हैं। अतएव वह 'स्वतंत्रता' शब्द का प्रयोग भी करता है। स्वतंत्रता हमारा जन्मसिद्ध अधिकार है इससे स्वतंत्रता हम लेकर रहेंगे यह संकल्प भी व्यक्त होता है। पर्यायवाचिता में लेखक पुनरुक्ति दोष से भी बचना चाहता है।

(3) जैसे समुद्र के हृदय में बड़वानल **जला** करता है वैसे ही उसके भीतर पिता का आदेश **धधक** रहा है।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 33)

यहाँ लेखक पहले जला शब्द का प्रयोग करता है तत्पश्चात् धधक रहा है, जलने से जो भाव प्रकट होता है उससे लेखक का आशय प्रकट नहीं हो रहा है, इस कारण लेखक आगे धधक रहा शब्द का प्रयोग करता है। जलने से अधिक धधकने से जो भाव प्रकट होता है, लेखक का आशय उसी से है। जलने का अर्थ है–धीमी गति से जलना एवं धधकने से अधिक तीव्र गति से जलने का बोध होता है।

(4) "आप बताइये मेरी सौम्यमुद्रा में कौन–सी **कमियाँ** और **गलतियाँ** थीं ?"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 49)

कमियाँ और गलतियाँ शब्द एक ही अर्थ में प्रयुक्त होते हैं। पर यहाँ कमियों से जो आशय पूरा नहीं हुआ, उसे उसी से मिलता–जुलता शब्द–प्रयुक्त कर अर्थ को और तीव्र बनाया गया है।

(5) "स्टेज पर कलाकार की बहुत बड़ी शक्ति है – उसकी **आँखें**
वर्षा रानी, तुम्हारे तो ऐसे सुन्दर, मन में सेंध लगाने वाले खंजन **नैन** हैं।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 50)

आँखें और 'नैन' दोनों शब्दों के एक ही अर्थ हैं किन्तु यहाँ पर पहले प्रयुक्त 'आँखें' शब्द की तुलना में वर्षा की आँखों के वैशिष्ट्य को सूचित करने के लिये 'मन में सेंध लगाने वाले खंजन 'नैन' का प्रयोग किया गया है। दिखने में एक से पर अर्थ में पर्याप्त अन्तर मिलता है।

(6) **दर्दो–गम** के कतरे टप–टप करके गिर रहे हैं। (मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 51)

'दर्दो–गम' की भी यही विशेषता है। दर्द और गम दोनों पर्याय होते हुए भी भिन्न और एक ही अर्थ को तीव्र बनाने वाले हैं।

(7) घंटी के बटन पर उसका स्पर्श हमेशा की तरह नाजुक, उमंग–भरा नहीं, बल्कि **विचलित व्यग्र** था।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 56)

'विचलित', 'व्यग्र' का प्रयोग भी ऐसा ही है। व्याकुलता की स्थिति की तीव्रता दोनों के एक साथ प्रयोग से व्यंजित हो रही है।

(8) कुछ देर **चुप्पी** छायी रही । दिव्या के लिए **मौन** एक आयामी था।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 58)

(9) छगनलाल जी ने **गर्व** से घोषणा की "वर्षा कालेज का **अभिमान** है।"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 62)

(10) सिलबिल की समझ में न आया कि उसमें ऐसी कौन–सी नैसर्गिक या अर्जित **योग्यता** है, जो उसे सिर्फ दुहेजू के योग्य होने की विशेष **पात्रता** देती है।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 76)

(11) उसकी भीतरी–बाहरी प्रकृति में कुछ ऐसे तत्व होते हैं, जो उसे सुख या दुःख जैसे विरोधी मनोभावों के साथ जोड़ना **आसान** एवं **सहज** बना देते हैं।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 82)

इसी प्रकार उदाहरण 8 से लेकर 11 तक की स्थिति एक पर्याय के अर्थ को और तीव्रता से अनुभव कराने वाली है। 'चुप्पी' और 'मौन' 'गर्व' और 'अभिमान', 'योग्यता' और 'पात्रता', आसान और 'सहज' देखने में समान अर्थ के वाहक हैं, पर उपर्युक्त प्रसंगों में प्रयोगगत भिन्नता के कारण उनके भीतरी अर्थ और तीव्र और प्रखर हो जाते हैं। चुप्पी का छाना और मौन का एक आयामी होना एक ही नहीं है। गर्व का अनुभव होना और किसी का संस्था के लिए अभिमान करने योग्य सिद्ध होना, एक अर्थ का वाहक होते हुए शब्द की दिशायें दो हैं। आसान और सहज अर्थ में एक हो सकते हैं, पर अपनी व्यंजना में भिन्न हैं। इसी प्रकार योग्यता और पात्रता हैं। पर एक का सम्बन्ध थोड़ा बाह्य है और दूसरे शब्द का सम्बन्ध आन्तरिक व्यक्तित्व है।

(12) अगर अभी सिलबिल को नहीं बाँध पाये, तो बरसाती नदी की तरह **कूल–किनारे** तोड़ देगी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 85)

(13) पर सर्प–कुंडली के समान उसके अभिव्यक्ति–द्वार पर **संकोच** एवं **झिझक** का पहरा बना रहा।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 98)

'संकोच' और 'झिझक' दोनों पर्याय हैं पर संकोच में वृत्तियों का संकुचित होना है और झिझक में अंगों का, पैरों का, किसी काम के लिए आगे बढ़ने में झिझकना व्यंजित हो रहा है। कूल–किनारे का अर्थ एक ही है, पर अर्थ भिन्न है। किनारा एकदम धार को छूती पाड़ और कूल ऊपर का तट, कूल।

(14) वर्षा ने **महसूस** किया था मिट्टू उससे रुठा–सा है। वह अब भी उसे पसन्द करती है, पर यह **एहसास** कोहरे में घिरा है।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 100)

महसूसना और एहसास करना एक है पर यहाँ दो भिन्न अर्थों में प्रयुक्त हुये हैं। महसूस करना हल्का अनुभव और एहसास का कोहरे में घिरने का अर्थ है अनुभव का अस्पष्ट हो जाना, द्वन्द्वों के कारण दब जाना।

(15) सब कुछ पहले के जैसा **गड्डमड्ड** एवं **बेतरतीब** था।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 101)

(16) "बस गये द्वारका में **मोहन** वृन्दावन आना छोड़ दिया। **वंशीधर** क्यों वंशीवट पर वंशी का बजाना छोड दिया।"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 105)

'गड्डमड्ड' और **बेतरतीब** का एक ही अर्थ अव्यवस्थित, अस्तव्यस्त पर बेतरतीब में चीजें दिखायी देती हैं और गड्डमड्ड में वे एक साथ मिलकर बेबूझ हो जाती हैं। वंशीधर और मोहन दोनों में मुग्ध करने का भाव अधिक है और वंशीधर में वंशी बजाने वाले का, दोनों का प्रयोग सार्थक है। मोहन से वंशीधर की व्यंजना नहीं निकलती और वंशीधर से मोहन की।

(17) अपनत्व एवं सुरक्षा की ऐसी अनुभूति पहले कभी नहीं हुई थी जैसे वह हर्ष के साथ दुर्गम पर्वत के शिखर पर पहुँच गयी हो, जहाँ सिर्फ **मौन**, **शांति** और **सुकून** था।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 120)

मौन, शान्ति और सुकून सबके एक ही अर्थ हैं पर व्यंजनायें भिन्न हैं।

(18) कलात्मक प्रयासों में **असफलता** का प्रतिशत अनिवार्य है। संसार का ऐसा कौन–सा कलाकार है, जिसने **नाकामयाबी** का बोझ न ढोया हो ?

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 133)

(19) जिन्दगी कितनी **पावन**, ऊष्म और **निष्पाप** थी ?"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 135)

असफलता और नाकामयाबी दोनों एक ही हैं, पर दोनों के अर्थ भिन्न हैं। असफलता का अंश अधिक होना और नाकामयाबी को ढोना दोनों की दो व्यंजनायें हैं। इसी प्रकार पावन और निष्पाप के भी दो अर्थ हैं।

'तन्मयता' और 'डूबना' पर्याय से लगते हैं पर व्यंजनायें भिन्न हैं। तन्मयता से और डूबते हुए की तरह प्यार करना दो भिन्न दशायें हैं। एक दशा के दो आयाम। उनकी व्यंजना के लिए एकार्थक दो शब्द–गुच्छों का प्रयोग कर लेखक ने अपने शैली–वैशिष्ट्य का परिचय दिया है। यही भाव नृत्य में मस्त मयूर और मोर के जैसी भाव भंगिमा दोनों का है पर व्यंजनायें भिन्न हैं। एक में नृत्य मग्न होना है और दूसरे में उसका अभिनय करना है। दुर्बल होना तथा कृश होना अर्थ में एक पर व्यंजना में भिन्न। दुर्बल से जो क्षीणता व्यक्त नहीं हुई वह कृश से व्यक्त की गयी। रुलायी फूट पड़ने में एक व्यंजना है और रुदन की लय तेज होने में और। स्वच्छ और निर्मल शब्द एक ही अर्थ

का वहन करते हैं पर स्वच्छ के साथ निर्मल के प्रयोग से सिर का साफ, द्वन्द्वरहित होना व्यंजित हो रहा है। सुरूर के कारण उसका मन मानो निर्मल आकाश हो गया है जिसमें मस्ती के बादल मँडरा रहे हैं।

इसी प्रकार अन्य उदाहरणों में दुःख तथा शोक, मुश्किल तथा परेशानी, संग्राम और युद्ध, दिशा और गन्तव्य, लोक और संसार, धवल और सफेद, विघ्न और रुकावट, घर और गृह, स्वामित्व, जागीर, और प्रभुता पर्यायों का भिन्नार्थक प्रयोग किया गया है।

(20) आगे तुमने एक लाइन छोड़ दी है "मैं उन्हें **तन्मयता** से **डूबते हुये** की तरह प्यार करती हूँ।"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 135)

(21) देखिए, नृत्य में मस्त **मयूर** कहते हुए वर्षा ने **मोर** के जैसी भाव भंगिमा अपना ली।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 107)

(22) पिता और **दुर्बल** हो गये थे। चिंताओं ने अधिक **कृश** कर दिया था।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 184)

(23) "साहब........" आया के मुँह से **रुलायी** फूट पड़ी और उसने दौड़कर बच्चे को उठा लिया, जिसके **रुदन** की लय तेज हो गयी थी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 202)

(24) अपना सिर उसे **स्वच्छ**, **निर्मल** आकाश सा लग रहा था, जहाँ सुरूर के महीन बादल मँडरा रहे थे।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 209)

(25) गुप्तचरी की तैयारी का उसका कैशोर्य उदासी और **दुख** से आहत था। अब दायित्व–निर्वाह के यौवन में वह **शोक** की प्रतिमूर्ति हो गयी थी, लेकिन अपने काम में अत्यन्त कुशल।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 220)

(26) "तुम्हारी **मुश्किल** मेरे लिये **परेशानी** कब से बन गयी ?"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 228)

(27) तुरन्त खुद ही तर्क दिया, यह उसका कठिन निजी **संग्राम** है, सौन्दर्य–बोधीय **युद्ध** क्षेत्र नहीं।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 282)

(28) जिंदगी की एक **दिशा** और **गन्तव्य** होता।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 245)

(29) विस्मृति **लोक** से वास्तविक **संसार** तक वापस लौटने में कुछ क्षण लगे।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 305)

(30) **धवल** चादरें, बड़ी सी खिड़की पर **सफेद** पर्दे।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 318)

(31) नेपथ्य से कोई **विघ्न** नहीं डालता। मंच पर कोई **रुकावट** नहीं होती।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 324)

(32) वर्षा को यह विश्वास होने में कुछ समय लगा कि यह उसका **घर** है, जिसमें **गृह** प्रवेश हो रहा है।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 378)

(33) ये छतें और दीवारें मेरी हैं, इन खिडकियों और रोशनदानों पर **मेरा स्वामित्व** है यह कमरे **मेरी जागीर** हैं इस टेरेस पर **मेरी प्रभुता** है, यहाँ से बाँये, दाँये और सामने सागर का जो पारावार है, उस पर वर्षा वशिष्ठ की अमूर्त पताका फहरा रही है।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 383)

(34) बहुत पहले 'रघुवंश' में उसने पढ़ा था 'विश्वामित्र के यज्ञ को रक्षा के लिए जब राम और लक्ष्मण चलने लगे, तो विदाई के समय दशरथ द्वारा नगर सज्जा की आज्ञा से पहले ही मेघों ने **जल** बरसा दिया और **वायु** ने पुष्प बिखेर दिये। रास्ते में सरोवर ने अपना मीठा **पानी** पिलाकर, पक्षियों ने मधुर गीत सुनाकर, **समीर** ने सुगंधित पराग फैला कर और बादलों ने ठंडी छाया देकर अपने को धन्य किया।'

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 401)

इस उदाहरण में पर्यायों के श्रृंखलाबद्ध प्रयोग किये गये हैं। सुरेन्द्र वर्मा ने मुझे चाँद चाहिये में पर्यायवाचिता के अन्य रूपों का भी प्रयोग किया है। इस दृष्टि से उनकी भाषा अत्यन्त समृद्ध है।

पर उनमें एक ही अर्थ वाले पर्यायों का प्रयोग ज्यादा मिलता है। जैसे मुक्त और निर्बन्ध, बड़बोले और वाचाल, भौंचक्की और स्तम्भित, चाह और इच्छाशक्ति, सीधे और सरल भी ऐसे ही पर्याय हैं जो लेखक के अभिप्राय को वहन कर शैली को समृद्ध करते हैं।

(35) तीनों **हँसी**–मुक्त, निर्बन्ध **खिलखिलाहट**।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 412)

(36) हिन्दी फिल्मों के बड़बोले और वाचाल संसार में हर्षवर्धन की अभिनय शैली न सिर्फ मितभाषी है बल्कि वह सुनती भी है सामने के चरित्र को नहीं बल्कि परिवेश के सतत् मौन को भी।"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 421)

(37) जैसे वर्षा व्यावसायिक सिनेमा की शब्दावली से **भौंचक्की** हो जाती थी, वैसे ही पांडे उसके वक्तव्य से **स्तम्भित** हो गये।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 442)

(38) डॉक्टर मर्चेन्ट ने कहा था, व्यसनी में सबसे पहले सुधरने की **चाह** और तीव्र **इच्छाशक्ति** होनी चाहिये।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 523)

(39) भाई ने **सीधे**, **सरल** ढंग से अपना पक्ष रखा था।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 47)

आवृत्ति

यह पर्यायवाचिता का विपरीतार्थक है। 'साहित्यदर्पण' के अनुसार जिनमें कथित पदत्व दोष नहीं होता वरन् गुण हो जाता है वे आवृत्ति के विषय माने जाते हैं। कुछ प्रसंग आवृत्ति के विषय हैं जैसे – विहितानुवाद, विषाद, विस्मय, क्रोध, दैन्य, लाटानुप्रास, अनुकम्पा, प्रसादन, अर्थांतर संक्रमित वाच्य ध्वनि, हर्ष और अवधारणा। सुरेन्द्र वर्मा जी की भाषा में यथासम्भव आवृत्तिपरकता परिलक्षित होती है। जैसे–

(1) उसके **जीवन** का उद्देश्य क्या है ? क्या **जीवन** की प्रकृति वैसी ही होती है, जैसी 34, सुल्तान गंज की है ?

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 14)

(2) **बड़ी–बड़ी** आँखों वाली सिलबिल उर्फ यशोदा शर्मा।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 14)

(3) "कविकुल–तिलक ने ठीक ही कहा है कि **अपने हाथ से** सींचे हुये विष–वृक्ष को **अपने ही हाथ से**, कोई कैसे काट दे ......"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 18)

(4) "**गुलाब** को किसी भी नाम से पुकारो, वह **गुलाब** ही रहता है।"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 19)

(5) सिर्फ झल्ली थी, जो **बारी–बारी** से बहन एवं बाप को देख रही थी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 21)

(6) **नरोत्तम** का तो स्वभाव ही यही है कि बिना कुछ कहे याचकों की मांग पूरी करें।' मैंने तो याचना भी की थी और वह भी निरंकार **नरोत्तम** से।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 26)

(7) ये मेरे रक्त सम्बन्धी हैं, इनका **सुख–दुख** मेरा है पर मेरा **सुख–दुख** मेरा ही रहेगा।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 26)

(8) क्षणांश के लिये उसे लगा कि यह पल स्थिर हो गया है और चारों ऊँची दीवारों से उसका स्वर **टकरा–टकरा** कर गूँजने लगा है : "**जो आज्ञादेवि ! जो आज्ञादेवि ! जो आज्ञा देवि !**"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 29)

(9) हॉल में **धीरे–धीरे** अंधेरा हुआ। पृष्ठ भूमि में संगीत के सुर उभरने लगे। मंच पर **धीरे–धीरे**

प्रकाश हुआ।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 38)

(10) "अरे देवी यहाँ हैं। मैंने तो उद्यान का **कोना–कोना** छान मारा।'

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 38)

(11) साथ था **एक** ट्रंक, **एक** अटैची, **एक** बिस्तरबंद, **एक** डोलची, **एक** थर्मस, **एक** पर्स और नाटे–से किंचित गोलमटोल पति परमेश्वर।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 44)

(12) जाति **अलग–अलग** होने की वजह से यह रिश्ता उनके परिवार को मंजूर नहीं है।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 52)

(13) लखनऊ में **कदम–कदम** पर उनके आसंग थे।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 52)

(14) मैंने तय किया कि **साल**, दो **साल** किसी और शहर में रहूँगी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 52)

(15) **धूप** में बैठते, तो **भीतर** जाने का जी चाहता और **भीतर** बैठते, तो **धूप** में जाने का।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 52)

(16) मुँह साबुन से खूब **मल–मल** कर धोया।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 54)

(17) **धीरे–धीरे** यह व्यक्ति मनोरंजक किताबों से ऊपर उठता हुआ धर्म और दर्शन की ओर आकृष्ट होता है। **शर्त** की **अवधि समाप्त** होते–होते वह ऐसी आध्यात्मिक ऊँचाइयों तक पहुँच चुका है, जहाँ धन नगण्य है और **अवधि समाप्त** होने से पाँच मिनट पहले वह खुद बाहर निकलकर **शर्त** तोड़ने का निर्णय ले लेता है......।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 55)

(18) वर्षा ने क्रमशः बुझती जाती निगाह से वह चिर–परिचित चेहरा देखा, हिलककर बोली "**कह दो कि** यह झूठ है.... **कह दो कि** यहाँ से नहीं जाओगी.....।"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 56)

(19) तुम जैसे रहा चाहो **रहो**, पर मेरे पास **रहो**।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 58)

(20) आँसू **बहते–बहते** सूख चुके थे।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 58)

(21) इस समय **कभी–कभी** माँ का **फोन** आता था, पर चिट्ठी आने के बाद **फोन** की क्या जरूरत?

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 59)

(22) इंटेसिव केयर यूनिट की **सफेद** दीवार की पृष्ठभूमि में **सफेद** तकिये पर सिर रखे और **सफेद** चादर से गले तक ढंकी वर्षा दिव्या को बहुत दिनों तक 'हांट' करती रही।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 60)

(23) **बात–बात** के लिये दिव्या के स्पर्श से सान्त्वना पाने की जरूरत कम होने लगी थी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 60)

(24) "आओ वर्षा, **तुम्हारे** भाई साहब ने गाड़ी भेजी थी **तुम्हारे** घर।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 62)

(25) "मैंने महीने भर के लिये **महराजिन** का बंदोबस्त कर दिया है"
पिता स्तब्ध रह गये, "**महराजिन** ? कौन **महराजिन** ?"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 65)

(26) "आ **हा हा हा**, बड़ी धन्ना सेठ बनी है।"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 65)

(27) निहारिका के प्रति सुनील को मिट्ठू प्रमुदित उत्तेजना के साथ बता रहा था, कि "कैसे निहारिका से "मैने **अनुराधा** से **कल कहा था** की बजाय **अनुराधा** ने मुझसे **कल कहा था** निकल गया।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 73)

उपरोक्त उदाहरणों में आवृत्ति के सामान्य प्रयोग ही दृष्टिगोचर होते हैं।

वर्माजी ने भय, दुःख, पीड़ा, आक्रोश के भावों को निम्नलिखित उदाहणों के माध्यम से प्रकट किया है–

(28) शारीरिक प्रहार में जितनी **पीड़ा** थी, दिव्या से उसका छिपाना उतना ही **पीड़ा**मय साबित हो रहा था।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 78)

(29) वर्षा दृढ़ थी, "अब और वे क्या कर लेंगे ? गला ही **घोंट** सकते हैं, तो **घोंट** दें।"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 81)

(30) "महादेव, वयस्क लड़की के साथ ऐसी जबर्दस्ती कानूनन अपराध है। मैं पुलिस सुपरिटेंडेंट को नहीं लाया, क्योंकि इस घर की **इज्जत** मेरी भी **इज्जत** है।"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 88)

(31) मैं इन्टरव्यू के लिये आयी हूँ– वर्षा वशिष्ठ उसने **डरते–डरते** कहा।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 90)

(32) वर्षा ने निर्णायक–मंडल की ओर मुँह फेरा," लो अंतिम विदा की बेला भी आ गयी। वातावरण कैसा स्तब्ध है। पंछियों की चहक तक सुनायी नहीं दे रही... वह मयंक दत्त का भेजा कुसुम

स्तवक है, जिसे मैं अपनी **कामनाओं** का इन्द्रधनुष कहती थी।........ मेरी **कामनाओं** के कुसुम भी मुरझा रहे हैं।"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 92)

(32) **दु:ख** व्यक्ति में गंभीरता, गहराई और गरिमा लाता है। **दु:ख** व्यक्ति का आध्यात्मिक परिष्कार कर देता है।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 247)

(33) सुजाता **रह–रह** कर आँसू पोंछती थी। (मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 190)

(34) हर्ष भी सुलग उठा, "हम दोनों जिस **स्तर** के कलाकार हैं, उसी **स्तर** की भूमिका ढूँढ़ते हैं।"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 427)

(35) "दोगली है। जब मेरे सामने होती है, तो **हाँ–हाँ** करती है जब मेघानी के सामने होती है तब भी **हाँ–हाँ** करती है और जब हम सामने होते हैं, तो चुप रहती है।"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 511)

(36) "वो पत्थर **54, सुल्तानगंज के नियमों** से सख्त कहीं होगा।" "अब तुम्हें **54, सुल्तानगंज के नियमों** की क्या चिन्ता है ?

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 499)

(37) "**विषाद** भी टिकाऊ नहीं हो सकता। **विषाद** भी दंभ है।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 567)

(38) उसे अपने व्यक्तिगत नर्क का बोझ ढोते हुये अकेले, **घिसट–घिसट**कर मरना है।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 111)

(39) "कुँआरी लड़की **चबर–चबर** करती अच्छी नहीं लगती।"जिज्जी ने झिड़का।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 181)

प्रेम, खुशी, स्नेह, आशा के भावों की अभिव्यक्ति के लिये भी वर्माजी ने आवृत्ति का आश्रय लिया है। इसके कुछ उदाहरण निम्नलिखित हैं –

(40) हर्ष का **एक** वाक्य, उसका **एक** स्पर्श, उसकी **एक** छवि वर्षा को दिन भर जिलाये रखने की ऑक्सीजन सुलभ कर देती थी। (मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 218)

(41) मेरी यह पक्की धारणा है कि उसकी **खुशी** तुम्हारे साथ बाँधने में है और सौभाग्य की बात यह है कि तुम्हारी **खुशी** भी इसी में है।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 242)

(42) "मैं जा रहा हूँ। पत्नी अच्छी, भली स्त्री है। मेरे एक और अकेले प्रेम......... मैं हूँ **संतुष्ट, संतुष्ट, संतुष्ट**......."

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 244)

(43) ''सिद्धार्थ ने कहा था कि तुम्हें किसी **सम्मानित** परिवार के साथ ठहरायेंगे।'' मीरा मुस्कायी,'' मुझे आशा है, कि तुम मुझे पर्याप्त **सम्मानित** पाओगी।''

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 320)

(44) क्यों यहाँ तो आशा महल है। यहाँ आकर सबके भीतर आशा का संचार होता है।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 82)

प्रतिपाद्य उपन्यास में पुनरावृत्ति की प्रवृत्ति

साथ–साथ :

(1) समय के **साथ–साथ** शर्माजी को इस बात का अहसास हो गया था कि यशोदा और बच्चों से भिन्न है।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 14)

(2) तुम्हारे **साथ–साथ** मुझे भी अपने ब्याह की चिंता सता रही है।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 31)

(3) इस वंश को बचाने के लिए तुमने अपने प्राणों की आहुति दे दी.. कितने सपने देखे थे हमने **साथ–साथ** ..... अब क्या होगा उनका ?

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 36)

(4) मैंने सोचा था, 'टू फ्रेंड्स' में हम दोनों **साथ–साथ** काम करेंगे।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 217)

(5) **साथ–साथ** उठते हुए पाँवों की लय थी और तेज होती हुई साँसों की गति।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 309)

(6) मौन बोझिल था। दूसरे लोगों के **साथ–साथ** वर्षा ने भी उसका भार महसूस किया।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 329)

(7) बारिश के **साथ–साथ** हवा भी तेज हो गयी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 352)

(8) छोटा–सा भाई इतना बड़ा हो गया कि घर सँभालने के **साथ–साथ** ब्याह भी कर लाया।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 359)

(9) पर इधर सिद्धार्थ ने घर और बाहर हर्ष तथा वर्षा को **साथ–साथ** देखा था।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 391)

(10) राबर्ट और जैनेट की **साथ–साथ** यह पहली फिल्म थी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 467)

विश्लेषण :

(1) साथ–साथ शब्द का प्रयोग उस भिन्नता को स्पष्ट करने के लिए किया जा रहा है जो वर्षा

एवं उसके अन्य भाई बहनों में उसके पिता को दिखाई देने लगता है। इसी तथ्य का स्पष्टीकरण करने के लिए लेखक ने यहाँ साथ–साथ शब्द का प्रयोग किया है।

(2) यहाँ पर साथ–साथ शब्द की पुनरावृत्ति वर्षा एवं उसके पिता दोनों की वर्षा के विवाह की चिंता प्रकट करने के लिए लेखक ने की है।

(3) यहाँ पर साथ–साथ शब्द की पुरावृत्ति सौम्यदत्ता एवं मयंक के प्रेम प्रसंग को याद करने के लिए लेखक ने की है। अब मयंक नहीं है तो सौम्यदत्ता उसके साथ बिताये गये क्षणों को याद करती है।

(4) यहाँ पर साथ–साथ शब्द की पुनरावृत्ति रीटा और वर्षा के एक नाटक में एक साथ अभिनय करने के लिए की गयी है।

(5) यहाँ पर अनुपमा एवं वर्षा जॉगिंग करते हुए टहल रही हैं। इसी की अभिव्यक्ति यहाँ साथ–साथ की पुनरावृत्ति द्वारा की गयी है।

(6) यहाँ पर वर्षा के साथ ही अन्य लोग भी मौन का भार महसूस कर रहे हैं। इसीलिए लेखक ने साथ–साथ शब्द से उसकी अभिव्यक्ति की है।

(7) साथ–साथ शब्द की पुनरावृत्ति दो वस्तुओं के साथ में अभिव्यक्ति के लिए भी करते हैं यहाँ पर वर्षा एवं हवा दोनों तेज हो गयी है।

(8) वर्षा का भाई किशोर घर भी सँभालता है और ब्याह भी कर लेता है, इसी की अभिव्यक्ति लेखक ने साथ–साथ की पुनरावृत्ति द्वारा की है।

(9) जब कोई दो लोगों को एक साथ देखता है तब भी उस प्रसंग की अभिव्यक्ति साथ–साथ की पुनरावृत्ति द्वारा होती है।

(10) राबर्ट और जैनेट साथ में एक फिल्म कर रहे हैं, इसकी अभिव्यक्ति भी साथ–साथ की पुनरावृत्ति द्वारा लेखक ने की है।

धीरे–धीरे :

(1) बस, ऐसे अवसरों पर उसके चेहरे पर **धीरे–धीरे** सख्ती–सी आने लगी, जो आगे चलकर घर की चारदीवारी में घुसने पर उसकी आँखों में आ जाने वाले स्थायी भाव में बदल गयी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 15)

(2) **धीरे–धीरे** वह और सौम्यदत्ता एक–दूसरे के प्रेम–बंधन में बँध जाते हैं।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 28)

(3) **धीरे–धीरे** यह व्यक्ति मनोरंजक किताबों से ऊपर उठता हुआ धर्म और दर्शन की ओर आकृष्ट होता है।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 55)

(4) **धीरे–धीरे** रंगमंच के प्रति उसकी धारणा बदलने लगी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 259)

(5) अधमुँदी आँखें **धीरे–धीरे** खुलीं।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 305)

(6) अभ्यर्थना की मुस्कानें, जुड़े हुए हाथ, बढ़ाये गये गुलदस्ते–**धीरे–धीरे** इनकी आदत हो रही थी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 401)

(7) सिगरेट जलाते हुए एंड्री **धीरे–धीरे** बोलता रहा।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 507)

(8) उसके साथ सम्बन्ध **धीरे–धीरे** तनावहीन होने लगा था।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 520)

विश्लेषण :

यहाँ पर 'धीरे–धीरे' क्रिया विशेषणों के द्वारा गति की मंथरता का संकेत किया गया है। जब कोई क्रिया, किसी भाव की अभिव्यक्ति शनैः–शनैः अथवा क्रमशः होती है तब इस क्रिया विशेषण का प्रयोग किया जाता है। यहाँ धीरे–धीरे की पुनरावृत्ति उसी भाव को समृद्ध कर रही है।

होते–होते :

(1) शर्त की अवधि समाप्त **होते–होते** वह ऐसी आध्यात्मिक ऊँचाइयों पर पहुँच चुका है, जहाँ धन नगण्य है और अवधि समाप्त होने से पाँच मिनट पहले वह खुद बाहर निकलकर शर्त तोड़ने का निर्णय ले लेता है।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 55)

(2) आज उसकी **होते–होते** रह जाने वाली ननद और सास पहली बार घर आयी थीं और विद्वेष भाव से बाहर जा रही थीं।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 556)

विश्लेषण :

यहाँ पर होते–होते क्रिया विशेषण का प्रयोग क्रम–क्रम से के अर्थ में हुआ है। होते–होते की पुनरावृत्ति ऐसी दो विपरीत क्रियाओं के एक साथ घटित होने के लिए की जाती है जो एक के बाद एक घटित होती हैं या उसी से उत्पन्न होती हैं। इन दोनों क्रियाओं का रुख विपरीत होता है। एक घटना का प्रभाव दूसरी के होने का कारण बनता है।

खड़े–खड़े :

(1) खुद सबसे बाद में दो टैक्स के बीच में **खड़े–खड़े** खा लेता है।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 302)

विश्लेषण :

यहाँ पर 'खड़े–खड़े' क्रिया विशेषण का प्रयोग तुरंत के अर्थ में किया गया है।

अलग–अलग :

(1) जाति **अलग–अलग** होने की वजह से यह रिश्ता उनके परिवार को मंजूर नहीं है।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 32)

(2) नाटक के बारे में रायें **अलग–अलग** थीं।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 73)

(3) देश के **अलग–अलग** कोनों से आये पच्चीस विद्यार्थी क्लास में बैठे थे।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 190)

(4) **अलग–अलग** टुकड़ियों पर मौन छाया हुआ था।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 190)

(5) 'अनुपमा की और आपकी दुनिया **अलग–अलग** है।'

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 225)

(6) 'फिर काम के क्षेत्र में हमारी जगहें **अलग–अलग** हैं'

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 316)

(7) सिर्फ दोनों की नियति के **अलग–अलग** होने की सच्चाई ही उजागर हुई।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 454)

विश्लेषण :

'अलग–अलग' शब्द की पुनरावृत्ति वस्तुओं, गतियों की पृथकता की सूचक है।

कभी–कभी :

(1) **कभी–कभी** अपने बहुत प्रिय व्यक्ति को भी हम कितना कम जान पाते हैं, उन्होंने सोचा।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 61)

(2) वर्षा **कभी–कभी** इन लोगों और इनके संसार की ओर आश्चर्य से देखती।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 69)

(3) '**कभी–कभी** जरूरत से ज्यादा.....' दिव्या ने कहा।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 83)

(4) **कभी–कभी** लगता है, जैसे चेहरा नहीं, आईना है, जिसमें अंदर की एक–एक नस और रक्त की एक–एक बूँद देखी जा सकती है। (मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 114)

(5) सुजाता के चेहरे का भाव देखकर वर्षा को आगे जोड़ना पड़ा – 'वैसे **कभी–कभी** माहिम में अपने दोस्त के यहाँ चले जाते हैं।'

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 361)

(6) दिन में एक फिल्म तो अनिवार्य थी, **कभी–कभी** दो भी हो जाती।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 413)

(7) **कभी–कभी** वर्षा को अपना आसपास अवास्तविक लगता था–एक मायावी समीकरण, जो आँखें मूँदते ही विलीन हो जायेगा।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 418)

(9) '**कभी–कभी** पहले का भी अभ्यास कर लेना चाहिए।''

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 476)

(10) **कभी–कभी** हाथ में टी.वी. का रिमोट कंट्रोल।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 552)

विश्लेषण :

कभी–कभी शब्द कालवाचक अव्यय के रूप में प्रयोग किया गया है और यह काल की उस दशा को बताता है, जब कोई घटना कोई अनुभव, कोई जीवन प्रसंग, काल के किसी खण्ड में घटित होता है या तो अकस्मात घटित होता है अथवा कभी–कभी जिसके घटने में या जिसके घटमान क्रम में निरन्तरता नहीं रहती है।

अभी–अभी :

(1) 'तुमने **अभी–अभी** आइसक्रीम खायी है।' वर्षा ने कहा।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 367)

(2) ''मैंने **अभी–अभी** चाय पी है'' वर्षा मुस्करायी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 368)

(3) सुजाता का स्वर चंचल था, ''**अभी–अभी** मैंने इस साल के मिस्टर इंडिया का इंटरव्यू पढ़ा।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 406)

(4) वह **अभी–अभी** फोन से अलग हुए थे।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 406)

(5) ''वर्षा सिद्धार्थ को **अभी–अभी** नागावती हॉस्पिटल में भर्ती करवाया है।''

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 432)

(6) ''वर्षा, **अभी–अभी** लांस एंजेल्स से फोन आया था।''

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 546)

(7) ''वर्षाजी, **अभी–अभी** आपके लिए बंबई से फोन आया था–वंदना भवालकर का।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 470)

(8) **अभी–अभी** वी.सी.आर. पर सबने चन्द्रग्रहण देखी थी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 501)

(9) **अभी–अभी** हुई बोर्ड की बैठक में 'मुक्ति' का प्रस्ताव अनुमोदित हुआ है।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 536)

विश्लेषण :

काल की तात्कालिकता का द्योतक 'अभी–अभी' का ध्वनितार्थ है। इसी अर्थ में यहाँ इसकी पुनरावृत्ति की गयी है।

घर–घर :

(1) जैसे पानी के ऊपर तेल की बूँद फैल जाती है, वैसे ही उस समय **घर–घर** में मेरी निंदा फैल रही है।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 557)

विश्लेषण :

यहाँ पर घर–घर की पुनरावृति संज्ञाओं की द्विरुक्ति से निर्मित करके की गयी है। यहाँ पर घर–घर से आशय है प्रत्येक घर में उसकी निन्दा फैल रही है। यहाँ घर–घर का अर्थ बात फैलने की व्यापकता से है।

बार–बार :

(1) "अनुराधा, **बार–बार** ईश्वर का नाम दुहराकर तुम जिन कलियों की चटख अनसुनी करना चाहती हो, उन्होंने मेरे मन में नंदन–कानन की सुगंध भर दी है।"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 67)

(2) "वर्षा, जैसा अवसर तुम्हें मिला है, वैसा मुश्किल से मिलता है और **बार–बार** नहीं मिलता।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 344)

(3) झल्ली ने बताया था, किशोर **बार–बार** सड़क के मोड़ की ओर देखता रहा।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 359)

(4) टी. वी. स्क्रीन पर उसकी उड़ान की सुरक्षा–जाँच की सूचना **बार–बार** कौंध रही थी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 363)

(5) वर्षा को **बार–बार** ऐसा लगता, जैसे वह उस देश में है, जहाँ की भाषा उसके लिए अजनबी है।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 434)

विश्लेषण :

बार–बार कालवाचक क्रियाविशेषण काल की क्रमबद्धता को व्यक्त करता है। साथ ही इससे किसी क्रिया के घटने या होने के सातत्य का भी प्रकटीकरण होता।

कुछ–कुछ :

(1) जैसे साँप अपनी केंचुल छोड़ देता है, **कुछ–कुछ** वैसे ही वह पिछले दिनों में अपना अतीत

विस्मृत किये हुये थी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 71)

(2) आदित्य ठिठके, "**कुछ–कुछ** वैसा ही, जैसा बहादुरशाह जफर को रंगून से दिल्ली जीते जी आने पर लगता।"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 146)

विश्लेषण :

यह क्रिया विशेषण न्यूनताबोधक है। यह किसी वस्तु के कम परिमाण को व्यक्त करता है।

कदम–कदम :

(1) लखनऊ में **कदम–कदम** पर उनके आसंग थे।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 52)

विश्लेषण :

कदम–कदम द्विरुक्त संज्ञा से निर्मित शब्द है, जिसका आशय है प्रत्येक कदम पर लखनऊ में उनके आसंग थे।

सुबह–सुबह :

(1) "मैडम, बधाइयाँ !" पांडे **सुबह–सुबह** गुलदस्ता लेकर सकुचाये हुये आये थे, "आपकी आर्ट–फिल्म हिट हो गयी थी।"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 564)

विश्लेषण :

सुबह–सुबह द्विरुक्त संज्ञा का प्रयोग लेखक ने एकदम सुबह अर्थात् जब सबेरा हुआ, तभी पांडेजी वर्षा के पास आये थै।

एक–एक :

(1) जहाँ वर्षा को मध्यमवर्गीय भारतीय कन्या की विशाल ह्रदयता पर ताज्जुब हुआ, वहीं अपने **एक–एक** आँसू और **एक–एक** निद्राहीन रात का लेखा–जोखा रखने वाली आत्मपीड़क प्रवृत्ति पर ग्लानि भी हुई।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 44)

(2) "मुझे अंदाज था, तुम यहीं होगी ।" मिट्ठू दोनों हाथों में चाय का **एक–एक** गिलास थामे चला आ रहा था।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 70)

(3) इन तीन वर्षों में आपको तन–तन के **एक–एक** पोर और **एक–एक** कोने से इस वातावरण

की तरंगें जज्ब करनी है।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 536)

(4) शिक्षा मंत्रालय तीन नाट्य–दलों को साल में **एक–एक** लाख का अनुदान दे रहा था।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 148)

(5) उस पर के अनगिनत पारदर्शी आवरण **एक–एक** करके उठ रहे थे।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 305)

(6) प्रिया दिव्या के चेहरे का एक–एक भाव, आँखों का एक–एक संकेत पहचानती थी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 313)

(7) मैं खुशी से कठपुतली बनने के लिए तैयार हूँ, बशर्ते कि पूरी फिल्म का **एक–एक** फ्रेम निर्देशक के दिमाग में साफ हो, चरित्रों के मोड़, आपसी रिश्ते और विकासगत बारीकियों पर उसकी पैनी नजर हो।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 325)

(8) **एक–एक** सीन में आडियेंस आँसू भी बहायेगी और तालियाँ भी बजायेगी।''

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 331)

(9) वर्षा ने महसूस किया कि उसके चेहरे का **एक–एक** सूत भाव लक्ष्य किया जा रहा है।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 366)

(10) झुमकी ने घर की व्यवस्था सुचारू रूप से सँभाल ली थी। वर्षा की **एक–एक** आदत और पसंद की उसे जानकारी थी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 376)

(11) वह अपनी तीनों निर्माणाधीन फिल्मों में **एक–एक** गाना गा रहे थे और एक निर्माता ने उन्हें नायक के चार गाने के लिये सिर्फ पार्श्वगायक के रूप में अनुबंधित किया था।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 444)

(12) **एक–एक** करके सिद्धार्थ के आदेश गूँजे।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 520)

विश्लेषण :

यहाँ पर दिये गये उदाहरणों में एक–एक संख्यावाची विश्लेषण समवेत वस्तुओं का द्योतक है।

'एक–एक' शब्द है तो संख्यावाची विशेषण पर, यहाँ उसकी पुनरावृत्ति सब अथवा अलग–अलग के अर्थ में की गयी है। इन पुनरावृत्ति मूलक शब्दों के प्रयोग से मुझे चाँद चाहिये की भाषा अत्यन्त समृद्ध और प्रवाह से पूर्ण हुई। लेखक के शैली–वैशिष्ट्य का यह एक पक्ष है जिसमें पुनरावृत्ति होते हुए एकरसता नहीं है। यहाँ पर किसी–किसी उदाहरण में श्रृंखलाबद्ध पर्यायवाचिता

का भी नमूना मिलता है।

अपने–अपने :

(1) दोनों **अपने–अपने** कैरियर में समान रूप से महत्वाकांक्षी हैं और दोनों का कैरियर ही खलनायक का काम करता है। (मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 46)

(2) वर्षा के सामने **अपने–अपने** घरों में उमंग से चहकते हुए झल्ली की और हेमलता की तस्वीरें उभरीं।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 522)

विश्लेषण :

यहाँ पर निजवाचक विशेषण अपने–अपने की प्रयुक्ति पृथकता के साथ–साथ समवेत् प्रयास की द्योतक है।

जल्दी–जल्दी :

(1) ''हाइ......'' सामने से **जल्दी–जल्दी** मीरा आ रही थी, ''कैसा रहा मद्रास का ट्रिप''

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 392)

(2) वर्षा के ड्राइवर ने, जो नीचे चौकीदार के साथ गप्पें लगा रहा था, बताया कि साहब **जल्दी–जल्दी** बाहर निकल गये।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 544)

(3) ''देखो, तारा टूटा....'' प्रिया उत्तेजित सी उठी, ''कुछ माँग लो.......'' वह आँखें बंद किये **जल्दी–जल्दी** बुदबुदाने लगी थी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 711)

विश्लेषण :

यहाँ पर जल्दी–जल्दी क्रिया विशेषणों के द्वारा गति की तीव्रता की ओर संकेत किया गया है।

कौन–कौन :

(1) वर्षा ने भी पल भर का विराम दिया, ''तुम **कौन–कौन** से ड्रग्स लेते हो, मुझे मालूम है।''

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 523)

विश्लेषण :

कौन–कौन प्रश्न वाचक सर्वनाम का प्रयोग विभिन्न प्रकार के ड्रग्स लेने के संदर्भ में किया गया है।

रात–रात :

(1) **रात–रात** भर उसे नींद नहीं आती थी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 528)

विश्लेषण :

'रात–रात' भर द्विरुक्त संज्ञाओं का प्रयोग पूरी रात के अर्थ में हुआ है।

छिपाते–छिपाते :

(1) सच्चाई **छिपाते–छिपाते** मैं बहुत थक गयी हूँ।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 524)

विश्लेषण :

सच्चाई खुल न जाये इसके लिए यहाँ छिपाते–छिपाते का प्रयोग किया गया है।

निकलते–निकलते :

(1) **निकलते–निकलते** वर्षा ने फिर एकेडमी का नंबर मिलाया।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 544)

विश्लेषण :

निकलते–निकलते क्रिया विशेषण का प्रयोग निकलने की जल्दी के अर्थ में किया जा रहा है।

हँसते–हँसते :

(1) मैं **हँसते–हँसते** खून तक कर सकती हूँ।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 386)

(2) मार्था **हँसते–हँसते** दोहरी हो गई।

इस क्रिया विशेषण का प्रयोग बिना विचलित हुये एवं अत्यधिक प्रसन्नता के अर्थ में किया गया है।

डरते–डरते :

(1) "मैं इन्टरव्यू के लिए आयी हूँ वर्षा वशिष्ठ..." उसने **डरते–डरते** कहा।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 90)

विश्लेषण :

यहाँ पर 'डरते–डरते' क्रियाविशेषण का प्रयोग भयभीत होने की मुद्रा की ओर संकेत करता है।

सुनते–सुनते :

(1) लोगों की बातें **सुनते–सुनते** मेरा सर भन्ना जाता है।" मम्मी बोलीं।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 239)

विश्लेषण :

यहाँ पर 'सुनते–सुनते' क्रियाविशेषण का प्रयोग किसी क्रिया का लगातार जो प्रभाव

पड़ता है उसके लिए किया गया है।

बहुत–बहुत :

(1) "बहुत–बहुत मुबारक !" वर्षा ने उनसे हाथ मिलाया।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 394)

(2) "बहुत–बहुत बधाई।" डॉक्टर अटल उनसे हाथ मिला रहे थे।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 539)

विश्लेषण :

'बहुत–बहुत' अनिश्चित संख्यावाचक विशेषण का प्रयोग कई, नाना, अनेक के अर्थ में किया है। यहाँ यह बहुतायत के अर्थ में प्रयुक्त हुआ है।

क्या–क्या :

(1) "झल्ली चली गयी। अब मुझे टेलीफोन–ऑपरेटर ढूँढ़ना होगा।" वर्षा बोली, "झुमकी बेचारी **क्या–क्या** करे।"

विश्लेषण :

यहाँ 'क्या–क्या' प्रश्नवाचक सर्वनाम का प्रयोग कई कार्य के करने में अनिश्चय के अर्थ में किया गया है।

अपना–अपना :

(1) मुझे यह समझना चाहिये कि **अपना–अपना** बोझ अकेले ढोने के लिये हर कोई अभिशप्त है।"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 61)

विश्लेषण :

यहाँ पर निजवाचक विशेषण 'अपना–अपना' की प्रयुक्ति पृथकता के अर्थ में की गयी है।

आहिस्ता–आहिस्ता :

(1) **आहिस्ता–आहिस्ता** हर्ष विहीन जिन्दगी की आदत पड़ने लगी थी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 567)

विश्लेषण :

यहाँ पर 'आहिस्ता–आहिस्ता' क्रिया विशेषण गति की मंथरता का द्योतक है तथा किसी प्रभाव की धीरे–धीरे होने वाली क्षीणता के लिये भी यहाँ इसका प्रयोग किया गया है।

दूर–दूर :

(1) वर्षा ने जब वातावरण की ओर देखा तो चाँदनी निकल आने के कारण **दूर–दूर** तक चाँदनी दिखायी दे रही थी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं.)

(2) **दूर–दूर** तक दिखाई देते बालू के ढूहों पर चाँदनी फैली थी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 301)

(3) वर्षा को ऐसा लगा, जैसे पानी की शान्त सतह पर कंकड़ गिरा हो, फिर **दूर–दूर** तक लहरों के कम्पन होते रहे ..... वह असमंजस में थी कि इसे क्या काम हो सकता है।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 287)

विश्लेषण :

'दूर–दूर' क्रिया विशेषण का प्रयोग यहाँ पर दूरी की दिशा का निर्धारण करने के अर्थ में किया गया है अर्थात् बहुत दूर तक चाँदनी फैली थी या बहुत दूर तक लहरों के कम्पन हो रहे थे।

यहाँ दूर–दूर तक का प्रयोग प्रभाव या किसी के अस्तित्व की व्यापकता के लिये भी किया गया है।

एक साथ प्रयुक्त होने वाले भिन्नार्थक शब्दों की आवृत्ति

1. खाना–पीना :

चलते समय उसकी चड्डी फिसलती रहती थी, फ्रॉक से ही अचानक वह आयी नाक पोंछने से उसे कोई परहेज न था और कुछ नीचे गिराये बिना उसके लिये **खाना–पीना** मुश्किल था।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 14)

2. अता–पता :

"पर नाम से जाति का **अता–पता** तो मिलना चाहिये।"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 17)

3. लुके–छिपे :

क्लास में वर्षा रुक–रुककर, **लुके–छिपे** दृष्टि की संपूर्ण गहराई से उन्हें निहार लेती।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 18)

4. सड़ा–गला :

'डेनमार्क शहर में बहुत कुछ **सड़ा–गला** है'

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 19)

5. भाई–बहन :

यहाँ जूनियर स्कूल के दो बोर्डर हैं... **भाई–बहन**।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 20)

6. लुंज–पुंज :

"लोग क्या कहेंगे ?" यह एक असमर्थ पिता की कातर पुकार थी, जो थोडा **लुंज–पुंज** होने

के बावजूद बेटी के सामने खड़ा होने की कोशिश कर रहा था।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 22)

7. **माँ–बाप :**

चार–पाँच प्रस्तावों की असफलता के बाद **माँ–बाप** और भाई की व्यवहार–बुद्धि चौकन्नी हो गयी थी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 23)

8. **ताने–बाने :**

घर के माहौल में तनाव और शोक के **ताने–बाने** गुँथने लगते।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 24)

9. **सुख–दुःख :**

ये मेरे रक्त सम्बन्धी हैं, इनका **सुख–दुःख** मेरा है, पर मेरा सुख–दुःख मेरा ही रहेगा।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 26)

10. **आ–जा :**

गलियारे में लोग **आ–जा** रहे थे।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 28)

11. **तन–मन :**

"मधुरभाषिणी, तुम्हारे वचन अमूर्त ध्वनियाँ नहीं पुष्पों की लड़ियाँ हैं, जो **तन–मन** को सुवासित कर देती हैं।"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 30)

12. **उठते–बैठते :**

उठते–बैठते, सोते–जागते उसकी चेतना पर सौम्यदत्ता ही छायी रहती थी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 30)

13. **पढ़ा–लिखा :**

यह इसलिये भी जरूरी है कि आपका **पढ़ा–लिखा** दर्शक मिनर्वा तक नहीं आयेगा, अपने घर में पिक्चर की कैसेट देख लेगा।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 516)

14. **थोड़ी–बहुत :**

दर्शक को क्या पसन्द है, इसकी **थोड़ी–बहुत** समझ मुझमें है।"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 517)

15. **ऊपर–नीचे :**

जिस घर के जीवन में कोई तर्कशीलता नहीं वहाँ अगर गृह स्वामिनी के ज्वर का तापमान

अतार्किक ढंग से **ऊपर–नीचे** जाये, तो ताज्जुब नहीं होना चाहिये।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 63)

16. ऊँच–नीच :

कल के दिन कुछ **ऊँच–नीच** हो गया, तो हमें मुँह छिपाने को जगह नहीं मिलेगी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 32)

17. नाचती–गाती :

सिलबिल आवेश में आ गयी, "मैं किसी लड़के के साथ **नाचती–गाती** नहीं हूँ।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 32)

18. ओर–छोर :

इस बार पत्नी ने उन्हें सहारा दिया, "इस छोकरी का कुछ **ओर–छोर** ही नहीं मिलता।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 41)

19. आते–जाते :

कॉलेज के गलियारे में **आते–जाते** एक पल के लिये उससे निगाह मिल जाती थी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 43)

20. लेन–देन :

जैसे तस्कर सोना और रुपयों का **लेन–देन** करने से पहले चिन्ह स्वरूप दिये गये एक नोट के फटे टुकड़ों को जोड़कर देखते हैं, उसी तरह उसने जिज्जी के साथ की पहले की कटी हुई अंतरंगता के रोंये–रेशे जोड़कर देखे, पर वे मिले नहीं।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 44)

21. यहाँ–वहाँ :

यह समझने में उसे कठिनाई नहीं हुई कि जीजाजी के **यहाँ–वहाँ** होने पर परिवार की चर्चा और चिंता का एकमात्र विषय वही होती थी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 45)

22. स्याह–सफेद :

राजा है तहसील का–जो चाहे **स्याह–सफेद** करे रानी बनकर रहोगी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 76)

23. लेखा–जोखा :

ऐसा **लेखा–जोखा** तो अन्तर्यामी ही जानते हैं।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 80)

24. हल्की–फुल्की :

"ऐसा कैसे कहा जा सकता है ?" उसने दिव्या के समक्ष आपत्ति की, "मैं **हल्की–फुल्की**

भूमिकायें भी करना चाहती हूँ।''

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 82)

25. उथल–पुथल :

तमाम वर्षों के बाद वह पीछे मुड़कर इस निर्णायक संध्या के बारे में सोचती अपने व्यवस्थित एवं पेंच–कसे जीवन की व्यस्तता के बीच कि कैसे **उथल–पुथल** के क्षणों में उसे सान्त्वना दी गयी थी और आज की इस अनुभूति को याद करेगी.......।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 84)

26. हक्का–बक्का :

''वर्षा जी, आप?'' रामदेव उसे देखकर **हक्का–बक्का** रह गया।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 508)

27. नाचना–गाना :

''कहानी की पकड़ से।'' वर्षा ने घूँट लिया, ''और क्या पेड़ के इर्द–गिर्द **नाचना–गाना** ही प्यार होता है।''

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 520)

28. जब–तब :

अब वह **जब–तब** देखा करती–पिंस–नेज के पीछे झाँकती छोटी, तीखी आंखें, माथे पर कुछ नीचे आयी लट, छोटी–सी दाड़ी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 137)

29. काले–उजले :

कलात्मक प्रशिक्षण ऐसी प्रक्रिया है, जिसमें **काले–उजले** क्षण आते रहते हैं।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 141)

30. धूप–छाँह :

धूप–छाँह साथ–साथ झेले हुए दो पुराने मित्रों के निजी सन्दर्भ तथा गूढ़ार्थ होते हैं, वर्षा ने सोचा।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 146)

31. उतार–चढ़ाव :

''**उतार–चढ़ाव** काफी हैं।''

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 528)

32. अस्त्र–शस्त्र :

अस्त्र–शस्त्र भी भारी मात्रा में आ रहे हैं।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 219)

33. अपने–पराये :

अपने–पराये को पहचानने की कोशिश कर रहा हूँ।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 237)

34. खाने–पीने :

खाने–पीने का ध्यान नहीं रखतीं क्या ?

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 237)

35. अनाप–शनाप :

"आदित्य के बारे में तो कुछ **अनाप–शनाप** नहीं छपता।" सुजाता ने टिपपणी की।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 239)

36. इर्द–गिर्द :

बायीं ओर आम के पेड़ के **इर्द–गिर्द** बेलों का मण्डप था।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 260)

37. भीतर–बाहर :

भीतर–बाहर सब ताजा लगने लगा।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 270)

38. कच्ची–पक्की :

"जी हाँ।" हेमा तनिक–सा मुस्करा दी, "**कच्ची–पक्की** रसोई करती हूँ।"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 285)

39. आमने–सामने :

वे एक–दूसरे के बहुत निकट थे। **आमने–सामने**।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 301)

40. आस–पास :

अब मुझे लगता है कि मेरे तथाकथित आकर्षण के पीछे चतुर्भुज के आम आदमी होने का तथ्य था, जिसके **आस–पास** मेरी रंगमंचीय गतिविधियाँ केन्द्रित थीं।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 309)

41. नोंक–झोंक :

उसके साथ विदूषक नाम का झबरीला कुत्ता **नोंक–झोंक** करेगा।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं.)

42. हार–जीत :

जिस तरह दूसरे लोग नर्क हैं, उसी तरह परिवार अनिवार्य 'यंत्रणा' है और पारिवारिक रिश्ते

हमेशा चलने वाला महाभारत, जिसमें **हार–जीत** नहीं होती, उसने आँसू पोंछते हुए सोचा।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 505)

43. छोटा–मोटा :

छोटा–मोटा मामूली–सा कमरा चलेगा।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 332)

44. गिने–चुने :

सिर्फ **गिने–चुने** लोगों को ही बुलाया था।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 344)

45. आती–जाती :

वह नीरजा के साथ स्टूडियो **आती–जाती** है और रोजाना सौ रुपये की बचत करती है।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 358)

46. क्षत–विक्षत :

वर्षा के भीतर इस चारदीवारी में घटित वे अनेकानेक क्षण कसके, जब वह **क्षत–विक्षत** हुई थी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 360)

47. सिट्टी–पिट्टी :

''बाप रे, इतने बड़े स्टार को सामने देखकर मेरी तो **सिट्टी–पिट्टी** गुम हो गयी।'' अनुपमा हँसी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 380)

48. जीर्ण–शीर्ण :

''वो सामने......'' रंजना ने कालीना में पिछवाड़े के **जीर्ण–शीर्ण** मकान की ओर संकेत किया।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 388)

49. दुबला–पतला :

दुबला–पतला काला आदमी तंग पाजामा और बाँहों वाली बनियान पहने उसे देखकर उलझन में था।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 388)

50. मुड़ी–तुड़ी :

उसने चारमीनार की **मुड़ी–तुड़ी** डिब्बी से सिगरेट निकाली।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 389)

51. वाद–प्रतिवाद :

वाद–प्रतिवाद की गेंद फिर अनिश्चय के कोर्ट में आ गयी थी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 404)

52. दायें—बायें :

झल्ली और हेमलता वर्षा के **दायें—बायें** बैठ गयी थी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 412)

53. बहुत—कुछ :

पर स्टारडम ने **बहुत—कुछ** बदल दिया था.... सामान्य आकांक्षायें भी और सामान्य जीवन पद्धति भी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 418)

54. दीन—हीन :

वर्षा को दिल्ली की पहली भेंट याद आ रही थी, जब वह **दीन—हीन** थी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 520)

55. लम्बे—चौडे :

बायीं ओर **लम्बे—चौड़े** बाग से घिरी कॉटेज थी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 528)

56. हाथ—पाँव :

वर्षा के **हाथ—पाँव** फूल गये।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 536)

57. जहाँ—तहाँ :

पर दो—चार—पलों के बाद फिर सुइयों की गर्म नोकें—सी उसे **जहाँ—तहाँ** खरोच देतीं।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 541)

58. जलते—बुझते :

इंजन ने लम्बी सीटी दी, जो अगले पल डिस्को की उन्मत्त लय में बदल गयी और **जलते—बुझते** रंगीन कुमकुमों की लहरिया पंक्ति शार्प फोकस में आने लगीं।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 542)

इन भिन्नार्थक शब्दों के एक साथ प्रयोग से 'मुझे चाँद चाहिये' की भाषा का एक समृद्ध पक्ष उद्घाटित हुआ है। यहाँ कोश निबद्ध शब्द और किसी कृति में प्रयुक्त शब्दों में जो भिन्नता होती है उसकी दीप्ति भी उजागर हो रही है। लेखक ने ऐसे शब्दों के प्रयोग से अपनी शैली के अर्थ पक्ष को बहुआयामी व्यंजना दी है। 'मुझे चाँद चाहिये' की भाषा की चर्चा जिन अन्य अनेक शैलीगत उपादानों के कारण की गयी है उनमें ऐसे ही उपादान कारणीभूत है। किसी—किसी का मत है कि 'मुझे चाँद चाहिये' में सिर्फ भाषा या शब्द प्रयोग की कलात्मकता अथवा तड़क—भड़क है, पर भाषा और शब्द प्रयोग के पीछे लहराते भाव और अर्थों के समुद्र की लहरों में इस उपन्यास में चित्रित जीवन का समृद्ध पक्ष लहरा रहा है। इन प्रयोगों के कारण ही इसमें जीवन की बहुलता, संवेगों के

उत्थान–पतन की प्रक्रिया, अनुभव की समृद्धि और जीवन्तता उजागर हुई है। शब्दों के बहुआयामी प्रयोगों से इसका भाषा पक्ष तो समृद्ध हुआ ही है, शैली को भी वैशिष्ट्य प्राप्त हुआ है। ऐसे प्रयोगों का जीवन्त कोश बन गया है यह उपन्यास।

शब्द–शक्ति

शैली के अर्थ सम्बन्धी उपकरणों में शब्द शक्तियाँ भी आती हैं। यद्यपि यह विवेचन का काव्यशास्त्रीय पक्ष है। पर अर्थों की इन श्रेणियों का विवेचन अंग्रेजी के विख्यात कलाशास्त्री आई. ए.रिचर्डस ने भी किया है और अर्थों की इस क्रमिकता की ओर संकेत समकालीन समीक्षक टी.एस. इलियट ने भी किया है। इसी बात को ध्यान में रखकर 'मुझे चाँद चाहिये' के शैली पक्ष का यहाँ अनुशीलन किया जायेगा।

शब्द–शक्ति (स्त्री.) : शब्द की विशेष अर्थ बोधक शक्ति (जैसे– अभिधा, लक्षणा तथा व्यंजना)[1]

शब्द–शक्ति–स्त्री. (प.त.) शब्द की वह शक्ति जो उसका अर्थ उद्घाटित करती है। ये तीन प्रकार की मानी गयी हैं– अभिधा, लक्षणा और व्यंजना।[2]

'शब्द और अर्थ के सम्बन्ध को शब्द–व्यापार, शब्द–वृत्ति और शब्द–शक्ति नामों से जाना जाता है। शब्द स्वयं मानवीय व्यापार है और अर्थबोध में शब्द व्यापार का काम करता है। शब्द ही तो कर्णकुहर से होकर मानस प्रत्यक्ष लेता है और फिर अर्थज्ञान का व्यापार करता है। जब शब्द अर्थ का बोधक है तो उस बोध के व्यापार का वही आश्रय (कर्ता) है। व्यापार और वृत्ति पर्याय शब्द हैं। इस प्रकार शब्द, अर्थ और व्यापार यहाँ परस्पर सापेक्ष त्रिक है और अनादिकाल से मनुष्य की सम्पत्ति बना हुआ है।[3]

इस प्रकार अर्थबोधक शब्द व्यापार अथवा शब्दार्थ–सम्बन्ध को शब्द शक्ति कहते हैं। इसके तीन भेद हैं– अभिधा, लक्षणा और व्यंजना। अभिधा को शक्ति या वाचकत्व भी कहते हैं। लक्षणा को उपचार–भक्ति या अप्रसिद्ध शक्ति भी कहा जाता है। व्यंजना, व्यंजकत्व, द्योतन, प्रतीति, गमकत्व, द्योतकत्व आदि पर्याय हैं।[4]

'शब्द शक्ति अर्थ मूलक शैलीय उपकरणों में महत्वपूर्ण स्थान रखती हैं। इन तीनों के प्रयोग की उपयोगिता शैली विज्ञान की दृष्टि से बहुत अधिक है। वाच्यार्थ केवल तथ्यनिरूपक नहीं होता, वह प्रसंग के अनुरोध से बलपूर्ण तथा व्यंजनात्मक प्रभाव की निष्पत्ति भी करता है। इसी प्रकार लक्ष्यार्थ केवल मुख्यार्थ बाधा से उत्पन सौन्दर्य का ही निष्पादक नहीं होता। उसका भावों का

---

1. हिन्दी शब्दकोश, डॉ. हरदेव बाहरी, प्रथम संस्करण, (पृ.सं. 769)
2. मानक हिन्दी कोश, रामचन्द्र वर्मा, पाँचवाँ खण्ड, (पृ.सं. 145)
3. ध्वनि सिद्धान्त तथा तुलनीय साहित्य–चिन्तन, डॉ. बच्चूलाल अवस्थी 'ज्ञान' (पृ.सं. 56)
4. ध्वनि सिद्धान्त तथा तुलनीय साहित्य–चिन्तन (पृ. 57)

अतिशय आवेग और बल की सृष्टि करने में बहुत योगदान रहता है।[1]

ये शब्द शक्तियाँ तीन प्रकार की होती हैं– अभिधा, लक्षणा, व्यंजना।

1. अभिधा – संकेतित अर्थ ही वाच्य है, संकेतित अर्थ का बोधक शब्द वाचक है और संकेतित अर्थ का बोधक शब्द–व्यापार 'अभिधा' है।

2. लक्षणा – लक्षणा वह शब्द शक्ति है जो मुख्य अर्थ से तात्पर्य अनुपन्न होने पर रूढ़िवश अथवा प्रयोजनवश मुख्यार्थ–सम्बन्धी अन्य अर्थ का बोध कराती है।

3. व्यंजना – जब वाच्यार्थ या लक्ष्यार्थ के अभाव में अन्य अर्थग्रहण किया जाता है तब व्यंजना होती है।

वर्मा जी की भाषा में से अमिधा के कुछ उदाहरण निम्नलिखित हैं– वर्षा की बड़ी बहिन अत्यन्त सुन्दर और गुणवती है। अतएव उसे तीन देवियों – उर्वशी, सीता और अन्नपूर्णा के समान बताया गया है।

(1) नाइन झुनियाँ को यह कसीदा तोते की तरह रट गया था, "लड़की क्या है, साक्षात् उर्वशी है। सीता मैया–सा तेज है चेहरे पर। अन्नपूर्णा की तरह पूरी गृहस्थी सँभालती है। जिस घर में जायेगी, उजाला हो जायेगा।"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 23)

'देवी' शब्द अपने साथ समस्त दिव्यता का भाव लेकर आता है। नारी की तपस्या, त्याग, सहिष्णुता और साधना उसे दिव्य बना देती है। यह सम्पूर्ण भावराशि 'देवी' शब्द के प्रयोग से ही प्रकट हो सकती है। सुरेन्द्र वर्मा जी ने नारी के उज्ज्वलतम रूप की अभिव्यंजना के लिये 'देवी शब्द का प्रयोग किया है।' अभिशप्त सौम्यमुद्रा' नाटक में जब उसकी दासी 'सौम्यमुद्रा' को देवी नाम से पुकारती है, तो वह कहती है–

(2) लेकिन प्रतिध्वनि बीच में ही काटते हुये रक्षा की आवाज आयी, "देवि नहीं, मुझे मेरे नाम से पुकारो।"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 29)

'राजा, रानी' 'अफसर' आदि शब्दों के साथ स्वामित्व और स्वैर भाव का योग है। इन भावों के साहचर्य की व्यंजना निम्नलिखित वाक्यों में हो रही है–

(3) "इतना बड़ा अफसर है। राजा है तहसील का जो चाहे स्याह–सफेद करे। रानी बनकर रहोगी।" पिता बोले।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 76)

(4) "तकलीफ काहे की, रानी !

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 122)

---

1. शैली विज्ञान और प्रेमचन्द्र की भाषा, डॉ. सुरेश कुमार, पृ.सं. 73

(5) इतना बड़ा अफसर है, परन्तु पुस्तकालय नियमित रूप से जाता है।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 215)

इसी प्रकार 'राजमहिषी' शब्द का प्रयोग भी यौगिक है। वाक्य में इसकी चमत्कारी उपादेयता तभी होती है जब उससे अन्य अर्थ की व्यंजना होती हो। यहाँ पर लेखक ने वर्षा वशिष्ठ को राजमहिषी की संज्ञा दी है।

(6) एक और ने अन्य दो के नाम लिये बिना उसे सीधे 'रिपर्टरी की राजमहिषी' की पदवी से विभूषित कर दिया था।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 257)

यहाँ पर वर्षा को अभिनय का श्रेष्ठ कीर्तिमान स्थापित करने के कारण 'रानी' घोषित किया गया।

'बकरी' शब्द रूढ़ हो गया है यहाँ पर लेखक ने वर्षा के लिये 'बकरी' शब्द का प्रयोग किया है–

(7) "बकरी, तू पेपर पढ़ती है या उसकी जुगाली करती हैं। तू एवार्ड पाने वाली सबसे कम उम्र एक्ट्रेस है।"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 275)

यहाँ सूर्यभान जी वर्षा को 'कालिदास' की संज्ञा देकर प्रसन्नता प्रकट कर रहे हैं–

(8) "वर्षा जी प्रणाम !" सूर्यभान उसे देखते ही हाथ जोड़कर मुस्कान के साथ खड़े हुये, "आपको सामने देखकर मेरे पाँव वैसे ही काँप रहे हैं, जैसे रामभरोसे के आगे कालिदास आ गये हों।"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 276)

कालिदास संस्कृत के महान कवि हैं और यहाँ पर वर्षा को कालिदास की संज्ञा से अभिहित किया गया है।

वर्षा को पहली फिल्म में सर्वश्रेष्ठ अभिनेत्री का पुरस्कार मिला है तो डॉ. अटल वर्षा को पहले हिरनी' और बाद में 'शेरनी' की संज्ञा देते हैं।

ये दोनों ही शब्द दो विशेष जंगली जानवरों के नाम के अर्थ में रूढ़ हो गये हैं और लेखक इन्हीं दोनों की संज्ञा वर्षा को दे रहा है।

(9) "जो अभिनेत्री ड्रामा स्कूल के दाखिला इंटरव्यू में डरी हुई हिरनी की तरह पलकें झपकाती दाखिल हुई थी, इस फिल्म में भूखी कुद्ध शेरनी की तरह कला–आखेट में तल्लीन दिखायी देती है।"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 365)

'मोरनी' शब्द बहुत सुन्दर पक्षी के लिये प्रयुक्त किया जाता है। यहाँ पर वर्षा के पिता अपने को मोरनी की संज्ञा देते हैं और उसकी प्रसिद्धि से दुःखी होकर उसको पत्र में लिखते हैं–

(10) "तुम्हारी प्रसिद्धि ऐसे–ऐसे रूपों में मेरे सामने पहुँची है कि मैं हतप्रभ, किंकर्तव्यविमूढ़ तथा स्तब्ध रह गया हूँ। पिता ने लिखा था 'कवि कुलगुरु ने कहा है, गर्मी में बरसाती वायु का स्पर्श पाकर मोरनी के प्राण धीरे–धीरे लौटने लगते हैं। जीवनपर्यंत तुम्हारे व्यवहार से संतप्त हम ऐसा ही अनुभव कर रहे थे कि एक नयें आघात ने मरणासन्न कर दिया।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 405)

'धृतराष्ट्र' अंधे थे। वर्षा हर्ष से अपने बारे में सोचने की सलाह देते हुये अभिधा का आश्रय लेती है। वह उससे गांधारी जैसा बनने का आग्रह करती है। गांधारी ने अपने अंधे पति का अनुसरण करते हुये स्वयं अपनी आँखों पर पट्टी बाँध ली थी।

(11) "तुम अपने आत्मसम्मान को एक और दो दोस्तों की हितचिंता तक खींच रहे हो और दूसरी ओर सूर्यभान के साथ गैरजरूरी टकराहट तक। एक लम्हे के लिये तुम गांधारी की तरह अपनी आँखों पर पट्टी बाँध लो और सिर्फ अपने बारे में सोचो।"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 192)

ऊपर जितने उदाहरण दिये गये है ये सब अभिधात्मक प्रयोग हैं। इन शब्दों का प्रयोग जिस अर्थ में किया गया है उनका वही अर्थ है। पर, इन शब्दों के प्रयोग से भाषा की समृद्धि और शैली का वैशिष्ट्य व्यंजित हो रहा है।

लक्षणा

कथ्य की बलपूर्वक अभिव्यक्ति करने के लिये लक्षणा का उपयोग किया जाता है। हृदय के आवेश को वाच्यार्थ नहीं निभा पाता जितना लक्ष्यार्थ। इस दृष्टि से लक्ष्यार्थ अधिक सामर्थ्यवान होता है। वर्मा जी ने भाव की अतिशयता एवं आवेश को प्रकट करने के लिये चरित्र चित्रण के सन्दर्भ में लक्षणा का प्रयोग किया है। साथ ही इनकी एक और विशेषता दृष्टिगोचर होती है कि इन्होंने जिन लक्षक शब्दों का प्रयोग किया है वे अधिकांशतः पशु–पक्षी वर्ग के हैं। वर्माजी ने सरलता के अतिशय भाव को स्पष्ट करने के लिये लक्षणा का आश्रय लिया है–

(1) .... एक गायित्री भी थी। जहाँ बोलो, बेचारी सुग्गे–सी बैठ जाती थी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 41)

(2) पोते की लौ लगाये सास रामजी की गाय को दूध, मक्खन व घी का खूब सेवन करवा रही थी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 45)

हमारे भारतीय समाज में गाय एवं तोते को सरलता का प्रतीक माना जाता है। वर्षा वशिष्ठ की बड़ी बहिन गायित्री अत्यन्त सीधी व सरल हृदया है। अतः वर्मा जी ने उसे गाय और सुग्गे की संज्ञा दी है।

'मोहिनी वर्षा की भाभी है जो अत्यन्त लड़ाकू है, अतएव उसका चित्रण करने के लिये वर्माजी ने उसकी संज्ञा 'बौराये साँड़' से दी है।

(3) पर एक और तीखी अनिवार्यता दो–ढाई महीनों के भीतर ही होने लगी, जिसके चलते उसने अपने–आपको ऐसी अंधी गली की अंतिम दीवार से चिपका पाया, जो सामने से पैने सींग हवा में लहराये, धरती रौंदते, मुँह से फेन बिखराने वाले बौराये साँड़ से बचने की कोशिश में हो।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 75)

वर्षा जॉन से नहीं डरती, अतएव वह उसे साँड़ की संज्ञा देती है–

(4) "अपनी उम्र और अनुभव से मैंने वर्षा वशिष्ठ को डराने की कोशिश की थी, पर सींग उठाये साँड़ की तरह उसने मुझ पर कलात्मक हमला बोल दिया।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 475)

वर्षा को नाटक विषकन्या में 'विषकन्या' का पात्र निभाना है उससे ईर्ष्यावश उसकी मित्र कहती है–

(5) "मंच पर अपने प्रेमी को डँसने की भूमिका तुम्हें मिली है।"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 225)

चरवाहा, पशुओं को चराता है, यहाँ पर व्यंग्यपूर्वक वर्षा रमन को चरवाहा कहती है–

(6) "ऐसा समर्थ चरवाहा मैंने आज तक नहीं देखा।" वर्षा बोली, ज्यादातर मुझे दुलत्ती झाड़ने लायक मिले हैं।"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 427)

वर्षा को एक्ट्रेस बनने के कारण काफी परेशानियों का सामना करना पड़ा, तो वह अपने को पागल कुत्ते की संज्ञा देते हुए लक्षणा का आश्रय लेती है–

(7) "मुझे पागल कुत्ते ने काटा था, जो मैंने एक्ट्रेस बनने की सोची ?"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 126)

'राजकुमारी' ऐसी संज्ञा है जो एक आदर एवं सम्मान की भावना से सम्बन्धित होती हैं। किन्तु व्यंग्यरूप में आक्रोशपूर्वक भी इसका प्रयोग यहाँ वर्षा के लिये उसके भाई ने किया है–

(8) "तुम कोई राजकुमारी हो, जो बुलंदशहर वाले जिंदगी भर तुम्हारी बाट जोहते रहेंगे।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 123)

क्रोध के अतिशय की व्यंजना के लिये 'जहर' का लाक्षणिक प्रयोग वर्माजी को विशेष प्रिय है –

(9) "मैं जानता हूँ, मेरी बात तुम्हें जहर लग रही हैं"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 168)

'सुपात्र' उच्चार्थ बोधक शब्द व्यंग्य के आवेश में विपरीत अर्थ की व्यंजना करते हैं। शालिनी कात्यायन जब हर्ष के अभिनय की निन्दा करती है तो हर्ष नाराज होकर कहता है–

(10) "मैं अपने काम की कमियाँ और गलतियाँ जानने को उत्सुक हूँ लेकिन सिर्फ सुपात्र से। इन

ऐरो–गैरों–नत्थू–खैरों से नहीं।''

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 72)

वर्षा वशिष्ठ की भाभी मोहिनी बहुत ही तेज है तो वर्षा नाटक में उसकी कल्पना करते हुए कहती हैं कि –

(11) वर्षा को पक्का विश्वास था कि ऐसी कुटिल भाभी सात जन्मों के 'पुण्य' से ही मिलती है।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 250)

वर्षा हर्ष को क्लिनिक से छुट्टी मिलने पर अपने घर लाना चाहती है किन्तु उसके मध्यमवर्गीय पिता अत्यन्त क्रोधित होकर लक्षणा का आश्रय लेते हैं–

(12) पिता का चेहरा तमतमा गया, 'सिलबिल, लाज शर्म बिल्कुल बेच खायी तुमने..................' आवेश में वह उठकर खड़े हो गये।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 533)

कहीं अभिधा के अनन्तर और कहीं लक्षणा के अनन्तर दूसरी या तीसरी अर्थ कक्षा आती है। उस अर्थ–कक्षा का प्रत्यय कराने वाली शब्दशक्ति 'व्यंजना' है। अन्य शब्दों में 'लक्षणा के प्रयोजन का बोध कराने वाली, वाच्य अर्थ से संवेदनीय भावबोध कराने वाली, योगरूढ़ शब्द में रूढ़ वाच्यार्थ से भिन्न यौगिक अर्थ–प्रत्यय कराने वाली, अनेकार्थक शब्दों में प्रासंगिक वाच्यार्थ से भिन्न अर्थ का बोध कराने वाली, शब्द या अर्थ से वस्तुरूप या अलंकार रूप अर्थ देने वाली व्यापक शब्द शक्ति का नाम 'व्यंजना' है।[1]

व्यंजना – स्त्री. (सं. व्यंजनटाप) 1. प्रकट करने की क्रिया, भाव या शक्ति। 2. शब्द की तीन प्रकार की शक्तियों या वृत्तियों में से एक जिससे शब्द या शब्द–समूह के वाच्यार्थ अथवा लक्ष्यार्थ से भिन्न किसी और ही अर्थ का बोध होता है। शब्द की वह शक्ति जिसके द्वारा साधारण अर्थ को छोड़कर कोई विशेष अर्थ प्रकट होता है।[2]

वाचक और लक्षक पदों की व्यंजना की अपेक्षा व्यंजक पदों की व्यंजना अधिक गहरी और सूक्ष्म होती है। इसमें शब्दों के प्रत्यक्ष अर्थ का कुछ भी महत्व नहीं रहता। उनकी ध्वनि ही मुख्य वस्तु होती है। वर्माजी की भाषा में अनेक ऐसे स्थल मिलते हैं जहाँ व्यंग्य सम्भव व्यंजना की सृष्टि की गयी है। साथ ही गूढ़ एवं गोपनीय भावों की अभिव्यक्ति के लिये भी व्यंजना का आश्रय लेकर सूक्ष्मता और गहनता के प्रभाव की सृष्टि की गयी है–

वर्षा वशिष्ठ का आर्थिक स्तर सुजाता के आर्थिक स्तर एवं सामाजिक स्तर से निम्न है, जब वर्षा के यहाँ सुजाता आती है तो वर्षा अत्यन्त आश्चर्यचकित होकर उनसे कहती है–

---

1. काव्य प्रकाश, द्वितीय उल्लास, व्यंजना निरूपण
2. मानक हिन्दी कोश, पाँचवां खण्ड, सं. रामचन्द्र पृ. सं. 124

(1) "दीदी।" वर्षा अचरज से भर उठी, "आइये, आइये गंगू तेली के घर में राजा भोज पधारे हैं।"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 159)

वर्षा के नैननक्श तीखे एवं वह दुबली तथा लम्बी है, और शिवानी की तुलना आपसे करते हुये वह व्यंजना का आश्रय लेती है–

(2) वर्षा की तुलना में शिवानी का कद काफी छोटा था। वर्षा ने सन्तोष के भाव से लक्ष्य किया कि शिवानी की आँखें और वक्ष–रेखायें उसके आगे वैसी ही हैं, जैसे उज्जयिनी की श्री के सामने विदिशा।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 160)

कालिदास द्वारा वर्णित नगरी उज्जयिनी विदिशा से कहीं अधिक सुदर है। अतएव वर्षा अपने को शिवानी की तुलना में सुन्दर मानती है और सोचती है कि उसका सौदर्य– आँखें, कद, वक्ष–रेखायें शिवानी की तुलना में अधिक श्रेष्ठ हैं। स्नेह निर्देशक हैं और उन्हें अभिनय से अत्यधिक प्रेम है। इसी प्रेम का वर्णन करते हुए वे कहते हैं–

(3) "मैं रंगअजगर हूँ।" स्नेह हँसे, "न मैं चाकरी कर सकता हूँ न मंडी हाउस की सांस्कृतिक बांबी के बाहर साँस ले सकता हूँ।"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 187)

यहाँ उन्होंने अपने को रंग अजगर कहकर यह जताया कि मैं रंगकर्म के अलावा और कोई बँधी बँधाई नौकरी नहीं कर सकता। फिर अजगर से अपना पार्थक्य बताते हुए वे कहते हैं कि जैसे अजगर अपनी बांबी से बाहर आकर साँस लेता है मैं वैसा नहीं कर सकता अर्थात् मैं रंगालय से बाहर नहीं रहना चाहता। यहाँ रंग 'अजगर' शब्द प्रयोग से शैली का वैशिष्ट्य बढ़ गया है। यह शब्द पहले तो हमें चौकाता है फिर धीरे–धीरे व्यंग्यार्थ की गहराई में हमें उतार देता है। सुरेन्द्र वर्मा ने ऐसे प्रयोग अन्यत्र भी किये हैं।

(4) "तुम अपने पाँवों पर कुल्हाड़ी मार रहे हो।" (मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 191)

यहाँ पर तात्पर्य यह है कि तुम अपना अहित स्वयं कर रहे हो, अर्थात तुम्हें अपने विषय में सोच–समझकर निर्णय लेना चाहिये।

महादेव अपने पिता को आश्वासन देते हैं कि वे उन्हें आर्थिक सहायता देते रहेंगे किन्तु उसके पिता अपनी बेटी वर्षा को पत्र लिखते हैं कि–

(5) "महादेव ने कहा तो है कि घर की सहायता करते रहेंगे, पर क्या कर पायेंगे, यह तो समय ही बतायेगा। छप्पर की लकड़ी की पहचान भादों में ही होती है।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 200)

गाढ़े समय में ही तुम्हारे इन कथनों की सच्चाई का पता चलेगा। इसके प्रयोग से शैली का वैशिष्ट्य बढ़ गया।

जिस प्रकार से झोपड़ी के छप्पर की लकड़ी से भादों के महीने में अधिक पानी बरसने पर कितना बचाव हो पाता है यह तभी पता लगता है उसी प्रकार से आवश्यकता पड़ने पर महादेव कितनी आर्थिक सहायता करेंगे, इसका पता भी तभी चलेगा। क्योंकि हो सकता है कि लकड़ी अधिक वर्षा में छप्पर का बोझ न साध सके और महादेव भी आवश्यकता पड़ने पर हो सकता है कुछ भी सहायता न कर सकें।

वर्षा को एक सक्षम अभिनेत्री माना जाता है, जब बाँके बिहारी दीक्षित व उसकी बहिन वर्षा को देखने आती हैं तो उससे कहती हैं कि तुम बहुत ही श्रेष्ठ अभिनेत्री हो अधिक कहना वे उचित नहीं मानतीं।

(6) वर्षाजी, अब मैं आपसे कुछ कहूँ, तो यह सूर्य को दीपक दिखाना होगा।'' बहन बोली।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 225)

जो व्यक्ति स्वयं ही प्रसिद्ध हो, उसकी अधिक प्रशंसा करना व्यर्थ ही होता है। जिस प्रकार से सूर्य को दीपक दिखाना मूर्खता का कार्य है, क्योंकि सूर्य जो सारे संसार को अपनी तेज रोशनी से उज्ज्वलता प्रदान करता है उसे दीपक दिखाना, जिसकी लौ, थोड़े से स्थान को ही प्रकाशित कर पाती है, व्यर्थ है।

वर्षा और नीलकांत नाटक में लवंगलता एवं समीरसेन के बीच प्रेमालाप चल रहा है। जिसे वर्माजी ने व्यंजना द्वारा स्पष्ट किया है–

(7) ''लवंगलता, आज तुम विचलित क्यों हो ?'' समीर सेन की भूमिका कर रहे नीलकांत ने पूछा।

''कुछ विशेष नहीं श्रीमान !'' वर्षा ने नीचे वाणी की ओर देखते हुये कहा।

''तारों पर तुम्हारी उंगलियाँ स्थिर नहीं, रागिनी की सूक्ष्मताओं पर तुम्हारा ध्यान नहीं।''

वर्षा मौन रही।

''जब से तुम अवंती से लौटी हो, व्यग्र और चिंतित लगती हो।''

''मुझे मित्र मानती हो, न तो मन का भार हल्का नहीं करोगी ? ''पास आ नीलकांत वर्षा का हाथ थाम लेता है, ''बोलो इन अधरों पर मुस्कान वापस लाने के लिये मैं क्या करूँ ? मुस्कान मेरे वश से बाहर हो गयी हैं।''

''ऐसा क्या हुआ लवंगलता ?''

''कर्तव्य और भावना का द्वंद्व हैं'' वर्षा उसे सीधे देखती है,

''अंतरात्मा को जिलाये रखना चाहती हूँ, तो मनोरम कामना को संहार होता है। मन की ऊष्मा को आंचल की ओट देती हूँ, तो''

''मै समझा नहीं। मेरे साथ तुम्हारे कर्त्तव्य का विरोध कैसे ?

''समीर, तुम्हारी निश्छलता ने मुझे पराजित कर दिया है।''

''पहेलियाँ मत बुझाओ प्रियतमो'' नीलकांत उसे बाँहों मे ले लेता है।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 222)

यह वर्षा और नीलकांत के बीच के प्रेमाभिनय के संवाद है। वर्षा जो लवंगलता है पहले तो नीलकांत जो समीर सेन है को मारने जाती है किन्तु प्रेम का झूठा–सच्चा अभिनय करते–करते, प्रेम करने लगती है, जिससे वहाँ असमंजस में पड़ जाती है। यही वार्तालाप यहाँ पर व्यंजना का आश्रय लेकर वर्णित किया गया है।

वर्षा और मिट्ठू एक नाटक में अनुराधा और मोहित बनकर अभिनय कर रहे हैं, इसका वर्णन करने के लिये वर्मा जी ने व्यंजना का आश्रय लिया था–

(8) ''मैं समझ नहीं पाया अनुराधा तुम्हारे मन का एक हिस्सा मेरे लिये हमेशा पहेली बना रहा।'' मिट्ठू उदास भाव से बोला।

वर्षा ने अवसाद से कहा, ''सेवा और भक्ति के मंदिर में ऐसी बातें मत करो मोहित। सुप्रिया कैसी हो ? उसकी खुशी का ध्यान तो रखते हो न !''

''हाँ''

''मेरी तुमसे यही एक विनती है। अगर मेरे लिये तुम्हारे मन में कुछ भी रहा है, तो उसी भावना की सौगन्ध, सुप्रिया पर उदासी की आँच न आने देना।'

'' तुम्हारे तईं जबाबदेही समझकर सुप्रिया को तो मैं सँभाल लूँगा, लेकिन मेरे भीतर के इस अंधड़ को कौन सम्भालेगा?'' मिट्ठू मोहाविष्ट एक कदम आगे आया,

''तुम्हारी इन झील सी आँखों में कभी मैंने अपने सपनों के अक्स ढूढ़े थे......''

'' यह ईश्वर का घर है। यहाँ कामना की चीत्कार मना है।'' वर्षा पीठ फेरकर दृढ़ता से बोली।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 67)

अनुराधा एवं मोहित रंगमंच के प्रेमी होने के साथ–साथ वास्तविक जीवन में भी प्रेमी हैं। मोहित अनुराधा से अब भी प्रेम पाने की लालसा रखती किन्तु अनुराधा सन्यास ग्रहण कर लेती है। इसी को प्रस्तुत प्रसंग में व्यंजना द्वारा स्पष्ट किया गया है।

हर्ष फिल्मों में अभिनय करने के लिये बम्बई चला गया है। हर्ष एवं वर्षा दोनों एक दूसरे को प्यार करते हैं किन्तु जब हर्ष चला जाता है तो वर्षा अपनी मनःस्थिति को व्यंजना द्वारा स्पष्ट करती है।

(9) वर्षा ने गहरी साँस ली, ''विराटनगर सुनसान हो गया है। मन में हमेशा अंधड़ चलता रहता है।''

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 229)

जिस प्रकार से अंधड़ चलने पर कुछ भी दिखाई नहीं देता, उसी प्रकार से मेरा मन भी अस्त–व्यस्त हो गया है, उसमें अशांति छा गयी है। यहाँ विराट नगर से दिल्ली की ओर संकेत किया गया है अर्थात दिल्ली सुनसान है और मेरे मन में हमेशा उथल–पुथल होती रहती है। वर्षा

की भावनायें हर्ष से जुड़ गयी हैं। जब हर्ष चला गया तो उसे दिल्ली में अपना दिल का दर्द बाँटने वाला कोई दिखायी नहीं देता है।

स्नेह पुरवाई से प्रेम करते हैं जो एक कालेज में लेक्चरर है तो हर्ष उनसे व्यंजना का आश्रय लेते हुये पूछता है–

(10) "सुना है, आपकी खिड़की से ठंडी पुरवाई आने लगी है ?" हर्ष ने हल्की मुस्कान से स्नेह को संबोधित किया।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 235)

यहाँ पुरवाई के दो अर्थ हैं एक तो पूरब से आने वाली हवा को पुरवाई कहते हैं, दूसरे कॉलेज की लेक्चरर पुरवाई से स्नेह प्रेम करते हैं। यहाँ पर व्यंजना द्वारा दूसरा अर्थ ध्वनित हो रहा है।

वर्षा सिद्धार्थ के गुणों का अवलोकन करती हुई कहती है–

(11) वर्षा को सिद्धार्थ की कुछ बातें विशेष रूप से पसंद आयी थीं हर स्थिति में धीरज बाँधे रहना, आपा न खोना।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 302)

यहाँ पर व्यंजना द्वारा सिद्धार्थ के गुणों पर प्रकाश डाला गया है। सिद्धार्थ निर्देशक है। वह अत्यन्त धैर्यवान एवं सहनशील है। उसे जल्दी गुस्सा नहीं आता। कोई कितनी भी गलतियाँ करे, वह नाराज नहीं होता है। अतएव वर्षा सोचती है कि सिद्धार्थ में अत्यधिक सहनशीलता है।

शिवानी अश्विनी से प्रेम करती है, शिवानी के भाई और पिता अश्विनी का इंटरव्यू लेने वाले हैं तो शिवानी वर्षा से कहती हैं–

(12) शिवानी के स्वर में विवशता थी, 'मेरा हाथ पाने के लिये अश्विनी को लोहे के चने चबाने पड़ेंगे"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 308)

अर्थात अश्विनी को मुझसे विवाह करने के लिये कड़े संघर्ष से गुजरना पड़ेगा।

फिल्म अभिनेत्री वर्षा वशिष्ठ को राष्ट्रीय पुरस्कार मिला तो वह नयी लहर की हलचल बन गया। इसका जो परिणाम हुआ, उसको व्यंजना की सहायता से व्यक्त किया गया है–

(13) कर्दम–वाटिका की च्युइंगम चबाने वाली भँवरियों में सहसा भनभनाहट होने लगी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 396)

जिस प्रकार से वाटिका के फूलों पर भौंरे गुंजार करते रहते हैं उसी प्रकार से वर्षा वशिष्ठ के राष्ट्रीय पुरस्कार पाने के बाद फिल्म लाइन की रिपोर्टरों में भनभनाहट होने लगी, इसी का वर्णन इस प्रसंग में किया गया है। यहाँ द्वितीय अर्थ ही मुख्य है।

हर्ष की फिल्म 'मुक्ति' की शूटिंग प्रारम्भ हो रही है अतः वह बहुत खुश होकर वर्षा से

कहता है–

(14) "हेलीकॉन, मैं सिर्फ चाँद चाहता हूँ।" उसकी आँखों में देखते हुये हर्ष ने हल्की मुस्कान से कालिंगुला का संवाद बोला।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 421)

यहाँ पर हर्ष को खुशी चाहिये, जो उसे चाँद के समान ही बहुत दूर की मालूम देती है, अतः वह कहता है कि मैं सिर्फ चाँद चाहता हूँ। हर्ष के द्वारा चाँद की महत्वाकांक्षा व्यक्त की गयी है।

हर्ष सम्पन्न परिवार के अफसर का बेटा है। एम.ए. की शिक्षा अधूरी छोड़कर तथा कई–कई भौतिक सम्भावनाओं को ठुकराकर सिर्फ अभिनय की खुशी पानी चाहता है– उसे सिर्फ अभिनय की कला का चाँद चाहिये और वह उसे नहीं मिला। 'मुक्ति' बन नहीं पायी।

हर्ष काफी पहले बम्बई आ जाता है फिर भी उसका फिल्म इण्डस्ट्री में उचित स्थान नहीं बन पाया है, यहाँ पर अप्रत्यक्ष रूप से उसी ओर संकेत किया गया है।

(15) वर्षा ने अपने सूखे होंठ पर जीभ फेरी। फिर अस्फुट स्वर में कहा, "मेरे वास्ते चन्द्रमा हमेशा के लिये बुझ गया है"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 547)

जब हर्ष नहीं रहा तो वर्षा जो हर्ष से प्रेम करती है। हर्ष वर्षा वशिष्ठ के लिये वह खुशियाँ या चाँद था, जिनके बिना 'कालिगुला' की तरह उसके लिये 'दुनिया काफी असहनीय' हो जाती है।

ऊपर जितने भी उदाहरण दिये गये हैं इनमें मुख्यार्थ और लक्ष्यार्थ का बोध है पर उन्हीं के सहारे एक अन्य ही अर्थ की व्यंजना हो रही है। इन प्रसंगों में यह व्यंग्यार्थ ही मुख्य है। इस व्यंजना का प्रसार इस पूरे उपन्यास की भाषा को समृद्ध कर रहा है। व्यंग्यार्थ की प्रधानता कुछ तो इसके कथ्य की माँग के कारण है और कुछ शैली वैशिष्ट्य के कारण। अर्थ पक्ष की समृद्धि से 'मुझे चाँद चाहिये' की भाषा को गहराई और बहुआयामिता प्राप्त हुई है और शैली को विलक्षणता। इस कारण भाव की वन्या भी इसमें बहुत प्रबल है और कहीं–कहीं उपन्यास की भाषा कविता का स्पर्श करने लगती है। इसमें लेखक ने विभिन्न नाटकों के संवादों का संयोजन इस दृष्टि से किया है कि वे संवाद वर्षा वशिष्ठ, हर्ष, सिद्धार्थ, अटल के व्यक्तिगत जीवन के विकास में सहायक और एक तरह से उनके जीवन–भाष्य बन जाते हैं।

अर्थगुण

आचार्य वामन ने काव्य की भाषा के दस गुण माने हैं – ओज, प्रसाद, श्लेष, समाधि, सौकुमार्य, उदारता, अर्थव्यक्ति, समता, कांति। इन्होंने गुणों की उपस्थिति वाचक शब्द और वाच्य अर्थ में मानी है। ध्वनि सिद्धान्त इसमें ही गुणों की सत्ता मानता है। शब्द या अर्थ में गुणों की सत्ता लक्षणा से कही जा सकती है, जैसे किसी को आकृति से शूर कहना। लाक्षणिक रीति से हम शब्द

या अर्थ को भी मधुर, ओजस्वी या प्रसन्न कह सकते हैं। इसी प्रकार ये शब्द गुण भी कहे जा सकते हैं जिसका कारण वर्णों की योजना में उस विशेषता का होना है जिससे गुणों की व्यंजना होती है।[1] अतएव ये दस शब्द गुण भी होते हैं और अर्थ गुण भी। अर्थगुण के रूप में ये अर्थ मूलक शैलीय उपकरणों में अन्तर्भूत हो जाते हैं। गुणों की उपस्थिति से भाषा में सौन्दर्य की सृष्टि हो जाती है। ओज एवं सौकुमार्य गुण अभिव्यंजकता प्रधान है।[2]

सौकुमार्य अर्थात् मंगलाभाषित के अनेक उदाहरण वर्माजी की भाषा में मिलते हैं। सौकुमार्य अपनी असाधारणता के कारण सुग्राह्य और अभिव्यंजक होता है। सौकुमार्य की योजना से प्रसंग को ग्राम्यत्व की कुरूपता से बचा रखने में सहायता मिलती है, उससे वातावरण में मृदुता आ जाती है। उदाहरण देखिये–

(1) "मैं आभारी हूँ, लेकिन मेरे घर वाले सचमुच मेरा 'राम–नाम–सत्य' कर देंगे। मैं हाथ जोड़ती हूँ, कृपया मुझे अकेला छोड़ दें।"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 43)

'मारना' बहुत अशुभ और भयानक–सा शब्द है और 'राम–नाम–सत्य कर देना' एक कोमल। मानो राम–नाम–सत्य कर देना बहुत साधारण–सी बात है।

(2) अगर प्रकाशमणि अब भी संखिया फाँक लेते, तो जीवन पर सिलबिल की आस्था गहरी हो जाती।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 55)

यहाँ पर 'आत्महत्या कर लेना' जैसे अमंगलकारी शब्द का प्रयोग न करके 'संखिया फाँक लेते' जैसे कोमल शब्द का प्रयोग किया गया है ताकि मृदुता का आभास हो सके।

(3) यह कहते हुये सिलबिल को रत्ती भर हिचक नहीं कि अगर उसे अपनी 'एक्स्ट्रा–कैरीकुलर एक्टिविटी छोड़कर, घूँघट सँभालते हुये अनमोल भूषण के साथ बिजनौर जाने के लिये विवश किया गया, तो वह खुशी–खुशी' देवदास के जैसा आत्मसंहार का पथ अपना लेगी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 55)

यहाँ 'आत्महत्या' जैसे अशुभ शब्द का प्रयोग न करके, उसके स्थान पर 'आत्मसंहार का पथ अपना लेगी' जैसी अत्यन्त कोमल शब्दावली का प्रयोग किया गया है।

(4) उन्हें छूते हुये वर्षा को कसम खानी पड़ी कि वह जगत–विसर्जन की बात नहीं सोचेगी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 86)

यहाँ पर वर्माजी ने 'मृत्यु' जैसे अमंगकारी शब्द के लिये 'जगत–विसर्जन' शब्द का प्रयोग किया है।

---

1. ध्वनि सिद्वान्त तथा तुलनीय साहित्य–चिन्तन : डॉ. बच्चूलाल अवस्थी (पृ.सं. 207)
2. शैली विज्ञान और प्रेमचन्द्र की भाषा, डॉ. सुरेश कुमार, (पृ.सं. 82)

(5) अब दूसरा कार्यक्रम जमुना में जल–समाधि का था।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 106)

यहाँ 'डूब कर आत्महत्या करने 'जैसे अशुभ शब्द के स्थान पर 'जल–समाधि' शब्द का प्रयोग किया गया है।

(6) सुजाता ने वैसे ही गम्भीर भाव से पॉलीथीन के थैले से एक लिफाफा निकाला और उसकी ओर बढ़ाया। वर्षा ने खोला, तो एक कार्ड था, "श्री तथा श्रीमती वर्धना अपनी बेटी सुजाता के मंगल परिणय के अवसर पर ...."

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 159)

युवतियों का सबसे बड़ा आभूषण लज्जा है। समाज भी युवतियों से लज्जाशीलता की अपेक्षा करता है। इस कारण विवाह के विषय में युवतियों का अपने मन की बात को स्पष्ट रूप से कहना एक वर्जना बन गया है। इसी प्रसंग के इस मंगलाभाषित को वर्माजी ने प्रयोग किया है।

इसी प्रकार वर्षा की बड़ी बहिन भी उससे विवाह करने के लिये इन शब्दों का प्रयोग करती है–

(7) अपना जीवन सँवारों बहन, जिज्जी ने कुछ वर्ष पहले कहा था। "अपना स्त्री–धर्म निभाओ बहन!" जिज्जी ने इस बार कहा था।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 184)

'स्त्री धर्म निभाओ' और 'जीवन सँवारो' शब्द विवाह करने की ओर ही अप्रत्यक्ष रूप से संकेत कर रहे हैं।

'मरना' अमंगलकारी शब्द है। अतएव वर्मा जी ने मंगलाभाषित शब्दों द्वारा इन दो–तीन प्रसंगों में इस बात की अभिव्यक्ति की है–

(8) "हर्ष के पिताजी गुजर गये।" उन्होंने कहा, "बँगले से तुम्हारे लिये फोन आया था।"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 188)

यहाँ पर मरने या देहांत होने के लिये 'गुजर गये' शब्दों का मंगलाभाषित प्रयोग किया गया।

(9) प्रभावशाली पति की अनुपस्थिति ने उनकी विवशता को तरल और पारदर्शी बना दिया था।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 192)

हर्ष के पिता नहीं रहे हैं। इस बात की अभिव्यक्ति के लिये उन्होंने मंगलाभाषित शब्द 'अनुपस्थिति' का प्रयोग किया है।

दिव्या कैंसर की मरीज है। अतएव उसकी कभी भी मृत्यु हो सकती है इसके लिये वर्माजी ने मंगलाभाषित शब्दों का प्रयोग किया है–

(10) "बस, एक ही इच्छा रह गयी है कि 'अनुपस्थित' होने से पहले तुम्हें दुल्हिन बनी देख लूँ।"

दिव्या मुस्करायीं।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 570)

लड़कियाँ अपनी प्रेम की अभिव्यक्ति करने में लज्जा का अनुभव करतीं हैं, इसके लिये वह मंगलाभाषित भाषा का प्रयोग करती हैं–

(11) "कब से हर्ष मेरा भावात्मक आधार रहा हो" शिवानी जैसे अपने में डूबी थी," उसको लेकर मैंने तमाम सपने बुने...... थे।" अन्तिम शब्द बोलने से पहले उसने विराम दिया।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 210)

अर्थालंकार

अर्थ को चमत्कृत या अलंकृत करने वाले अलंकार अर्थालंकार होते हैं। जिस शब्द से जो अर्थालंकार सधता है उस शब्द के स्थान पर दूसरा पर्यायवाची रख देने पर भी वही अलंकार सधेगा, क्योंकि इस जाति के अलंकारों का सम्बन्ध शब्द से न होकर अर्थ से होता है। अर्थालंकारों में पहला अलंकार है 'उपमा' जिसकी चर्चा ऋग्वेद से ही आरम्भ हो चुकी है। केशव ने 'कविप्रिया' में दण्डी के आदर्श पर 35 अर्थालंकार गिनाये हैं। जसवन्त सिंह ने 'भाषाभूषण' में 101 अर्थालंकारों की चर्चा की हैं दूलह के 'कविकुलकण्ठाभरण' में, जयदेव के 'चन्द्रालोक' और अप्पयदीक्षित के 'कुवलयानन्द के आधार' पर 115 अलंकारों की विवेचना है। वस्तुतः हिन्दी के रीतिकाल में नवीन अलंकारों का विकास नहीं हुआ, संस्कृत में अलंकारों की जो सीमा पूरी हो चुकी थी उसी की चर्चा भेदोपभेद गिनाकर की गयी।[1]

भाषा के विश्लेषण में अर्थगत सम्बन्धों के विविध प्रकारों से अलंकारों की निष्पत्ति होती है। ये सम्बन्ध सादृश्य, संदिग्धार्थता आदि पर आधारित होते हैं। साहित्य के दो पक्ष होते हैं अभिव्यंजना और अनुभूति। दोनों के साथ अलंकार का गहरा सम्बन्ध है। अलंकारों से अभिव्यंजना को बल मिलता है। इसलिये अनुभूति के सौन्दर्य की निष्पत्ति होती है। हरदेव बाहरी के अनुसार– 'अलंकार का अलंकार के लिये प्रयोग नहीं होता, प्रयुक्त स्पष्टता करने के लिये, बल प्रदान करने के लिये, तथा भावात्मकता की निष्पत्ति के लिये प्रयोग होता है।[2]

अर्थालंकारों का क्षेत्र व्यापक है। परन्तु सादृश्यमूलक अलंकारों का प्रयोग ही शैलीय प्रभाव की निष्पत्ति तथा पुष्टि में अधिक योगदान देता है। इसके अन्तर्गत उपमा, रूपक, उत्प्रेक्षा, अनन्वय, अपह्नुति, संदेह, भ्रांतिमान, प्रतीप, व्यतिरेक का समावेश किया जाता है। अर्थालंकारों के सम्बन्ध में महर्षि व्यास ने "अग्निपुराण में अलंकारों की परिभाषा को स्पष्ट किया है–

"अर्था अलंकार रहिता विधवैय भारती।"

वर्माजी ने अपनी भाषा में उपमा, रूपक, उत्प्रेक्षा, अपह्नुति एवं विरोधाभास, अलंकारों का

---

1. आधुनिक हिन्दी व्याकरण और रचना, डॉ. वासुदेव नन्दन प्रसाद, दशम संस्करण, पृ. सं. 320
2. हरदेव बाहरी : 'हिन्दी सेमैटिक्स पृ. सं. 314–15

प्रयोग अधिक किया है।

उपमा :

वस्तुस्थिति एवं चरित्र–चित्रण के वर्णन में वर्माजी ने उपमा का आश्रय लिया है–

(1) इस नाटकीय दृश्य के तीनों दर्शक आवक् थे। जैसे मंत्रबिद्ध से बाप–बेटी को देखे जा रहे थे।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 16)

(2) अपनी देह के प्रति उत्सुकता इस एहसास का दूसरा चरण थी। कमरा बंद करके सिलबिल ने उज्जयिनी की अभिसारिका के **समान** कदली स्तंभन–सी जंघाओं का चिकनापन महसूस किया, मालविका के **समान** वक्ष पर चंदन का लेप लगाया, इंदुमती के **समान** कमलनाल को दोनों उरोजों के बीच में रखकर सौन्दर्य का प्रतिमान निर्धारित किया।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 43)

(3) मिट्‌ठू मोहाविष्ट एक कदम आगे आया, "तुम्हारी इन झील–सी आँखों में कभी मैंने अपने सपनों के अक्स ढूँढ़े थे......."

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 67)

(4) वह मयंकदत्त का भेजा कुसुम स्तवक है, जिसे मैं अपनी कामनाओं का इन्द्रधनुष कहती थी। मेरी कामनाओं के समान इसके कुसुम भी मुरझा रहे हैं......"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 92)

(5) सिलबिल ने अपनी ओर से बहुतेरी कोशिश की, उसके अनुरोध पर रीटा अपने कार्ड पर 'कामसूत्र' लेकर आयी, तमाम नायिका–भेदों एवं प्रणय–समागमों के अंतर्गत रेहाना की चरित्रगत विशेषतायें खोजीं, पर सर्प–कुण्डली के समान उसके अभिव्यक्ति–द्वार पर संकोच एवं झिझक का पहरा बना रहा।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 98)

(6) कुछ महीनों बाद आखिर शर्माजी का अन्तर्देशीय आ ही गया। कवि कुलगुरु की परम्परा में आरम्भ ही उपमा से हुआ था, 'संतान कमान से छूटा तीर है, जो कभी प्रत्यावर्तन नहीं करती, ऐसा वाङमय में कभी दृष्टिगत नहीं हुआ।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 112)

(7) जैसे मध्यकालीन रणबाँकुरे रनिवास की रम्य कामनियों के सामूहिक जौहर के साथ शत्रु–संहार के लिये युद्धोन्मत्त हो जाते थे, वैसे ही वर्षा निजी आंशकाओं और निजी राक्षसों से आँखें मूँदने की कोशिशों के साथ नीना को साधने में पूरी तरह तल्लीन हो गयी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 133)

(8) अगले वर्ष जब वर्षा होली पर दो दिन के लिये आयी, तो 'अपने–अपने नर्क' और हर्षवर्धन–प्रसंग

से राग जैजैवंती की तरह बज रही थी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 141)

(9) वर्षा ने सन्तोष के भाव से लक्ष्य किया कि शिवानी की आँखें और वक्ष–रेखायें भी उसके आगे वैसी ही हैं, जैसे उज्जयिनी की श्री के सामने विदिशा, पर शिवानी न सिर्फ बड़े पावन ढंग से गोरोचन–सी गोरी थी, बल्कि उसमें गहरा सहज आकर्षण था।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 160)

(10) शिवानी ने बैल–बॉटम और फ्रिल वाला टॉप पहन रखा था। कानों में बड़े–बड़े कुण्डल। पीठ पर लहराते कटे हुये बाल। काले लाइनर से हाइलाइट की गयीं आँखें और स्वप्निल–से 'लुक' के लिये ग्रे शैडो। सनसेट पिंक लिपस्टिक में भरे–भरे होंठ ऐसे लगते थे, जैसे पकी हुयी कलियाँ टूटने को मचल रहीं हों।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 160)

(11) हर्ष के चेहरे का वह भाव उसे बहुत दिनों तक याद रहा। उसमें वैसा ही आतंक था, जैसे कोई अबोध बालक मेले में अकेला छूट गया हो।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 190)

(12) देखते–देखते सतवंती की आँखों से टप–टप आँसू बहने लगे, "मेरे–जैसी नसीबजली चिराग लेकर ढूँढ़ने से भी नहीं मिलेगी ....।"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 204)

(13) अगले पल झोपड़ी दिवाली–सी जगमगा उठी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 297)

(14) जो अभिनेत्री ड्रामा स्कूल के दाखिला इंटरव्यू में डरी हुयी हिरनी की तरह पलकें झपकाती दाखिल हुई थी, इसी फिल्म में भूखी, कुद्ध शेरनी की तरह कला–आखेट में तल्लीन दिखायी देती है।"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 365)

(15) दिन में दस बार 'ऊप्स', 'टच वुड' और 'जिज्जी, कम ऑन यार।' का आलाप लेने वाली, 54 सुल्तानगंज में पल्लवित झल्ली का ऐसा रूप उसे माधवी–लता के विकास के समान स्वाभाविक ही प्रतीत हुआ।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 486)

(16) पिता दूसरे बेडरूम में लिटा दिये गये थे। नर्म कंबल ओढ़े थे। वह ऐसे बालक की तरह मुस्कराये, जिसकी शरारत पकड़ ली गयी हो।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 495)

(17) "बताऊँ" ऐसे विनोदी ढंग से नयी पीढ़ी को वह पहली बार संबोधित करते थे, "जैसे अश्वमेघ यज्ञ के समय रघु का अश्व पहली बार राज्य से बाहर निकला, वैसे ही मैंने पहली बार उत्तर

प्रदेश से बाहर पाँव रखा।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 494)

(18) "उन्होंने कहा, हर्ष का रोल को निभाने का थ्रस्ट मुझे आलीवियर की याद दिलाता, उसके समृद्ध स्वर और डिक्शन में बर्टन की नफासत और चमक है," चिंतामणि बोला, "ब्रेंडो की तरह हर्ष का ग्राफ टेढ़ामेढ़ा नहीं जाता। उसकी शैली क्लिफ्ट की तरह प्रखर, जटिल तथा सूक्ष्म है। वह डि नीरो के समान अपने चरित्र–विन्यास में बारीक नक्काशी करता है और उसमें डीन की तरह अपनी भूमिका से भी परे जाने की सामर्थ्य है।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 541)

वर्माजी के उपमान भावात्मक, चित्रात्मक, व्यंग्यात्मक आदि अनेक प्रकार के हैं। उनकी भाषा में उपमा से चित्रात्मक प्रभाव की सृष्टि वस्तुवर्णन से सन्दर्भित निम्नलिखित वाक्यों में हो रही है :

(19) वर्षा ने शैम्पेन का एक घूंट लिया .... जीभ पर तरलता का ऐसा लतीफ स्पर्श मुँह से पेट तक जैसे पुण्य–रेखा–सी खिचने लगी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 72)

(20) अगर अभी सिलबिल को नहीं बाँध पाये, तो बरसाती नदी की तरह कूल–किनारे तोड़ देगी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 85)

(21) सिलबिल ने धीरे–धीरे साँस छोड़ी। तन–मन आह्लाद और तृप्ति से शिथिल था। अपनत्व एवं सुरक्षा की ऐसी अनुभूति पहले कभी नहीं हुई थी–जैसे वह हर्ष के साथ दुर्गम पर्वत के शिखर पर पहुँच गयी हो, जहाँ सिर्फ मौन, शान्ति और सुकून था।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं.)

वर्माजी ने भावात्मक प्रभाव की सृष्टि करने में उपमा की सहायता ली है– निम्नलिखित वाक्यों से यह स्पष्ट हो जायेगा–

(22) फिर शिवानी सहसा सिसकने लगी। फिर दोनों हाथों में मुँह छिपा लिया। रुदन में विवशता और शर्मिंदगी की रंगत थी, जैसे ऊँचे उड़ते कपोत को पंख की अक्षमता के कारण किसी टहनी पर बसेरा लेना पड़े।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 212)

(23) वर्षा की देह पर हर्ष के चुम्बनों की स्मृतियाँ सुगबुगायीं, पलकें झपने लगीं। उसे अपने होठों पर हर्ष के दबाव की ऊष्मा का अनुभव हुआ। फिर तत्क्षण मन में एक कातर पुकार गूँजी, जो देह की भीतरी नसों में प्रतिध्वनित हुई। जैसे प्राचीन, भग्न खंडहर में कोई चीखे और अबाबीलों वाली ऊँची मेहराबों वाली जाली–लगे खंडित गलियारों में प्रेतात्माओं–सी बौरायी अनुगूजें सुनायी दें। (मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 232)

(24) धवल मृगशावक–सा बाल–मेघ काँच पर अपने सींग मारता–सा लगा।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 359)

(25) वर्षा को कब से आशंका थी कि यह क्षण आयेगा और वह आ गया था। अँधेरी रात में अचानक बारिश की तरह।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 403)

(26) धारावाहिकों का सैलाब आते ही 'भारतीय सिनेमा के पुनरुत्थान' में जुटे कला क्रियाशील वैसे ही बौरा गये जैसे मद बहने से हाथी उन्मत्त हो जाता है।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 439)

भावाधिक्य की व्यंजना के लिये चरित्र चित्रण के सन्दर्भ में उपमा का प्रयोग वर्माजी ने इन वाक्यों में किया है–

(27) आदित्य के प्रभावशाली चेहरे पर आयु, थकान एवं आक्रोश की रेखायें इस तरह फुंकारते हुये खड़ी हो गयीं, जैसे सोये हुये नाग को निर्ममता से छेड़ दिया गया हो।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 148)

(28) "तो कैसा है ? उसकी आकुलता घायल पंछी के परों की फड़फड़ाहट की तरह वातावरण में भर गयी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 403)

मूर्त वस्तुओं के लिये अमूर्त उपमानों का प्रयोग भी सुरेन्द्र वर्माजी ने अपनी भाषा में उपमा के अन्तर्गत किया है–

(29) पारस्परिक सम्बन्धों को लेकर हर्ष का तौर–तरीका उजागर नहीं होता था। उसका भाव पावन रहस्य जैसा था।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 234)

(30) इतना याद है कि चुम्बन ऊष्म और लंबा था। शुरू के कुछ क्षण वर्षा असमंजस में रही। जैसे सिद्धार्थ ने होंठ नहीं, अजनबी भाषा का पत्र आगे बढ़ाया है।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 302)

(31) रेत के उजले विस्तार में और असमतल ढूहों के बीच जैसे वही दो चेतन प्राणी थे। शेष सब मिथ्या था– किसी पुराने जन्म की स्मृति की तरह।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 304)

(32) "तुम्हारा स्पर्श मेरे लिये ऐसा ही है। जैसे मोरचंग पर किसी की साँस ......" जुगनी ने तान छेड़ दी थी ....।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 307)

(33) वर्तमान की इस ऊँची प्राचीर से अतीत का वह क्षण कितनी दूर जान पड़ता था, जैसे किसी

प्राचीन युग का ध्वंसावशेष हो।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 315)

(34) हुसैन दृश्य को ऐसे समझा रहे थे, जैसे अस्तित्ववाद का खुलासा कर रहे हों।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 30)

(35) लाइफ के प्रतिनिधि से जॉन ने कहा था, "अपनी उम्र और अनुभव से मैं वर्षा वशिष्ठ को डराने की कोशिश की थी, पर सींग उठाये साँड की तरह उसने मुझ पर कलात्मक हमला बोल दिया।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 475)

(36) "जो कुंजी दिव्या जी ने मुझे थमायी थी, वह अमूल्य धरोहर की तरह आज भीं मेरे पास सुरक्षित है और लम्बे, दुर्गम पथ के अनेकानेक अवरोध उससे दूर हुए हैं, जो कलात्मक भी थे और व्यक्तिगत भी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 471)

(37) जैसे नायक के अभ्युत्थान और सौभाग्य के वर्णन में कविकुल गुरु प्रफुल्लित होकर हरिणी छंद का प्रयोग करते थे, वैसे ही पिता के आगमन से वर्षा भी प्रसन्न हो गयी थी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 494)

(38) जैसे विदूषक माढव्य का आखेट के लिये वन में पड़े रहने का कष्ट दुष्यन्त की आँखों में अचानक शकुन्तला के बस जाने से राजधानी वापस लौटने के निर्णय को टालते जाने के कारण 'जले हुये गाल पर फोड़ा निकल आने के समान दुगुना हो गया था, कुछ–कुछ वैसे ही अनुभूति उसी शाम को वर्षा को हुई, जब उसने सुदूर नरीमन प्वांइट के हाइ–राइज रहेजा चैंबर्स अठारहवें फ्लोर पर स्थित मल्टीनेशनल जेनिथ इण्डिया के दफ्तर में दो टेक्स के बीच विमला के साथ गप्पें लगाते हुये यकायक झल्ली को एंट्री लेते हुये देखा।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 497)

(39) पिता आवेश में आकर 'रघुवंश' का उद्धरण देने लगे, "राजा दशरथ के समान अब मेरी दशा प्रातःकाल के उस दीपक जैसी हो गयी है, जिसका तेल चुक गया हो और जो बस बुझने ही वाला हो।"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 499)

उपमा द्वारा स्पष्टीकरण में सफलता इस वाक्य से प्रमाणित हो रही है जिसमें स्थिति की गम्भीरता तथा अस्थिरता का सफल स्पष्टीकरण दिखाई पड़ता है–

(40) "मेरा दिल ऐसी नाव है, जिसकी पतवार किसी और के हाथ है।"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 347)

वर्मा जी ने कहीं–कहीं पर शब्द या पदबन्ध के स्थान पर वाक्य श्रृंखला का प्रयोग किया है। इन्हें दीर्घ उपमान का नाम दिया जा सकता है। वर्माजी ने दीर्घ उपमानों के प्रयोग में विशेष रुचि

प्रदर्शित की है। जहाँ उन्हें अभिव्यंजकता के अनुरोध पर प्रतिपाद्य को व्यंजना के आवरण में प्रस्तुत करना अभीष्ट होता है। वहाँ वे दीर्घ उपमानों का प्रयोग करते हैं–

जब वर्षा वशिष्ठ अपना नाम सिलबिल से वर्षा कर लेती है तब उसके पिता उसके इस नाम को रखने का आधार जानना चाहते हैं तब वह दीर्घ उपमान द्वारा अपने भाव अभिव्यक्त करती है–

(41) "मैंने तुम्हारी आलमारी से 'ऋतुसंहार' लेकर पढ़ी थी। छहों ऋतुओं में मुझे सबसे अच्छी वर्षा लगी।" एक पल का विराम देकर उसने उद्धरण प्रस्तुत कर दिया, "देखो प्रिय, जल की फुहारों से भरे हुए मेघों के मतवाले हाथी पर चढ़ी हुई, चमकती विद्युत–पताकाओं को फहराती हुई, और मेघ–गर्जना के नगाड़े बजाती हुई यह अनुरागी जनों की मनमायी वर्षा राजाओं का–सा ठाठ बनाये यहाँ आ पहुँची है।"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 17)

गायत्री काफी सुन्दर है उसकी गुणशीलता का वर्णन वर्मा जी ने दीर्घ उपमान द्वारा किया है–

(42) नाइन झुनियाँ को यह कसीदा तोते की तरह रट गया था, "लड़की क्या है, साच्छात उर्वशी है। सीता मैया–सा तेज है चेहरे पर। अन्नपूर्णा की तरह पूरी गृहस्थी सम्भालती है।"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 23)

उत्प्रेक्षा :

चरित्र चित्रण के सन्दर्भ में उत्प्रेक्षा से भावात्मकता की निष्पत्ति के अनेक प्रसंग वर्माजी की भाषा में मिलते हैं–

(1) यह खोयापन कुछ क्षणों के लिये ही विलुप्त हुआ था, जब उसने गेट के बाहर से आखिरी बार उनकी ओर ऐसे देखा, जैसे किसी राजहंसिनी द्वारा टूटे हुए कमल के डंठल से उसके तंतु खींचे जा रहे हों।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 59)

(2) भाई ऐसे चौंके, जैसे साँप पर पाँव पड़ गया हो।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 123)

(3) अंत में लिखा था, तुम्हारी स्मृति हमेशा मेरे साथ रहती है।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 229)

(4) सूर्यभान ने उठते हुये हाथ जोड़े और चंचल मुस्कान से कहा, 'आपके सामने मेरे पाँव वैसे ही काँप रहे हैं, जैसे किशनलता के सामने अचानक ऑलीवियर आ गये हों।"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 443)

(5) शुरु के कुछ क्षण वर्षा असमंजस में रही जैसे सिद्धार्थ ने होंठ नहीं, अजनबी भाषा का पत्र

आगे बढ़ाया।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 302)

(6) दक्षिण के पांड्य राजाओं ने ताम्रपर्णी और समुद्र–संग्राम से बटोरे मोती रघु को ऐसे सौंप दिये थे, मानो अपना बटोरा हुआ यश ही उन्हें दे डाला हो।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 494)

(7) वर्षा ने अपने सूखे होठों पर जीभ फेरी। फिर अस्फुट स्वर में कहा, ''मेरे वास्ते चन्द्रमा हमेशा के लिये बुझ गया है ....''

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 547)

(8) वर्षा के मन के बाहरी स्तर पर ही सुजाता की प्रतिक्रिया रजिस्टर हुई। उसने एक बार मुँह उठाया, सुजाता की आँखों में, जहाँ हमेशा उसके लिये अण्डरस्टैंडिंग और सहानुभूति रही थी, आज आक्रोश झलझला रहा था वर्षा का सिर फिर झुक गया।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 554)

(9) पांडेजी ने वर्षा को यों देखा, जैसे उसने उनकी नाव में छेद कर दिया हो।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 554)

(10) वर्तमान की इस ऊँची प्राचीर से अतीत का वह क्षण कितनी दूर जान पड़ता था, जैसे किसी प्राचीन युग का ध्वंसावशेष हो।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 315)

कही–कहीं अलंकार द्वारा व्यंग का प्रभाव भी वर्माजी ने निष्पन्न किया है –

(11) हुसैन दृश्य को ऐसा समझा रहे थे, जैसे अस्तित्ववाद का खुलासा कर रहे हों।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 340)

(12) यहाँ निर्देशक दो दर्जन चाय का भुगतान भी ऐसे देता था, जैसे कमाठीपुरा की नगरवधू उधार करने वाले ग्राहक को आतिथ्य दे रही हो।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 439)

(13) धारावाहिकों का सैलाब आते ही 'भारतीय सिनेमा के पुनरुथान' में जुटे कला क्रियाशील वैसे ही बौरा गये, जैसे मद बहने से हाथी उन्मत्त हो जाता है।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 439)

(14) इस कांड के बाद घर श्मशान हो गया। मानो यहाँ प्रेतों का निवास हो....... आपस में न बोलने की शपथ लिये हुये।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 79)

उत्प्रेक्षा द्वारा चित्रात्मकता की सृष्टि के उदाहरण निम्नलिखित हैं और सभी वस्तु वर्णन के सन्दर्भ में मिलते हैं–

(15) मेरी मतवाली चाल से बालू के दाने ऐसे छिटकते हैं, मानों गर्म कोयलों पर भूने जा रहे हों हरे चने ....'

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 303)

(16) फिर नदी यों तेजी से पीछे खिसकने लगी, जैसे कोई मछुवा जाल में फँसाकर खींचने लगा हो।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 305)

(17) 'मास्टर सीन' के त्रासद माहौल के बाद दोनों से मिलना वर्षा को ऐसा ही लगा, जैसे 'अनुरागी जनों को निर्मल सुगन्धित जल, धुले हुए भवन का तल और मनोहारी वीणा के गीत मिल गये हों।'

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 363)

रूपक :

वर्माजी की भाषा में रूपक अलंकार द्वारा नाना प्रकार के शैलीय प्रभावों की सृष्टि की गयी है। चरित्र वर्णन के सन्दर्भ में निम्नलिखित उदाहण दृष्टव्य है–

(1) होश सँभालने से लेकर अब तक हताशा, घुटन और आक्रोश का जो जहर वह बूँद–बूँद पीती आ रही थी, इन दो घंटों में वह न सिर्फ कपूर की तरह उड़ गया, बल्कि एक अनजाने सुख की तरंग से देह सिहर उठी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 38)

(2) "मेरी तुमसे यही एक विनती है। अगर मेरे लिये तुम्हारे मन में कुछ भी रहा है, तो उसी भावना की सौगन्ध, सुप्रिया पर उदासी की आँच न आने देना।"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 67)

(3) "मैं रंग अजगर हूँ।" स्नेह हँसे "न मैं चाकरी कर सकता हूँ, न मण्डी हाउस की सांस्कृतिक बाँबी के बाहर साँस ले सकता हूँ।"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 187)

(4) "हर्ष का ईगो किंगसाइज है पर वह भूल जाता है कि अब डैडी नहीं है।' सुजाता गुस्से से बोली।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 192)

(5) कच्ची उम्र ताश का जोकर है, जिसे विपरीत पक्ष अपनी सुविधा के अनुसार किसी भी जोड़ी में मिला लेता है, उसने सोचा।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 241)

(6) दोनों में भावना के अंकुर फूटते हैं।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 288)

(7) वे एक–दूसरे के बहुत निकट थे। आमने–सामने। इतना याद है कि चुम्बन ऊष्म और लंबा था। शुरू के कुछ क्षण वर्षा असमंजस में रही। जैसे सिद्धार्थ ने होंठ ही नहीं अजनबी भाषा

का पत्र आगे बढ़ाया हो। फिर लिपि के अनजान प्रतीक–चिन्ह जानी–पहचानी साँसों के दायरे में विलीन हो गये।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 302)

(8) ''कहती थी, औरत ऐसी बेल है, जिसमें ओस की बूँद गिरने से भी फूल आ जाता है।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 314)

(9) 'पैकअप' पर उसने छुटकारे की ऐसी साँस ली थी, जैसे मृत्युदंड पाये अपराधी को यकायक जीवन–दान मिला हो।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 349)

(10) रिपर्टरी के अन्तिम दौर में वह मदोन्मत्त साँड़ था, जिसे डॉक्टर अटल ही काबू कर पाते थे।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 431)

(11) सामने बैठे हर्ष को देखकर वर्षा मुस्करायी, ''मेरे प्रेमानंद मेरे सामने बैठे हैं''

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 437)

(12) ....यह महत्वाकांक्षा की परिणति थी और सपने की ताबीर...............

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 529)

चरित्र वर्णन के सन्दर्भ में भावाधिक्य की निष्पत्ति में रूपक को विशेष सफलता मिलती है। वर्माजी ने रूपक की इस शक्ति का लाभ उठाया है–

(13) वर्षा जीवन में किसी धार्मिक, नैतिक धुरी की आवश्यकता रेखांकित करती, तो हर्ष का प्रतिवाद होता, ''धर्म जिंदगी की आँखों पर लगा रंगीन चश्मा है।''

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 166)

(14) मेरा दिल ऐसी नस है जिसकी पतवार किसी और के हाथ है।''

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 347)

(15) ''तब मैंने साहित्यिक कृतियों पर आधारित कई पटकथायें लिखी थीं।'' सिद्धार्थ ने करुण मुस्कान से कहा, ''यह सोचते हुए कि पता नहीं, कब मेरी भटकती नाव को कोई प्रकाश स्तम्भ मिल जाये।''

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 371)

(16) ''चुका लोगी।'' विमल मुस्कराये, 'वह तुमने 'सौम्यमुद्रा' का संवाद सुनाया था न .... 'मेरे जीवन का अश्रु–युग समाप्त हो रहा है अब मुस्कान–युग की बेला है।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 375)

(17) ''तो कैसा है ?'' उसकी आकुलता घायल पंछी के परों की फड़फड़ाहट की तरह वातावरण में भर गयी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 403)

(18) तुम्हारे भीतर सूनेपन की आँधी तो नहीं चल रही।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 450)

रूपक से चित्रात्मकता का बिम्ब खड़ा में भी सहायता मिलती है–

(19) ''जलती जमीन में जो भावना काली थी, वह 'आकाशदीप' में फूल बन गयी।''

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 404)

(20) धीरे–धीरे लहूलुहान सालों के बोझ तले सपने की साँसें टूट गयीं।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 423)

(21) तुम्हारी कितनी स्मृतियाँ मेरे तन–मन के साथ हैं। तुम्हारे विछोह की पीड़ा के दंश के साथ वे सुलगते अंगारे–सी दहक उठेगी .....आठों पहर मेरी भावनाओं को झुलसायेंगी मैं मूर्तिमान तुम्हारा समाधिलेख हूँ–मयंक।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 37)

रूपक द्वारा वस्तु वर्णन में भी सहायता मिलती है–

(22) ''इसमें समकालीन प्रेमभावना की उदास, संवेदनशील, कैलोडोस्कोपिक छवियाँ हैं।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 451)

(23) ''जिस दिन पहली फिल्म बनी, ईश्वर को नींद की गोली लेनी पड़ी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 464)

(24) ''क्यों ? यह तो आशा–महल है। यहाँ आकर सबके भीतर आशा का संचार होता है। सुप्रिया ने क्या कहा था, भूल गयीं ?''

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 469)

अपह्नुति :

अपह्नुति अलंकार के जितने भी प्रसंग हैं वह प्रायः पात्र–वर्णन एवं वस्तु–वर्णन के सन्दर्भ से सम्बन्धित हैं। कुछ उदाहरण इस प्रकार हैं–

(1) ''मधुरभाषिणी, तुम्हारे वचन अमूर्त ध्वनियाँ नहीं, पुष्पों की लड़ियाँ हैं, जो तन–मन को सुवासित कर देती हैं।''

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 30)

(2) मयंकदत्त से गुलदस्ता लेने के बीच 'यह कुसुम–स्तवक ही, मेरी कामनाओं का इन्द्रधनुष है कहते हुए वह हमेशा उसे 'मास्क' कर लेती थी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 35)

श्रुति और प्रशंसा का भाव भी अपह्नुति के माध्यम से प्रकट हुआ है–

(3) ''लड़की क्या है, साच्छात उर्वशी।''

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 22)

अपकर्ष व्यंजना के लिये भी अपह्नुति का प्रभावी प्रयोग इस उदाहरण में किया है–

(4) छोटे–बड़े बेडौल अक्षरों और आड़ी–तिरछी लकीरों में संवाद लिखे थे, 'यह इम्तिहान का रिजल्ट नहीं, मेरे अरमानों की चिता है।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 393)

विरोधाभास :

वर्माजी ने अपने उपन्यास में विरोधाभास का भी प्रयोग किया है। इसके कुछ उदाहरण निम्नलिखित हैं–

(1) "तुमने स्नेह को सामान्य व्यवहार में भी **रफ** होते हुये देखा है ? मुझे विश्वास है, वह **मुलायम** पति साबित होंगे .... भरोसे और समर्पण के योग्य।"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 254)

(2) वर्तमान की इस ऊँची प्राचीर से अतीत का वह क्षण कितनी दूर जान पड़ता था, जैसे किसी प्राचीन युग का ध्वंसावशेष है। क्या सचमुच **आज** की सम्पूर्ण, जीती–जागती वर्षा **हजारों साल** पहले की उस खंडित, जर्जर अनुभूति से निकली है ?

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 315)

(3) आत्मविश्वास से दीप्त, तेजस्वी हर्ष का ऐसा चेहरा वह पहली बार देख रही थी। मन का एक हिस्सा तत्काल **पिघल** उठा, पर जबड़े **कसते** हुये वर्षा ने अपने पर काबू पाया, "मुझे मुँह फेरना है या नहीं, यह पूरी बात सुनने के बाद तय करूँगी।"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 351)

उपरोक्त प्रसंगों में जीवन के उतार–चढ़ाव का वर्णन करते हुए वर्माजी ने विरोधाभास का आश्रय लिया है।

(4) "जो अभिनेत्री ड्रामा स्कूल के दाखिला इन्टरव्यू में डरी हुई **हिरनी** की तरह पलकें झपकाती दाखिल हुई थी, इस फिल्म में भूख, क्रुद्ध **शेरनी** की तरह कला–आखेट में तल्लीन दिखायी देती है।"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 365)

(5) "चुका लोगी।" विमल मुस्कराये, "वह तुमने 'सौम्यमुद्रा' का संवाद सुनाया था न ....'मेरे जीवन का **अश्रु–युग** समाप्त हो रहा है। अब **मुस्कान–युग** की बेला है।'."

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 375)

(6) शिवानी ने लिखा था, 'डैडी और भैया को तुम्हारे साथ मेरी मित्रता पर **गर्व** है, **शर्मिंदगी** नहीं।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 406)

(7) गायित्री के ब्याह पर भी 54, सुल्तानगंज में खुशी की हिलोर उठी थी, पर उसमें छुटकारे की भावना प्रधान थी। उस विवाह की प्रकृति ऐसी थी, जैसे लम्बे, दुरुह पथ पर चलते हुये कुछ

दुर्बल यात्रियों ने अपने ऐसे सहयात्री से **मुक्ति पा** ली हो, जो अपंग था। पर झल्ली की शादी भीतर से फूटने वाले **आह्लाद** का कारण बनी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 500)

(8) मम्मी ने जैसी दृष्टि से बच्चे को देखा, वर्षा पिघल गयी। फिर उसका चुंबन लेकर उन्होंने उसे छाती से लगा लिया.......... फिर वंश–परंपरा के अटूट रह जाने का **सुख** था या हर्ष की अनुपस्थिति का **दुःख** या दोनों .... कि मम्मी की आँखों से आँसू बहने लगे।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 558)

मुहावरा

मुहावरा – पु. (अ. मुहावरः)

1. वह शब्द, वाक्य या वाक्यांश जो अपने अभिधार्थ से भिन्न किसी और अर्थ में रूढ़ हो गया हो। 2. अभ्यास।[1]

मुहावरे भाषा की संरचना में अर्थमूलक घटक हैं। मुहावरों के प्रयोग द्वारा अभिव्यक्ति में उत्कृष्टता आ जाती है।[2]

डॉ. हरदेव बाहरी के अनुसार– "मुहावरों में विशद, चित्रात्मक तथा प्रभावशाली अर्थ की सत्ता होती है। मुहावरों में अमूर्तता की अपेक्षा मूर्तता, व्याकरणिक व्यवस्था की अपेक्षा सामासिकता, तर्क की अपेक्षा शक्ति की प्रधानता होती है। उनमें प्रत्यक्ष रूप से प्रभावित करने की और उत्तेजित करने की शक्ति होती है। मुहावरे भाषा की यौवन–सम्पन्न शक्ति और समर्थता के प्रतीक होते हैं।"[3]

हिन्दी–विश्वकोष में 'मुहावरा' का अर्थ इस प्रकार दिया गया है– "मुहावरा–संज्ञा पु.

1. लक्षणा या व्यंजना द्वारा सिद्ध वाक्य या प्रयोग, जो किसी एक की बोली या लिखी जाने वाली भाषा में प्रचलित हो और जिसका अर्थ प्रत्यक्ष से विलक्षण हो। जैसे–'लाठीखाना'

2. अभ्यास, आदत।"[4]

मुहावरेदार भाषा, यदि फरार के शब्दों में कहें तों हमेशा बिजली और बादलों की गर्जन–तर्जन जैसी समझी जाती है, क्योंकि उसका हमारे मन पर बिलकुल ऐसा ही प्रभाव पड़ता है, जैसा अचानक किसी तूफान आ जाने का। मुहावरेदार भाषा के सम्बन्ध में लिखते हुए वह कहता है, 'जब हम मुहावरेदार भाषा का प्रयोग करते हैं, तब कदाचित् हमारी भाषा अधिक तेजी से समझी जाती है और साधारण गद्य की भाषा के प्रयोगों की अपेक्षा इनके द्वारा हमारे मन की बात भी अधिक

---

1. मानक हिन्दी कोश, चौथा खण्ड 'सं. रामचद्र वर्मा (पृ.सं. 398)
2. हिन्दी शब्दकोश, प्रथम संस्करण (पृ.सं. 667), डॉ. हरदेव बाहरी
3. हिन्दी शब्दकोश, प्रथम संस्करण (पृ.सं. 255), डॉ. हरदेव बाहरी
4. मुहावरा मीमांसा, डॉ. ओम प्रकाश गुप्त, हैण्ड

स्पष्टता से व्यक्त हो जाती है।[1]

इन्दौर–सम्मेलन के अध्यक्ष–पद से भाषण करते हुए अमर आत्मा महात्मा गाँधी ने सन् 1918 ई. में एक स्थल पर कहा था, "भाषा का मूल करोड़ों मनुष्य–रूपी हिमालय में, मिलेगा और उसमें ही रहेगा।[2] अर्थात् 'बापू की कल्पना का समाज केवल कुछ पढ़े–लिखे लोगों का समाज नहीं है, उसमें तो देहात के वे किसान और मजदूर भी शामिल हैं, जिन्होंने कभी स्कूल का मुँह तक नहीं देखा। वास्तव में हिमालय से निकलती हुई गंगाजी के अनन्त प्रवाह के समान लोकव्यापक तथा लोकप्रिय और मुहावरेदार भाषा ऐसे ही समाज की भाषा हो सकती है। केवल कुछ पढ़े–लिखे लोगों के वर्ग से निकली हुई भाषा अधिक देर तक नहीं टिक सकती। गाँधी जी के अगले वाक्य से यह बात बिल्कुल स्पष्ट हो जाती है। वह कहते हैं, "हिमालय में से निकलती हुई गंगा जी अनन्त काल तक बहती रहेंगी। ऐसा ही देहाती हिन्दी का गौरव रहेगा और, जैसे छोटी–सी पहाड़ी से निकलता हुआ झरना सूख जाता है, वैसी ही संस्कृतमयी तथा फारसीमयी (वे–मुहावरा) हिन्दी की दशा होगी।"[3]

'भाषा में सौन्दर्य लाने के लिये मुहावरों, कहावतों और अलंकारों आदि से भी सहायता ली जाती है। इन सभी की भाषा में एक विशेष और निजी स्थान होता है। कहावतों और अलंकारों की तो सब जगह उतनी आवश्यकता नहीं होती, पर मुहावरेदारी और बोलचाल की भाषा तथा शिष्ट–सम्मत प्रयोगों के ज्ञान की हर जगह आवश्यकता होती है। जो भाषा वे–मुहावरा होगी या शिष्ट–सम्मत न होगी, वह जरूर खटकेगी।"[4]

किसी भाषा के मुहावरों को देखने से यह स्पष्ट हो जायगा कि स्नेह, प्रेम अथवा सौहार्दपूर्ण वार्तालाप से सम्बन्ध रखने वाले मुहावरे उसमें बहुत कम हैं। जबकि उत्तेजना, निन्दा अथवा व्यंग्य करने वाले मुहावरों की सर्वत्र भरमार रहती है।[5]

प्रेम, परोपकार और सेवा में व्यंग्य अथवा विडम्बना को स्थान ही कहाँ है, वहाँ तो दो हृदय, त्याग, अपार कष्ट–सहिष्णुता, लगन और आत्म विस्मृति की मूक भाषा में बातचीत करते हैं। जो कुछ बात होती है, बिल्कुल स्पष्ट और साफ और सीधी होती हैं उसमें किसी प्रकार का घुमाव–फ़िराव या दुराव–छिपाव नहीं होता। इसलिये स्मिथ का कहना है कि "मानव–स्वभाव की उच्च भावनाओं से अधिक सजीव और चलते–फिरते मुहावरे नहीं बनते हैं तथा द्वेष, स्पर्धा, बैर और निन्दा से सम्बन्ध रखने वाले प्रयोग संख्या में भी बहुत अधिक हैं और भावव्यंजकता में भी"। यह कथन बिलकुल ठीक ही है। हमने कितने ही व्यक्तियों को और विशेषतया बूढ़ी स्त्रियों को देखा है

---

1. ओरिजिन ऑफ लैंग्वेज, पृ. 129, भावार्थ ही लिया है। (मुहावरा मीमांसा, पृ. 322)
2. राष्ट्रभाषा हिन्दुस्तानी (दोबाल) गाँधी जी। मुहावरा मीमांसा, पृ. 394
3. राष्ट्रभाषा हिन्दुस्तानी (दोबाल) गाँधी जी। मुहावरा मीमांसा, पृ. 344
4. अच्छी हिन्दी, पृ. 20 (मुहावरा मीमांसा 115)
5. मुहावरा–मीमांसा, डॉ. ओम प्रकाश गुप्त, पृ. 125

कि घरेलू काम–धन्धों अथवा साधारण व्यवहार में तो वे बड़ी सीधी–सादी ग्रामीण भाषा का प्रयोग करती हैं, किन्तु किसी कारण आवेश में आ जाने अथवा घर की बहू–बेटियों को डाँटते–फटकारते समय या किसी पड़ोसिन से लड़ते समय उसमें कहावत और मुहावरों की लड़ी –सी बँध जाती हैं। उनका एक–एक वाक्यांश बिलकुल नपा–तुला और 'बलवता प्रेरित इषुकेनैव वेगाख्येन व्यापारेण वर्मच्छेद मुरोभेदं प्राणहरणं च रिपोर्विधत्ते' की उक्ति के समान लक्ष्य–भेदी होती है।[1]

मुहावरा शब्द की परिभाषा करते हुए हम कह सकते हैं कि–

"लोकभाषा के साँचे में ढल–ढल कर निकलने वाले वे वाक्यांश जो केवल लक्षणा अथवा व्यंजना द्वारा अपना अर्थ प्रकट करते हैं और व्याकरण नियमों से नियंत्रित नहीं होते, मुहावरा कहलाते हैं।"[2]

कहावतें या लोकोक्तियाँ मानव जाति के अनुभवों की सुन्दर अभिव्यक्ति हैं जैसे कोई व्यंग्य चित्रकार अपनी तूलिका की दो चार रेखाओं से इतना बड़ा आशय प्रस्तुत करता है कि जिसे अखबार के दो चार अग्रलेखों से भी स्पष्ट नहीं किया जा सकता, उसी प्रकार कहावत चंद शब्दों के माध्यम से बहुत बड़ा आशय खोलकर सुनने वालों के सामने रख देती है। किसी समाज विशेष की भाषा में प्रचलित कहावतों के आधार पर उस समाज की सभ्यता, रीतिरिवाज, धर्म तथा नीति विषयक कल्पनाओं का पता लगाया जा सकता है। डॉ. कन्हैया लाल सहल ने ठीक ही कहा है, "कहावतें मनुष्य–स्वभाव और उसके व्यवहार कौशल के सिक्के के रूप में प्रचलित होती हैं और वर्तमान पीढ़ी को पूर्वजों से उत्तराधिकार के रूप में प्राप्त होती हैं।"[3]

लोकोक्ति की एक–दो परिभाषाएँ यहाँ द्रष्टव्य हैं–

"वे लोक–प्रसिद्ध और लोक–प्रचलित उक्तियाँ, जिनकी एक विलक्षण ढंग से रचना हुई हो।"[4] –(इरेस्मस)

"वे भाषा के वे तीव्र प्रयोग, जो व्यापार और व्यवहार की गुत्थियों को काटकर तह तक पहुँच जाते हैं।"[5]–वेकन

कहावतें प्रायः सभी मानव व्यवहार को समेट लेती हैं। जीवन के सभी रंगों में रंग जाती हैं। कहावतों में किसी समूह विशेष की बुद्धिमत्ता का परिचय मिलता है। कभी पैनी, नुकीली टिप्पणी तो कभी सारगर्भित वक्रोक्ति और व्यंग्योक्ति से वे दिल बहलाती है। मनुष्य स्वभाव के विविध पहलुओं पर रोशनी डालने की कहावत की क्षमता बेजोड़ है। कभी हल्की–सी ठेस या कभी विनोदपूर्ण दृष्टान्त से वह जब भटकती हुई मानव जीवन के गहरे सिद्धान्तों को हमारे सामने खोल

1. मुहावरा–मीमांसा, डॉ. ओम प्रकाश गुप्त, पृ. 125
2. हिन्दी भाषा संरचना, डॉ. चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित, (पृ. 17), डॉ. प्रेमनारायण अवस्थी
3. भारतीय कहावत संगह– सं. विश्वनाथ दिनकर नरवणे, पृ. 6
4. मुहावरा–मीमांसा, डॉ. ओम प्रकाश गुप्त, पृ. 366
5. मुहावरा–मीमांसा, डॉ. ओम प्रकाश गुप्त, पृ. 366

देती है तो हम दंग रह जाते हैं। किसी आशय को सीधे ढंग से न कहते हुए, किसी उपमा, उत्प्रेक्षा, अर्थान्तरन्यास, या द्रष्टान्त का सहारा जब वह लेती है, तब तो उसके कल्पनाविलास का, प्रतिमा निर्मित की क्षमता का एक अटूट आनन्द मिलता है।[1]

कभी कहावत की जन्मदात्री कोई कहानी होती है, और उस कहानी का निचोड़ या सार उस कहावत में समाया हुआ रहता है, जो उस मनुष्य समूह का पथ समर्थक होता है। अब सार, विविध उपमाओं अलंकारों के द्वारा प्रदर्शित होता है और उस कहानी की घटना से मिलती जुलती सभी घटनाओं के समय तुरत अपनी जबान पर तिर आता है। किसी विशेष घटना का सामान्य अनुमान करने की जो प्रक्रिया है और उससे जो सूत्र बनता है वही कहावत है।[2]

वर्माजी ने मुहावरों की अभिव्यंजकता का भरपूर लाभ उठाते हुए अपनी भाषा में उन्हें महत्वपूर्ण स्थान दिया है। मुहावरों के द्वारा वर्माजी ने क्रोध, व्यंग्य, दुःख, प्रशंसा, विवशता, आश्चर्य, प्रसन्नता, क्षोभ, आदि अनेक प्रकार के भावों को प्रकट करने का अभूतपूर्व प्रयास किया है इनमें कुछ उदाहरण निम्नलिखित हैं–

(1) किशोर भी मन–ही–मन सिहर उठा।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 16)

(2) माँ और गायत्री ने छुटकारे की सांस ली।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 16)

(3) कुछ समाचार पत्र लिये चौड़ी मुस्कान से निहारिका अन्दर घुसी, "अरे जिनकी तारीफ शहर की जबान पर है, वे दोनों घोड़े बेचकर सो रही हैं।"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 73)

(4) भाई भड़क उठे, "फिर वही ढाक के तीन पात। बी.ए. के बाद तुममें क्या सुर्खाव के पर लग जायेंगे ?

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 76)

(5) "एक बात नहीं, सैकड़ों बातें हैं। यहाँ कलेजा छलनी हुआ रखा है।"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 118)

(6) "आइ ऑब्जेक्टिली ऑब्जेक्ट सर। "वर्षा ने नरमी से व्यक्तिगत जीवन में चेखब का प्रिय मुहावरा दुहरा दिया।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 36)

(7) "दीदी।" वर्षा अचरज से भर उठी, "आइए आइए........ गंगू तेली के घर में राजा भोज पधारे हैं।"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 159)

---

1. भारतीय कहावत संग्रह– सं. विश्वनाथ दिनकर नरवणे, पृ. 4
2. भारतीय कहावत संग्रह– सं. विश्वनाथ दिनकर नरवणे, पृ. 4

(8) ''महोबा वाली !'' सुपारी काटते हुए फूलवती बोलीं, ''सुबह की भूली शाम को लौटी है।''

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 175)

(9) जब ऐसी भी गुंजाइश नहीं रह गयी, तो कुछ ने खून के आँसू रोते हुए दिल्ली की सीमा छोड़ी थी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 186)

(10) ''तुम अपने पाँवों पर कुल्हाड़ी मार रहे हो।''

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 191)

(11) ''दीदी, मैंने इतने हाथ–पाँव जोड़े, रिपर्टरी मत छोड़ो, तो उलटे मुझे ऐसी जली–कटी सुना दी. ....'' वर्षा को जब्त करना पड़ा कि स्वर कहीं तरल न हो जाये।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 192)

(12) वर्षा को काटो, तो खून नहीं।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 199)

(13) तीन साल अलग रहने के ख्याल से ही मेरा कलेजा काँप जाता है।''

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 213)

(14) ''वर्षाजी, अब मैं आपसे कुछ कहूँ, तो यह सूर्य को दीपक दिखाना ही होगा।'' बहन बोली।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 215)

(15) फिर यदि उत्तर प्रदेश की विभूति उत्तर प्रदेश में ही रहे तो, इसे सोने में सुहागा ही कहा जावेगा।''

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 215)

(16) ''बेहतर हूँ वर्षा। ब्रेन हैमरेज से बाल–बाल बची हूँ'' और दर्द की लहर से शिवानी सहसा लरज गयी, ''सिस्टर'।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 230)

(17) वह एक ही धक्के में धराशायी हो रही है।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 232)

(18) शिवानी उदास चंचलता से मुस्करायी, ''और जब किसी की स्मृति से नींद उड़ने लगे, तो क्या यह भी प्रेम की उतनी ही सार्थक परिभाषा नहीं होगी ?''

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 232)

(19) ''वर्षा न होती, तो चतुर्भुज की हड्डी–पसली एक कर दी जाती।'' अनुपमा हँसी और खींचकर वर्षा को अपने साथ बिठा लिया।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 234)

(20) ''हमारी रसोई के बर्तन आपस में खटकते जरूर हैं, लेकिन बाहरी दुनिया के सामने हमें एकता

बनाये रखनी चाहिये।'' हर्ष संजीदा हो गया।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 234)

(21) स्नेह करुणा से मुस्कराये यह गौतम बुद्ध जैसी मुस्कान थी.........रंगमंचीय मानव–समुदाय के लिये सरोकार से भरी हुई, ''दो घोड़ों की एक साथ सवारी नहीं हो पाती।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 235)

(22) उसके स्वर में ऐसी ध्वनि थी कि वर्षा को लगा, जैसे अपराधी कह रहा हो कि अगर तुम पूछो, तो मैं बता दूँ कि मैने तुम्हारे घर में सेंध क्यों लगायी ?''

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 237)

(23) ''सहगल कुत्ता निकला। डैडी थे, तो कैसे दुम हिलाया करता था।'' हर्ष ने क्रोध से कहा।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 238)

(24) कलात्मक लालसा को कुछ लोग दुखते दाँत की तरह उखाड़ फेंकते थे।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 257)

(25) लगा, जैसे मन पर आ गिरी सिल हट गयी हो।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 280)

(26) वर्षा ने दहलीज पर पाँव रखा ही था कि जिज्जी ने सिसकी के साथ उसे गले से लगा लिया।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 282)

(27) उसके हास्यबोध के सामने बेचारी हेमलता की सिट्टी–पिट्टी गुम हो जायेगी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 284)

(28) ''मुझे कभी–कभी बहुत याद आती है, पर कलेजे पर पत्थर रख लेती हूँ।'

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 286)

(29) वर्षा को सिद्धार्थ की कुछ बातें विशेष रूप से पसंद आयी थीं– हर स्थिति में धीरज बाँधे रहना, आपा न खोना।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 302)

(30) स्नेह जी और चतुर्भज सुनेंगे, तो हमें कच्चा चबा जायेंगे।'' वर्षा मुस्करायी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 306)

(31) शिवानी के स्वर में विवशता थी, ''मेरा हाथ पाने के लिये अश्विनी को लोहे के चने चबाने पड़ेगे।''

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 308)

(32) ''पैकअप' पर उसने छुटकारे की ऐसी साँस ली थी, जैसे मृत्युदंड पाये अपराधी को यकायक जीवन–दान मिला हो।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 349)

(33) ''मुझे छुओ मत।'' वर्षा बौखला गयी, ''मेरा कलेजा छलनी हुआ रखा है।''

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 351)

(34) फिर होंठ खुलते–खुलते ठहर गये और चेहरे पर असहजता छा गयी, ''तुम तो मुझ से मुँह मत फेरो।''

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 351)

(35) वर्षा की बाँछें खिल गयीं।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 377)

(36) ''बाप रे, इतने बड़े स्टार को सामने देखकर मेरी तो सिट्टी–पिट्टी गुम हो गयी।'' अनुपमा हँसी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 380)

(37) ''तुमने निहत्थी शान्या, नीना और सुदर्शना के सीने में छुरा भौंका ?''

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 382)

(38) हमें इतना ही मालूम है कि पोथी पर, लिखा अक्षर पत्थर की लकीर होता है।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 405)

(39) अब पहली बार मेरे मन में प्रेम का बसंत आया है, तो तुम कानों में तेल डाले बैठे हो ?''

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 416)

(40) ''उन्होंने नहीं बताया, तो तुम्हारे मुँह में दही जमा था ?

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 428)

(41) हँसी के मारे उसके पेट में बल पड़ रहे थे।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 428)

(42) ऐसी 'मोटीवेटिड' ईश–आराधना के चलते अगर भविष्य वेत्ताओं की पौ बारह पायी जायें तो आश्चर्य नहीं होना चाहिये।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 436)

(43) मिसेज कुलकर्णी के यहाँ हुई झड़प के बाद रमन राजदाँ ने 'वर्षा वशिष्ठ ने कला सिनेमा की पीठ में छुरा भौंका'' शीर्षक से 'टाइम्स ऑफ इंडिया' में विस्फोटक लेख लिखा था।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 440)

(44) ''आप तो उल्टी गंगा बहा रही हैं मैडम !''

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 442)

(45) तुम अपनी मेहनत की कमाई के इतने पैसे भाभी को दे रही हो, उन्होंने तो तुम्हें कभी फूटी आँखों भी नहीं देखा।''

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 504)

(46) "सबसे पहले तो फूलवती मौसी की घिग्घी बँध जायेगी।"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 506)

(47) फिर कुछ ऐसे भी गाँठ के पूरे उनके पास पहुँचे, जो स्टार बनने के लिये तीन माह का लम्बा समय नहीं निकाल सकते थे।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 509)

(48) मेरा तो खून खौलने लगा।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 511)

(49) फिर नीम पर करेला चढ़ने के समान हर्ष के साथ वर्षा के सम्बन्ध की प्रकृति का भी उन्हें अंदाज हो गया था।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 532)

(50) मैं हक्का–बक्का रह गया।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 534)

(51) वर्षा के हाथ–पाँव फूल गये।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 535)

(52) कनिष्ठ होने पर भी वर्षा को फ़ोन कर दिया, इसलिये गीले कोयले–सी धुआँ दे रही है, वर्षा ने सोचा।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 538)

(53) शाम को पांडे के साथ नाटकीय समक्षता सम्पन्न हुई, "आप जिस डाल पर खड़ी हैं, उसी पर कुल्हाड़ी मार रही हैं।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 554)

(54) "आप जानते–बूझते मक्खी निगल रही हैं मैडम। मैं मुँह पर ताला कैसे लगा लूँ ?

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 554)

(55) मिट्ठू–कुछ आगे बढ़ आया, "तुम अपने मन पर पत्थर बाँध सकती हो।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 61)

(56) अट्टहास करते हुए पिता और भाई ने उसके घावों पर नमक छिड़का।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 93)

इस प्रकार सुरेन्द्र वर्मा ने उपन्यास की शैली को वैशिष्ट्य प्रदान करने के लिये अनेक विध मुहावरों का प्रयोग किया है। इन मुहावरों के प्रयोग से उनकी शैली में जीवंतता आ गई है।

विचलन

अर्थ और स्वरूप और प्रकार :

विचलन– पु. (सं.) (भू.कृ. विचलित)

1. ठीक या सीधा मार्ग छोड़कर इधर–उधर होना। पथ से भ्रष्ट होना (डेविएशन) जैसे– (क) मनुष्य का नैतिक विचलन (ख) प्रकाश की रेखाओं का विचलन।

2. जान–बूझकर या अनजान में अपेक्षापूर्वक अपने कर्त्तव्य या मत से हटकर इधर–उधर होना। कार्य, निश्चय या विचार पर दृढ़ न रहना। उत्क्रम से भिन्न।

Deviation- 1 (a) (v) The action of deviating (Deviate) : There was little deviation from his usual routine. 0 sexual deviation. (b) (c) an instance of this : a deviation from the rules.

2(v) (Politics) The action of moving away from the beliefs held by the group to which one belongs : Party ideologists accused her of deviation.

3(c) (Techn.) The amount by which a single measurement differs from the average a compass deviation of 5^0 (i.e. frontrul north).

'विचलन' काव्य (साहित्यिक) भाषा का तत्व है, सामान्य भाषा का नहीं। सामान्य भाषा और काव्य भाषा में अन्तर होता है। सामान्य भाषा का प्रयोग हम सामान्य की अभिव्यक्ति के लिये करते हैं परन्तु साहित्यकार की अनुभूति उसके व्यक्तित्व के अनुरूप सामान्य न होकर विशिष्ट होती और विशिष्ट की अभिव्यक्ति विशिष्ट भाषा का एक तत्व हैं। साहित्यकार की विशिष्ट अनुभूतियाँ का दबाव जब उसको सामान्य भाषा के नियमों का अतिक्रमण करने को मजबूर कर देता है तो वह सामान्य भाषा में विचलन, 'चयन', 'अप्रस्तुत' आदि भाषिक तत्वों का प्रयोग कर विशिष्ट भाषा का निर्माण करता है। इस प्रकार 'विचलन' सामान्य का अतिक्रमण है।

"सामान्य भाषा के नियम, बन्धन, चलन अथवा पथ को छोड़कर नये का अनुसरण करना, नये पथ पर चलना ही विचलन (Deviation), विपथन आदि है।"[3]

'सामान्य भाषा के सामान्य भाषिक नियमों के अतिक्रमण को ही 'विचलन' कहा जाता हैं क्योंकि उसके पीछे काम करने वाला तत्व और कुछ नहीं बल्कि कलात्मक संवेग की अपनी विशिष्टता रहती है वैसे उसके अन्य हेतु भी हो सकते हैं, यथा – अलंकरण शब्द–क्रीड़ा आदि। एक सच्ची कविता में 'विचलन' सामान्य उद्देश्य को पूरा करने का एक समर्थ अभिकरण है।'[4]

पश्चिम में 'पोयटिक लाइसेंस (कवि द्वारा ली गयी छूट) अथवा संस्कृत का प्रसिद्ध

---

1. मानक हिन्दी कोश, रामचन्द्र वर्मा, पाँचवां खण्ड पृ. 52
2. Oxford Advanced learner's dictionary of Current English, AS, Horn, P. 318 Fifth Edition.
3. डॉ. भोलानाथ तिवारी, शैली विज्ञान, (पृ.सं. 40)
4. डॉ. रवीन्द्र नाथ श्रीवास्तव, संरचनात्मक शैली विज्ञान, पृ. 49

कथन 'निरंकुशाः कवयः' (कवि निरंकुश होते हैं) इसी विचलन की ओर संकेत करते हैं। भारतीय काव्यशास्त्र के वक्रोक्ति–सम्प्रदाय की 'वक्रोक्ति' भी यही है। पश्चिमी सौन्दर्य शास्त्र तथा 'फोरग्राउंडिंग' पेशबन्दी शब्द भी इसी ओर संकेत करता है।

भारतीय काव्यशास्त्र की 'लक्षणा' और शैली विज्ञान का 'विचलन' एक–दूसरे के काफी निकट हैं। अन्तर केवल इतना है कि विचलन का क्षेत्र व्यापक है, उसमें पूरी लक्षणा (अपने भेद–उप भेदों सहित) आ जाती है, परन्तु पूरी लक्षणा में विचलन नहीं आ पाता क्योंकि ध्वनि–विचलन काव्य–शास्त्र नहीं होता।

पाश्चात्य विद्वानों के अनुसार 'विचलन' अथवा Deviation का लक्षण इस प्रकार है–

चैपमैन रेमण्ड के शब्दों में – "विचलन भाषा के प्रयोक्ताओं द्वारा सामान्य अभिव्यक्तियों का अतिक्रमण है।"[1]

जी.एन. लीच के अनुसार – "काव्य–भाषा भाषिक अभिव्यक्ति के सामान्य नियमों का विभिन्न तरीकों से कभी प्रत्यक्ष और कभी अप्रत्यक्ष अतिक्रमण करती है, यह अतिक्रमण ही विचलन है।"[2]

स्पीजर, पी. गेरार्ड जैसे विद्वान 'विचलन' को भाषा के सामान्य मानक से अतिक्रमण और उल्लंघन मानते हैं।[3]

परिभाषा एवं लक्षण सम्बन्धी बातों के अतिरिक्त भारतीय एवं पाश्चात्य विद्वानों ने 'विचलन' के सम्बन्ध में और भी कुछ कहा है, यथा–

मिश्र जी का इस सम्बन्ध में विचार है कि 'ये वस्तुतः काव्य भाषा के अपेक्षित अन्वय की पूर्ति के लिये ही आयोजित किये जाते हैं और इस दृष्टि से इन्हें 'विचलन' न मानकर काव्य भाषा की संरचना की दिग्बोधक चुम्बकीय सुई मानना चाहिए, जो काव्य के ध्रुव बिन्दु की ओर अभिमुख करने के लिये हर सम्भव मोड़ लेने के लिये तैयार रहती है। किन्तु जब तक इस ध्रुव गन्तव्य दिशा को संकेतित नहीं कर लेती, तब तक यह चंचल ही रहती है।[4]

मिश्रजी ने विचलन की अवस्थिति को कई स्थलों पर रेखांकित किया है –

(क) क्रम–भंग, इसका उद्देश्य क्रिया या कर्म में जिस किसी को पहले लाया जाता है, उसे ध्यान का केन्द्र बनाना होता है।

---

1. Deviation : Linguistic usage censidered to depart from normal expressions of the language (Linguistic and Literature . P 23
2. Poetic language may violate as deviate from the generally observed rules of the language in many different ways, some obious, some subtle (A linguistic guide to English)
3. डॉ. शिवशंकर सिंह, निराला की काव्य भाषा, पृ. 222
4. डॉ. विद्यानिवास मिश्र, रीति विज्ञान, पृ. 82

(ख) वाक्य में प्रत्याशित समनुहार या ऐग्रीमेंट (वचन, पुरुष, लिंग, काल आदि की अन्विति को तोड़ना), इसका उद्देश्य व्याकरणिक राशि (केटेगरी) को एक नई अर्थवत्ता प्रदान करना होता है।

(ग) एक जाति के पद को दूसरी जाति के पद के स्थान पर प्रयोग करके सतह पर व्याकरण भंग इस उद्देश्य से लाना कि जो क्रिया है वह कर्मरूप में परिवर्तित होकर या जो कर्म है, वह क्रिया बनकर अर्थ के आकस्मिक मोड़ को अधिक प्रखरता से व्यक्त करे।

(घ) वाक्य को सतही तौर पर अधूरा छोड़ देना .... इस प्रकार वाक्य अधूरा रह कर और अधिक ईप्सित वाक्यार्थ का व्यंजक हो जाता है।[1]

अरिस्टोटल ने इस विषय में कहा है कि–

'विचलन वाक्य–विन्यास को सामान्य मुहावरे की अपेक्षा अधिक प्रभावशाली बनाता है।[2]

एंक्विष्ट के शब्दों में– 'प्रसंग–सम्बद्ध प्रतिमानों से विचलन ही शैली है। यह शैली अवधारणा का मूल सिद्धांत है।''[3]

मिश्रजी ने विचलन को शैली का अपेक्षित गुण माना है।

विचलन के सम्बन्ध में भारतीय एवं पाश्चात्य विद्वानों के विचारों के अवलोकन के उपरान्त हम कह सकते हैं कि परम्परा का अतिक्रमण ही 'विचलन' है जो कि निश्चित सीमा तक काव्य–सौन्दर्य का सार्थक उपकरण एवं प्रभावाव्यंजक है।

'विचलन' सर्जनात्मक भाषा का तत्व होते हुए भी साहित्य में एक निश्चित सीमा तक ही उसकी सार्थकता है। यदि वह रचना के मूल स्वर को उद्घाटित करने में सफल सिद्ध होता है, अभिव्यक्ति को अधिकाधिक स्पष्ट तथा प्रभावोत्पादक बनाता है एवं उसके प्रयोग से शैली में संक्षिप्तता, रोचकता जैसे गुणों की सृष्टि होती है, तो भाषा में उसकी सार्थकता है। वरना यह दोष ही ठहरता है।

'विचलन मात्र विचलन के लिये नहीं होना चाहिये अपितु वह रचना के मूल स्वर को रेखांकित करे तभी सार्थक सिद्ध होगा।'[4]

प्रायः साहित्यकार छन्द की मात्रा अथवा तुक के लिये भी 'विचलन' का प्रयोग करते हैं परन्तु उसके कारण यदि रचना में कोई अटपटापन नहीं आता है तो वह सार्थक सिद्ध होगा वरना दोष माना जायेगा।

वस्तुतः सर्वोत्तम विचलन वही है जो या तो कुछ अतिरिक्त कहे या फिर रचना के मूल

---

1. डॉ. विद्यानिवास मिश्र, रीति विज्ञान, पृ. 76–77
2. डॉ. सिंह, निराला की काव्यभाषा, पृ. 321
3. डॉ. सिंह, निराला की काव्यभाषा, पृ. 322
4. शैली विज्ञान, डॉ. भोलानाथ तिवारी, (पृ.सं. 40)

स्वर को रेखांकित करे।''[1]

'विचलन' सोद्देश्य होना चाहिये। विचलन का मूल उद्देश्य आकर्षण है। उसके माध्यम से शैली में अब संक्षिप्तता, रोचकता, प्रभावोत्पादकता सम्प्रेषण आदि गुणों की सृष्टि हो जाती है, तो वह स्वयंमेव आकर्षक बन जाती है।

तिवारीजी के अनुसार – 'यह सोद्देश्यता विशिष्ट काव्यानुभव की अभिवयक्ति से जुड़े होने में है।[2]

विचलन भाषा में सभी स्तरों पर हो सकता है, यथा – ध्वनि–विचलन, शब्द–विचलन, काल–विचलन, क्रिया–विचलन, सह प्रयोग (विशेषण विपर्यय तथा मानवीयकरण) विचलन, क्रम, विचलन, मानक–विचलन, अर्थ–विचलन आदि।

ध्वनि–विचलन :

जब शब्द विशेष में मानक रूप में प्रयुक्त होने वाली ध्वनियाँ अपनी सामान्य व्यवहृति से भिन्न रूप में उपस्थित होती हैं तब वहाँ ध्वनि स्तरीय विचलन होता है।[3] ध्वनि विचलन का सर्जनात्मक प्रयोग साहित्यिक भाषा में मिलता है, यद्यपि इसके उदाहरण अपेक्षाकृत बहुत कम मिलते हैं।

सुरेन्द्र वर्मा के उपन्यास 'मुझे चाँद चाहिये' में अध्ययन करते समय कहीं–कहीं पर ध्वनि विचलन भी दृष्टिगोचर होता हैं उदाहरणार्थ –

(1) ''**बेशरम**, कैसे जबान लड़ा रही है।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 32)

यहाँ पर ध्वनि–विचलन को प्रयोग किया गया है। मूल शब्द बेशर्म होता है, जिसे इन्होंने परिवर्तित करके बेशरम कर दिया है।

(2) ''मुझे इस लड़की के **लच्छिन** ठीक दिखायी नहीं देते।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 34)

यहाँ पर 'लच्छिन' शब्द में ध्वनि–विचलन है क्योंकि मुख्य शब्द लक्षण होता है, उसको इन्होंने लच्छिन बना दिया है।

(3) **दर्दो**–गम के कतरे टप–टप करके नीचे गिर रहे हैं।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 51)

यहाँ पर लेखक ने ध्वनि–विचलन का प्रयोग किया हैं मूल शब्द 'दर्द होता है, जिसे इन्होंने परिवर्तित करके 'दर्दो' बना दिया है।

---

1. शैली विज्ञान, डॉ. भोलानाथ तिवारी (पृ.सं. 41)
2. शैली विज्ञान, डॉ. भोलानाथ तिवारी (पृ.सं. 41)
3. शैली और शैली विश्लेषण, डॉ. पाण्डेय शशि भूषण शीतांशु, पृ. 195

(4) छोटा–सा पत्र पढ़कर **उछाह** हुआ।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 80)

यहाँ पर उछाह शब्द में ध्वनि–विचलन है क्योंकि मुख्य शब्द 'उत्साह' होता है उसका इन्होंने उछाह बना दिया है।

(5) लेकिन चतुर्भज ने 'कभी न छोड़ूँ इस बैरी को, सुन लो **लोगों** कान **लगाय** की उद्घोषणा कर दी थी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 106)

यहाँ पर लेखक ने ध्वनि–विचलन का प्रयोग किया है। मूल शब्द लोग, लगाकर, होता है, जिसे इन्होंने परिवर्तित करके लोगों एवं 'लगाय' कर दिया है।

(6) भाई के ऊपर अपनी **गिरस्ती** के साथ–साथ परिवार का भी बोझ है।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 118)

यहाँ पर लेखक ने ध्वनि–विचलन का प्रयोग किया है। मूल शब्द 'गृहस्थी' होता है जिसे इन्होंने परिवर्तित करके 'गिरस्ती' बना दिया है।

(7) माशा जवाब देती है, मैं अपनी जिन्दगी का **सोग** मना रही हूँ।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 129)

यहाँ पर 'सोग' शब्द में विचलन है। मूल शब्द शोक होता है।

(8) उस **छुटकी**, **मुटल्ली** में ऐसा कुछ नहीं, जो उसे श्रेष्ठ अभिनेत्री बनाये।''

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 137)

यहाँ पर 'छुटकी' और 'मुटल्ली' शब्दों में विचलन है। मूल शब्द छोटी और मोटी होता है जिनको यहाँ पर विचलित रूप में प्रयुक्त किया गया है।

(9) ''बोलो'' इसी घर में तूने सुकुमार के बिना इतने **बरस** कैसे काट दिये ?''

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 196)

यहाँ पर 'बरस' शब्द में ध्वनि–विचलन है। मूल शब्द 'वर्ष' है जिसे इन्होंने बरस कर दिया है।

(10) जैसे वर्षा अपनी **दुहरी** जिंदगी के चमत्कार बोध से आलोड़ित हो उठी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 252)

यहाँ पर 'दुहरी' शब्द में ध्वनि–विचलन है, क्योंकि मूल शब्द 'दोहरी' होता है, 'दुहरी' नहीं। लेखक ने इसे विचलित करके 'दुहरी' बना दिया है।

(11) ''**इदर** से चला **गएला** है।''

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 321)

यहाँ पर 'इदर' और 'गएला' दोनों शब्दों में ध्वनि–विचलन है। क्योंकि सही वाक्य 'इधर

से चला गया है' होता है जिसे लेखक ने विचलित कर दिया है।

(12) ''**मय** उसकी हिस्ट्री **नई** रखता **बाई**।''

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 321)

यहाँ पर भी 'मय' एवं 'नई' शब्दों में ध्वनि विचलन हैं क्योंकि सही शब्द 'मैं', 'नहीं' होता है। जिसे इन्होंने विचलित करके 'मय' और 'नई' बना दिया है।

(13) वह आदमी क्षण भर रुका, फिर रूखे स्वर में बोला, ''**बाई** तुम टैक्सी में **जाके** बैठो। **अपुन** को लफड़ा **नई माँगता**।'

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 388)

यहाँ पर भी जाके, अपुन एवं नई मांगता शब्दों में ध्वनि–विचलन है। सही शब्द जाकर अपने को नहीं, चाहिये होता है जिनहें इन्होंने परिवर्तित करके जाके, अपुन, नई मांगता कर दिये हैं।

(14) वर्षा ने दो बड़े घूँट लिये, ''अभी फूलवती झाँसी देखे तो'' उसने अतिरंजना से नकल उतारी ''देखो तो महोबा वाली की छोकरियों को......... आसमान **पै** थिगली **लगावे** है।''

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 412)

यहाँ पर ध्वनि–विचलन का प्रयोग किया गया है। यहाँ पर 'पै', 'लगावे' शब्दों में ध्वनि विचलन हैं मूल शब्द 'पर', लगा रही है, होते हैं जिन्हें इन्होंने परिवर्तित करके पै, लगावे हैं। कर दिया है।

(15) आज हमेशा के जैसा **सिंगार**–पिटार भी नहीं था।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 487)

यहाँ पर ध्वनि–विचलन का प्रयोग किया गया है। यहाँ पर सिंगार' शब्द में ध्वनि–विचलन है। क्योंकि मूल शब्द 'श्रंगार' होता है जिसे इन्होंने परिवर्तित करके 'सिंगार' कर दिया है।

(16) पर हर्ष के **नैश**–जागरण के कारण एक पड़ोसी ने मैनेजर से शिकायत कर दी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 507)

यहाँ पर लेखक ने ध्वनि–विचलन का प्रयोग करके 'नैश' शब्द को निर्मित किया है। क्योंकि मूल शब्द 'निशा' होता है। जिसे इन्होंने परिवर्तित करके 'नैश' कर दिया है।

(17) धूप से लापता रेगिस्तान यकायक फूलों की क्यारी बन गया, जिसमें बारीक छेदों वाले **फुहारे** से पानी दिया जा रहा था।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 42)

यहाँ पर लेखक ने ध्वनि–विचलन का प्रयोग किया है। यहाँ पर 'फुहारे' शब्द में ध्वनि–विचलन है। क्योंकि मूल शब्द 'फव्वारे' होता है, जिसे इन्होंने परिवर्तित करके 'फुहारे' कर दिया है।

संज्ञा–विचलन

संज्ञा शब्द वाक्य में किसी–न–किसी कारक में आते हैं अतः विचलित संज्ञा प्रयोगों को कारकों के आधार पर विभक्त किया जा सकता है। उदाहरणार्थ–

कर्ता–कारक :

(1) ऐसा लगता था कि राजकुमारी अपनी सत्तर फीसदी **भावनायें** स्टेट बैंक ऑफ मगध के लॉकर में छोड़ आयी हैं।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 50)

यहाँ पर लेखक ने राजकुमारी सौम्यदत्ता की भावनाओं को स्टेट बैंक ऑफ मगध के लॉकर में छोड़ आने की बात कही है। अतः यहाँ पर मानसिक सत्ता रखने वाली भावनाओं को लॉकर में रखने की बात कही है जो कि एक विचलित प्रयोग है। भावनायें नहीं भौतिक धन, सम्पत्ति को लॉकर में रखा जाता है।

(2) मन में **सूनेपन** के झोंके लहरा उठे।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 122)

सूनेपन (संज्ञा) को कर्ता कारक के स्थान से विचलित किया गया है। सूनेपन के झोंके नहीं लहराते, सूनापन मन को घेर लेता है, सूनापन मन में छा गया, जिसका यहाँ पर विचलित प्रयोग किया गया है।

(3) रुँधे हुए गले से तुम्हें विदाई दे रहे हैं– अजदक, फरहाद, स्टेनले, स्कंदगुप्त और कालिगुला/मेघदूत कमानी और श्रीराम थिएटर की आँखें नम हैं ....

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 198)

यहाँ पर कर्ताकारक के स्थान पर कर्मकारक है, और अभिनय के अभिनीत पात्र विदाई दे रहे हैं। जो कि अमूर्त हैं, साथ ही थियेटरों की आँखें नम हैं, यह प्रयोग है किन्तु स्थानों की आँखें नम नहीं होतीं, व्यक्तियों की होती हैं और न ही प्राचीन नाटकों के पात्र रुंधे हुये गले से विदाई दे सकते हैं। जो जीवित हों, जिनका अस्तित्व हो, वे ही ये कार्य कर सकते हैं।

(4) विश्वस्त सूत्रों का कहना है कि 'आकाशदीप' के दौरान प्रेमोच्छ्वास **आकाशचुंबी** हो गये।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 404)

यहाँ पर कर्ता कारक विचलन का प्रयोग हैं यहाँ पर प्रेमोच्छ्वास जिनकी सत्ता अमूर्त होती है उन्हें भौतिक इमारतों सदृश गगनचुम्बी बताया गया है। अतएव यह विचलन–युक्त प्रयोग है।

(5) दोनों के बीच में खड़ा कुरुवक ने नन्हीं सी **भौंक** दी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 410)

यहाँ पर कर्ता–कारक का विचलनयुक्त प्रयोग किया गया है। कुरुवक थोड़ी–सी भौंकी

को विचलित करके 'नन्हीं–सी भौंक दी' का प्रयोग किया है। भौंकने से आवाज निकलती है, किन्तु भौंकने का कोई आकार नहीं होता।

(6) "ऐसा समर्थ चरवाहा मैंने आज तक नहीं देखा।" वर्षा बोली, "ज्यादातर मुझे दुलत्ती झाड़ने लायक मिले हैं।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 427)

यहाँ पर कर्ता–कारक विचलन का प्रयोग किया गया है। जानवर दुलत्ती मारते हैं यहाँ वर्षा जो एक लड़की है वह दुलत्ती झाड़ रही है अतएव यह एक विचलन–युक्त प्रयोग है।

कर्म–कारक :

(1) मई के अन्तिम सप्ताह में उसने अपने गिने–चुने कपड़े तैयार कर लिये।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 64)

यहाँ 'मई के अन्तिम सप्ताह में' कर्म कारक है पर उसे यहाँ कर्ता–कारक के रूप में प्रयुक्त किया है।

(2) और 54, सुल्तान गंज डंक अपनी सम्पूर्ण तीक्ष्णता एवं गहनता के साथ एक ही क्षण में चुभा।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 71)

यहाँ 54, सुल्तान गंज का डंक में कर्मकारक है पर उसे कर्ता–कारक के रूप में प्रयुक्त किया गया है। साथ ही 'डंक' स्थानों के नहीं चुभते, डंक तो किसी कीड़े आदि के चुभते हैं।

(3) यहाँ निर्देशक को कोई घास नहीं डालता।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 248)

यहाँ कर्म–विचलन का प्रयोग किया गया है क्योंकि घास जानवरों को डाली जाती है, लेकिन निर्देशकों को नहीं। अतएव यह एक विचलन–युक्त प्रयोग किया गया है।

(4) कलात्मक लालसा को कुछ लोग दुखते दाँत की तरह उखाड़ फेंकते थे।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 257)

यहाँ पर कर्म–विचलन का प्रयोग किया गया है क्योंकि कलात्मक लालसा को भूला, तो जा सकता है, किन्तु उखाड़कर नहीं फेंका जा सकता है।

(5) "तुम्हारा स्पर्श मेरे लिये ऐसा ही है जैसे मोरचंग पर किसी की साँस ...."जुगनी ने तान छेड़ दी थी.........

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 307)

यहाँ पर कर्म को कर्ता एवं क्रिया दोनों के बाद कर दिया गया हैं जिससे विचलन उपस्थित हो गया है।

(6) वी.सी.आर. को भी अतृप्त आकांक्षाओं के कोल्ड स्टोरेज में रखना होगा।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 330)

यहाँ पर वी.सी.आर. को अतृप्त आकांक्षाओं के कोल्डस्टोरेज में रखने की बात कहीं है। किन्तु वी.सी.आर. भौतिक वस्तु है उसे अमूर्त अतृप्त आकांक्षाओं के कोल्डस्टोरेज में नहीं रखा जा सकता है। अतएव यह एक विचलन–युक्त प्रयोग है।

(7) शुभ तथा मंगलकारी तत्वों की पास रखने का मोह ऐसा **बौरा** गया था कि तुलसियानी ने अपनी कॉकरस्पेनियल का नाम 'जुबिली' रखा था।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 436)

यहाँ पर कर्म–विचलन का प्रयोग किया गया है। मोह बौराता नहीं है, आदमी बौराता है।

करण–कारक :

(1) उसने निर्जीव हाथों से मग थाम लिया।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 58)

यहाँ पर लेखक ने करण–विचलन का प्रयोग किया है क्योंकि निर्जीव हाथ मग नहीं थाम सकते और यदि कुछ थामते हैं तो वे निर्जीव नहीं हो सकते।

(2) सिलबिल को भीतर से आते देख, वे क्रोध से दहाड़े।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 66)

यहाँ पर करण–विचलन का प्रयोग किया गया है क्योंकि व्यक्ति के साथ चिल्लाना क्रिया का प्रयोग होता है और शेर, चीते, बाघ जैसे जानवरों के साथ 'दहाड़ना' का।

(3) 'निसार' की भूमिका करने वाला मकरंद वर्षा की तुलना में अपनी श्रेष्ठतर पृष्ठभूमि के कारण आत्मगौरव से छलका हुआ था।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 111)

यहाँ पर करण–विचलन का प्रयोग किया गया है। यहाँ पर अमूर्त भाव के साथ छलकना क्रिया प्रयुक्त की गयी है, द्रव्य छलकता है।

(4) रीटा ने रुआँसी मुस्कान से अनुग्रह व्यक्त किया।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 152)

यहाँ पर करण–विचलन का प्रयोग किया गया है। मुस्कान रुआँसी नहीं होती, यदि वह रुआँसी होगी, तो मुस्कान नहीं होगी।

(5) भावना के स्तर पर रीटा तृप्त और छलछलायी थी, पर कला के स्तर पर असुरक्षा एंव संदेह, सोख्ते पर गिरी बूँद–से फैलते जा रहे थे।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 194)

यहाँ यह करण–विचलन का प्रयोग किया गया है क्योंकि कला के स्तर पर असुरक्षा एवं संदेह बढ़ते हैं, फैलते नहीं।

(6) नक्सलवादी हिंसा से पश्चिम बंगाल की चूलें हिल चुकी थीं।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 259)

यहाँ पर करण–विचलन का प्रयोग किया गया है क्योंकि किसी स्थान की सीमाओं में हलचल होने लगती है, चूलें नहीं हिलतीं।

सम्प्रदान कारक विचलन :

(1) नयी उम्मीद के मौसम को मुस्कान की एक रेखा और आँखों की लमहे भर की चमक से झलका दिया।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 301)

यहाँ पर सम्प्रदान–विचलन का प्रयोग किया गया है क्योंकि सम्प्रदान को कर्ता के रूप में प्रयुक्त किया गया है। लेकिन उम्मीद का मौसम नहीं होता है, सर्दी, गर्मी, वर्षा के मौसम होते हैं।

(2) शिवानी के स्वर में विवशता थी, " मेरा हाथ पाने के लिये अश्विनी को लोहे के चने चबाने पड़ेंगे।"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 308)

यहाँ सम्प्रदान कारक विचलन है शिवानी से विवाह करने के लिये अश्विनी को कड़ी परीक्षा से गुजरना पड़ेगा। इस बात की अभिव्यक्ति के लिये वह कहती है कि अश्विनी को लोहे के चने चबाने पड़ेंगे। किन्तु कोई व्यक्ति लोहे के चने नहीं चबा सकता।

(3) तो कला–संग्राम की तैयारी के लिये यह मेकअप रूम है, वर्षा ने मंद स्मित से सोचा।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 336)

फिल्म–अभिनय के लिये मेकअप रूम की आवश्यकता होती है, किन्तु उसे युद्ध भूमि की संज्ञा दी गयी है, जबकि कला–संग्राम नहीं होता। अतएव यहाँ पर सम्प्रदान–विचलन का प्रयोग किया गया है क्योंकि सम्प्रदान को कर्ता के स्थान पर रख दिया है।

(4) अब जिन्दगी भर के लिये वह 'इमेज' के जुये में जोत दी गयी थीं।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 435)

यहाँ पर सम्प्रदान–कारक विचलन का प्रयोग किया गया है क्योंकि यहाँ पर कर्ता के स्थान पर सम्प्रदान कारक आ गया है। इमेज का जुआ नहीं होता जिसमें व्यक्ति को जीता जा सके।

अपादान–विचलन :

(1) क्यों लहूलुहान होते हुए थके हाथों की भोथरी कुदाल से अपरिचय के सह्याद्रि काटने की कोशिश कर रही है ?

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 345)

यहाँ पर अपादान विचलन का प्रयोग किया गया है क्योंकि अपरिचय के पर्वत को थके

हाथों की कुदाल से नहीं काटा जा सकता। अपरिचय तो एक अमूर्त भावना है जिसे थके हाथों की भोथरी कुदाल से नहीं काटा जा सकता है।

सम्बन्ध–विचलन :

(1) उदासी का ऐसा धुआँ मेरे अन्दर भर गया है, जो बाहर निकलने के लिये कोई गवाक्ष नहीं पाता।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 30)

यहाँ पर सम्बन्ध–कारक विचलन का प्रयोग किया गया है क्योंकि उदासी एक अमूर्त भाव है जिससे धुआँ भरने को नहीं जोड़ा जा सकता। आग का धुआँ होता है।

(2) जैसे समुद्र के हृदय में बड़वानल जला करता है, वैसे ही उसके भीतर पिता का आदेश धधक रहा है।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 32)

वर्षा के अन्दर पिता का आदेश धधक रहा है। आदेश गूंजता है एवं आग धधकती है अतएव यह एक विचलन युक्त प्रयोग है।

(3) आज पहली बार उसने उस डंक के जहरीलेपन को समझा, जिससे छटपटाकर दिव्या ने अपना शहर छोड़ा होगा।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 58)

यहाँ पर सम्बन्ध–कारक विचलन का प्रयोग किया गया है। क्योंकि किसी स्थान का डंक नहीं होता है, डंक तो कीट–पतंगों–बिच्छू आदि से अवश्य जोड़ा जाता है।

(4) वर्तमान रक्तपात से सना माँस का लोथड़ा था और भविष्य अँधेरे की वादी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 89)

यहाँ सम्बन्ध–कारक विचलन का प्रयोग किया गया है। क्योंकि वर्षा का वर्तमान रक्तपात से सना मांस का लोथड़ा था और भविष्य अँधेरे की वादी क्योंकि व्यक्ति रक्तपात से सना माँस का लोथड़ा हो सकता है किन्तु वर्तमान नहीं। अतएव यहाँ यह एक विचलन युक्त प्रयोग किया गया है।

(5) स्टीरियो पर धीमे सुरों में सितार की रागिनी चल रही थी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 119)

यहाँ पर सम्बन्ध–कारक विचलन का प्रयोग किया गया है सितार की रागिनी चलती नहीं है, बजती है, अतएव 'यह एक विचलनयुक्त प्रयोग है।'

(6) मेघदूत, फीरोजशाह कोटला, पुराना किला और त्रिवेणी थिएटरों की आँखें नम हैं।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 199)

यहाँ पर सम्बन्ध कारक विचलन का प्रयोग किया गया है। क्योंकि थिएटरों की आँखें

नम नहीं होतीं, व्यक्तियों की आँखें नम होती हैं।

(7) प्रजातन्त्र में दिनदहाड़े अभिव्यक्ति–स्वतांत्र्य का गला घोंटा जा रहा है।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 205)

यहाँ पर सम्बन्ध–कारक विचलन का प्रयोग किया गया है क्योंकि अभिव्यक्ति–स्वातंत्र्य का गला नहीं घोंटा जाता, व्यक्ति का गला घोंटा जाता है। अभिव्यक्ति स्वातंत्र्य को दबाया जाता है।

(8) 'लाइट्स' के साथ एक पल को वर्षा के दिल की धड़कन ठिठकी, फिर समतल हो गयी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 340)

यहाँ पर सम्बन्ध कारक विचलन का प्रयोग किया गया है। दिल की धड़कन ठिठकती नहीं, बल्कि रुकती है, व्यक्ति ठिठकता है।

(9) हुसैन और आसपास के लोगों की आँखों में तनाव भरी आशंका के अंगारे एकदम सुलग उठे।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 346)

यहाँ पर लोगों की आँखों में आशंका के अंगारे सुलग उठे हैं। किन्तु आशंका के अंगारे आँखों में सुलगना यह एक विचलन–युक्त प्रयोग है। क्योंकि आँखों में क्रोध झलकता है, अंगारे नहीं।

(10) डिप्रेशन की धुँध को गहराने वाली बारिश थोड़ी तेज हो गयी थी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 347)

यहाँ पर सम्बन्ध–कारक विचलन का प्रयोग किया गया है। क्योंकि वर्षा डिप्रेशन की धुँध को गहरा नहीं कर सकती। डिप्रैशन, अवसाद की अवस्था है, जो व्यक्ति में निराशा का भाव जगाती है। यह चूँकि मानसिक भाव है अतएव उसे वर्षा अधिक बढ़ा नहीं सकती है।

(11) एक बार फिर ठहाकों का मौसम आ गया।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 383)

यहाँ सम्बन्ध कारक में विचलन है। क्योंकि मौसम सर्दी, गर्मी, वर्षा के होते हैं, ठहाकों के नहीं।

(12) मेरी जिन्दगी दु:खों का जुलूस है अजय ने दुहराया।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 403)

यहाँ सम्बन्ध–कारक विचलन का प्रयोग किया गया है। क्योंकि जिन्दगी दु:खों का समूह होती है, जुलूस तो लोगों का होता है।

(13) तुम्हारे भीतर सूनेपन की आँधी तो नहीं चल रही।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 455)

यहाँ पर सम्बन्ध–कारक विचलन है सूनेपन की आँधी नहीं चलती है, सूनेपन की अनुभूति की जाती हैं आँधी तेज हवाओं की चलती है।

(14) गोपाल मिश्र हँसे, "अन्तर इतना ही है इसकी रचनायें सुनने की चीज नहीं, चखने की हैं।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 488)

यहाँ पर सम्बन्ध–कारक विचलन का प्रयोग किया गया है। क्योंकि रचनायें चखने की चीज बतायी गयीं हैं, जबकि रचनायें सुनी जाती हैं, चखी नहीं जातीं।

(15) सपने की इस साझेदारी के पीछे रंजना की अपना जीवन संवारने की चाह सुलग रही थी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 512)

यहाँ पर सम्बन्ध–कारक विचलन का प्रयोग किया गया है। लेकिन चाह नहीं सुलगती, आग सुलगती है। चाह तो जागती है।

(16) जब उसकी निगाह उठी, तो हर्ष के सामने एंड्री खड़ा था और हर्ष के चेहरे पर जैसा भाव था उससे पल भर को वर्षा की हृदय की धड़कन लड़खड़ा गयी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 535)

यहाँ पर लेखक ने सम्बन्ध–कारक विचलन का प्रयोग किया है। हृदय की धड़कन लड़खड़ाती नहीं हैं, व्यक्ति लड़खड़ाता है।

अधिकरण कारक विचलन :

(1) सिलबिल को अपनी कनपटी पर सुलगती झन्नाहट महसूस हुई।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 66)

यहाँ पर अधिकरण–विचलन का प्रयोग किया गया है। तेज झन्नाहट महसूस की जा सकती है किन्तु सुलगती हुई नहीं। क्योंकि आग सुलगती है अतएव यहाँ पर विचलन–युक्त प्रयोग किया गया है।

(2) तुम अपने मन पर पत्थर बाँध सकती हो।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 67)

यहाँ पर अधिकरण–विचलन का प्रयोग किया गया है। मन पर पत्थर नहीं बाँधा जा सकता है क्योंकि मन अमूर्त और चंचल होता है।

(3) उसके तन–मन में क्रांति हो चुकी थी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 121)

यहाँ पर अधिकरण–विचलन का प्रयोग किया गया है। क्रांति तन–मन में नहीं होती, अपितु विचारों में होती है।

(4) तीन वर्षों के निर्वासन, दुख तथा तनाव के कपाट पल भर में चरमरा गये।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 175)

यहाँ पर अधिकरण–विचलन का प्रयोग किया गया है। क्योंकि दुःख और तनाव मानसिक दशाओं के प्रतीक हैं। अतएव उन भावों से छुटकारा तो मिल सकता है किन्तु उनके कपाट

नहीं चरमरा सकते।

(5) मैं अपने संवाद और भावनाओं में डुबकी लगा रही हूँ।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 325)

यहाँ पर अधिकरण–विचलन पाया गया है क्योंकि संवाद और भावनाओं में डुबकी नहीं लगायी जाती, डुबकी तो पानी में लगायी जाती है।

(6) कितनी जोड़ी आँखें अपने चेहरे पर जमी महसूस होती थीं।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 339)

यहाँ पर लेखक ने विचलन–युक्त भाषा का प्रयोग किया है। चेहरे पर आँखें जमी महसूस नहीं होतीं, चेहरे को लगातार अनेक लोगों द्वारा देखा जा रहा है। यह प्रयोग अवश्य उचित है।

(7) दिल में उमंगों की घटाएँ छा रही हैं।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 340)

यहाँ पर लेखक ने अधिकरण–विचलन का प्रयोग किया है। दिल में उमंगों की अनुभूति की जाती है, उमंगों की घटायें नहीं छाती हैं। बादलों की घटायें छाती हैं।

(8) "उन्होंने नहीं बताया, तो तुम्हारे मुँह में दही जमा था।"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 428)

यहाँ लेखक ने अधिकरण–विचलन का प्रयोग किया है। क्योंकि दही मुँह में नहीं जमता बल्कि किसी बर्तन में जमाया जाता है। मुँह से बोल नहीं फूटते, ये प्रयोग अवश्य उचित है।

(9) माचिस मेज पर रखते हुए प्रेमिका की तस्वीर पर निगाह ठिठकती है।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 430)

यहाँ पर अधिकरण–विचलन का प्रयोग किया गया है। क्योंकि निगाह ठिठकती नहीं हैं, ठहरती हैं।

(10) उसे लग रहा था, वह हवा के पंखों पर सवार है।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 462)

यहाँ पर अधिकरण–विचलन का प्रयोग किया गया हैं क्योंकि कोई हवा के पंखों पर सवार नहीं हो सकता है।

(11) थिएटर गिल्ड में उसने अपने अभिनय के औजारों पर सान चढ़ायी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 408)

यहाँ पर लेखक ने अधिकरण–विचलन का प्रयोग किया है। क्योंकि अभिनय की प्रतिभा या क्षमता होती है, जिसमें धीरे–धीरे निखार लाया जाता है न कि अभिनय के औजारों पर सान चढ़ायी जाती है।

(12) थोड़ी देर बाद वर्षा अपने बिस्तर पर सोच रही थी, कुछ झीना अवसाद, थोड़ा गुनगुना पछतावा और अपने आप पर संदेह।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 473)

यहाँ पर अधिकरण–विचलन का प्रयोग किया गया है। अवसाद झीना नहीं होता, अवसाद कम या अधिक हो सकता है। पछतावा गुनगुना नहीं होता, पानी, दूध या पेय पदार्थ गुनगुने होते हैं।

(13) हम सबकी उम्मीदों पर तुमने कैसी स्याही पोत दी ?

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 540)

यहाँ पर अधिकरण–विचलन का प्रयोग किया गया है। क्योंकि उम्मीदों पर स्याही नहीं पोती जा सकती। हाँ उम्मीदों पर हम खरे नहीं उतर पाये, यह बात अवश्य हो सकती।

क्रिया–विचलन :

(1) इसके लिये और आसानी जुटायी दिव्या के इधर सुलभ एकाधिकार भरे सान्निध्य ने, जिसकी वजह से वह उमंगवश चहकती रहती थी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 71)

यहाँ पर क्रिया विचलन है। व्यक्ति के साथ चहकता का प्रयोग किया है किन्तु व्यक्ति नहीं चहकता है, पक्षी चहकते हैं।

(2) अर्धविक्षिप्त शान्या सशरीर यातनापुंज है, वास्तविकता की यथार्थ रेखायें धुँधला गयी हैं।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 109)

यहाँ क्रिया–विचलन का प्रयोग किया गया है। स्मृति धुंधली पड़ गयी हैं, यह प्रयोग उचित होता है, प्रकाश क्षीण होता है, यहाँ रेखायें धुँधली हो रही हैं।

(3) हँसी कुछ फड़कती रही – जैसे कपोत की गर्दन पर नस।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 114)

हँसी के साथ फड़कना' प्रयोग किया गया है किन्तु हँसी गूँजती है, फड़कती नहीं।

(4) अब उसे उम्मीद है अपने पति के कहीं दूर तबादले की, जिसके बाद वह अपनी भावना को 'जड़ समेत अपने मन से उखाड़ फेंकेगी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 129)

यहाँ भावना के साथ उखाड़ फेंकना क्रिया का प्रयोग किया गया है। पेड़ उखड़कर फेंके जाते हैं भावना नहीं। अतएव यहाँ क्रिया–विचलन है।

(5) कब मेरे पास इतना समय और साधन होंगे, जब मैं इस 'सांस्कृतिक सरोवर' में जी भरकर, किलोलें कर सकूँगीं, सिलबिल ने सोचा।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 144)

सामान्य प्रयोग में पक्षी किलोलें करते हैं। यहाँ किलोलों के साथ व्यक्ति का प्रयोग होने के कारण क्रिया–विचलन है।

(6) जी–हुजूरी के साथ थोथी ड्रांइगरूम कामेडी करने वालों की पीठ ठोकी गयी और कलात्मक, जीवंत रंगमंच चप्पलें चटखाता घूमता रहा।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 148)

सामान्य प्रयोग में कलात्मक, जीवंत रंगमंच की 'अभिव्यक्ति व्यर्थ गयी' क्रिया का प्रयोग होता है। यहाँ रंगमंच के साथ चप्पलें चटखाता घूमता रहा' क्रिया की छूट लेने के कारण क्रिया–विचलन है।

(7) हर्ष ने मित्रता के प्रारम्भिक दौर में ही बताया था कि भावना में शिकस्त खायी सुजाता के कारण हमारा पूरा परिवार भीतर से मुर्झाया हुआ है।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 159)

सामान्य प्रयोग में परिवार के साथ दुःखी होना क्रिया का प्रयोग किया जाता हैं यहाँ परिवार के साथ 'मुर्झाना' क्रिया का कारण क्रिया–विचलन है।

(8) अब कलकत्ते से उसका आसंग ऐसा हो गया था, जहाँ उत्तर भारतीय प्रेमिका को विरह ज्वाला में जलता छोड़कर प्रेमी किसी शस्य श्यामला एलोकेशी के साथ नया नीड़ बना लेता है।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 159)

सामान्य प्रयोग में प्रेमी के साथ घर बसा ले क्रिया का प्रयोग होता है। यहाँ नीड़ बना लेने का प्रयोग प्रेमी के साथ होने के कारण क्रिया–विचलन है।

(9) ''हर्ष के बिना घर काटने को दौड़ेगा।'' मम्मी बोली।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 189)

सामान्य प्रयोग में घर के साथ 'सूना लगेगा' क्रिया का प्रयोग होता है। यहाँ घर के साथ काटने को दौड़ना क्रिया का प्रयोग होने के कारण क्रिया–विचलन है।

(10) ''नाट्य–समीक्षक कहते हैं कि तुम्हारी आखें बोलती हैं।''

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 209)

प्रस्तुत पंक्ति में आँखों के साथ बोलना क्रिया का प्रयोग होने के कारण क्रिया–विचलन है। क्योंकि सामान्यतः आखें देखती हैं, मन के भावों को अभिव्यक्त करती हैं।

(11) और यकायक वर्षा की स्मृति में एक भूला–बिसरा चेहरा कौंधा।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 249)

प्रस्तुत पंक्ति में चेहरे के साथ कौंधना क्रिया का प्रयोग होने के कारण क्रिया विचलन है। क्योंकि सामान्य प्रयोग में चेहरे के साथ याद आया क्रिया का प्रयोग किया जाता है।

(12) यहाँ करुणा की उजली किरणें बिखरी हैं। (मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 252)

सामान्य प्रयोग में करुणा एक अमूर्त भावना है अतएव करुणा का भाव पैदा हो गया है, यह प्रयोग मिलता है। यहाँ करुणा की उजली किरणें बिखरी हैं क्रिया की छूट लेने के कारण क्रिया–विचलन है।

(13) पन्द्रह साल से मेरा चेहरा ऐसा ही चल रहा है।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 253)

वहाँ पर चेहरे के साथ चलना क्रिया प्रयुक्त होने के कारण क्रिया–विचलन है। सामान्य प्रयोग में चेहरा दिखाई दे रहा है, ऐसा प्रयोग मिलता है।

(14) प्रश्न सुलगता रहा।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 268)

यहाँ पर प्रश्न के साथ 'सुलगना' क्रिया के प्रयोग में विचलन युक्त प्रयोग मिलता है। सामान्य प्रश्न का अस्तित्व बना रहा, यह प्रयोग तो मिलता है।

(15) गाने के मद्धिम टुकड़े बीच–बीच में उड़ आते थे।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 304)

सामान्य प्रयोग में गाने के साथ आवाज आ रही थी क्रिया का प्रयोग मिलता है। किन्तु यहाँ गाने के साथ क्रिया का प्रयोग मिलता है। किन्तु यहाँ गाने के साथ क्रिया 'उड़ आना' में छूट लेने के कारण क्रिया विचलन है।

(16) धीरे–धीरे लहुलुहान सालों के बोझ–तले सपने की साँसें टूट गयीं।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 423)

सामान्य प्रयोग में 'सपने' एक साथ 'देखना' क्रिया का प्रयोग किया जाता है। यहाँ व्यक्ति के स्थान पर सपने की साँसें टूटने के प्रयोग में क्रिया की छूट लेने के कारण क्रिया–विचलन है।

(17) आँखें खिली हुईं।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 482)

सामान्य प्रयोग में आँखें के साथ 'प्रफुल्लित होना' क्रिया का प्रयोग होता है। लेकिन लेखक ने 'आँखों के साथ 'खिली हुईं' क्रिया की छूट ली है, अतएव यहाँ क्रिया विचलन है।

विशेषण–विचलन :

(1) 'अपने–अपने नर्क' के बाद सिलबिल ने महसूस किया कि रीटा के व्यवहार की वह छाया धीरे–धीरे धुँधली हो रही है।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 131)

सामान्य प्रयोग में व्यवहार के साथ परिवर्तन क्रिया का प्रयोग होता है किन्तु यहाँ व्यवहार की छाया धीरे–धीरे धुँधली हो रही है, यह प्रयोग मिलता है। अतएव यहाँ विशेषण–विचलन है।

(2) ममता ने भी मुस्कान के साथ 'कांग्रेचुलेशंस' कहा, पर उसकी आँखें ठंडी थीं।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 276)

यहाँ पर विशेषण–विचलन है आँखों के साथ 'ठंडी' विशेषण का प्रयोग किया गया है।

(3) कमरे में ऐसा मीठा अँधेरा.........

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 275)

यहाँ पर विशेषण विचलन पाया गया है। अंधेरे के साथ मीठा विशेषण का प्रयोग किया गया है।

(4) यों काली सुगबुगाहट 'दर्द का रिश्ता' के बाद ही शुरू हो गयी थी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 397)

यहाँ पर विशेषण–विचलन पाया गया है। सुगबुगाहट के साथ 'काली' विशेषण का प्रयोग किया गया है।

(5) मौन गहरा और लम्बा था।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 404)

यहाँ विशेषण–विचलन पाया गया है। मौन के साथ 'गहरा और लम्बा' विशेषण का प्रयोग किया गया है।

(6) सम्पन्न लोगों के कपटी मुकद्दमे वह नहीं लेता।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 430)

यहाँ विशेषण–विचलन पाया गया है। मुकद्दमे के साथ 'कपटी' विशेषण का प्रयोग किया गया है।

(7) इतनी मुख्य धारा की फिल्में करने के बाद अब भीतर कड़वा असंतोष और चिड़चिड़ी झल्लाहट भर गयी थी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 433)

यहाँ पर विशेषण–विचलन है। 'असंतोष के साथ 'कड़वा' और 'झल्लाहट' के साथ चिड़चिड़ा विशेषण का प्रयोग किया गया है।

(8) 'तुम्हारा मौन बहुत सर्द है'

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 451)

यहाँ विशेषण–विचलन मिलता है। मौन के साथ 'बहुत सर्द' विशेषण का प्रयोग किया गया है।

(9) मेरे संवाद भी बदरंग है।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 473)

यहाँ पर विशेषण–विचलन का प्रयोग किया गया है। क्योंकि संवाद के साथ 'बदरंग'

विशेषण का प्रयोग किया गया है।

क्रिया–विशेषण विचलन :

(1) मेरे भीतर अलेक्जेंडर महान्, सीजर, शेक्सपियर, नेपोलियन और सबसे खूंखार जंगली जानवर समाये हैं।'

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 132)

यहाँ पर क्रिया–विशेषण विचलन का प्रयोग किया गया है। यहाँ पर नीना के अदर इतने महान व्यक्ति और कई खूँखार जंगली जानवर समाये हैं। अतएव यह एक विचलन–युक्त प्रयोग है।

(2) लेकिन यह अलगाव जैसे चौखटे में जड़कर बैठक की दीवार में सुशोभित होने लगा।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 179)

यहाँ पर क्रिया–विशेषण–विचलन का प्रयोग किया गया है। यहाँ अलगाव चौखटे में जड़कर बैठक की दीवार में सुशोभित हो रहा है।

(3) लो, मेरे घर में ही विभीषण बैठा है।'' विमल हँसे।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 378)

यहाँ क्रिया–विशेषण–विचलन का प्रयोग किया गया है। क्योंकि विभीषण के रहने का स्थान लंका था, और यहाँ विभीषण विमल के घर बैठा है।

वाग्माग विचलन :

संज्ञा से क्रिया :

(1) ''अभी–अभी जागी हैं।'' नर्स ने कहा।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 230)

यहाँ पर 'जाग गयी है', के स्थान पर जाग संज्ञा से जागी क्रिया बनायी गयी है। अतएव यहाँ विचलन है।

(2) माशा ने गहरी सांस ली, ''मैं हूँ ऊबी, ऊबी''

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 44)

यहाँ पर 'ऊब' संज्ञा से 'ऊबी' क्रिया बना दिया गया है।

(3) लोग बतियाते हुये यहाँ से वहाँ लाइटें धकेल रहे थे।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 295)

यहाँ पर 'बात करते हुये' से लेखक ने बतियाते शब्द का प्रयोग किया है। अतएव यहाँ संज्ञा से क्रिया बना दिया है।

(4) उसमें से गिलहरी फिसलकर भागी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 301)

यहाँ पर संज्ञा 'भाग' गयी से क्रिया 'भागी' बना दिया गया है अतः यहाँ भाग गयी क्रिया होनी चाहिये। किन्तु लेखक ने इसको अधिक प्रभावी बनाने के लिये 'भागी' क्रिया बना दिया है।

(5) निर्देशक की स्थिति पर उपजने वाली वर्षा की सहानुभूति आज और गहरी हो गयी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 458)

यहाँ पर संज्ञा शब्द 'उत्पन्न' को उपजने' क्रिया में परिवर्तित कर दिया है। जबकि इस वाक्य में सही क्रिया 'उत्पन्न होने' का प्रयोग करना अधिक उपयुक्त होता।

(6) अगर हॉलीवुड की प्रकाशित पटकथायें वर्षा ने पहले से न पढ़ रखी होतीं, तो पैलेस ऑफ होप' की पटकथा देखकर वह चौंकी रह जाती।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 464)

यहाँ चौंक संज्ञा को चौंकी क्रिया में परिवर्तित कर दिया गया है। जबकि सही क्रिया 'चौंक कर' होना चाहिये थी।

(7) चरित्र–निरूपण ऐसे ही विकसित होगा और रिश्ते पनपेंगे।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 469)

यहाँ पर संज्ञा से क्रिया में परिवर्तन किया है। यहाँ लेखक ने संज्ञा 'पनपने' को क्रिया 'पनपेंगे' कर दिया है।

(8) प्रतिक्रिया के रूप में सिर्फ विस्मित–सा कौतुक भीतर जागा।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 479)

यहाँ पर 'जाग' संज्ञा शब्द से 'जागा' क्रिया बनायी गयी हैं अतः यहाँ पर संज्ञा से क्रिया विचलन किया गया है।

विशेषण से संज्ञा :

(1) मीरा ने बताया था, इंस्टीट्यूट के पाँच युवक अपने संघर्ष का पैनापन दूर करने के लिये घर जमाई बनने का शार्टकट अपना चुके थे।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 321)

यहाँ विशेषण 'पैना' से संज्ञा 'पैनापन' शब्द बनाया गया है। अतएव यहाँ पर विशेषण से संज्ञा विचलन हुआ है।

क्रिया से संज्ञा :

(1) उन्मुक्त हँसी थी, जैसे मुद्दत से बंद पंछी को नीले–नीले बादलों के बीच यकायक मुक्त किया गया हो और उसने बंदूक से छूटी गोली की तरह निर्बाध उड़ान भरी हो।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 268)

यहाँ पर क्रिया 'हँसना' को संज्ञा 'हँसी' बना दिया गया है।

(2) ऊँची, एकरस बिल्डिगों और संकरी, भीड़ की रेलपेल वाली सड़कों के बाद ऐसा हरा और

शांत खुलापन वर्षा को विभोर कर गया।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 336)

यहाँ पर क्रिया 'खुला' से संज्ञा 'खुलापन' बना दिया गया है।

(3) ईश्वर न करे कि हर्ष के साथ तुम्हारे रिश्ते में कोई 'धुँधलाहट' आये।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 274)

यहाँ पर क्रिया 'धुँधली' को संज्ञा धुँधलाहट बना दिया गया है।

(4) बम्बई से दिल्ली तक की लाइन खिलखिलाहट की तरंगों से आलोड़ित हो उठी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 387)

यहाँ पर क्रिया 'खिलखिलाना' से संज्ञा शब्द 'खिलखिलाहट' बना दिया गया है।

(5) उसकी आकुलता घायल पंछी के परों की फड़फड़ाहट की तरह वातावरण में भर गयी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 403)

यहाँ पर क्रिया 'फड़फड़ाना' से संज्ञा शब्द 'फड़फड़ाहट बना दिया गया है।

सर्वनाम :

(1) पुराने लोगों में सिर्फ हमीं तीन पापी बचे हैं।'' अर्चना मुस्करायी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 483)

यहाँ पर लेखक ने 'हमीं लिखकर' हम ही को संक्षिप्त कर दिया है। जिससे विचलन उत्पन्न हो गया था।

विशेषण से संज्ञा :

(1) मेरी चचंलता शांत रहती है।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 150)

यहाँ विशेषण 'चंचल से संज्ञा चंचलता' बनायी गयी हैं। यह एक विचलनयुक्त प्रयोग किया गया है।

मानक—विचलन

कभी—कभी साहित्यकार भाषा के मानक शब्दों से अपनी बात नहीं कह पाता है तो वह मानक शब्दों को छोड़ अमानक शब्दों का प्रयोग करता है, जिसे भाषा के मानक शब्दों से विचलन कहा जाता है। मानक विचलन साहित्यिक भाषा में दो प्रकार का मिलता है। कभी तो साहित्यकार अपने समय के मानक या परिनिष्ठित शब्दों को छोड़कर उनके स्थान पर लोक भाषा के शब्दों का प्रयोग करता है और साहित्य में प्रयुक्त न होने के कारण ऐसे शब्दों में ताजगी होती है। परिणामतः उनके द्वारा की गयी अभिव्यक्ति अधिक सशक्त और प्रभावी होती है। मानक विचलन के दूसरे शब्द वे होते हैं जो प्राचीन साहित्य से ले लिये जाते हैं।[1]

1. चित्रलेखा का शैली वैज्ञानिक अध्ययन, डॉ. जसपाली चौहान, पृ. 171

लिंग–विचलन :

(1) "जरूरी बात कर रहे हैं। आप लंच के बाद सिगनेचर करा लेंगे ?"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 58)

यहाँ चपरासी वर्षा वशिष्ठ से कह रहा है आप लंच के बाद सिगनेचर करा लेंगे। यहाँ लिंग–विचलन है। क्योंकि स्त्रीलिंग कर्ता के साथ स्त्रीलिंग क्रिया 'लेंगी' होना चाहिये था।

(2) सुल्तान गंज की मैरिन ड्राइव बनाते हैं।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 506)

यहाँ पर 'की' के स्थान पर 'को' होना चाहिये। यहाँ पर लिंग–विचलन है।

(3) सूरजमुखी चाँद का चकोर हो।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 42)

यहाँ पर लिंग–विचलन है क्योंकि यहाँ पर चाँद की चकोर' के स्थान पर चाँद के चकोर' प्रयोग मिलता है।

(4) पीछे दूर उजास फूट रही थी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 357)

यहाँ पर लिंग–विचलन है क्योंकि यहाँ उजाला 'फूट रही थी' का प्रयोग किया गया है।

अन्वय–विचलन :

(1) सिद्धार्थ कुछ पल ठहर कर विनीत भाव से बोला "क्या मैं यह अनुरोध कर सकता हूँ कि आप सम्भव हो, आज कल शाम तक मुझे सिक्रप्ट के बारे में अपनी प्रतिक्रिया बता दें ?

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 288)

यहाँ पर अन्वय–विचलन है। उदाहरण के लिये 'तुम' के साथ क्रिया में 'ओ' प्रत्यय लगाते हैं (तुम चलो)। कहना न होगा जब आप में आदर सूचक भाव होता है अतः आपके साथ 'बता दें' क्रिया हुई है जबकि 'बता दीजिये' क्रिया प्रयुक्त होनी चाहिये थी।

(2) "कृपया जोर से न डाँटें श्रीमान।"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 111)

यहाँ पर अन्वय विचलन हैं कृपया के साथ 'डाँटिये' क्रिया उपयुक्त लगती है, जिसने इन्होंने डाँटें कर दिया है। जो आज्ञार्थक वाक्यों में उपयुक्त होती है।

(3) "आप कृपया बात करके देखें।" सिद्धार्थ ने नरमी से कहा।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 289)

यहाँ पर भी 'आप के साथ देखें' क्रिया आयी है। अतएव अन्वय–विचलन का प्रयोग किया गया है।

(4) "आप कृपया मुझे एक दिन का समय दें।" वर्षा ने कहा। (मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 332)

यहाँ पर 'आप' के साथ 'दें' क्रिया आयी है। किन्तु सही क्रिया 'दीजिये' होना चाहिये थी। अतएव यहाँ अन्वय–विचलन है।

क्रम–विचलन :

(1) स्नेह का मुँह तमतमा गया, "नहीं जा सकता। मैने इन लोगों को खाने पर बुलाया हैं इन्हें छोड़ने नहीं जायेगा।"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 278)

यहाँ पर वाक्यों में क्रम विचलन है। यहाँ वह 'कर्ता' को वाक्य के अन्त में रखा गया है जबकि उसे वाक्य में सर्वप्रथम आना चाहिये था।

(2) तब संदर्भ दूसरा था।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 280)

यहाँ पर 'दूसरा'शब्द पर जोर देने के लिये उसे वाक्य में बाद में रखा गया है।

अर्थ–विचलन :

उपन्यास की भाषा में अर्थ–विचलन भी मिलता है। विशेषतया संज्ञा–विचलन या सह–प्रयोग विचलन के उदाहरणों में, अर्थ–विचलन भी है।

(1) "लो, भावनायें बेचने वाली बनिया आ पहुँची।" स्टूडियो गेट से भीतर घुसते हुए आत्मग्लानि की यह स्थायी टेक हो गयी थी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं.)

भावनायें बेची नहीं जाती हैं और बनिया सामान बेचते हैं भावनायें नही। भावनायें बेचने वाली बनिया में साथ प्रयुक्त होने के कारण विचलन है। यहाँ पर लेखक 'बनिया' शब्द से उस अर्थ का बोध यहाँ नहीं कराना चाहता जो इस शब्द से हिन्दी के सामान्य प्रयोग से होता है। यहाँ पर 'बनिया' सामान बेचता है और अभिनेता भी फिल्मों में कृत्रिम भावों को अभिनीत कर पैसा अर्जित करता है। अतएव उसे भी बनिया की संज्ञा दी गयी है। अर्थात् शब्द का प्रयोग परम्परागत प्रयोग से हटकर एक नये अर्थ में किया गया है।

अर्थ स्तर पर विचलन :

सुघटित वाक्य–रचनापरक विचलन वस्तुतः वाक्यस्तर का विचलन नहीं है। यह अर्थ स्तर का विचलन है, क्योंकि इसकी सत्ता अस्वीकार्यता पर आधारित है। ऐसे विचलन में बाह्य संरचनात्मक स्तर पर वाक्य पूरी तरह व्यावहारिक और सुगठित होता है, किन्तु अर्थस्तर पर वह प्राथमिक रूप में सहज स्वीकार्य नहीं हो पाता। इसीलिये एक्विस्ट ने अस्वीकार्यता को व्याकरण से सम्बद्ध नहीं मानकर सूचक और सूचित समुदाय की मान्यता से सम्बद्ध माना है। रचना में वह स्वीकार्यता सन्दर्भ–निर्भर होती है। स्वीकार्यता कभी सान्दर्भिक शून्य में नहीं बनती, वह सन्दर्भ–सापेक्ष्य होती है। इसलिय पाठक, श्रोता, गृहीता एक सुघटित वाक्य को किसी एक स्थल पर तो स्वीकार्य

मान सकता है, पर दूसरे स्थल पर उसे ही अस्वीकृत हो सकता है। उदाहरण के लिये कोई ऐसा वाक्य जो कविता में तो स्वीकार्य हो सकता है, पर दुकान पर सामान खरीदने की साम्प्रेषणिक भाषा में नहीं।[1]

(1) अपेक्षित से अधिक कहने से परिमाण सूत्र के खंडन से उत्पन्न विचलन :

(1) "मुझे खुशी हुई।" वर्षा सामने बैठ गयी, "लेकिन थोड़ा अपराधी महसूस कर रही हूँ। अर्चना और ममता मुझसे सीनियर है।"

सूर्यभान संजीदा हो गये, "तुम्हारी भावना की मैं कद्र करता हूँ, पर वरिष्ठता मूल्यांकन का एक तत्व हो सकती है कसौटी नही। रिपर्टरी के एक सदस्य से कई अपेक्षायें हैं– प्रतिभा पहली शर्त है, फिर सहयोगियों के साथ अच्छे सम्बन्ध, कंपनी के प्रति दायित्व का एहसास, अपने से ऊपर कंपनी को रख पाने की क्षमता, कट्टर अनुशासन की भावना, स्कूल की राजनीति के बजाय अपने काम में ध्यान। दूसरे लोगों को भी समयानुसार उनका दाम मिलना चाहिये, लेकिन सिर्फ वरिष्ठता के आधार पर नहीं।"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 276)

उपरोक्त प्रथम वाक्य में वर्षा अपना मन्तव्य कह रही है एवं उसके प्रत्युत्तर में सूर्यमान ने कई वाक्य कहे हैं।

(2) अपेक्षित से कम कहने पर परिमाण सूत्र के खंडन से उत्पन विचलन–

(1) बहुत शक्तिशाली स्क्रिप्ट है।" अनुपमा सामने आकर बैठ गयी, "दिल को छूने वाली, मथने वाली, बोले जाने वाले शब्द कम–से–कम हैं। माध्यम का प्रभावी इस्तेमाल है ...... तुमने क्या जबाव दिया ?"

"कल शाम को देना है।"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 289)

यहाँ पर अनुपमा ने फिल्म स्क्रिप्ट के विषय में पूरा पैराग्राफ बोला है और वर्षा उसके जवाव में सिर्फ एक वाक्य बोलती है। यहाँ पर वर्षा बहुत कम बोली है। अतएव यहाँ विचलन–युक्त भाषा का प्रयोग किया गया है। निष्कर्षतः 'मुझे चाँद चाहिए' की भाषा में ध्वनि–विचलन, कारक–विचलन, संज्ञा–विचलन, क्रिया–विचलन, विशेषण–विचलन, वाग्भाग–विचलन की अधिकता रही है, क्रिया–विशेषण विचलन, सर्वनाम–विचलन, मानक–विचलन, अन्वय–विचलन, क्रम–विचलन, अर्थ–विचलन अपेक्षित से कम कहने एवं अपेक्षित से अधिक कहने से उत्पन्न विचलन के स्तर पर 'विचलन' हुआ है।

'मुझे चाँद चाहिये' में विचलन सोद्देश्य हैं इसके माध्यम से भाषा शिष्ट तथा काव्यात्मक बनकर अभिव्यक्ति के अधिकाधिक स्पष्टीकरण में सक्षम हुई है।

---

1. शैली और शैली विशेषण, डॉ. पाण्डेय शशिभूषण 'शीतांशु' (पृ.सं. 213)

चयन

अर्थ, स्वरूप और प्रकार :

चयन – पु. (सं. चि+ल्युट्–अन)

1. आवश्यकता, रुचि आदि के अनुसार बहुत–सी वस्तुओं में से कोई एक या कई वस्तुएँ चुन या छाँटकर अलग निकालने की क्रिया या भाव। जैसे–गुलदस्ते के लिये फूलों अथवा संग्रहालय के लिये पुस्तकों का चयन करना।

2. इस प्रकार चुनी हुई वस्तुओं का समूह, संकलन।

3. यज्ञ के लिये अग्नि का एक संस्कार।[1]

चयन– सं. (पृ.)

1. चुनकर अलग करने की क्रिया, चुनना।

2. चुनी हुई वस्तुओं का समूह, संकलन।[2]

'विचलन' आदि के समान चयन भी साहित्यिक भाषा का एक तत्त्व है जो विचलन, अप्रस्तुत विधान आदि के समान ही भाषा को विशिष्टता प्रदान करता है। चयन, का अर्थ है 'चुनना' अर्थात 'एकाधिक' में किसी 'एक' को चुन लेना'। शैली विज्ञान के संदर्भ में इसका अर्थ–किसी भाषा में प्राप्त एकाधिक इकाइयों या व्यवस्थाओं में अपनी अभिव्यक्ति के लिये 'किसी एक को चुन लेना' होता है।[3]

भाषा में 'चयन' साभिप्राय होना चाहिए। इसका अभिप्राय सटीक अभिव्यक्ति तथा शैली–विशिष्ट्य उत्पन्न करना है।

'चयन' भाषा में ध्वनि, शब्द, वाक्य अर्थ आदि सभी स्तरों पर हो सकता है। 'मुझे चाँद चाहिये' में ध्वनि के स्तर पर, रूप के स्तर पर शब्द के स्तर पर, वाक्य के स्तर पर चयन किया गया है।

ध्वनि चयन :

वर्माजी के 'मुझे चाँद चाहिए' में कहीं–कहीं ध्वनि–चयन भी मिलता है।

उदाहरणार्थ–

(1) नाइन झुनियाँ को यह कसीदा तोते की तरह रट गया था, "लड़की क्या है, साच्छात उर्वशी है।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 23)

इस उदाहरण में लेखक ने 'साक्षात् शब्द का प्रयोग न करके 'साच्छात्' का प्रयोग किया है, जो निश्चय ही साक्षात शब्द का ही बदला हुआ रूप है।

---

1. मानक हिंदी कोष, प्रथम संस्करण, सं. रामचद्र वर्मा, पृ. 290
2. हिन्दी शब्द कोश, डॉ. हरदेव बाहरी, प्रथम संस्करण पृ. 248
3. शैलीविज्ञान, डॉ. भोलानाथ तिवारी पृ. 68

(2) ''मधुरमाषिणी, तुम्हारे वचन अमूर्त ध्वनियाँ नहीं, पुष्पों की लड़ियां हैं, जो तन–मन को सुवासित कर देती हैं।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 30)

यहाँ पर लेखक ने 'लड़ियाँ', ध्वनियाँ, का चयन किया है।

(3) सिलबिल का यह रूप देखकर शर्माजी सकते में आ गये, ''बेशरम, कैसे जबान लड़ा रही है. ....

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 32)

इस उदाहरण में लेखक ने 'बेशर्म' शब्द का प्रयोग न करके 'बेशरम' का प्रयोग किया है, जो बेशर्म शब्द का बदला हुआ रूप ही है। जो कि ग्रामीण संस्कृति से जुड़े हुये लोग प्रयुक्त करते हैं।

(4) मिस कात्याल गंभीर हो गयीं, ''छोटे शहरों में अभिभावक ऐसा रुख अपना लेते हैं। लेकिन तुम अपने मन को टटोल लो।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 33)

इस उदाहरण में लेखक ने टटकापन लोने के लिये लोक जीवन से शब्द चुनकर 'टटोल' शब्द का प्रयोग किया है।

(5) रात को जब वह सोये, तो एक ठंडी सांस लेकर पत्नी बोली, ''मुझे इस लड़की के **लच्छिन** ठीक दिखायी नहीं देते।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 34)

इस उदाहरण में लेखक ने ध्वनि–चयन करते हुये 'लच्छिन' शब्द को चुना है जो शैलीय आवश्यकता के कारण उसने किया है। सही शब्द लक्षण होता है परन्तु लच्छिन का प्रभाव कुछ अधिक गहरा ही पड़ता है।

(6) यह किरदार निभाने वाले मुरली ने दर्जी का कॉलर पकड़कर उसे इस तरह झकझोरा था कि वह रुआंसा 'हमारी भी इज्जत है' का राग अलापते हुए, कुर्ता ठीक करने से पहले डॉ. सिंहल से शिकायत करने के लिये बेचैन था।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 35)

यहाँ पर लेखक ने 'झकझोरा' शब्द को चुनकर ध्वनि–चयन किया हैं वैसे वह यहाँ पर पकड़ा, खींचा भी कर सकता था, लेकिन यहाँ पर जिस अर्थ की सृष्टि वह करना चाहता है वह इसी शब्द से होती है।

(7) सौम्यमुद्रा की आशाओं–स्वप्नों, आत्ममंथन तथा आँसुओं–मुस्कानों के बीच अपने संवेदना तंतुओं को तलाशने की कोशिश कर रही है।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 36)

यहाँ पर लेखक ने अकारान्त–आशाओं, स्वप्नों, आँसुओं–मुस्कानों, तुतुओं आदि ध्वनियों चयन किया है।

(8) अपने बिस्तर पर बैठकर सिलबिल कुड़बुड़ाई। (मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 41)

इस उदाहरण में लेखक ने कुड़बुड़ाई ध्वनि का चयन किया है। साथ ही ध्वनि भी तीन बार आयी है।

(9) आप रंगमंच पै चुराय लियो, मेरो चैन चित्त झकझोर, ओ सलोने चितचोर हो। जहाँ–जहाँ देखूँ वहीं दीख पड़े तेरी छवि सूरजमुखी रबी की, चाँद के चकोर हो।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 42)

इस उदाहरण में अंतिम पंक्ति में शब्दों का चयन बड़े ही ध्यानपूर्वक किया है। सूर्य के पर्यायवाची सूरज, दिनकर, दिवाकर, भास्कर, रवि, में से लेखक ने रवि को चुना है और सूरजमुखी से तुक मिलाने के लिये 'रबी' कर दिया है। झकझोर, चित्तचोर, चकोर शब्दों का भी चयन तुक मिलाने के लिये किया गया है।

(10) वर्षा रानी, तुम्हारे तो ऐसे सुदर, मन में सेंध लगाने वाले खंजन नैन हैं।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 50)

इस उदाहरण में लेखक ने आँखों को खंजन नैन कहा है। वह ऐसा भी चयन कर सकता था कि तुम्हारे नेत्र बहुत सुन्दर हैं। ये शब्द उसने संस्कृत साहित्य से चुने हैं। क्योंकि संस्कृत साहित्य में ही सुन्दर नेत्रों की उपमा खंजन पक्षी के नेत्रों से दी जाती है साथ ही 'ऐ' ध्वनि भी वाक्य में छह बार आयी है।

(11) वह सोच रही थी, जून में बाबुल के पेड़ से उड़ जायेगी पर ये लोग तो उसके पंख ही कतर रहे हैं।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 86)

यहाँ पर लेखक ने काट रहे के स्थान पर कतर रहे शब्दों का प्रयोग किया है जो निश्चय ही उसके चयन को दर्शाते हैं। यह काट रहे, शब्द का ही दूसरा रूप है।

(12) अनुभवहीन सिलबिल राजधानी के मंच की चकाचौध में और भी चौंधिया कर रह गयी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 111)

यहाँ पर लेखक ने आश्चर्यचकित या केवल चकित शब्द का चयन न करके, चौंध शब्द का चयन किया है। जो उसने बात को नवीनता देने के लिये किया है। और दो स्थान पर आयी हुई अकारान्त ध्वनियां भी उसके चयन में प्रमुख रही हैं। उसने चकाचौंध और चौंधिया में साम्य होने के कारण ही ये शब्द चुने हैं।

(13) जिस तरह आप अपना घर–परिवार नहीं छोड़ सकते–क्योंकि वह आपकी जिन्दगी की धुरी है।''

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 118)

यहाँ पर लेखक ने 'धुरी' शब्द का चयन बहुत ही विचारपूर्वक किया है इसके स्थान पर वह केन्द्र शब्द का भी चयन कर सकता था। किन्तु उसने ध्वनि–साम्य रखने के कारण ही 'आपकी जिन्दगी की धुरी' वाक्य में 'धुरी' शब्द का चयन किया है। ताकि वाक्य में यह शब्द उचित लगे।

(14) अन्तर्द्वन्द्व की रागिनी भीतर झनझनाती रही।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 132)

यहाँ पर लेखक ने इकारानत ध्वनियों की, रागिनी, भीतर, झनझनाती, रही का सुन्दर प्रयोग किया है। यहाँ पर दो संयुक्ताक्षरों (द्व, द्व) का भी प्रयोग लेखक ने किया है। यदि लेखक अन्र्द्वन्द्व के स्थान पर 'ऊहापोह' शब्द का प्रयोग करता तो यह ध्वनि प्रभाव उत्पन्न नहीं हो पाता।

(15) ''देखिये, नृत्य में मस्त मयूर............'' कहते हुये वर्षा ने मोर के जैसी भाव भंगिमा अपना ली।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 107)

यहाँ पर लेखक ने संस्कृत भाषा से नृत्य एवं मयूर शब्दों का चयन किया है जिससे भाषा में कुछ नवीनता आ जाये। यदि वह इसके स्थान पर 'नृत्य में मस्त मोर' ध्वनियों का चयन करता तो यह ध्वनि–प्रभाव उत्पन्न नहीं हो पाता।

(16) ''अभी भी एकला चलो रे ?''

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 173)

यहाँ पर लेखक ने 'एकला' ध्वनि का प्रयोग किया है जो 'अकेला' शब्द का ही दूसरा रूप है।

इस वाक्य में उसने सभी दीर्घ स्वरों का प्रयोग किया है। ध्वनि–प्रभाव भिन्न पड़े इसी लिये उसने 'एकला' का प्रयोग किया है। ऐसा लेखक ने 'टटकापन' लाने के लिये किया है।

(17) बोली, इसी घर में तूने सुकुमार के बिना इतने बरस कैसे काट दिये ?''

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 196)

यहाँ पर लेखक ने वर्ष शब्द का चयन लोक जीवन से शब्द चुनकर किया है। बरस शब्द वर्ष का ही बदला हुआ रूप है।

(18) वर्षा चिहुँककर सीधी हुई।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 212)

यहाँ पर लेखक ने 'चिहुँककर' शब्द का चयन लोक से शब्द चयन कर किया है। यदि वह इसके स्थान पर 'चौंककर' शब्द का चयन करता, तो उसका यह प्रभाव नहीं पड़ता।

(19) जहाँ स्टेज पर तुमने एक सीन किया, दर्शकों के लिये तुम बरसों की जानी–पहचानी हो जाओगी।''

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 195)

यहाँ पर लेखक के 'बरसों' शब्द का चयन किया है। जो वर्षों का ही दूसरा रूप है।

रूप—चयन :

ध्वनि—चयन की भाँति मुझे चाँद चाहिये में वर्माजी ने रूप के आधार पर भी चयन किया है—

उदाहरण :

(1) करीब पन्द्रह आलोकांक्षी अपने संवाद बोल चुके थे।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 29)

यहाँ पर लेखक ने समस्त रूप का चयन किया है। वह इसका असमासी रूप भी चयन कर सकता था—आलोक का आकांक्षी।

(2) मेरी इल्तिजा है कि आप आराम फर्मायें।''

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 51)

यहाँ पर लेखक ने आप के साथ क्रिया रूप 'फर्मायें' का प्रयोग किया है जबकि आप के साथ क्रिया रूप 'फर्माइए' होना चाहिये। पर, यहाँ पर लेखक ने 'फर्मायें' रूप चयन किया है। ऐसा चयन इन्होंने औपचारिकता—अनौपचाकिता के बीच में रखने के लिये किया है।

(3) लेकिन पति बनने के बाद देखते—देखते सिलबिल के सिलसिले में कुद्धता उनका स्थायी भाव बन गयी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 75)

यहाँ पर लेखक ने विशेषण रूप 'क्रोध' का चयन न करके कुद्धता का चयन किया है। क्योंकि संयुक्त व्यंजन युक्त रूपों के प्रभाव में गहनता है।

(4) क्या उसके बाकी बचे जीवन में सौन्दर्य के साथ एकाकार हो जाने की आशा है।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 79)

यहाँ पर लेखक ने भाववाचक संज्ञा के रूप में 'सुन्दरता' का चयन न करके 'सौंदर्य' रूप का चयन किया है। इससे अधिक प्रभाव पड़ता है। जबकि सामान्यतया हिन्दी में सरल शैली के प्रयोक्ता सुन्दरता प्रत्यय के रूप का चयन करते हैं।

(5) वर्षा सुनकर स्तब्ध रह गयी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 159)

यहाँ पर लेखक ने विशेषण रूप 'स्तम्भित' का चयन न कर 'स्तब्ध' का चयन किया है। जिससे गहरा प्रभाव उत्पन्न होता है।

(6) ''मुश्किल यह है कि मुझे अपने—आपको जानने का अवसर नहीं मिल पाता।' वर्षा फीके ढंग से मुस्करायी और जताकर घड़ी देख ली।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 215)

यहाँ पर लेखक ने अमानक रूप 'जताकर' का चयन किया है। उसने यहाँ पर एक

ग्रामीण शब्द का चयन किया है।

(7) "तारों पर तुम्हारी उंगलियाँ स्थिर नहीं। रागिनी की सूक्ष्मताओं पर तुम्हारा ध्यान नहीं।"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 221)

यहाँ पर लेखक ने एक नये प्रकार के बहुवचन के रूप का चयन किया है। 'सूक्ष्मताओं' का चयन करके उसने अपनी नवीन दृष्टि का परिचय दिया है। किन्तु 'बारीकियों' बहुवचन प्रचलित है।

(8) वह उसकी शारीरिकता का सूक्ष्म पर्यवेक्षण करता है और फिर उसे ग्रहण कर लेता है।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 251)

यहाँ पर लेखक ने शारीरिक शब्द को भाववाचक संज्ञा में परिवर्तित करके नवीन प्रकार से चयन किया है।

(9) व्यक्तिगत समस्याओं का दुखड़ा शुरू होता, तो रोके न रुकता।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 260)

यहाँ पर लेखक ने दुःख शब्द के नये रूप को चयन कर प्रयुक्त किया है।

(10) तीनों ने उसे तोड़ने में अपने को असमर्थ पाया।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 270)

यहाँ पर लेखक ने 'तीन' शब्द का बहुवचन 'तीनों' बनाया है, किन्तु तीन तो स्वयं ही बहुवचन है। अतएव लेखक ने यहाँ पर उसके नये रूप का चयन किया है।

(11) गर्माहट की रेखा भीतर तक खिंच गयी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 305)

यहाँ पर लेखक ने 'गर्म' शब्द के नये रूप 'गर्माहट' का चयन किया है। जबकि 'गर्माहट' शब्द एक नवीन प्रयोग ही है।

(12) "दोनों दीदियाँ रात भर बातें करती रहीं।"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 318)

यहाँ पर लेखक ने 'दीदी' शब्द का बहुवचन 'दीदियाँ' बनाया है जबकि लेखक को 'दीदी' शब्द का प्रयोग करना चाहिये।

(13) "चंचल बालिके ! वेस्ट ऑफ लक।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 333)

यहाँ पर लेखक ने 'बालिका' शब्द के नये रूप को संबोधन के रूप में प्रयुक्त किया है।

(14) कर्दम–वाटिका की च्युइंगम चबाने वाली भँवरियों में सहसा भनभनाहट होने लगी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 396)

यहाँ पर लेखक ने भँवरों' का स्त्रीलिंग रूप भँवरियों बनाया है जो कि एक नवीन प्रयोग

ही है।

(15) हर्ष बोला, "वह किसी भी चरित्र के साथ तादात्म्य स्थापित नहीं कर पायेगा।"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 427)

यहाँ पर लेखक ने भाववाचक संज्ञारूपों में से 'तादात्म्य' का चयन किया है जो कि संस्कृत मिश्रित शैली में अपनाया जाता है।

(16) झल्ली ने आँखें नचायी, "मेरी दो जिज्यियाँ हैं तो जीजा जी भी दो होंगे ना।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं.)

यहाँ पर लेखक ने जिज्जी शब्द का बहुवचन रूप जिज्जियाँ बनाया है। जो कि बहनों का ही दूसरा रूप है।

(17) एक ही शहर में इतनी दूरियाँ शर्माजी के भूगोल से परे थीं।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 492)

यहाँ पर लेखक ने 'दूरी' शब्द का बहुवचन रूप 'दूरियाँ' कर दिया है। जबकि 'इतनी दूरी शब्द ही बहुवचन रूप है।

(18) उत्तर भारत में शायद आईनों की बहुत कमी है।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 509)

यहाँ पर लेखक ने 'आईना' शब्द का बहुवचन रूप 'आईने' न बनाकर 'आईनों' बना दिया है।

(19) इस दफ्तर में कितनों का स्वप्न दुःस्वप्न में बदल गया होगा।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 516)

यहाँ पर लेखक ने 'कितने' शब्द को 'कितनों' कर दिया है।

(20) अजीबोगरीब यूनिसेक्स पोशाकें 'शिट' बॉल्स, और 'स्क्रू' जैसे बेबाक उद्‌गारों से भरी धुआँधार अंग्रेजी, बड़े-बड़े बिखरे बालों और घिसी हुई जींस के कारण उन्होंने इन्हें 'शंकर के संगियों' की संज्ञा दी थी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 531)

यहाँ पर लेखक ने 'संगी' शब्द का बहुवचन रूप 'संगियों' बनाया है जबकि 'संगी' शब्द एकवचन व बहुवचन दोनों में ही एक समान रहता है।

वाक्य-चयन :

हिन्दी में रचना की दृष्टि से वाक्य के तीन भेद प्रसिद्ध हैं- साधारण, संयुक्त और मिश्र वाक्य इनमें से अपनी अभिव्यक्ति के लिये कुछ लोग पहले को चुनते हैं तो कुछ दूसरे या तीसरे को।[1] वर्माजी ने 'मुझे चाँद चाहिये' की रचना में साधारण, संयुक्त और मिश्र तीनों ही प्रकार के

1. चित्रलेखा का शैली वैज्ञानिक अध्ययन, डॉ जसपाली चौहान, पृ. 177

वाक्यों का चयन किया है। सामान्यतः संयुक्त और मिश्र वाक्य अधिक मिलते हैं।

साधारण वाक्यों के कुछ उदाहरण निम्नलिखित हैं–

(1) 'ऋतुसंहार' का नाम सुनकर पिता अवाक रह गये।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 17)

(2) आकाश में बादल थे।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 79)

(3) मैं जानता हूँ।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 222)

(4) हर्ष भीतर आया।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 350)

(5) यह शिष्टाचार का तकाजा था।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 446)

(6) दिव्या मुस्काने लगी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 478)

(7) "वर्षा, मुझसे शादी करोगी ?"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 566)

ये पूर्ण साधारण वाक्य है इनमें कर्ता और क्रिया दोनों उपस्थित हैं। अपूर्ण साधारण वाक्यों में मात्र कर्ता या क्रियापद उपस्थित रहता है, या फिर वाक्य अन्य किसी अवयव जैसे– स्वीकारोक्ति, निषेधवाचक शब्द, वाक्यारंभक आदि से शुरू होता है–

(1) देखेंगे ...." स्नेह बोले। (मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 198)

(2) "सचमुच....................." वर्षा ने कहा।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 206)

ये दोनों वाक्य अपूर्ण साधारण वाक्य हैं। इनके अर्थ का स्पष्टीकरण इनकी पूर्व की पक्तियों को कहने पर ही होगा।

संयुक्त वाक्य

यहाँ वाक्य के अन्तर्गत आने वाले दो उपवाक्य प्रधान होते हैं।[1] योजकों की दृष्टि से ये वाक्य तीन प्रकार के होते हैं–

योगात्मक :

जो 'और' तथा एवं, जो आदि अवयवों द्वारा वाक्यों को जोड़कर बनाये जाते हैं। लेखक ने योगात्मक वाक्यों की रचना में और, जो का प्रयोग अधिक किया है तथा एवं और 'तथा' योजकों

1. चित्रलेखा का शैली वैज्ञानिक अध्ययन, डॉ जसपाली चौहान, पृ.सं. 177

का प्रयोग बहुत कम, एक या दो स्थानों पर ही किया है।

(1) बैठक सादा और आकर्षक थी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 19)

(2) धीरे–धीरे वह और सौम्यदत्ता एक–दूसरे के प्रेम बंधन में बँध जाते हैं।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 28)

(3) "कर्त्तव्य और भावना का द्वंद्व है।"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 222)

(4) मधुरभाषिणी, तुम्हारे वचन अमूर्त ध्वनियाँ नहीं, पुष्पों की लड़ियाँ हैं, जो तन–मन को सुवासित कर देती हैं।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 30)

(5) सौम्यदत्ता– उदासी का ऐसा धुंआ मेरे अन्दर भर गया है, जो बहार निकलने के लिये कोई गवाक्ष नहीं पाता।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 30)

(6) पर इधर सिद्धार्थ ने घर और बाहर धर्म तथा वर्षा को साथ–साथ देखा था।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 391)

(7) अगर कोई दिव्या के साथ उसकी बातचीत सुने, तो शायद कुछ ऐसी ही ईर्ष्या तथा बाहर रह जाने के भाव का अनुभव करे।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 146)

(8) बगल में रसोई, गीजर लगा गुसलखाना तथा शौचालय।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 153)

(9) कैमरा धीरे–धीरे विविध मंजिलें एवं बाहरी–भीतरी भागों पर पैन करता है।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 464)

(10) अब वर्षा असुरक्षा एवं संदेह से जकड़ी हुई थी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 196)

वैकल्पिक :

जो 'या, 'अथवा' आदि अवयवों द्वारा छोड़कर बनाये जाते हैं तथा इनकी संरचना में लेखक ने सर्वत्र 'या' का ही चयन किया है 'अथवा' का नहीं।

(1) "वर्षा सारे संसार में कलात्मक रंगमंच या तो राज्य की मदद लेता है या निजी क्षेत्र की।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 148)

(2) आप क्या पियेंगी ? चाय या काफी ?

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 261)

(3) मम्मी या सुजाता को भी फोन नहीं किया।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 269)

(4) अनुपमा ने बाँहों में भरकर उसे चूम लिया ''बकरी, तू पेपर पढ़ती है या उसकी जुगाली करती है।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 275)

विरोधमूलक :

जो 'पर', लेकिन, किन्तु , परन्तु आदि के द्वारा संयुक्त करके बनाये जाते हैं और इनकी रचना में लेखक ने मुख्यतः 'पर' और 'लेकिन' का प्रयोग ही अधिक किया है लेकिन 'किन्तु' का प्रयोग कहीं भी नहीं है।

(1) अब दायित्व–निर्वाह के यौवन में वह शोक की प्रतिमूर्ति हो गयी थी, लेकिन अपने काम में अत्यन्त कुशल।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 220)

(2) चतुर्भुज हमेशा की तरह पाजामा कुर्ता पहने थे, लेकिन आज वह गंदा नहीं था।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 224)

(3) आदित्य के चेहरे पर काली छाया तैर गयी ''छटपटाती है, पर चारा क्या है ?

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 142)

(4) कपिल उसे ठीक–ठाक लगा था, पर सुकुमार के व्यक्तित्व में निःसदेह गहरायी थी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 150)

(5) इतना बड़ा अफसर है, परन्तु पुस्तकालय नियमित रूप से जाता है।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 215)

(6) ''भैया के लिये बड़े–बड़े घरों से प्रस्ताव आ रहे हैं, परन्तु यदि कलाकार को कलामर्मज्ञ मिले, तो सर्वोत्तम है।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 215)

(7) कवि कुलदीपक की पंक्ति उन्हें याद आयी 'वृक्ष अपने सिर पर गर्मी सह लेता है, परन्तु अपनी छाया से दूसरों को बचाता है।'

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 21)

मिश्र वाक्य

यहाँ केवल एक ही उपवाक्य प्रधान होता है, अन्य आश्रित होते हैं।[1] वर्माजी ने जिन मिश्र वाक्यों का प्रयोग किया है उनके कुछ उदाहरण निम्नलिखित हैं–

---

1. चित्रलेखा का शैली वैज्ञानिक अध्ययन, डॉ. जसपाली चौहान, (पृ.सं. 178)

(1) मैं बताऊँगी नहीं कि तुम्हें कहाँ ले जा रहीं हूँ।' शिवानी रहस्य के स्वर में बोली।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 206)

(2) नाट्य–समीक्षक कहते हैं कि तुम्हारी आँखें बोलती हैं।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 209)

(3) वर्षा ने लक्ष्य किया कि दूसरे वर्ष में अनुपमा बदलने लगी थी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 260)

इसी प्रकार 1, 2, 3 का विश्लेषण इस प्रकार किया जा सकता है–

(1) विश्लेषण– इस मिश्र वाक्य में 'मैं बताऊँगी नहीं' मुख्य उपवाक्य हैं और 'तुम्हें कहाँ ले जा रही हूँ' यह एक आश्रित उपवाक्य है।

(2) इस मिश्र वाक्य में 'नाट्य समीक्षक कहते हैं, मुख्य उपवाक्य है और तुम्हारी आँखें बोलती हैं, यह एक आश्रित उपवाक्य है।

(3) इस मिश्र वाक्य में 'वर्षा ने लक्ष्य किया' मुख्य उपवाक्य है और 'दूसरे वर्ष में अनुपमा बदलने लगी थीं' यह एक आश्रित उपवाक्य है।

(4) वही एक है जो कालापानी भोग रही है।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 358)

यहाँ वही एक है जो कालापानी भोग रही है' आश्रित उपवाक्य है।

(5) 'मैने कहा, बहुत बड़ी एक्ट्रैस हैं।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 358)

कर्म के स्थान पर आने वाले आश्रित उपवाक्य में 'कि' का लोप कर दिया गया है। ये सभी संज्ञा उपवाक्य हैं।

(6) जब मैं थिएटर में था, तब मैं निखट्टू चल रहा था।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 239)

विश्लेषण – इस वाक्य में जब मैं थिएटर में था' क्रिया–विशेषण उपवाक्य है। वह प्रमुख उपवाक्य के 'थिएटर' क्रिया विशेषण के स्थान में आया है। मुख्य उपवाक्य में इस क्रिया विशेषण का उपयोग यों होगा – थिएटर में मैं निखट्टू चल रहा था, और वहाँ और यह क्रिया विशेषण 'चल रहा था' क्रिया की विशेषता बतलाता है।

(7) जब तुम्हारे नाम से फिल्म बेचने में मदद मिलेगी, तब तुम्हारी माँग सुनी जायेगी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 354)

विश्लेषण – इस वाक्य में प्रधान उपवाक्य तुम्हारे नाम से 'फिल्म बेचने में मदद मिलेगी' है और आश्रित उपवाक्य 'तुम्हारी माँग सुनी जायेगी।'

छोटे तथा बड़े वाक्य

भोलानाथ तिवारी ने आकार की दृष्टि से वाक्य में दो भेद छोटे तथा बड़े वाक्य माने हैं।[1] सुरेन्द्र वर्मा जी ने छोटे एवं लम्बे दोनों ही प्रकार के वाक्यों का प्रयोग किया है। कहीं–कहीं वर्माजी ने काफी लम्बे वाक्यों का प्रयोग किया है–

(1) डॉक्टर अटल के अनेक अमृत–वचन सिलबिल के स्मृति–कोश में सुरक्षित हो रहे थे– 'रंगमंच विकास के विभिन्न चरणों में मानव–समुदाय का सूक्ष्म, कलात्मक पर्यवेक्षण है, 'अभिनेता को कलात्मक सत्य की खोज के लिये अपने शरीर को रचनात्मक उपकरण के रूप में विकसित करना होता है, 'आज का अभिनेता मानव–समुदाय के सम्पूर्ण इतिहास का व्याख्याकार होता है, 'जो अभिनेता शारीरिक स्तर पर गोगे बना रहता है, वह संवेदना के स्तर पर वर्शिनिन नहीं बन सकता' 'रंगमंच आत्मरति का सिंहद्वार नहीं, प्रस्तुत के ताने–बाने में रूमाल उतना ही महत्वपूर्ण है, जितना ऑथेलो..... एक सच्चे कलाकार को ये दोनों ही भूमिकायें स्वीकार होनी चाहिये, 'जो अभिनेत्री सिर्फ शूद्रक की बसंत सेना बनना चाहती है, शेक्सपियर की डायन नहीं, उसे बहावलपुर हाउस में फाँसी पर चढ़ा दिया जाना चाहिये', 'जो कलाकार नाट्य–समीक्षा में सबसे पहले अपना नाम ढूँढ़ता है, उसकी सही जगह बहावलपुर हाउस नहीं, साइबेरिया का यातना–शिविर है।'

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 128)

(2) फिर वर्षा ने उस लम्बे–चौड़े पूर्वाभ्यास कक्ष को देख मानवीय सभ्यता के प्रादुर्भाव से लेकर बीसवीं सदी के उत्तरार्ध तक के कैसे–कैसे मानवीय मनोभावों को यहाँ वाणी मिली है, नवरसों से घुले–मिले हर्ष और विषाद के कैसे–कैसे इन्द्रधनुष यहाँ झिलमिलाये हैं....... यहाँ यौवन का उमंगभरा नर्तन हुआ है, यहाँ कामना के आकुल सुरफू है, यहाँ आक्रोश संहार भरा तांडव हुआ है, यहाँ करुणा की उजली किरणें बिखरी हैं............ क्या रात के अंधेरे में इन दीवारों पर इफीजीनिया, रानी हेकुबा और किंग लियर की अभिशप्त आत्मायें रेंगती होंगीं ?

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 252)

(3) अब तक वर्षा की मान्यता थी कि असफल प्रेम देवदास के समान आत्मसंहारक. होता है, पर चतुर्भुज का बंबइया उत्थान देखने के बाद उसने यह स्वीकार कर लिया था कि भग्न भावनाओं तथा विदग्ध जीवन–शैली का इआकोका के समान 'क्राइसिस मैनेजमेंट' नवजीवन भी प्रदान कर सकता है।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 443)

(4) जैसे नायक के अभ्युत्थान और सौभाग्य के वर्णन में कवि कुल–गुरु प्रफुल्लित होकर हरिणी छंद का प्रयोग करते थे, वैसे ही पिता के आगमन पर वह भी प्रफुल्लित हो गयी थी, पर उसे

---

1. डॉ. भोलानाथ तिवारी, शैली विज्ञान, पृ.सं. 83

यह अनुमान नहीं था कि उनके आगमन का पहला ही दिन 101, 'सिलवर सेंड' के जीवन–काव्य में मंद्राकांत छंद बन जायेगा।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 494)

(5) अलमारी में पन्द्रह–बीस हजार के बंडल पड़े ही रहते थे, बैंक के लॉकर में पर्याप्त आभूषण थे, नवीन मामा की सलाह पर उसने पाँच कंपनियों के बड़ी संख्या में शेयर खरीद रखे थे, रोहन की एक कंपनी में वह पच्चीस प्रतिशत की साझेदारी थी पनवेल के पास पाँच एकड़ का फार्म खरीदने की कानूनी कार्यवाही चल रही थी, हाल ही में किश्तों पर आधे भुगतान की सुविधा के साथ बंगला लेने की बात उठी थी, मगर बचपन के गहन 'ब्लैक पीरियड' के छाले मिट नहीं पाये।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 504)

(6) ब्याह से पहले उसके अवलोकनार्थ आने पर वर्षा का मृदु व्यवहार उसने देखा था ब्याह के बाद 54, सुल्तानगंज का बारीक पर्यवेक्षण करते हुये अपने पति की समृद्धि का कारण पहचाना था, फिर इतने दिन 'सिलवर सेंड' में रहते हुये वर्षा के स्नेह की परख के बीच उसकी यह धारणा बलवती हो गयी थी कि 'ऐसी ननद सात जन्मों के पुण्यों से ही मिलती है'।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 505)

(7) जिन डॉक्टर अटल ने कुछ वर्ष पहले भावुकता दिखाने पर वर्षा को डाँट पिलायी थी, वही डॉक्टर अटल बाहर निकलते–निकलते जरा–से विचलित हो गये, "सिनेमा में तुम लोगों की सफलता और सिनेमा क्षेत्र में ड्रामा स्कूल के सम्मान से यह साबित हुआ है कि हमारी प्रशिक्षण पद्धति सही थी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 539)

(8) "जैसे रोगी यह समझकर औषधि पी लेता है कि इससे मैं अच्छा हो जाऊँगा, वैसे ही राजा दिलीप भी उन बैरियों को अपना लेते थे, जो भले होते थे और जैसे साँप के काटने पर लोग अपनी उँगली भी काटकर फेंक देते हैं, वैसे ही राजा दिलीप भी अपने उन सगे लोगों को निकाल बाहर करते थे, जो दुष्ट होते थे।.............."

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 33)

(9) भर्त्सना की विवशता में माँ को उससे सीधे बात करनी पड़ी, "देखों तो कुलच्छिनी को..... अब बुढ़ापे में कुजात के हाथ का ठुसायेगी अरे नासपीटी, भले हैं तेरे बाप, कोई और होता, तो दुरमुट से कूट के रख देती........."

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 65)

(10) संवाद के दौरान वर्षा के मान के एक स्तर पर बार–बार बैंड की ध्वनियाँ तीव्र हुई, जिज्जी की दस्तक ऊँची हुई, भास्कर के सिर्फ चेहरे ने उसे प्रेम–संदेश दिया, पर बार–बार उसके

मुँह से थूक का फेन ही गिरा, सुहाग–शैय्या पर क्रोधान्मत भास्कर ने उसकी नग्न पीठ पर बैशाखी से वैसे ही तीक्ष्ण प्रहार किये, जैसे भाई ने छड़ी से किये थे, अट्टहास करते हुये पिता और भाई ने उसके घावों पर नमक छिड़का .... व्यथा की गहन रेखाओं के साथ उसके विष–पात्र को देखा, "ओ मेरे अभिशप्त सपने, खिलने के लिये मुँहबंद कलियों में स्फुरण हुआ ही था कि डूबती हुई रश्मियाँ मुर्झाने का संदेश ले आयीं......" और अनजाने ही उसकी आँखों में दो नन्हे–नन्हे आँसू आ गये।.......

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 93)

(11) काली मनःस्थिति के दौर में उसने अनाप–शनाप लिख मारा था, मेरा बस चले, तो मैं आकाश की दहलीज पर बनी सात रंगों की इन्द्रधनुषी अल्पना बनूँ, आश्रम में शकुन्तला की प्रिय 'वन–ज्योत्सना सखी बनूँ, चन्द्रमा को देखकर खिल जाने वाली कुमुदनी बनूँ, पर जो अपने प्रदेश के अनुरूप दबी–सकुची मध्यमवर्गीय कन्या है, उसकी महत्वाकांक्षा की अन्तिम सीमा यही हो सकती है कि कोई लोअर–डिवीजन क्लर्क उसके हाथों से वरमाला स्वीकार कर ले और मामूली दहेज के बावजूद ससुराल के रसोईघर में उसके साथ कोई 'दुर्घटना' न हो..'

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं.)

वर्माजी ने एक पूरी कविता को एक लम्बे वाक्य का रूप दिया है यह सम्पूर्ण पैराग्राफ एक वाक्य है–

(12) "चले जाओ आदित्य/हमेशा के लिये पीछे छोड़कर/रेलवे और मॉडर्न स्कूल का क्वार्टर/मंडीहाउस का चायघर, नाथू स्वीट हाउस और कोने की पान की दुकान/रुंधे हुये गले से तुम्हें विदाई दे रहे हैं...../कालिदास, ठंडीपस, नंद, कंजूस, क्रियॉन, कृष्ण, किंगलियर और कालिगुला/मेघदूत, फीरोज शाह कोटला, पुराना किला और त्रिवेणी थिएटरों की आँखें नम हैं/बंगाली कार्कीट का जर्रा–जर्रा/सुलगता अंगारा है/'स्टेट्समैन' के नाट्य–समीक्षक और रवीन्द्र भवन/तुम्हें दे रहे है शाप/ओ अभिशप्त तेजस्वी अभिनेत्री/अपने ओजस्वी स्वर से/प्रेक्षागृहों को थरथराने वाले/तुम्हारी आवाज घुट जायेगी फिल्म स्टूडियो के गर्म फ्लोर और डबिंग थिएटर में/परिष्कृत संवेदना और कलात्मक मूल्य/भड़कीली पोशाकों और सुनहरी विग में/साँस तोड़ते कीड़ों से कुलबुलायेंगे/शूद्रक, प्रसाद और शैक्सपियर की आत्मायें कराहेंगी/जब तुम माफिया डॉन, डाक्टर, फैक्टरी मालिक और काइयाँ वकील का रूप धारण करोगे/हीरोइन के पिता बनोगे और हीरों के विश्वासघाती चाचा/पाली हिल के अपने एयरकंडीशंड फ्लैट में दर्शकों की तुमुल करतल ध्वनियाँ तुम्हें सोने नहीं देंगी चैन की नींद/अपने ही पुराने संवादों की अनुगूँजें/सुबह–शाम तुम्हारे कानों के पर्दे फाड़ती रहेंगीं/अपने चुनाव की विवशता/तुम्हारी आत्मा का सदाबहार जख्म बनेंगी/जिसमें से बराबर–टपकती रहेगी/लहू की एक–एक बूँद........"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 149)

छोटे वाक्य

(1) नीना, सुन्दर, संवेदनशील, उदास मातृहीन सौतेली माँ और पिता की कड़ी, निर्मम निगरानी में। 'मंच और झील की ओर खिंची चली आती है, जैसे हंसिनी।' कोत्स्या के प्रति मन में पनपता लगाव। उसके लिखे नाटक में नीना की भागीदारी। माँ के उपहास पर क्रोधित कोस्त्या द्वारा मंचन का रोक दिया जाना। त्रिगोरिन से नीना की भेंट। नीना के मन में आकर्षण के अंकुर का फूटना।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 134)

(2) शाम के पाँच बजे तक घर सँवर गया था। दीवारों पर तस्वीरें, खिड़कियों–दरवाजों पर लहराते पर्दे। एक कोने में बिस्तर, एक में दीवान। टी.वी. के सामने फर्श पर गद्दा और गाव तकिये। स्टूल पर लैंप। मेज के पास किताबों का रैक। वर्षा को अपना कमरा ऐसा लगा, जैसे रंगीन पत्रिका का विज्ञापन सजीव हो उठा हो।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 155)

(3) "मुझे एक–एक बात बताओ।" वर्षा अचानक अलग हो गयी, "तुम पूना गये थे ? फिर कहाँ गये थे ? साथ में कौन था ? क्यों गये थे ? तुम कहाँ रहते हो ? मुझसे पता क्यों छिपाया गया ? वहाँ और कौन रहता है ? उससे तुम्हारा क्या रिश्ता है ? चारुश्री से तुम्हारा क्या रिश्ता है ?"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 315)

(4) झुमकी ने एयरकंडीशनर बंद कर दिया। खिड़की खोली और पर्दा हटाया। बाहर दुबका उजाला भीतर घुस आया। वर्षा ने गर्दन मोड़ी। समुद्र शांत था। सतह अलग–अलग रेखाओं में झिलमिला रही थी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 561)

(5) इस नाटकीय दृश्य के तीनों दर्शक भी अवाक थे। जैसे मंत्रबद्ध–से बाप–बेटी को देखे जा रहे थे। जब शर्माजी ने सिलबिल को पुकारा, तो माँ और गायत्री के मन को आशंका कंपा गयी। किशोर भी मन–ही–मन सिहर उठा। सिलबिल ने किया क्या है ? कारण स्पष्ट होते ही आतंक तिरोहित हो गया। माँ और गायत्री ने छुटकारे की सांस ली।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 16)

(6) रात हो गयी थी। हफ्ते भर की चहल–पहल के बाद घर सूना लग रहा था। वर्षा मेज पर बैठी अपनी पढ़ाई में लगी थी। तभी भाई ऊपर आये और सामने बिस्तर पर बैठ गये। कुछ देर चुप्पी रही।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 46)

(7) वर्षा के कान सनसनाने लगे। सकुचाकर नीचे देखने लगी। कहना चाहा, जी, अभी नहीं अभी

जल्दी है। अभी मेरे सामने कलात्मक चुनौतियाँ हैं, अभी मेरे और हर्ष के बीच में कुछ चुभने वाली नोंकें हैं। अभी मुझे थोड़ा समय चाहिये।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 189)

(8) मैं शायद नाराज हूँ ? खुश हूँ ? मुझे पता नहीं। शायद इन दोनों के बीच कहीं हूँ। शायद इन दोनों से परे हूँ। मैं उलझ गयी हूँ। भूगोल और समय के व्यवधान से धुँध छा गयी है.. .... वह नीचे देखती रही। घास की सीमा रेलिंग थी, जहाँ छोटा–सा झबरीला कुत्ता रेंग आया था।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 515)

(9) "नायक दुनिया में बिल्कुल अकेला है भावना के स्तर पर वह सिर्फ अपनी प्रेमिका से जुड़ा हैं तभी इस रिश्ते की अहमियत सामने आती है। वैसे भी सिनेमा सूचना नहीं, अनुभव है।"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 515)

(10) इस बार वर्षा ने देखा। कुछ पल एकटक चेहरा पहचाना–सा लगा। फिर उसने वर्षा का हाथ थाम लिया। उस चेहरे पर असमंजस और तनावभरी व्यग्रता थी। फिर वर्षा की निगाह में पुल बैंक टु रिवील जैसी टेकिंग हुई।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 525)

नकारात्मक वाक्य

वर्माजी ने नकारात्मक वाक्यों का भी चयन किया है–

(1) थोड़ी चुप्पी के बाद पिता गहरी साँस लेकर बोले, "फिर भी यह अकरणीय है।"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 22)

(2) कुछ क्षण मौन रहा।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 71)

(3) "यह असंभव है सर।" वर्षा स्तंमित रहगयी," मुझे संदर्भ के लिये किताबें ढूंढ़ने में ही एक हफ्ता लग जायेगा।"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 125)

(4) "यह नाटक मुझे नापसंद है। इस रोल से मुझे नफरत है।"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 167)

(5) हर्ष के पिताजी गुजर गये।" उन्होंने कहा, "बंगले से तुम्हारे लिये फोन आया था।"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 188)

(6) नाट्य–रचना के अंत में अभिनेत्री के रूप में नीना असफल सिद्ध होती है।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 131)

विश्लेषण – लेखक कहता है कि नीना का नाट्य–जीवन सफल नहीं हो पाता, उसे

सफलता नहीं मिल पाती। इसे वह प्रभावशाली बनाने के लिये एक नया मोड़ देता है कि 'नीना असफल सिद्ध होती हैं।''

(7) हर्ष की मुख्य रूप से निदां ही हुई थी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 170)

लेखक कहना चाहता है कि 'हर्ष की प्रशंसा नहीं हुई, उसकी सराहना नहीं हुई।' यह एक सामान्य–सी अभिव्यक्ति होती, अतएव वह कहता है कि 'निन्दा ही हुई थी' तो यह एक प्रभावशाली अभिव्यक्ति है। जिसका पहली अभिव्यक्ति से कहीं अधिक गहरा प्रभाव पड़ता है।

(8) बस, इस भीड़ की प्रकृति बिल्कुल भिन्न थी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 190)

विश्लेषण – यहाँ पर लेखक ने ऐसे वाक्य का प्रयोग किया है जो ऊपरी ढंग से देखने पर सकारात्मक लगता है किन्तु यह एक नकारात्मक ढंग से अभिव्यक्ति है। उसने 'भीड़ की प्रकृति समान नहीं थी' प्रयोग न करके 'बिल्कुल भिन्न थी' प्रयोग किया हैं जो प्रथम अभिव्यक्ति का ही दूसरा पर्याय है। किन्तु पहली अभिव्यक्ति की अपेक्षा दूसरी अधिक प्रभावशाली है।

(9) वर्षा को व्यक्तिगत बेकदरी से ज्यादा ग्लानि कला के असम्मान पर हुई।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 199)

यहाँ पर लेखक ने नकारात्मक चयन को प्रमुखता दी है। यहाँ पर दो नकारात्मक अभिव्यक्तियों का चयन किया है। प्रथम तो, 'कद्र नहीं की' के स्थान पर 'बेकदरी का चयन किया गया है और द्वितीय 'सम्मान नहीं अर्थात 'असम्मान' का चयन करके नकारात्मक अभिव्यक्ति की गयी है। जिससे इसके प्रभाव में वृद्धि ही हुई है।

(10) वर्षा को अटपटा–सा लगा।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 287)

यहाँ पर लेखक यहाँ पर 'सामान्य नहीं लगा' जैसी सामान्य अभिव्यक्ति को प्रभावशाली रूप देने के लिये 'अटपटा–सा लगा' वाक्य बंध का चयन करता है।

(11) ''सुजाता मुझसे रूठी हुई।'' मम्मी वर्षा की ओर देख रही थीं।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 558)

लेखक यह कहना चाहता है कि 'सुजाता मुझसे खुश नहीं है' किन्तु यह एक सीधी सादी अभिव्यक्ति होती, जिसका कोई खास प्रभाव नहीं होता। अतः उसने इसे इस प्रकार का मोड़ दिया– ''सुजाता मुझसे रूठी हुई है।''

(12) ''बस, एक ही इच्छा रह गयी है कि 'अनुपस्थित' होने से पहले तुम्हें दुल्हिन बनी देख लूँ।'' दिव्या मुस्करायीं।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 570)

लेखक कहना चाहता है कि दिव्या अपने देहान्त से पहले, या जीवित रहते हुए वर्षा को दुल्हन बनी देखना चाहती है। किन्तु यह सामान्य अभिव्यक्त होती, जो कोई खास प्रभाव नहीं डाल पाती। अतः उसने इसे इस प्रकार से मोड़ दे दिया कि 'अनुपस्थित' होने से पहले दुल्हिन बनी देख लूँ।'

विश्लेषण 1, 2 — लेखक कहना चाहता है कि कुछ समय तक कोई कुछ नहीं बोला, तो यह एक सामान्य सा कथन होता। परन्तु वह इसे एक नये रूप में अभिव्यक्ति देना चाहता है, अतएव वह कहता है कि कुछ समय तक मौन रहा। जो एक विशेष प्रभाव को अभिव्यक्त करता है। साथ ही प्रथम वाक्य में तो दो नकारात्मक अभिव्यक्तियों को स्थान दिया गया है। एक तो कोई बोला नहीं, और दूसरे यह 'अकरणीय' अर्थात न करने योग्य है।

विश्लेषण 3 — यहाँ पर लेखक कहना चाहता है कि वर्षा—डॉक्टर अटल से कहती है कि वह उनके बताये कार्य को नहीं कर सकती। परन्तु इस अभिव्यक्ति का वह प्रभाव नहीं पड़ता, जो लेखक चाहता है। अतएव वह कहता है कि यह असंभव है।

विश्लेषण 4 — लेखक कहना चाहता है कि 'नाटक पसंद नहीं है, अच्छा नहीं लगता, उससे वह घृणा करता है।' 'इसे प्रभावशाली रूप देने के लिये वह कहता है 'यह नाटक मुझे नापसंद है इस रोल से मुझे नफरत है।

विश्लेषण 5 — यहाँ पर लेखक ने 'पिताजी जीवित नहीं रहे' के स्थान पर 'गुजर गये' नकारात्मक का प्रयोग किया है। इसका प्रभाव अधिक तीव्र सिद्ध होता है।

अपूर्ण वाक्य

वर्माजी ने अपने उपन्यास में कहीं—कहीं अपूर्ण वाक्यों का भी प्रयोग किया है। इनमें से कुछ उदाहरण निम्नलिखित हैं—

(1) वर्षा दो पल सोचकर बोली, "दुख .... करुणा।......"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 51)

(2) "वर्षा तुम .... में जाओ।" नीहारिका उसके पास आ गयी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 75)

(3) "टिंगटू ....टिंगटू .... यहाँ देखो.........."

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 199)

(4) "सचमुच.........." वर्षा ने कहा।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 206)

(5) "अपने साथ के लोगों में ...." स्नेह तीव्र दृष्टि से हर्ष को देखकर हाथों,

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 540)

(6) "देखो, तारा टूटा" प्रिया उत्तेजित—सी उठी, "कुछ माँग लो.........." वह आँखें बंद किये

जल्दी–जल्दी बुदबुदाने लगी थी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 571)

(7) ''कभी–कभी जरूरत से ज्यादा ....'' दिव्या ने कहा।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 83)

(8) ''हाँ ठीक हूँ।' वर्षा ने धीरे–से कह, ''तुम अपना ध्यान रखना.......... जानकर अच्छा लगा.... और एकाएक सिसकी बँध गयी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 270)

(9) ''काश, मेरे भाई भी तुम्हारे–जैसे होते। मेरे इस फैसले से घर में उदासी छा गयी है।......मेरी जिन्दगी बदल रही है, लेकिन ....'' कहते–कहते चारुश्री रुक गयी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 521)

इन सभी वाक्यों में एक प्रकार के अधूरे कथन हैं जिनका आशय पूर्णतया स्पष्ट नहीं हो रहा है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि 'मुझे चाँद चाहिये'' मैं चयन साभिप्राय है जिससे पूरे उपन्यास में अभिव्यक्ति को बल ही मिलता है।

समानान्तरता

अर्थ, स्वरूप और प्रकार :

'समानांतरता' शब्द का प्रयोग पश्चिमी शैली वैज्ञानिक साहित्य में प्रयुक्त शब्द पैरेललिज्म (Parallelism) के लिये किया जाता है।

सामान्य प्रयोग में भाषा का सामान्य, अवक्र तथा अविचलित रूप प्रयुक्त होता है, जिसे पश्चिमी शब्दावली के आधार पर सामान्य भूमि या पुराव्यवस्था अथवा पश्चभूमि (Backgrounding) कह सकते हैं। किन्तु काव्य–भाषा इससे भिन्न होती है। उसे नव्य व्यवस्था अथवा अग्रभूमि (Foregrounding) की आवश्यकता होती है। काव्य भाषा नव्य व्यवस्था अथवा अपने को सामान्य भाषा से अलग करने के लिये विचलन, अप्रस्तुत विधान तथा समानांतरता का प्रयोग करती है।

समानांतरता से आशय है, किसी रचना में समान या विरोधी भाषिक इकाइयों का समानांतर प्रयोग। इसमें समान भाषिक इकाई की एक या अधिक बार आवृत्ति होती है, अथवा दो या अधिक विरोधी भाषिक इकाइयाँ साथ–साथ आती हैं।[1]

अगर विचलन का सिद्धान्त अनियमितता (इर्रेगुलरिटी) की संकल्पना को अपना आधार बनाता है तब समानान्तरता, अतिरिक्त नियमितता की संकल्पना को। समानान्तरता का अर्थ है किसी भाषिक लक्षण या विधान की पुनरावृत्ति की नियमितता।[2]

1. शैली विज्ञान, डॉ. भोलानाथ तिवारी, पृ.सं. 88
2. संरचनात्मक शैली विज्ञान, डॉ. रवीन्द्र नाथ श्रीवास्तव, पृ.सं. 58

समानान्तरता के प्रकार :

(क) समानता–असमानता, के आधार पर समानान्तरता मुख्यतः दो प्रकार की हो सकती है–

1. समता मूलक समानान्तरता – जिसमें समान भाषिक इकाइयाँ साथ हों।

2. विरोध मूलक समानान्तरता – जिसमें विरोधी भाषिक इकाइयाँ साथ–साथ हों।

यों इन दोनों के मिश्रण से एक तीसरी समानान्तरता की बात भी की जा कसती है–

3. मिश्रित समानान्तरता – जहाँ समान और विरोधी समानान्तरता का मिश्रण हो।

(ख) भाषिक इकाइयों के आधार पर–इस आधार पर मुख्यतः छः भेद किये जा सकते हैं–

(1) ध्वनीय समानान्तरता

(2) शब्दीय समानान्तरता

(3) रूपीय समानान्तरता

(4) वाक्यांशीय समानान्तरता

(5) अर्थीय समानान्तरता

(6) प्रोक्तिस्तरीय समानान्तरता।

शैली विज्ञान में समानान्तरता (Parallelism) की अवधारणा के पुरस्कर्ता रोमन याकोब्सन रहे हैं। पर काव्य–भाषा की इस विशिष्ट गुणवत्ता के उपस्थापक के रूप में याकोब्सन ने गेरार्ड मेनली हॉपरिकन्स का बार–बार स्मरण किया है। वास्तव में यह हॉपरिकन्स द्वारा विवेचित समान्तरता ही है, जो बाद में रोमन याकोब्सन द्वारा समतुल्यता और समान्तरता, एस.आर. लिविन द्वारा युग्मन और शेपिरों द्वारा प्रतिसमता जैसे विविध रूपों में कहीं अधिक विस्तार से विवेचित–व्याख्यायित हुई है।

समांतरता (Parallelism) शब्द का पहला प्रयोग आज से दो सौ वर्ष पहले किया गया था। बाइबिल की प्रसिद्ध छंद योजना में उसके पदों की द्विपदी–संघटना के संदर्भ में उसकी वर्णना–व्याख्या के लिये 'समान्तरता' का मूल पद पहली बार प्रस्तुत हुआ था। ठीक उसके समनुरूप प्राप्त फिन्निश (Finish) महाकाव्यों की समान्तरता की भी प्रायः इससे तुलना की जाती रही है। इतना ही नहीं, रूसी कविता की समान्तरता भी इन पद्धतियों का बहुत निकट से अनुगमन करती दीखती है। पर यह उससे मुक्ततर और भिन्न भी है।[1]

रोरार्ड मेनली होपकिन्स ने 1865 के अपने छात्र जीवन के आलेख में 'कविता की संरचना' के विषय में अपनी अनोखी अर्न्तबुद्धि का परिचय देते हुये लिखा था कि "कविता का

---

1. उद्‌धृत, डॉयलाग्स : रोमन याकोब्सन एवं क्रिस्तिना पोमोर्स्का (लंदन : केम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस, 1980) पृ.सं. 102

कलात्मक भाग, बल्कि यह कहना अधिक समीचीन होगा कि इतने सारे कौशल समान्तरता के सिद्धान्त में ही रूपान्तरित हो जाते हैं। कविता की संरचना लगातार जारी समान्तरता और गिरिजाघर के संगीत की प्रतिध्वनि (Anti Phones) की संरचना है। यह हिन्दू कविता वाली तकनीकी तथाकथित समान्तरता से यूनानी अथवा इतालवी अथवा अंग्रेजी छन्दोबद्ध कविता तक की दूरी तय करने वाली समान्तरता है।"[1]

समता मूलक समानांतरता :

(1) सिलबिल ने अपराध–भाव से नीचे नहीं देखा। वह पूर्ववत् सामने देखती रही", हाँ"। उसका स्वर स्थिर था।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 16)

यहाँ समता मूलक समानता हैं नीचे नहीं देखा और समाने देखती रही, दोनों का भाव एक ही है।

(2) क्षणांश के लिये उसे लगा कि यह पल स्थिर हो गया है और चारों ऊँची दीवारों से उसका स्वर टकरा–टकरा कर गूँजने लगा है– "जो आज्ञा देवि। जो आज्ञा देवि। जो आज्ञा देवि।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 29)

यहाँ पर समता मूलक समानान्तरता है क्योंकि यहाँ पर तीन समान भाषिक इकाइयाँ हैं–जो आज्ञा देवि। एवं टकरा–टकरा में भी समानान्तरता ध्वनित हो रही है।

(3) जब नीना ने आवेग से कहा, "एक अभिनेत्री होने की खुशी के लिये मैं अपने परिवार की नाराजगी' गरीबी और निराशा बर्दाश्त कर लूँगी, तलघर में रह लूँगी, ब्राउन ग्रेड खाऊँगी और अपनी कमियाँ महसूस करने की यंत्रणा सहूँगीं लेकिन बदले में मुझे नाम चाहिये–सच्ची, चारों ओर गूँजती हुई शोहरत, "तो सिलबिल की देह झनझना उठी।"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 130)

यहाँ समता मूलक समानान्तरता है। क्योंकि यहाँ पर समान भाषिक इकाइयाँ और लूँगी खाऊँगी, सहूँगी का प्रयोग किया गया है।

(4) अकेले में अक्सर उसका एकालाप जारी रहता "एंटन पावलोविच, तुम्हारे पास पहुँचने का रास्ता इंस्ट्यूशन और फीलिंग का है।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 521)

(5) तुम्हारी नाट्य–कृति के मोहक अंर्तप्रवाह उसे तेजस्वी बनाते हैं। तुम्हारे चरित्रों की 'अक्रियाशीलता' उनके जटिल भाव जगत का चित्तरंजन आवरण हैं, तुम्हारे मंचीय कार्यकलाप के गूढ़ार्थ को समझने पर ही प्रस्तुति में प्राण फूँके जा सकेंगे। तुम्हारे चरित्रों को 'जिया' जाना चाहिये, तभी

---

1. उदधृत, डॉयलाग्स : रोमन याकोब्सन एवं क्रिस्तिना पोमोर्स्का (लंदन : केम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस, 1980) पृ.सं. 102

उनके आत्मिक विकास की गहन अन्तर्रेखायें उजागर होंगी।''

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 137)

यहाँ समता मूलक समानान्तरता है।

यहाँ पर 'तुम्हारे' सर्वनाम पद की चार बार आवृति हुई। 'तुम्हारे' संज्ञा रूप में चार बार आवृत्ति हुई है।

(6) वर्षा बोली, ''जब आपको दफ्तर फोन करो, तो फरीदाबाद फैक्टरी में गये हैं। घर फोन करो, तो मेमसाब के साथ डिनर पर बाहर गये हैं। छुट्टी के दिन फोन करो, तो खेमका जी के यहाँ गये हैं।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 277)

यहाँ 'फोन करो' की आवृत्ति तीन बार हुई है, तो एवं 'गये हैं' की भी आवृत्ति तीन बार हुई है। अतएव यहाँ समतामूलक समानान्तरता है।

(7) अनुपमा आवेश में आ गयी, ''समझौते का रास्ता सिर्फ आपके लिये नहीं खुला है। दूसरों को भी समझौता करने की छूट है।''

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 293)

यहाँ समतामूलक समानान्तरता है। क्योंकि रास्ता खुला एवं छूट की बात कही गयी है।

(8) ''मेरे काम की सीमा है। लाइटिंग से तुम्हारे चेहरे के आसपास सिर्फ वातावरण बना सकता हूँ। तुम्हारे फीचर्स में तो संशोधन नहीं कर सकता। दरअसल तुम्हारे चेहरे के अनुरूप तुम्हारी नाक की बनावट बिल्कुल सही है।'

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 303)

यहाँ पर समतामूलक समानान्तरता है। यहाँ वर्षा वशिष्ठ के चेहरे तथा फीचर्स की प्रशंसा की गयी है। साथ ही 'तुम्हारे' सर्वनाम पद की भी तीन बार आवृत्ति हुई है।

(9) लेकिन कौतूहल भरी बात थी कि नींद पर उसे अजीब–सा नियंत्रण हो गया था।'' तुम कृपया दो घंटे बाद आना।'' नींद हामी में सिर हिला कर चली जाती। फिर दो घंटे बाद पलकों को नरमी से छूती।'' प्रिय नींद, एक और जरूरी काम आ गया है। एक घंटे के लिये माफी चाहूँगी।'' नींद निःशब्द फिर चली जाती।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 376)

यहाँ पर समतामूलक समानान्तरता है। क्योंकि यहाँ नीद पर नियंत्रण की बात ही सम्पूर्ण पैराग्राफ में कही गयी है। साथ ही 'नींद' शब्द की आवृत्ति चार बार, 'दो घंटे बाद' की आवृत्ति दो बार, एवं जरूरी शब्द की आवृत्ति भी दो बार हुई है।

(10) इसके बाद यकायक वर्षा ने पया कि वह 'लकी' मानी जा रही है। इसकी उसने यही 'व्याख्या' की कि जब विशेषज्ञों की हर गणित, हर तर्क, अंधी गली से टकराने लगे, हर अंदाज गलत

साबित हो हर भविष्यवाणी भौंचक्की पायी जाये, तो सवाल का एक ही जवाब होता है। लड़की लकी है।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 416)

यहाँ पर समतामूलक समानान्तरता है। क्योंकि वर्षा को लकी माना जा रहा है। एवं यहाँ 'हर' शब्द की आवृत्ति चार बार हुई है। तथा 'लकी' शब्द की दो बार।

(11) "क्षमा करें, न मैं नर सिंह से प्रभावित हुई, न मुझे उनकी पटकथा अच्छी लगी।" वर्षा ने नरमी से कह दिया।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 424)

यहाँ पर समतामूलक समानान्तरता है। क्योंकि न वर्षा नरसिंह से प्रभावित होती है और न उनकी पटकथा से। यहाँ पर 'न' वर्ण की आवृत्ति दो बार हुई है।

(12) "यह जिंदगी की कोई दार्शनिक पहेली है, जिसके लिये जिज्ञासा हो ?" पिता कुछ झुँझलाहट से बोले, "संसार का नैसर्गिक चक्र कैसे चलता है, मृत्यु के बाद आदमी कहाँ जाता है, यह जिज्ञासा है। हिमालय पर चढ़ने की कोशिश करना, साइकिल पर दुनिया का भ्रमण करना. .... यह एडवेंचर है। अपने घर में बैठकर आसव पीने में कौन–सा एडवेंचर है ?"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 525)

यहाँ पर समतामूलक समानान्तरता है। क्योंकि यहाँ पर 'जिज्ञासा' शब्द की आवृत्ति दोबार एवं एडवेंचर' शब्द की आवृत्ति भी दोबार हुई है।

विरोधमूलक समानान्तरता :

(1) बी.ए. पास करते–करते उसके सामने एक स्पष्ट, स्वावलम्बी दिशा होनी चाहिये। पर क्या हो सकता है ? सिर्फ बी.ए. की डिग्री के सहारे उसे कौन–सी नौकरी मिल सकती है ? वह शॉर्टहैंड–टाइपिंग का कोर्स कर सकती है, पर इस शहर में ढंग की नौकरी कहाँ मिलेगी?

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 23)

इसमें विरोधमूलक समानांतरता स्पष्ट है। पहले कथन में एक आशा का संचार होता है तो दूसरे कथन में एक निराशा का संचार हो रहा है।

(2) "जैसे रोगी यह समझकर औषधि पी लेता है कि इससे मैं अच्छा हो जाऊँगा, वैसे ही राजा दिलीप भी उन बैरियों को अपना लेते थे, जो भले होते थे और जैसे साँप के काटने पर लोग अपनी उँगली भी काटकर फेंक देते हैं, वैसे ही राजा दिलीप भी अपने उन सगे लोगों को निकाल बाहर करते थे, जो दुष्ट होते थे........"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 33)

यहाँ पर विरोधमूलक समानान्तरता है। लेखक पहले तो राजा दिलीप द्वारा भले बैरियों को अपनाने की बात करता है, दूसरे दुष्ट सगे लोगों को निकाल बाहर करने की बात करता है।

(3) "तुम्हारे तईं जवाबदेही समझकर सुप्रिया को तो मैं सँम्भाल लूँगा, लेकिन मेरे भीतर के इस अंधड़ को कौन संभालेगा ?"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 67)

यहाँ पर विरोधमूलक समानान्तरता है। लेखक पहले तो सुप्रिया को सँभालने की बात करता है, फिर अपने भीतर के अँघड़ को कौन सँभालेगा, इसकी बात करता है।

(4) "ऐसी भी क्या प्यास ...." के साथ उसने निसार के पास आ अपने अधखुले होंठों को चुम्बनामंत्रण के लिये प्रस्तुत कर दिया, पर निसार के लपकने से पहले ही सीत्कार भरती हुई तुरन्त पीछे हट गयी।"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 97)

यहाँ पर विरोधमूलक समानांतरता है। क्योंकि एक समय तो होठों को चुम्बनामंत्रण के लिये प्रस्तुत किया जा रहा है, और दूसरे ही क्षण पीछे हटा जा रहा है।

(5) नीना की जिस चुनौती को झेलने के तनाव से वर्षा डरी हुई थी, जब उसकी चरम सीमा का दिन आया, तो वैसी आशंका नहीं रही।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 138)

यहाँ पर विरोधमूलक समानांतरता है। क्योंकि एक बार तो चुनौती के तनाव से डरने की बात की जा रही है और दूसरी बार उस डर के समाप्त होने की बात की जा रही हैं

(6) वर्षा ने पहली बार स्नेह के चेहरे पर ऐसी झेंपी मुस्कान देखी, "क्या करूँ तुम लोगों ने पश्चिमी घाट जाते हुए मेरी उस दिशा की खिड़की बंद कर दी है। अब साँस लेने के लिये पूरब की खिड़की तो खोलनी ही होगी।"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 235)

यहाँ पर विरोधमूलक समानान्तरता है। क्योंकि एक खिड़की बंद करने की बात की जा रही है और दूसरी खिड़की खोलने की बात की जा रही है।

(7) इस क्षण अभिनेता क्या महसूस कर रहा है, यह महत्वपूर्ण नहीं है, बल्कि उसे देखता हुआ दर्शक क्या महसूस कर रहा है, यह महत्वपूर्ण है।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 250)

यहाँ पर विरोधमूलक समानान्तरता है। क्योंकि यहाँ पर अभिनेता क्या महसूस कर रहा है, इसे महत्वपूर्ण नहीं माना गया है, बल्कि दर्शक जो महसूस कर रहा है, उसे महत्वपूर्ण माना गया है।

(8) संतान होती किसलिये है ? मन का संताप दूर करने के लिये कि कलेजे में कटार भोंकने के लिये ?"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 310)

यहाँ पर विरोध मूलक समानान्तरता है। क्योंकि एक ओर तो संतान मन के दुःख को दूर करने वाली कही गयी है और दूसरी ओर वही दुःखी करने वाली प्रदर्शित की गयी है।

(9) 'मेरे जीवन का अश्रु–युग समाप्त हो रहा है। अब मुस्कान–युग की बेला है।'

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 375)

यहाँ पर विरोधमूलक समानानतरता है। क्योंकि एक ओर अश्रु–युग समाप्त होने की बात कही जा रही है तो दूसरी ओर मुस्कान–युग की बेला का वर्णन किया जा रहा है।

(10) अपना मखमली परिवेश पसंद था, चित्रनगरी में जो 'भाव' मिलता था, वह पसंद था। मित्रों के लिये कुछ कर सकने की शक्ति पसंद थी, पर प्राइवेसी का विलोप पसन्द नहीं था, जिसे पत्रिकाओं की उच्छृंखलता पसन्द नहीं थी और 'जलती जमीन' के बाद अभिनय–सामर्थ्य का निरन्तर क्षय पसन्द नहीं था।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 433)

यहाँ पर विरोध मूलक समानान्तरता है। क्योंकि एक ओर वर्षा अपनी पसन्द की बात कर रही है और दूसरी ओर वर्षा अपनी नापसंदगी का भी वर्णन करती है।

(11) 'न्यूयार्क टाइम्स' के नाट्य–समीक्षक ने चेतावनी दी थी, 'अगर बॉब होशियार नहीं रहेगा, तो सिनेमा में उसके स्टार बन जाने का खतरा है।'

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 23)

यहाँ पर विरोधमूलक समानान्तरता है क्योंकि यहाँ बॉब को होशियार रहने को कहा जा रहा है, नहीं तो वह स्टार बन जायेगा।

(12) "यह बहाना कब से चल रहा है ?" इस बार वर्षा को गुस्सा आ गया, "तुम पेशेवर नजरिये से सिनेमा में अब तक भटक रहे हो, यह मैं बर्दाश्त कर सकती हूँ। हमारे पास इसके लिये तर्क हैं। पर ड्रग्स पर तुम्हारी निर्भरता इतनी बढ़ गयी है, यह मैं और बर्दाश्त नहीं कर सकती।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 524)

यहाँ पर विरोधमूलक समानान्तरता है। क्योंकि एक ओर वर्षा अपने बर्दाश्त करने की बात कर रही है और दूसरी ओर बर्दाश्त न कर सकने की बात करती है।

(13) पिता ने कहा था, "झल्ली ने प्रेम करने की भूल जरूर की है, पर किया तो ब्राम्हण से है, इसलिये उसका गठबन्धन विवाह के आठ प्रकारों में सर्वोच्च्य 'ब्राह्म' माना जोयगा, जो माता–पिता की सहमति से होता है। पर हर्ष के साथ तुम्हारा परिणय सबसे नीची किस्म का 'पैशाचिक' ही रहेगा।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 533)

यहाँ पर विरोध मूलक समानान्तरता है। क्योंकि एक ओर तो ब्राह्म विवाह की उच्चता

एवं दूसरी ओर पैशाचिक विवाह की निकृष्टता का प्रदर्शन किया गया है।

मिश्रित समानान्तरता :

(1) "आप महान हैं।" हर्ष संजीदगी से बोला, "आपकी कोई महत्वाकांक्षा नहीं। लेकिन जिनकी है– कलाकार और व्यक्ति, दोनों के रूप में– वे क्या करें ?"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 187)

यहाँ पर मिश्रित समान्तरता है क्योंकि यहाँ पर एक ओर महत्वाकांक्षा और दूसरी ओर कोई महत्वाकांक्षा नहीं, को प्रदर्शित किया गया है। जिनकी महत्वाकांक्षा है वे क्या करें की भी अभिव्यक्ति की गयी है एक ओर तो इसमें समतामूलक समानांतरता है दूसरी ओर विरोध मूलक समानान्तरता है। अतएव दोनों समानांतरता एकत्रित होने के कारण मिश्रित समानांतरता है।

(2) "मैंने हर्ष के लिये बात की थी – टी.वी. पर प्रोड्यूसर की जगह और सांग–ड्रामा डिवीजन में डिप्टी डायरेक्टरशिप के लिये। "डैडी बोले," उसने दोनों का विरोध किया। क्या तुम लोगों के सर्किल में ये नौकरियाँ अच्छी नहीं मानी जाती ?"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 188)

यहाँ पर पहले टी.वी. पर प्रोड्यूसर एवं डिप्टी डायरेक्टरशिप के लिये बात की गयी थी। बाद में हर्ष इन दोनों का विरोध करता है। फिर उसके डैडी इन नौकरियों के विषय में पूछते हैं। अतएव परस्पर दो विरोधी बातों का वर्णन किया जा रहा है। अतएव यहाँ पर मिश्रित समानान्तरता है।

(3) "तुम स्वतंत्र हो लवंगलता। चाहों, तो चाणक्य के पास जा सकती हों। चाहो, तो मुझे समाप्त कर सकती हो।"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 222)

यहाँ पर चाणक्य के पास जाने की बात की जा रही है फिर समीर सेन स्वयं को मारने की बात करता है, साथ ही स्वतंत्र रहने की भी बात कही गयी। अतएव यहाँ मिश्रित समानान्तरता है।

(4) मैं तुमसे नाराज हूँ ? खुश हूँ। मुझे पता नहीं शायद इन दोनों के बीच कहीं हूँ। शायद इन दोनों से परे हूँ।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 237)

यहाँ पर मिश्रित समानान्तरता है। क्योंकि यहाँ पर पहले नाराज और खुश होने की बात कही गयी है। साथ ही इन दानों के बीच होने की इन दोनों से परे होने की बात भी की जा रही है। अतएव यहाँ मिश्रित समानान्तरता है।

(5) सुजाता पीछे तकिये से टिक गयीं, "जितना मैं तुम्हें जानती हूँ, उसके आधार पर कह सकती हूँ कि अब सैटिल होना तुम्हारी भी आन्तरिक जरूरत है। बाहरी जरूरत की बात मेरे अधिकार–क्षेत्र से बाहर है, पर तुम्हारी शुभचिंतक होने के नाते इतना कह सकती हूँ कि करोलबाग में किरायेदार बने रहना तुम्हारी खुशी और व्यक्तित्व के विकास के लिये उपयुक्त

नहीं है।"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 241)

यहाँ पर एक ओर वर्षा की सैटिल होने की आन्तरिक और दूसरी ओर बाहरी जरूरत की आवश्यकता पर बल दिया गया है। बाद में उसका किरायेदार बना रहना उपयुक्त नहीं माना गया है। अतएव यहाँ मिश्रित समानान्तरता है।

(6) चतुर्भुज वैसे ही निश्चल बैठे रहे। पता नहीं, क्या सोच रहे थे .... सुशील के बारे में अनुपमा के बारे में, या अपनी अस्तव्यस्त जिंदगी के बारे में............

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 450)

यहाँ पर मिश्रित समानान्तरता है। क्योंकि यहाँ पर सुशीला एवं अनुपमा के बारे में चतुर्भुज सोच रहे हैं अर्थात् निश्चित जिंदगी के बारे में, दूसरी ओर अपनी अस्तव्यस्त जिन्दगी के बारे में भी। और वे निश्चल बैठे पता नहीं क्या सोच रहे हैं। यह भी वर्णन किया गया है।

(7) "दोगली है जब मेरे सामने होती है, तो हाँ–हाँ करती है। जब मेधानी के सामने होती है, तब भी हाँ–हाँ करती है और जब हम सामने होते हैं, तो चुप रहती है।"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 511)

यहाँ पर रंजना हर्ष के सामने भी हाँ–हाँ करती है तथा मेधानी के सामने भी। लेकिन जब दोनों सामने होते हैं तो चुप रहती है। अतएव यहाँ पर दोनों समता मूलक समानान्तरता एंव विरोध मूलक समानान्तरता होने के कारण मिश्रित समानान्तरता है।

(8) "यह बहाना कब से चल रहा है ?" इस बार वर्षा को गुस्सा आ गया, "तुम पेशेवर नजरिये से सिनेमा में अब तक भटक रहे हो, यह मैं बर्दाश्त कर सकती हूँ। हमारे पास इसके लिये तर्क हैं। पर ड्रग्स पर तुम्हारी निर्भरता इतनी बढ़ गयी है, यह मैं बर्दाश्त नहीं कर सकती हूँ. ....कल के दिन तुम्हें कुछ हो गया, तो सुजाता और मम्मी मेरी ही गर्दन पकड़ेगी न ? सच्चाई छिपाते–छिपाते मैं बहुत थक गयी हूँ। तुम्हें ड्रग्स और मुझमें से एक का चुनाव करना होगा और जवाब मुझे अभी चाहिये।"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 524)

यहाँ पर मिश्रित समानान्तरता है। यहाँ एक ओर सिनेमा में भटकने पर बर्दाश्त करने की बात की जा रही है, दूसरी ओर ड्रग्स पर निर्भरता को बर्दाश्त न करने की बात की जा रही है। अतएव समतामूलक एवं विषमतामूलक समानान्तरता दोनों ही हैं। जब ये दोनों एक साथ हों तो वहाँ मिश्रित समानान्तरता होती है।

ध्वनीय समानान्तरता :

इसमें समान ध्वनियों की आवृत्ति होती है। यहाँ पर ध्वनीय समानान्तरता के कुछ उदाहरण वर्माजी ने प्रयुक्त किये हैं–

समध्वनीय :

वर्माजी द्वारा प्रयुक्त समध्वनीय समानान्तरता के कुछ उदाहण निम्नलिखित हैं–

(1) शिकोहाबाद की मुंगेरी देवी को अपने चिरंजीव दीनदयाल उपाध्याय के लिये दो साल से 'सुन्दर', सुशील और सात्विक' कन्या की तलाश थी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 25)

यहाँ सुन्दर, सुशील एवं सात्विक में समान ध्वनि आयी है। अतएव यहाँ समध्वनीय समानान्तरता है।

(2) बस गये द्वारका में मोहन वृंदावन आना छोड़ दिया, बंशीधर क्यों वंशीवट पर वंशी का बजाना छोड़ दिया। वे सपनों की–सी बातें थीं जो अपनों को तुम भूल गये, वेदना सही नहीं जाती है तुम छेद हृदय में शूल गये। तुम सच्चे प्रेमी बनते हो पर प्रेम निभाना छोड़ दिया।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 105)

यहाँ 'ना', 'या' वर्ण बार–बार आया है अतएव समान ध्वनि आने से समध्वनीय समानान्तरता है।

(3) "जैसे ही मैं धरती में धरती पर अया, मादर ने यमपुर का टिकट कटाया।
जिस दाई ने दूध पिलाया, उसको काल ने खाया।
वालिद ने पाला तो उनकी जान का निकल गया दिवाला।
किस्मत से एम.ए. का इम्तिहान दिया, तो बीबी ने आदम को कूच किया।
रेलवे में जो नौकरी पायी, तो सुबह–शाम रिश्वत खायी।'

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 105)

यहाँ पर 'य' वर्ण की आवृत्ति आठ बार एवं 'ल' वर्ण की आवृत्ति दो बार हुई है अतएव यहाँ समध्वनीय समानान्तरता है।

(4) "इन्कार की अदा है इक, इकरार बहुत हैं।
सच तो ये है कि प्यार में आजार बहुत हैं।
फरहाद जूये शीरी में डूबा तो क्या किया।
यां डूबने की चाह में तैयार बहुत हैं ...."

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 105)

यहाँ पर 'ह' वर्ण की आवृत्ति पाँच बार, 'र' वर्ण की आवृत्ति तीन बार एवं 'त' वर्ण की आवृत्ति तीन बार हुई है। अतएव यहाँ पर समध्वनीय समानान्तरता है।

(5) नयी स्कूल की संगीत शिक्षिका शान्ति से उसकी भेंट होती है। सुन्दर सरल और स्नेहमयी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 366)

यहाँ पर 'स' वर्ण की आवृत्ति छै बार एवं 'श' वर्ष की आवृत्ति दो बार हुई है अतएव

यहाँ पर समध्वनीय समानान्तरता है।

(6) कर्दम– वाटिका की च्युइंगम चबाने वाली भँवरियों में सहसा भनभनाहट होने लगी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 396)

यहाँ पर 'क' वर्ण की आवृत्ति दो बार एवं 'च' वर्ण की आवृत्ति दो बार तथा 'भ' वर्ण की, आवृत्ति तीन बार हुई है।

समध्वनि अक्षरीय समानान्तरता :

(1) "लोग क्या कहेंगे ?" यह एक असमर्थ पिता की कातर पुकार थी, जो थोड़ा लुंज–पुंज होने के बावजूद बेटी के सामने खड़ा होने की कोशिश कर रहा था।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 22)

समध्वनि अक्षरीय समानान्तरता, ध्वनीय समानान्तरता का एक उपभेद है यहाँ कुछ शब्दों जेसे 'लुंज–पुंज के अंतिम वर्ण 'ज' में समानता है।

(2) वर्षा वशिष्ठ रंगमंच पर अभिनय करेगी ? हा! हा! हा! दीपावली से जगमगाते स्टेज पर वर्षा वशिष्ठ सधे कदमों से आकर संवाद बोलेगी ? सैकड़ो जोड़ी आँखों के सामने वर्षा वशिष्ठ सहज–स्वाभाविक बनी रहेगी ? हा! हा! हा!

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 22)

यहाँ पर 'ग' वर्ण की आवृत्ति तीन बार एवं 'हा' वर्ण की आवृत्ति छै बार हुई है। अतएव यहाँ समध्वनि अक्षरीय समाान्तरता है।

(3) "मधुरभाषिणी, तुम्हारे वचन अमूर्त ध्वनियाँ नहीं, पुष्पों की लड़ियाँ हैं, जो तन–मन को सुवासित कर देती हैं।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 30)

यहाँ पर ध्वनियाँ लड़ियाँ एवं तन–मन शब्दों के 'याँ' एवं 'न' वर्ण में समानता हैं, साथ 'ह' अक्षर भी दो बार आया है, अतः यहाँ समध्वनि अक्षरीय समानान्तरता है।

(4) उठते–बैठते, सोते–जागते उसकी चेतना पर सौम्यदत्ता ही छायी रहती थी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 30)

यहाँ पर उठते–बैठते, सोते–जागते, शब्दों के 'त' वर्ण में समानता होने के कारण समध्वनि अक्षरीय समानान्तरता है।

(5) मन की गहनतम सतह पर भावविभोर होते हुए वर्षा पढ़ती रही–

'प्यारी–प्यारी कितनी तुम्हारी मुद्रायें प्रिये,

सौम्यमुद्रा, पोर–पोर मेरे मनमोर हो।।

आप रंगमंच पै चुराय लियो मेरो चैन,

चित्त झकझोर, ओ सलोने चितचोर हो।।

जहाँ–जहाँ देखूँ वहाँ दीख पड़े तेरी छवि,
सूरजमुखी रवी की, चाँद के चकोर हो।।
मिश्रीलाल कॉलेज के प्रांगण की विद्युत्लता,
शाहजहाँपुर के हिरदय की हिलोर हो।।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 42)

यहाँ पर समध्वनि अक्षरीय समानान्तरता है। क्योंकि 'र' वर्ण की आवृत्ति काई बार एवं 'ह' वर्ण भी छै बार तथा 'च' वर्ण की भी कई बार आवृत्ति हुई है।

(6) उसका जी चाहा कि कहे, अगर गुस्सा न मिटा तो ? तो वह क्या करेगी ? बाकी जिन्दगी गुस्सा मिटने की प्रतीक्षा करती रहेगी ? जिसके दौरान चंद बाल–गोपाल उसकी झोली में गिरते जायेंगे।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 45)

यहाँ पर समध्वनि अक्षरीय समानान्तरता है। क्योंकि वर्ण 'ग' की आवृत्ति तीन बार तथा 'ल' वर्ण की आवृत्ति दो बाद हुई है।

(7) उसमें कोई खोट हो, तो मन को समझा भी लूँ.......... रूप में ज्ञान में, गुण में............ सोने–सी है मेरी बिटिया............'' मम्मी पल्लू से आँखें पोछने लगीं।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 72)

यहाँ पर समध्वनि अक्षरीय समानान्तरता है क्योंकि वर्ण 'म' की आवृत्ति तीन बार हुई है।

(8) सिलबिल का सुखाया गया कपड़ा गुड़ीमुड़ी करके छत पर फेंकने, उसकी किताबों को तितर–बितर करने, सिलबिल के सामने खाने की थाली पटकने और रोटी जलाकर देने जैसी बारीकियों से मोहिनी ने संप्रेषण के नये प्रतिमान स्थापित किये।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 76)

यहाँ पर समध्वनि अक्षरीय समनान्तरता है। क्योंकि यहाँ 'न' वर्ण एवं 'ड़' वर्ण की आवृत्ति कई बार हुई है।

(9) अंक 1 से अंक 4 तक की नीना की दिनचर्या उसकी नोटबुक में थी– वह सुबह कितने बजे सोकर उठती होगी, क्या और कैसे खाती होगी, हर अंक में 'उसकी गतियों में कैसी चपलता, दुविधा, तेजी और तनाव होगा, वह कहाँ और कैसे बैठेगी, किस तरह और कितना मुड़ेगी, कैसे गहरी साँस लेगी, कैसे भाव से मृत हंसिनी को देखेगी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 137)

यहाँ पर समध्वनि अक्षरीय समानान्तरता है क्योंकि यहाँ पर 'ग' वर्ण कई बार आया है।

(10) रीटा के स्वर में आह्लाद लबालब था, तुम्हारे जैसे संवेदनशील व्यक्तित्व में यह अनुभव बड़ा मोहक निखार लायेगा.......... मैं कल्पना कर सकती हूँ तुम्हारे लाल जोड़े की मेंहदी लगे हाथों

की सिंदूर भरी माँग की..........''

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 196)

यहाँ पर समध्वनि अक्षरीय समानान्तरता है। क्योंकि यहाँ पर 'क' वर्ण कई बार आया है।

(11) क्या इन सबके आत्मसम्मान उसके आत्मसम्मान के आगे हीन हैं ? मजेदार तथ्य यह है कि उसकी परिवारिक पृष्ठभूमि इन सबसे हीन है।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 243)

यहाँ पर समध्वनि अक्षरीय समानान्तरता है। क्योंकि यहाँ पर 'ह' वर्ण तीन बार आया है।

(12) ''एक बार अम्बर में लगी नुमाइश भारी,
गीतकार को ईश्वर का आमंत्रण आया।
आओ स्वर के साधक, बेटे सरस्वती के,
तुमने कविता का प्रकाश जग में फैलाया।......

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 247)

यहाँ पर समध्वनि अक्षरीय समानान्तरता है। क्योंकि यहाँ पर 'आया' 'फैलाया' शब्दों में 'य' वर्ण दो बार आया है।

(13) 'मास्टर सीने' के त्रासद माहौल के बाद दोनों से मिलना वर्षा को ऐसा ही लगा, जैसे 'अनुरागीजनों को निर्मल सुगंधित जल, धुले हुए भवन का तल और मनोहारी वीणा के गीत मिल गये हों।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 363)

यहाँ पर समध्वनि अक्षरीय समानान्तरता हैं। क्योंकि यहाँ पर 'जल', 'तल', 'निर्मल, मिल के 'ल' वर्ण की आवृत्ति चार बार हुई है।

(14) 'इस समुन्दर में मौजे बिखरती रहीं, कुछ तमन्ना–ए–रंगी निखरती रहीं।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 420)

यहाँ पर बिखरती एवं निखरती में 'त' वर्ण दो बार आया है। साथ 'ह' वर्ण की आवृत्ति भी दो बार हुई है। अतएव यहाँ समध्वनि अक्षरीय समानान्तरता है।

(15) 'दायम पड़ा हुआ तेरे दर पर नहीं हूँ मैं खाक ऐसी जिन्दगी पै कि पत्थर नहीं हूँ मैं।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 439)

यहाँ पर 'र' वर्ण चार बार 'म' एवं 'ण' वर्ण दो बार तथा 'ह' वर्ण चार बार आया है अतएव यहाँ समध्वनि अक्षरीय समानान्तरता है।

(16) 'भीगी मोरी पीली सारी, बेदर्दी तेरी पिचकारी' गीत के बोल टेप से उभरने लगे।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 457)

यहाँ पर समध्वनि अक्षरीय समानान्तरता है। क्योंकि यहाँ पर 'मोरी' सारी, तेरी, पिचकारी शब्दों में 'र' वर्ण चार बार आया है।

शब्दीय समानांतरता :

वर्माजी द्वारा प्रयुक्त इसके कुछ उदाहरण निम्नलिखित हैं–

(1) अब हर तीसरे–चौथे के नाम में शर्मा लगा होता है। मेरे 'क्लास में ही सात शर्मा हैं....... और यशोदा ? घिसा–पिटा, दकियानूसी नाम। उन्होंने किया क्या था ? सिवा क्रिश्न को पालने के?'' सिलबिल ने पिता की ओर देखते हुए पल भर का विराम दिया, फिर उपसंहार कर दिया, ''यशोदा शर्मा नाम में कोई सुन्दरता नहीं।''

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 17)

यहाँ पर लेखक ने ''शर्मा' शब्द पर जोर देने के लिये 'शर्मा' शब्द का प्रयोग तीन बार किया है, साथ ही 'यशोदा' शब्द को भी दुहराया है। 'शर्मा' एवं 'यशोदा' शब्द पर बल देने के कारण यहाँ पुनरुक्ति या शब्दीय समानान्तरता है।

(2) एक पल का विराम देकर उसने उद्धरण प्रस्तुत कर दिया, ''देखो प्रिय, जल की फुहारों से भरे हुए मेघों के मतवाले हाथी पर चढ़ी हुई, चमकती विद्युत–पताकाओं को फहराती हुई और मेघ–गर्जना के नगाड़े बजाती हुई यह अनुरागीजनों की मनमानी वर्षा राजाओं का–सा ठाठ बनाये यहाँ आ पहुँची है।''

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 17)

यहाँ पर लेखक ने 'हुई' शब्द पर जोर देने के लिये इस शब्द का प्रयोग कई बार किया है। अतएव यहाँ पुनरुक्ति या शब्दीय समानान्तरता है।

(3) वर्षा सकुचा गयी। काली मनःस्थिति के दौर में उसने अनाप–शनाप लिख मारा था, 'मेरा बस चले, तो मैं आकाश की दहलीज पर बनी सात रंगों की इंद्रधनुषी अल्पना बनूँ, आश्रम में शकुन्तला की प्रिय 'वन–ज्योत्सना' सखी बनूँ, चन्द्रमा को देखकर खिल जाने वाली कुमुदनी बनूँ, पर जो अपने प्रदेश के अनुरूप दबी–सकुची मध्यमवर्गीय कन्या है, उसकी महत्वाकांक्षा की अन्तिम सीमा यही हो सकती है कि कोई लोअर–डिवीजन क्लर्क उसके हाथों से वरमाला स्वीकार कर ले और मामूली दहेज के बावजूद ससुराल के रसोईघर में उसके साथ कोई 'दुर्घटना' न हो.........

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 20)

यहाँ पर लेखक ने 'बनूँ' शब्द पर बल देने के लिये उसका कई बार प्रयोग किया हैं अतएव यहाँ शब्दीय समानान्तरता है।

(4) वह बोलने लगी, ''मयंक, मेरे जीवन को निपट अंधकार बनाकर चले गये तुम। .... तुम तो हमारे वंश का इतिहास लिखने आये थे। उस वंश को बचाने के लिये तुमने अपने प्राणों की आहुति दे दी ....

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 36)

यहाँ पर लेखक ने 'तुम शब्द पर बल देने के लिये उसका कई बार प्रयोग किया है। अतएव यहाँ पर शब्दीय समानान्तरता है। साथ ही 'वंश' शब्द का प्रयोग भी दो बार किया गया है।

(5) आषाढ़ के पहले दिन पर्वत–शिखर से मेघ को टकराते देखकर विरही यक्ष क्यों तड़प उठा, आश्रम में दुष्यंत से पहली भेंट के बीच शकुंतला ने मन–ही–मन अपने पर बस हो तब तो जाऊँ क्यों कहा और विक्रम से मिलने के बाद पारिजात–शैया पर लेटी हुई उर्वशी को नंनदनवन का शीतल पवन जलाने क्यों लगा ?

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 43)

यहाँ पर लेखक ने 'क्यों' शब्द पर बल देने के लिये उसका कई बार प्रयोग किया है। साथ ही 'मन' शब्द का प्रयोग भी दो बार किया है। इसलिये यहाँ शब्दीय समानान्तरता है।

(6) साथ था एक ट्रंक, एक अटैची, एक बिस्तर बंद, एक डोलची, एक थर्मस, एक पर्स और नाटे–से, किंचित गोल मटोल पति परमेश्वर।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 44)

यहाँ पर 'एक' शब्द पर बल देने के लिये, लेखक ने उसका प्रयोग कई बार किया है। अतएव यहाँ पर शब्दीय समानान्तरता है।

(7) स्वर में कुछ ऐसी अपमानजनक ध्वनि थी कि वह अपने पर नियंत्रण नहीं रख पायी, ''मेरी टीचर......... मेरी सहेली.......... मेरी सब कुछ...........'' उसने सीधे भाई से निगाह मिलायी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 47)

यहाँ पर लेखक ने 'मेरी' शब्द पर बल देने के लिये उसका कई बार प्रयोग किया है। अतएव यहाँ पर शब्दीय समानान्तरता है।

(8) पिता स्तब्ध रह गये, ''महराजिन ? .... कौन महराजिन ?

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 65)

यहाँ पर लेखक ने 'महराजिन' शब्द की पुनरुक्ति की है इसीलिये यहाँ पर शब्दीय समानान्तरता है।

(9) अभिनेत्री आइरीना, जो अपने युवा बेटे की अनुपस्थिति में बत्तीस वर्ष की है और उसकी मौजूदगी में तेतालीस वर्ष की जो मार्मिक ढंग से मंचन के बाद की करतल–ध्वनियों का जिक्र करती रहती है और 'अपने जीवन के अंतिम पृष्ठ' 'अपने मेकअप–बाक्स के समान स्वामित्व की भावना के साथ प्यार करती है, पर जो अपने कोष में कुछ सैकड़ा रूबल न बेटे कोत्स्या

को देती है और न अपने भाई सोरिन को।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 129)

यहाँ पर शब्दीय समानान्तरता है। क्योंकि यहाँ लेखक ने 'अपने' शब्द का प्रयोग सात बार किया है तथा वर्ष शब्द का प्रयोग दो बार एवं 'कोष' शब्द की भी पुनरुवित की है।

(10) उनके हर प्रदर्शन की शुरुआत में सारे कलाकार के मंच पर आंकर सामूहिक रूप से ब्रिश्ट की कविती 'ड्रामानिगार का नग्मा' का पाठ करते थे,–

'मैं हूँ नाटककार, दिखाता हूँ।

जो मैंने देखा है, देखा है मैंने।

कैसे इंसान को बेचा जाता है,

इंसानों के बाजारों में।

मैं वही दिखाता हूँ............'

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 164)

यहाँ पर शब्दीय समानान्तरता है। क्योंकि यहाँ 'देखा है मैने, शब्दों का प्रयोग दो बार किया गया है तथा 'दिखाता हूँ' की भी पुनरुक्ति हुई है।

(11) "कुआँरी लड़की चबर–चबर करती अच्छी नहीं लगती।" जिज्जी ने झिड़का।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 181)

यहाँ पर शब्दीय समनान्तरता है। क्योंकि यहाँ 'चबर' शब्द का प्रयोग दो बार हुआ है।

(12) वर्षा के कान सनसनाने लगे। सकुचाकर नीचे देखने लगी। कहना चाहा, जी, अभी नहीं। अभी जल्दी हैं अभी मेरे सामने कलात्मक चुनौतियाँ है। अभी मेरे और हर्ष के बीच में कुछ चुभने वाली नोंकें हैं अभी मुझे थोड़ा समय चाहिये।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 189)

यहाँ पर शब्दीय समानान्तरता है। क्योंकि यहाँ पर 'अभी शब्द का प्रयोग पाँच बार किया गया है। एवं 'मेरे' शब्द का प्रयोग भी दो बार हुआ है।

(13) तकिये में मुँह छिपाये वर्षा सिसकती रही–अपनी मजबूरी पर, अपने अकेलेपन पर, अपनी कलात्मक आकांक्षाओं पर.......

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 200)

यहाँ पर शब्दीय समानान्तरता है। क्योंकि यहाँ 'अपनी' शब्द की आवृत्ति दो बार हुई है एवं 'पर' शब्द भी तीन बार प्रयुक्त हुआ है।

(14) हर्ष का एक वाक्य, उसका एक स्पर्श, उसकी एक छवि वर्षा को दिन भर जिलाये, रखने की ऑक्सीजन सुलभ कर देती थी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 218)

यहाँ पर शब्दीय समानान्तरता है क्योंकि यहाँ 'एक' शब्द की आवृत्ति तीन बार हुई है।

(15) "मैं जा रहा हूँ। मेरी पत्नी अच्छी, भली स्त्री है। मैं एक और अकेले प्रेम........ मैं हूँ संतुष्ट, संतुष्ट, संतुष्ट ...."

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 244)

यहाँ पर शब्दीय समानान्तरता है। क्योंकि यहाँ 'संतुष्ट' शब्द की आवृत्ति तीन बार हुई है एवं 'मैं शब्द भी दो बार आया है।

(16) माशा ने गहरी साँस ली, "मैं हूँ ऊबी, ऊबी, ऊबी, ...

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 244)

यहाँ पर शब्दीय समानान्तरता है क्योंकि यहाँ 'ऊबी' शब्द की आवृत्ति तीन बार हुई है।

(17) "मैं इस बारे में कुछ नहीं कर सकती। पहले मुझे लगा कि वह अजीब है। फिर मुझे उसके लिये दुःख हुआ। फिर मैं उससे प्रेम करने लगी..... उसकी आवाज से, उसके शब्दों से, उसकी मुश्किलों से, उसकी दोनों बच्चियों से ......"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 251)

यहाँ पर शब्दीय समानान्तरता है क्योंकि यहाँ पर 'फिर' शब्द पर बल देने के लिये उसकी पुनरुक्ति की गयी है एवं 'उसकी' तथा 'से' शब्द को भी दुहराया गया है।

(18) चारु श्री ने मुस्कान के साथ उसे देखा, "आप यहाँ लंच पर बुलायी गयी हैं। उसके बिना आप कैसे जा सकती हैं ? आप हर्षजी की दोस्त हैं। और मेजबानी का जिम्मा मेरा है।"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 266)

यहाँ पर शब्दीय समानान्तरता है क्योंकि यहाँ पर 'आप' शब्द पर बल देने के लिये उसकी पुनरुक्ति की गयी है।

(19) कैसे–कैसे अनजान कोणों से, कैसे–कैसे मनोभावों की परतों में अंतरंगता बँधी चली आती हैं, उसने सोचा।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 275)

यहाँ पर शब्दीय समानान्तरता है क्योंकि यहाँ पर 'कैसे' शब्द की पुनरुक्ति चार बार हुई है।

(20) वर्षा के सामने स्कूल के दाखिला–इंटरव्यू की बौखलायी स्थिति से लेकर अब तक के कितने ही क्षण कौंध गये–अवहेलना के, पराजय के, हताशा के।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 276)

यहाँ पर शब्दीय समानान्तरता है।

(21) "मैंने बिल्कुल ठीक किया।" वर्षा बोली जब आपको दफ्तर फोन करो, तो फरीदाबाद फैक्टरी में गये हैं। घर फोन करो, तो मेमसाब के साथ डिनर पर बाहर गये हैं। छुट्टी के दिन फोन

करो, तो खेमका जी के यहाँ गये हैं।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 277)

यहाँ पर शब्दीय समानान्तरता है क्योंकि यहाँ पर 'फोन करो' शब्दों की तीन बार पुनरुक्ति हुई है एवं 'गये हैं' शब्दों पर बल देने के लिये उसकी पुनरुक्ति की गयी है।

(22) कैसा फैलता–फूलता है विवाह का बंधन। इसके सम्पन्न होते ही वर्धन परिवार के कितने ही सदस्यों से नाता जुड़ जायेगा– किसी की बहू, किसी की ननद, किसी की साली।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 330)

यहाँ पर शब्दीय समानान्तरता है क्योंकि यहाँ पर 'किसी की' शब्द को कई बार दुहराया गया है।

(23) ये छतें और दीवारें मेरी हैं, इन खिड़कियों और रोशनदानों पर मेरा स्वामित्व है, ये कमरे मेरी जागीर हैं, इस टेरेस पर मेरी प्रभुता है, यहाँ से बायें, दायें और सामने का जो पारावार है, उस पर वर्षा वशिष्ठ की अमूर्त पताका फहरा रही है।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 283)

यहाँ पर शब्दीय समानान्तरता हैं क्योंकि 'मेरी' शब्द को कई बार दुहराया गया है।

(24) ''वाङ्मय में मैने कहीं नहीं पढ़ा कि किसी ने अनुभव के लिये भी कुकर्म किये हों।'' पिता स्तब्ध रह गये, ''बाल्मीकि ने अनुभव के लिये डाके नहीं डाले, न वसंतसेना अनुभव के लिये नगरवधू बनी।''

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 525)

यहाँ पर शब्दीय समानान्तरता है क्योंकि यहाँ पर कहीं' एवं 'अनुभव के लिये' शब्दों की पुनरुक्ति की गयी है।

रूपीय समानान्तरता :

(1) जहाँ तक जगत–विसर्जन का सवाल है, वह हमेशा से गालिब के 'न कहीं जनाजा उठता' न कोई मजार होता' के कायल थे।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 106)

यहाँ पर 'उठता' एवं 'होता' के 'त' में रूपीय समानान्तता है।

(2) पर बार–बार हाँके के पशु की तरह खदेड़े जाने की अनिवार्यता, भाई की अवांछनीय कटुता और अपनी विरोधी दलीय के कारगर न हो पाने की संभावना ने मन पर लगा ढक्कन यकायक खोल दिया। (मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 123)

यहाँ पर 'अनिवार्यता' के 'त' एवं 'कटुता' के त वर्ण में रूपीय समानान्तरता है।

(3) ''मेरी मीठी माशा! मेरे प्यारी माशा !'' चिंतामणि संतोष की मुस्कान से पास आया।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 224)

यहाँ पर 'मेरी' एवं प्यारी के 'र' वर्ण में रूपीय संरचना की समानता है। तथा 'माशा' के 'श' वर्ण में भी रूपीय संरचना की समानता है।

(4) अपने को धैर्यपूर्वक माँजने और निखारने–सँवारने में डॉक्टर अटल के प्रति आभार व्यक्त किया था।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 257)

यहाँ पर 'माँजने', निखारने, सँवारने शब्दों में 'न' वर्ण में रूपीय संरचना की समानता है।

(5) अनुपमा ने बाँहों में भरकर उसे चूम लिया, ''बकरी, तू पेपर पढ़ती है या उसकी जुगाली करती है।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 275)

यहँ पर 'पढ़ती' एवं 'करती' शब्दों के 'त' वर्ण में रूपीय संरचना की समानता है।

(6) उसने थोड़ी–सी देर में, ''जय गोगा जी पीर की, जय दरेरा के बलबीर की, जय मेड़ी के धजाधीर की हाँक लगाने के बाद केसर कस्तूरी की आधी बोतल गटक ली थी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 303)

यहाँ पर रूपीय समानानतरता है। क्योंकि यहाँ पर 'जय' के 'य' वर्ण की संरचना में रूपीय समानान्तरता है। साथ ही 'की' शब्द के 'क' वर्ण में एवं गोगाजी पीर, धजाधीर, बलबीर के 'र' वर्ण में रूपीय समानान्तरता है।

(7) वर्षा ने हाथ आगे बढ़ा कर छूने का मूकाभिनय किया, ''मैं गीता पर हाथ रखकर कसम खाती हूँ कि जो भी कहूँगी, सच कहूँगी और सच के सिवाय कुछ नहीं कहूँगी।''

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 382)

यहाँ पर रूपीय समानान्तरता है। क्योंकि यहाँ 'ग' वर्ण की संरचना में रूपीय समानान्तरता है।

(8) ''इस समंदर में मौजें बिखरती रहीं, कुछ तमन्ना–ए–रंगी निखरती रहीं।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 420)

यहाँ पर रूपीय समानान्तरता है। यहाँ 'त' और 'ह' वर्ण की आंतरिक संरचना में रूपीय समानान्तरता है।

(9) 'दायम पड़ा हुआ तेरे दर पर नहीं हूँ मैं, खाक ऐसी जिन्दगी पै कि पत्थर नहीं हूँ मैं।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 450)

यहाँ पर रूपीय समानान्तरता है। यहाँ 'म' एवं 'ह' वर्ण की आंतरिक संरचना में रूपीय समानान्तरता है।

(10) इसमें पश्चिमी दर्शक को लुभाने वाली कई चीजें हैं– रहस्यमय पूर्व, शेर काशिकार, बाल विवाह, और सती दाह, हाथ पर बोलो, राजा–रानी और राजमहल–षड़यन्त्र साँपों के करतब,

सराबोर–नृत्य ....

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 466)

यहाँ पर 'श' स एवं ष वर्ण की आंतरिक संरचना में रूपीय समानान्तरता है। साथ ही 'र वर्ण की आंतरिक संरचना में रूपीय समानान्तरता है।

वाक्यांशीय समानांतरता :

(1) उसकी पदचाप सुनते हुए पिता गहरी साँस लेकर धीरे–से बोले, "कविकुल–तिलक ने ठीक ही कहा है अपने हाथ से सींचे हुए विष–वृक्ष को अपने ही हाथ से कोई कैसे काट सकता है।"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 18)

यहाँ पर 'अपने हाथ से' वाक्यांश को दुहराया गया है, अतएव यहाँ वाक्यांशीय समानांतरता है।

(2) उसका जी चाहा, रवीन्द्र भवन की छत पर चढ़ जाये और ऊँची पुकारों से सारे इलाके को गुंजायमान कर दे, "मैं स्त्री बन गयी हूँ। मैं स्त्री बन गयी हूँ !"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 212)

यहाँ पर वाक्यांशीय समानांतरता है। यहाँ दो उपवाक्य समानान्तर आये हैं।

(3) इस क्षण अभिनेता क्या महसूस कर रहा है, यह महत्वपूर्ण नहीं है, बल्कि उसे देखता हुआ दर्शक क्या महसूस कर रहा है, यह महत्वपूर्ण है।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 250)

यहाँ पर वाक्यांश समानांतरता है। साथ ही समतामूलक समानांतरता भी है और विषमता मूलक समानांतरता भी।

(4) मम्मी ने अपनी भरपूर दृष्टि से जैसे वर्षों के सहयोग को अभिव्यक्त कर दिया, "हम तुम्हें डॉक्टर बनाना चाहते थे। तुमने कहा, मेरी दिलचस्पी म्यूजिक में है। मैंने कहा, ठीक है। फिर तुमने कहा, मेरी दिलचस्पी ड्रामा में है। मैंने कहा, ठीक है।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 310)

यहाँ पर वाक्यांश समानान्तरता है। साथ ही यहाँ विरोधमूलक समानान्तरता भी है।

(5) हाँ, जिस्मानी प्रदर्शन में वह खूब माहिर थी। निचले अधर को दाँतों–तले दबाकर उत्तेजना पैदा करना, अधखुली आँखों से मस्ती टपकाना, वक्ष–रेखा उजागर करना, उरोजों को मादक ढंग से हिलाना, नितंबों के साथ अठखेलियाँ करना, द्विअर्थी संवाद में धार देने के लिये कमर लचकाना............ऐसी कुशलता उसने वर्षा के साथ के दृश्य में ही दिखा दी थी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 349)

यहाँ पर वाक्यांशीय समानान्तरता है।

अर्थीय समानान्तरता :

(1) ''तुम्हारी मुश्किल मेरे लिये परेशानी कब से बन गयी ?'' दिव्या ने उसकी ओर देखा।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 228)

यहाँ अर्थीय समानान्तरता है। क्योंकि मुश्किल एवं परेशानी दोनों में ही अर्थ के स्तर पर समानता है।

(2) ''वर्षा दीदी न ?'' वह हँसी, ''आप तो बारिश लेकर आयीं।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 260)

यहाँ अर्थीय समानान्तरता है। क्योंकि वर्षा एवं बारिश दोनों में ही अर्थ के स्तर पर समानता है।

(3) वहाँ मैं कसा–बंधा महसूस करती हूँ।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 263)

यहाँ अर्थीय समानान्तरता है। क्योंकि कसा एवं बँधा एक प्रकार से पर्याय ही हैं।

(4) अनुपमा आवेश में आ गयी, ''समझौते का रास्ता सिर्फ आपके लिये नहीं खुला है। दूसरों को भी समझौता करने की छूट है।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 293)

यहाँ अर्थीय समानान्तरता है। क्योंकि खुला एवं छूट दोनों समानार्थी हैं।

(5) स्नेह और चतुर्भुज की बाँह पकड़ते हुए भरे गले से बोली, 'मुझ पर ऐसे आरोप मत लगाओ। मैं डिफैक्ट नहीं कर रहीं हूँ।''

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 294)

यहाँ अर्थीय समानान्तरता है क्योंकि 'मत' एवं नहीं, दोनों शब्द समानार्थी है।

(6) इतने वर्षों में उसकी यही तो कमाई है......... अमूर्त कला और इनकी आत्मीयता एवं सौहार्द।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 294)

यहाँ पर अर्थीय समानान्तरता है। क्योंकि आत्मीयता एवं सौहार्द दोनों ही समानार्थी हैं।

(7) तुमने अपने मन पर रखी दुख की सिल एक निगाह से उजागर कर दी। नयी उम्मीद के मौसम को मुस्कान की एक रेखा और आँखों की लमहे भर की चमक से झलका दिया।''

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 301)

यहाँ पर अर्थीय समानान्तरता है। क्योंकि 'उजागर करना' एवं 'झलका देना' दोनों समानार्थी हैं।

(8) वर्षा को सिद्धार्थ की कुछ बातें विशेष रूप से पसंद आयी थीं........ हर स्थिति में धीरज बाँधे रहना, आपा न खोना।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 302)

यहाँ पर अर्थीय समानान्तरता है। क्योंकि 'धीरज बाँधे रहना' एवं 'आपा न खोना' दोनों समानार्थी हैं।

(9) कुछ क्षणों का आवेग बहुत तीक्ष्ण था, "बचपन से लेकर अब तक तुम्हारी कौन–सी ख्वाहिश नहीं मानी ? तुम्हारी कौन–सी चाह में रुकावट डाली ?

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 30)

यहाँ पर अर्थीय समानान्तरता है। क्योंकि ख्वाहिश एवं चाह दोनों में अर्थ की समानता है।

(10) सिद्धार्थ ने उसका छोटा, संक्षिप्त चुंबन लिया।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 334)

यहाँ पर अर्थीय समानान्तरता हैं क्योंकि छोटा एवं संक्षिप्त वस्तुतः समानार्थी हैं।

(11) ये छतें और दीवारें मेरी हैं, इन खिड़कियों और रोशनदानों पर मेरा स्वामित्व है, ये कमरे मेरी जागीर हैं, इस टेरेस पर मेरी प्रभुता है, यहाँ से बांयें, दायें और सामने सागर का जो पारावार है, उस पर वशिष्ठ की अमूर्त पताका फहरा रही है।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 383)

यहाँ पर अर्थीय समानान्तरता है क्योंकि स्वामित्व, जागीर, प्रभुता सभी समानार्थी हैं।

(12) हमारे बीच कुछ भी निजी और व्यक्तिगत नहीं।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 384)

यहाँ पर अर्थीय समानान्तरता है। क्योंकि निजी और व्यक्तिगत दोनों ही समानार्थी हैं।

(13) "अरहर्" झुमकी खिलखिलायी, "अच्छा, अगर तुम एक रुपया सब्जी वाले .....सॉरी, भाजी वाले को देकर 'हरा मसाला' माँगो, तो वह तुम्हें क्या देगा ?

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 390)

यहाँ पर अर्थीय समानान्तरता है। क्योंकि सब्जी वाला और भाजीवाला दोनों ही समानार्थी हैं।

(14) शब्दावली शिष्ट एवं शालीन थी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 391)

यहाँ पर अर्थीय समानान्तरता है। क्योंकि शिष्ट एवं शालीन दोनों ही शब्द समानार्थी हैं।

(15) "पांडेजी, मैं आज जहाँ हूँ, वहाँ अपने काम और कुछ मित्रों की मदद के बूते पर हूँ, स्कैंडल और पब्लिसिटी के सहारे नहीं।"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 407)

यहाँ 'मदद' एवं 'सहारा' दोनों शब्दों में ही अर्थगत समानता है। अतएव यहाँ अर्थीय समानान्तरता है।

(16) डॉक्टर मर्चेंट ने कहा था, व्यसनी में सबसे पहले सुधरने की चाह और तीव्र इच्छा शक्ति होनी चाहिये।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 523)

यहाँ पर अर्थीय समानान्तरता ही है क्योंकि चाह एवं इच्छा दोनों ही शब्द समानार्थी हैं।

(17) ''तुमने एक ऐतिहासिक समानता नोट की है ?'' हर्ष ने कहा ''जैसे ब्रेंड और क्लिफ्ट के एजेंट समान थे, वैसे ही हम दोनों के प्राइवेट सेक्रेटरी भी एक ही हैं।''

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं.)

यहाँ पर अर्थीय समानान्तरता है। क्योंकि समान एवं 'एक ही' दोनों शब्द समानार्थी हैं।

(18) अब हर्ष यहाँ कभी बैठा नहीं मिलेगा......... हतो वा प्राप्स्यसि स्वर्गं जित्वा वा मोक्ष्यसे महीम् स्वामीजी ने कहा था .... अगर तू मारा जायेगा, तो तुझे स्वर्ग मिलेगा।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 552)

यहाँ पर अर्थीय समानान्तरता है।

प्रोक्तिस्तरीय समानान्तरता :

(1) ....चलो, मैं दुपट्टा हटाकर एक झलक दिखा भी दूँ तो तुम्हारा क्या भरोसा.........कहने लगो, रेहाना, मैं हीरे छूना चाहता हूँ। .... चलो, पड़ोस का लिहाज करके मैं तुम्हें अपने हीरे छू भी लेने दूँ तब भी तुम्हारा क्या एतबार.......... कहने लगो, रेहाना, जहाँ हीरे चमक रहे हैं, मैं वहाँ वोसा लेना चाहता हूँ।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 97)

यहाँ पर प्रोक्तिस्तरीय समानान्तरता है।। यहाँ..... 'चलो' 'कहने लगो' एवं 'चाहता हूँ' शब्द दो बार प्रयुक्त हुए हैं। साथ ही एतबार एवं भरोसा शब्द आने से भी अर्थीय समानान्तरता भी है।

(2) संबद्ध अधिकारी टी.एन. खीमा ने उनके सामने बाबूशाही के अकाट्य तर्क पेश किये, ''आपने मुझे जौनपुर से पत्र क्यों लिखा ? वह इलाहाबाद कार्यालय को जाना चाहिये था। आपने मुझे जबलपुर से पत्र क्यों लिखा ? वह भोपाल कार्यालय को जाना चाहिये था।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 106)

यहाँ पर प्रोक्तिस्तरीय समानान्तरता है। यहाँ 'आपने मुझे' एवं पत्र क्यों लिखा' शब्द दो बाद आये हैं तथा 'कार्यालय को जाना चहिये था' शब्द भी दो बार आये हैं।

(3) उसका चेहरा कितना पारदर्शी है। कभी–कभी लगता है, जैसे चेहरा नहीं आईना है, जिसमें अंदर की एक–एक नस और रक्त की एक–एक बूँद देखी जा सकती है।'' वर्षा बोली।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 114)

यहाँ पर प्रोक्तिस्तरीय समानान्तरता है। क्योंकि यहाँ 'चेहरा' शब्द का प्रयोग दो बार एवं

कभी–कभी शब्द दो बार तथा एक–एक शब्द की दो बार आवृत्ति हुई है।

(4) उसका जी चाहा, रवींन्द्र भवन की छत पर चढ़ जाये और ऊँची पुकारों से सारे इलाके को गुंजायमान कर दे, "मैं स्त्री बन गयी हूँ। मैं स्त्री बन गयी हूँ।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 121)

यहाँ पर प्रोक्तिस्तरीय समानान्तरता है। क्योंकि यहाँ 'मैं स्त्री बन गयी हूँ' वाक्य दो बार प्रयुक्त हुआ हैं।

(5) "वर्षा, 'मैं उन्हें प्यार करती हूँ' में गहराई चाहिये।' डॉक्टर अटल ने टोका," आगे तुमने एक लाइन छोड़ दी है– 'मैं उन्हें तन्मयता से डूबते हुए की तरह प्यार करती हूँ।'

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 135)

यहाँ मैं उन्हें प्यार करती हूँ' वाक्य दो बार प्रयुक्त हुआ है।

(6) चपल प्रफुल्लता से आगे–आगे चलती हुई वर्षा मुस्कुरायी, "बस नरेश, आ ही गया समझिये। इस उपवन के बाद निर्मल निर्भर है, उसके बाद हरित अमराई है, फिर सरसों के पीले–पीले खेत हैं, फिर पावन सरोवर है, फिर गणेशजी का मंदिर उसके बाद फिर निर्मल निर्झर है, फिर हरित अमराई है फिर सरसों के पीले–पीले खेत हैं, फिर पावन सरोवर है, फिर योगमाया का मंदिर। ....बस आ ही गया समझिये........."

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 167)

यहाँ प्रोक्तिस्तरीय समाान्तरता है। यहाँ पर 'बस नरेश, आ ही गया समझिये' वाक्य की पुनरावृत्ति हुई है। 'बाद निर्मल निर्झर है' की भी दो बार आवृत्ति हुई है। 'हरित अमराई है, फिर सरसों के पीले–पीले खेत हैं, फिर पावन सरोवर है, तथा मन्दिर आदि वाक्यों की पुनरावृत्ति हुई है। यहाँ वाक्य स्तरीय समानान्तरता भी है।

(7) वर्षा ने आवेग के साथ कहा "चरणों की धूल चरणों से अलग हो सकती है।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 180)

यहाँ पर प्रोक्तिस्तरीय समानान्तरता है। यहाँ पर 'चरणों' शब्द की आवृत्ति दो बाद हुई है।

(8) 'अभी मेरा कुछ भी निश्चित नहीं। अभी मेरा कुछ भी स्थिर नहीं।' उसने ठंडी साँस लेकर सोचा, 'न मेरे हाथों में लगाम है, न मेरे पाँवों में रकाब, और उम्र का घोड़ा तेज–तेज दौड़े जा रहा है..............'

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 185)

यहाँ पर प्रोक्तिस्तरीय समानान्तरता है। साथ ही समतामूलक समानान्तरता भी है। यहाँ 'अभी मेरा कुछ भी नहीं, शब्द दो बार आये हैं एवं 'न मेरे में' शब्द भी दो बार दुहराये गये हैं। साथ ही 'तेज' शब्द भी दो बार आया है।

(9) स्नेह ने गहरी साँस ली, "अगर कलकत्ते में मूड़ी खाते हुए मैंने स्कूल का दाखिला नोटिस न देखा होता, तो कम–से–कम मेरा व्यक्तिगत जीवन भरापूरा होता। डॉक्ट्रेट के बाद भागलपुर में अध्यापिकी मिल गयी होती। घर–बार होता। जिन्दगी की एक दिशा और गन्तव्य होता।"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 245)

यहाँ पर प्रोक्तिस्तरीय समानान्तरता है। यहाँ पर 'होता' शब्द की पुनरावृत्ति चार बार हुई है एवं 'कम' शब्द दो बार आये हैं यहाँ समतामूलक समानानतरता भी है।

(10) मैं संतुष्ट हूँ। मूछें हों या नहीं, पर मैं संतुष्ट हूँ।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 249)

यहाँ पर प्रोक्तिस्तरीय समानान्तरता है। यहाँ पर 'मैं सन्तुष्ट हूँ' शब्द दुहराये गये हैं।

(11) इस क्षण अभिनेता क्या महसूस कर रहा है, यह महत्वपूर्ण नहीं है, बल्कि उसे देखता हुआ दर्शक क्या महसूस कर रहा है, यह महत्वपूर्ण है।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 250)

यहाँ पर प्रोक्तिस्तरीय समनान्तरता है। क्योंकि यहाँ 'क्या महसूस कर रहा है' एवं 'यह महत्वपूर्ण है' दुहराये गये हैं।

(12) फिर मुझे उसके लिये दुख हुआ। फिर मैं उससे प्रेम करने लगी उसकी आवाज से, उसके शब्दों से, उसकी मुश्किलों से, उसकी दोनों बच्चियों से.........

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 251)

यहाँ पर प्रोक्तिस्तरीय समानान्तरता है क्योंकि यहाँ 'फिर', उसकी, तथा 'से' शब्द दुहराये गये हैं।

(13) पुरवाई के भाव से वर्षा समझ गयी, उन्हें यह कार्यक्रम रुचिकर नहीं है। वर्षा को भला लगा कि वह काफी दिनों से इधर नहीं आया। अगर चतुर्भुज लम्बे प्रवास के बाद दिल्ली नहीं आये होते, तो आज की इस शाम भी साथ होने की नौबत नहीं आती।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 277)

यहाँ प्रोक्तिस्तरीय समानान्तरता है। क्योंकि यहाँ 'नहीं' शब्द को चार बार दुहराया गया है।

(14) उसने थोड़ी–सी देर में "जय गोगाजी पीर की, जय दरेरा के बलबीर की, जय मेड़ी के धजाधीर की" हाँक लगाने के बाद के सर कस्तूरी की आधी बोतल गटक ली थी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 303)

यहाँ प्रोक्तिस्तरीय समानान्तरता है। क्योंकि 'जय' एवं 'की' को कई बार दुहराया गया है।

(15) "मम्मी ने अपनी भरपूर दृष्टि से जैसे वर्षा के सहयोग को अभिव्यक्त कर दिया, 'हम तुम्हें

डॉक्टर बनाना चाहते थे। तुमने कहा, मेरी दिलचस्पी म्यूजिक में है। मैंने कहा ठीक है। फिर तुमने कहा, मेरी दिलचस्पी ड्रामा में है। मैंने कहा, ठीक है।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 310)

यहाँ पर प्रोक्तिस्तरीय समानान्तरता है। क्योंकि यहाँ 'तुमने कहा मेरी दिलचस्पी में है' एवं मैंने कहा ठीक है' वाक्य दोहराये गये हैं।

(16) सिद्धार्थ झोपड़ी में वर्षा को दृश्य समझा रहा था, बालू के ढूह पर चलने का ढंग दिखा रहा था, दोनों कैनवास की कुर्सी पर बैठे हँस रहे थे, सिद्धार्थ ऊँट पर बैठी वर्षा को सलाम कर रहा था, सिद्धार्थ उसके घुटने की खरोंच पर फाहा रख रहा था।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 314)

यहाँ पर प्रोक्तिस्तरीय समानान्तरता है। क्योंकि यहाँ 'रहा था' शब्द को कई बार दुहराया गया है। साथ ही 'सिद्धार्थ' एवं 'वर्षा' तथा 'पर' शब्द भी कई बार दुहराये गये हैं।

(17) राजधानी एक्सप्रेस में पहली बार बैठने और बंबई पहली बार आने की तरंग कुछ मंद पड़ गयी थीं।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 318)

यहाँ पर प्रोक्तिस्तरीय समानान्तरता है। क्योंकि यहाँ पर 'पहली बार' शब्द को दुहराया गया है।

(18) दाखाँ झोपड़ी में लालटेन जला रही थी .... दाखाँ बालू के ढूहों के बीच बैरायी हुई सी भाग रही थी.......... दाखाँ चाँदनी रात में सुधबुध भूलकर नाच रही थी ....

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 322)

यहाँ पर प्रोक्तिस्तरीय समानान्तरता है। क्योंकि यहाँ 'दाखाँ' एवं 'रही थी' शब्द दुहराये गये हैं।

वर्माजी ने अपने उपन्यास में अनेक स्थानों पर पूरे–पूरे वाक्यों एवं पैराग्राफों को भी दुहराया है। जो कि प्रोक्तिस्तरीय समानांतरता के उत्कृष्ट उदाहरण हैं। इनमें से कुछ उदाहरण निम्नलिखित हैं–

(19अ) उन्हें जाते हुए देखकर वह यह कहने का साहस नहीं जुटा पायी थी कि मेरी और आपकी सुख की परिभाषा अलग–अलग है।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 48)

(19ब) जैसे एक बार प्रागैतिहासिक काल में वह महादेव भाई से कच्ची उम्र के कारण नहीं कह सकी थी कि मेरी और आपकी सुख की परिभाषा अलग–अलग है वैसी ही आज अपने ही घर में पिता को चोट पहुँचाने की आशंका से चुप रह गयी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 532)

यहाँ पर प्रोक्ति स्तरीय समानान्तरता है। क्यों यहाँ पर 'मेरी और आपकी सुख की परिभाषा अलग–अलग है वाक्य दोहराया गया है ये दो अलग समय के प्रसंगों पर कही गयी उक्तियाँ हैं।

पहली उक्ति वर्षा अपने भाई से कह रही है दूसरी बार वही बात अपने पिता से कहती है।

(20) जैसे ही फ्लोर नंबर एक के सामने रुकी, बाहर खड़ा हुआ करीम का प्रमुख सहायक मजीद चिल्लाया, "वर्षा जी आ गयीं।"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 394)

यह पुकार दो–तीन व्यक्तियों के द्वारा अन्दर तक दुहरायी गयी, "वर्षा जी आ गयीं।"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 395)

यहाँ पर भी प्रोक्तिस्तरीय समानान्तरता है क्योंकि यहाँ पर 'वर्षाजी आ गयीं। वाक्य को दुहराया गया है।

(21अ)उसे घेरे औरतें ढोलक की थाप पर गा रही थीं ...... बन्ना मेरा रंग बिरंगा छैलो का सरताज. .... सामने बड़े थाल में वरपक्ष को जाने वाली भेंट सामग्री थी– फल–मिठाई, नारियल, सूट का कपड़ा, पाँच सौ एक नकद।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 85)

(21ब) इसरार पर एक गाना वर्षा ने भी छेड़ा– 'बन्ना मेरा रंगरंगीला छैलों का सरताज........।"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 162)

यहाँ पर प्रोक्तिस्तरीय समानान्तरता है। प्रथम बार गाना वर्षा के घर पर गाया गया है। एवं दूसरी बार दिल्ली में उसी गाने को सुजाता के विवाह के अवसर पर गा रही है।

(22अ)"देखो, सिलबिल तो चली।" अनुष्टुप बोला।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 88)

यहाँ पर दोनों ही वाक्यों में प्रोक्तिस्तरीय समानान्तरता है। प्रथम बार यह वाक्य अनुष्टुप वर्षा के विवाह निश्चित हो जाने पर कहता है दूसरी बार यही वाक्य वर्षा के दिल्ली जाने से पूर्व कहता है।

(23अ)'ओ मेरे अभिशप्त सपने, खिलने के लिये मुँहबंद कलियों में स्फरण हुआ ही था कि डूबती हुई रश्मियाँ मुर्झाने का संदेश ले आयी' कहते हुये वह विषपात्र एक दम पी जाती थी, जब कि कुछ पल उदास मुस्कान से पात्र देखते हुए उसे धीरे–धीरे ऊपर उठाना था और अपने ऊपर केन्द्रित प्रकाश–वृत्त के तीव्र हो जाने पर उसे मुँह से लगाना था।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 36)

(23ब) संवाद के दौरान वर्षा के मन के एक स्तर पर बार–बार बैंड की ध्वनियाँ तीव्र हुईं, जिज्जी

की दस्तक ऊँची हुई, भास्कर के सिर्फ चेहरे ने उसे प्रेम–संदेश दिया, पर बार–बार उसके मुँह से थूक का फेन ही गिरा, सुहाग–शैया पर क्रोधोन्मत्त भास्कर ने उसकी नग्न पीठ पर बैसाखी से वैसे ही तीक्ष्ण प्रहार किये, जैसे भाई ने छड़ों से किये थे, अट्टहास करते हुये पिता और भाई ने उसके घावों पर नमक छिड़का .... व्यथा की गहन रेखाओं के साथ उसने विषपात्र को देखा, ''ओ मेरे अभिशप्त सपने, खिलने के लिये मुँहबंद कलियों में स्फरण हुआ ही था कि डूबती हुई रश्मियाँ मुर्झाने का संदेश ले आयी।......... और अनजाने ही उसकी आँखों में दो नन्हें–नन्हें आँसू आ गये। ....

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 93)

यहाँ पर प्रोक्तिस्तरीय समानता है। क्योंकि दोनों पैराग्राफ में कुछ पंक्तियाँ पूर्णतया दुहरायी गयी हैं।

प्रथम पैराग्राफ में उद्धरित पंक्तियाँ वर्षा के ड्रेस–रिहर्सल के समय की हैं एवं द्वितीय पैराग्राफ में वर्षा उसी संवाद को दिल्ली में निर्णायक–मंडल के सामने दोहरा रही है।

(24अ) पहले सब कुछ कितना भला था कोस्त्या। जिन्दगी, कितनी पावन, ऊष्म और निष्पाप थी'

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 135)

(24ब) तभी वह ललक के साथ पुराने जीवन को याद करती है–'जो कितना पावन, ऊष्म और निष्पाप था।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 136)

यहाँ पर प्रोक्तिस्तरीय समानान्तरता है क्योंकि 'पावन, ऊष्म तथा निष्पाप' को दोनों ही वाक्यों में दुहराया गया है। ये दोनों दो अलग प्रसंग पर कहे गये हैं। पहले वाले वाक्य में वर्षा नाटक हंसिनी' का वाचन कर रही है तब अभिनेत्री नीना के रूप में उसकी पहले की जिन्दगी को याद कर रही है। दूसरी बार उसी संवाद को डॉक्टर अटल के सामने, दुहरा रही है।

(25अ) काश, मैं थोड़ी देर सुस्ता सकती............. कोस्त्या, अब मुझे महसूस होता है कि जिस चीज का हमारे पेशे में महत्व है, वह यश नहीं, बल्कि सहने की क्षमता है–अपना दायित्व निभाओ और विश्वास रखो।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 135)

(25ब) धीरे–धीरे उसकी मनः स्थिति चौथे अंक की नीना की परिणति के अनुरूप हो गयी थी– 'जिस चीज का हमारे पेशे में महत्व है, वह यश नहीं, बल्कि सहने की क्षमता है–अपना दायित्व निभाओ और विश्वास रखो।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 138)

(25स) ''अब आहिस्ता–आहिस्ता मैने 'सीगल' की नीना की मान्यता स्वीकार कर ली है कि जिस चीज का हमारे पेशे में महत्व है, वह यश नहीं, बल्कि सहने की क्षमता है। अपना दायित्व

निभाओं और विश्वास रखो।"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 568)

यहाँ पर तीनों पैराग्राफों में प्रोक्तिस्तरीय समानान्तरता है। ये तीनों वाक्य तीन अलग–अलग प्रसंग पर कहे गये हैं। पहले वाले वाक्य को वर्षा वशिष्ठ नाटक हसिनी के चौथे अंक को लिख रही है। एवं दूसरे पैराग्राफ में अपनी मनः स्थिति की तुलना वर्षा इन्हीं पक्तियों से कर रही है। तथा तीसरे पैराग्राफ में यही पंक्तियाँ वर्षा वंदना भवालकर के प्रश्न के उत्तर में अपने अभिनय सोचने की समाप्ति पर अपनी प्रतिक्रिया बता रही है।

(26अ)"अपना जीवन सँवारो बहन!" जिज्जी ने कुछ वर्ष पहले कहा था।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 75)

(26ब) "अपना जीवन सँवारो, बहन!" जिज्जी ने कहा था।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 409)

यहाँ पर दोनों वाक्यों में प्रोक्तिस्तरीय समानान्तरता है। प्रथम वाक्य वर्षा की बहिन गायित्री ने कुछ वर्ष पूर्व कहा था, दूसरे वाक्य में वर्षा अपनी बहिन की वही बात याद कर रही है।

(27) "जुगनी........" वर्षा ने जुगनी की अनुकृति में तान ली, "मैं कब करूँ सोलहसिंगार ? मुँह अँधेरे निकल जाना होता है मुझे/जलती दोपहर तक पहुँचती हूँ भीड़ भरे कुयें पर/दो घड़ों को भरते–भरते शाम ढल जाती है/चाँद फीका होने लगता है घर पहुँचते–पहुँचते/ओ पगड़ी वाले साजन मैं कब करूँ सोलह सिंगार ?" पल भर चुप्पी रही। (पृ.सं. 314)

यहाँ पर मैं कब करूँ सोलह सिंगार' वाक्य को दो बार दुहराया गया है। अतएव यहाँ प्रोक्तिस्तरीय समानान्तरता है।

विवेच्य उपन्यास में अन्तर्पाठीय समानान्तरता :

समानान्तरता का एक रूप अन्तर्पाठों की समानान्तरता है। ऐसे अन्तर्पाठों से कृति का शैली सौन्दर्य बढ़ जाता है। कहना न होगा कि "मुझे चाँद चाहिये" के लेखक ने अपने उपन्यास में अन्तर्पाठों का बहुविध उपयोग किया है। अन्तर्पाठों के इस संयोजन से उसकी शैली में विविधता आ गई है। यह उल्लेख अन्तर्पाठों का मात्र दुहराव नहीं है वरन् उनका उपयोग कथा को गति देने, चरित्रों को उभारने और उसकी अन्तर्वस्तु को एक अर्थवत्ता देने के लिये किया गया है। अन्तर्पाठों के इस समावेश से उसकी शैली में एक अजब सौन्दर्य आ गया है। नीचे उन अन्तर्पाठों की बहुविध समानान्तर प्रयोगों के कुछ द्रष्टान्त दिये जा रहे हैं।

विवेच्य उपन्यास में अन्तर्पाठों की बहुस्तरीय योजना :

यह अन्तर्पाठ एक प्रकार से भाषिक संरचना के स्तर पर अनूदित संरचनाओं को अपने काव्य के अनुसार व्यवहार है। प्रायः इस प्रकार के अन्तर्पाठों की योजना विश्व की गद्य कृतियों में भूरिशः मिलती है। हजारी प्रसाद द्विवेदी का उपन्यास 'बाणभट्ट की आत्मकथा' एक प्रकार से अपने

कथ्य के अनुकूल संस्कृत, प्राकृत साहित्यों से लिये अन्तर्पाठों का विनियोग है। मुझे चाँद चाहिये में तो इस तरह के अन्तर्पाठों के भूरिशः प्रमाण मिलते हैं :

भाव हरण :

इसमें पहले से विद्यमान किसी कृति के भावों का हरण कर अपने शब्दों में व्यक्त किया जाता है। 'मुझे चाँद चाहिये' में इसका निम्न उदाहरण हैं :

(1) सिलबिल ने पिता की ओर देखते हुये पल भर का विराम दिया, फिर उपसंहार कर दिया, "यशोदा शर्मा नाम में कोई सुन्दरता नहीं।"

(कालांतर में यह उद्‌गार 54, सुल्तान गंज में वैसा ही ऐतिहासिक माना गया, जैसे राष्ट्रीय स्तर पर 'भारत छोड़ो', 'तुम मुझे खून दो, मैं तुम्हें आजादी दूँगा" और 'स्वतन्त्रता हमारा जन्म सिद्ध अधिकार है' आदि माने गये थे)।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 17)

(2) मैंने तुम्हारी अलमारी से 'ऋतु संहार' लेकर पढ़ी थी। छहों ऋतुओं में मुझे सबसे अच्छी वर्षा लगी।" एक पल का विराम देकर उसने उद्धरण प्रस्तुत कर दिया, "देखो प्रिय जल की फुहारों से भरे हुये मेघों के मतवाले हाथी पर चढ़ी हुई, चमकती–विद्युत–पताकाओं को फहराती हुई और मेघ गर्जना के नगाड़े बजाती हुई यह अनुरागी जनों की मनभायी वर्षा राजाओं का – सा ठाठ बनाये यहाँ आ पहुँची है।"

(यहाँ थोड़ी सतर्कता बरतते हुये सिलबिल ने कालजयी काव्य पंक्ति में 'प्रिये' को 'प्रिय' में बदलकर अपनी समझ में बालकवृंद के साथ जोड़ दिया था और 'कामीजनों' की जगह 'अनुरागी जनों' की दस्तंदाजी कर दी थी। इसका कारण सयानी बेटी के लाभार्थ साहित्य को ओट देने वाली पिता की सेंसर–दृष्टि थी।)

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 17)

(3) पल भर का विराम देकर सिलबिल मुड़ी और ऊपर जाने लगी : उसकी पदचाप सुनते हुये पिता गहरी साँस लेकर बोले, – "कविकुल–तिलक ने ठीक ही कहा है अपने हाथ से सींचे हुये विष––वृक्ष को अपने ही हाथ से कोई कैसे काट दे ...."

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 18)

इन दोनों अन्तर्पाठों को वर्षा वशिष्ठ तथा उसके पिता ने अपनी तरह से परिवर्तन करते हुये प्रस्तुत किया है। दोनों उद्धरण मूल संस्कृत में न होकर हिन्दी में प्रस्तुत किये गये हैं पर अपनी संवेदना, भाव और उद्देश्य से संगति बिठाते हुये।

(4) रामगिरि पर पत्नी के विरह से दग्ध हेममाली नामक यक्ष ने भी एक–एक दिन ऐसी बोझिल एवं व्यग्र उत्कंठा से नहीं बिताया होगा, जैसे वर्षा ने बिताया। एक तारीख काटते हुये वह कैलेण्डर को ऐसे ही देखती, जैसे रघुवंश में लंका से लौटे हनुमान द्वारा सीता से हुई भेंट के

प्रमाण स्वरूप उनकी दी हुई चूड़ामणि को राम ने देखा था।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 21)

इस स्थल पर लेखक ने मेघदूत अथवा रघुवंश के मूल उद्धरण या उसके आशय न देकर उसके प्रभाव या सन्दर्भ मात्र को देकर वर्षा वशिष्ठ की मनः स्थिति को उभारा है। और मूल उद्धरण की छाया का उपयोग संवेग को सघन बनाने के लिये किया है।

(5) जैसे देवउठनी एकादशी को भगवान विष्णु के शेषशय्या से उठने पर यक्ष के शाप की थरथराती अवधि खत्म हो गयी थी, ऐसे ही किसी तरह वह दिन भी आ गया, जिसका वर्षा को इतना इन्तजार था। अनिरुद्ध ने अपने बस्ते से लिफाफा निकालकर उसे दिया। वर्षा ने कैसे उस दिन का एक घंटा काटा, यह वही जानती है।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 22)

यहाँ भी मेघदूत के एक श्लोक का भाव लेकर वर्षा वशिष्ठ की व्यग्रता को उभारा गया है। यहाँ भी लेखक ने एक अन्तर्पाठ की योजना की है।

(6) "कैसी बातें करती है !" पिता ने स्नेह के साथ झिड़का, 'जीवन में आयु के अनुसार मनुष्य का धर्म निश्चित किया गया है। वेद पुराणों ने गृहस्थ आश्रम का प्रतिपादन क्या ऐसे ही कर दिया ? संसार–चक्र को चलाने के लिये सबको अपना दायित्व निभाना ही होता है। कौत्स ऋषि से रघु ने कहा था, अब आपकी इतनी अवस्था हो गयी है कि आप विवाह करें और सबका भला करने वाले गृहस्थाश्रम में प्रवेश करें। गृहस्थाश्रम को कविकुल गुरु ने 'सबका भला करने वाला' क्या ऐसे ही कह दिया ?"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 40)

प्रस्तुत उद्धरण में वर्षा को विवाह के लिये सहमत करने के लिये वर्षा के पिता रघुवंश के एक उद्धरण को बदलकर अपने अनुकूल बनाकर प्रयुक्त करते हैं।

(7) सड़क पर चलते हुये वर्षा का चेहरा बीरबहूटी हो गया (असंबंधी युवक से बात करने का यह पहला अवसर था)

'थ्री इयर्स शी ग्रियू इन सन एण्ड शॉवर
दैन नेचर सैड, ए लवलियर फ्लॉवर
ऑन अर्थ वाज नेवर सीन ....'

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 42)

कुछ समय पहले ये पंक्तियां सुनाते हुये मिस कत्याल ने बताया था, वर्ड्सवर्थ ने लूसी को इस कविता में कालजयी बना दिया है।

वर्ड्सवर्थ की ये पंक्तियाँ वर्षा वशिष्ठ के लिये 'सौम्यमुद्रा के प्रति' के बहाने (जिस पात्र का अभिनय वर्षा वशिष्ठ ने किया था) लिखी गयी 'साकेत' के छन्द में उद्धृत पंक्तियों की सार्थकता

बढ़ जाती है।

यहाँ एक अन्तर्पाठ का इस दृष्टि से उपयोग किया गया है कि वर्षा वशिष्ठ के प्रति किसी के प्रेम निवेदन का पूर्ण आभास एक भूमिका प्राप्त कर ले।

(8) कमलेश की अनुराग भरी आँखों में जो आहत भाव उभरा, वह वर्षा के मन को कई दिनों तक मथता रहा।

कॉलेज के गलियारे में आते–जाते एक पल के लिये उससे निगाह मिल जाती थी। (वर्षा की दृष्टि रघुवंश की इंदुमती के समान ही होती थी, जिसने अपनी मुस्कराती चितवन अज पर डालते हुये आँखों–आँखों में ऐसे उसका वरण कर लिया था, मानो वह दृष्टि ही स्वयंवर की माला हो)।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं.)

यहाँ पर वर्षा वशिष्ठ की मनःस्थिति को उभारने के लिये रघुवंश के एक अन्तर्पाठ का अनुवाद के रूप में उद्धृत किया गया है।

अन्तर्पाठ का एक रूप ऐसा होता है जिसमें पूर्व पाठ के किसी अंश का ज्यों–का–त्यों हवाला तो नहीं दिया जाता किन्तु संवेदना के धरातल पर उसका सहारा लेकर उसके कुछ अंशों, वाक्यबंधों, शब्दों या सन्दर्भ का संकेत किया जाता है। इस प्रकार का एक अंश नीचे उद्धृत किया जा रहा है :

(9) अगर जान पाते तो शर्मा जी इसे 'विधि की विडंबना' ही कहते कि जिस 'कालिदास ग्रंथावली' से सिलबिल के मन में यौवनानुभूति के सवाल सुगबुगाये थे, उनके जवाब उसे 'सौम्यमुद्रा के प्रति' वाले कागज से मिलने शुरू हुये। आषाढ़ के पहले दिन पर्वत–शिखर से मेघ को टकराते देखकर विरही यक्ष क्यों तड़प उठा, आश्रम में दुष्यन्त से पहली भेंट के बीच शकुंतला ने मन–ही–मन 'अपने पर बस हो, तब तो जाऊँ' क्यों कहा और विक्रम से मिलने के बाद पारिजात–शय्या पर लेटी हुई उर्वशी को नंदनवन का शीतल पवन जलाने क्यों लगा ? ऐसे उत्तेजित करने वाले उत्तरों की झाँकियां सिलबिल के भीतर अब उभरने लगीं।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 43)

उपर्युक्त उद्धरण में 'सौम्यमुद्रा के प्रति' कविता के संवदेनात्मक प्रभाव से 'मेघदूत', अभिज्ञान शाकुन्तल तथा विक्रमोर्वशीयम् के श्रृंगारिक स्थलों का मर्म वर्षा वशिष्ठ के समक्ष किस प्रकार उद्घाटित होने लगा इस परिप्रेक्ष्य में उपर्युक्त ग्रन्थों के तत्तद स्थलों का संकेत में उदाहरण दिया गया है। ऐसे स्थलों पर अन्तर्पाठ का ज्यों–का–त्यों उदाहरण न देकर उसके कुछ अंशों का अपनी तरह उपयोग किया जाता है।

ऐसे ही एक अन्तर्पाठ का संयोजन अन्य स्थल पर और हुआ है। यहाँ पर भी लेखक ने सिलबिल के उत्तेजित मनोभावों के अनुसार होने वाली क्रियाओं को मेघदूत, मालविकाग्निमित्र और

रघुवंश के पृथक–पृथक स्थलों का पूरा सन्दर्भ देकर भग्न अंशों के संकेत से पुनर्पाठ का संयोजन किया है :

(10) अपनी देह के प्रति उत्सुकता इस एहसास का दूसरा चरण थी। कमरा बंद करके सिलबिल ने उज्जयिनी की अभिसारिका के समान कदली स्तम्भ–सी जंघाओं का चिकनापन महसूस किया, मालविका के समान वक्ष पर चंदन का लेप लगाया, इंदुमती के समान कमलनाल को दोनों उरोजों के बीच में रखकर सौन्दर्य का प्रतिमान निर्धारित किया (फर्क बस, इतना था कि कमलनाल के न होने से हरे धनिये के पत्तेविहीन डंठल का व्यवहार करना पड़ा) और चोटी खोलकर मुआयना किया कि काले, मुलायम कुंतल गुच्छ काम–कलशों के कितने निकट आ सकते हैं ....

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 43)

यहाँ लेखक ने मूल अंशों में तोड़–फोड़ परिवर्तन तथा अपने अनुसार संशोधन भी किया है। यह है संशोधित अन्तर्पाठ का उपयोग। संशोधित परिवर्तित अन्तर्पाठ का एक उदाहरण और है–

(11) अपनी दिनचर्या का बखान करते हुये उसने सास पर विषयांतर किया और "मुंगेरी तेरा चरित स्वयं ही काव्य है' की गहन गीतात्मक अनुभूतियों में डूबती उतराती रही।"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 44)

कभी–कभी किसी अन्तर्पाठ का उपयोग उपहासात्मक लहजे में किया जाता है। प्रतिपाद्य उपन्यास में इस तरह के स्थलों में निम्नलिखित स्थल भी है :

(12) उसने 'शाकुन्तल' के नायिका–सखी दृश्य की पैरोडी की, "हे कोमलांगी, इसलिये तो मैं आपके मोहक मुखड़े को यह कष्ट दे रही हूँ।'

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 49)

'मुझे चाँद चाहिये' के लेखक ने 'अन्तर्पाठ' के रूप में ग्रन्थों, नाटकों, कविताओं से बड़े अंश तो उद्धृत किये ही हैं किन्तु, एक–एक पंक्ति के छोटे–छोटे टुकड़े भी उद्धृत किये हैं। ये सब टुकड़े पात्र की मनः स्थिति संवेग, उपन्यास का परिवेश आलोकित करते हैं। ऐसे टुकड़े अध्यायों के शीर्षकों के रूप में भी प्रस्तुत हुये हैं :

(13) सिलबिल लखनऊ से नाट्य प्रदर्शन के बाद घर लौट आती है, जिस घर में उसकी दम घुटती थी। लेखक ने उसके आगमन को इस शेर के द्वारा रेखांकित किया है : फिर वही कुंजे–क़फस, फिर वही सैयाद का घर।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 74)

(14) यही वह दौर था, जब वह एक बार फिर आत्मदहन की ओर आकृष्ट हुई। कक्षा में अबला जीवन हाय तुम्हारी ....' का अर्थ सुनते हुये सिलबिल की आँखों में सचमुच पानी भर आया।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 79)

(15) 'लिये जाती हैं, कहीं एक तबक्को ग़ालिब'

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 86)

नेशनल स्कूल ऑफ ड्रामा से आये साक्षात्कार पत्र के कारण अब उसे दिल्ली जाना पड़ रहा है। गालिब के शेर का उपर्युक्त टुकड़ा उसकी भावना को एक अर्थवत्ता प्रदान कर देता है।

(16) मॉलियर के रूपांतर 'बेवफा दिलरुबा' में वर्षा को छोटी–सी भूमिका मिली थी – चुलबुली शोख रेहाना की। नाटक में रेहाना अपने उन्मादी यौवन के दुर्दम्य आकर्षण से माशा–रत्ती सजग और उससे अभिभूत निसार को अपनी उँगली के भी स्पर्श का मौका न देते हुये पल–पल सताती है। इसी सन्दर्भ में लेखक ने उस नाटक का एक दृश्य उद्धृत किया है। पूरा दृश्य उद्धृत करने के बाद वर्षा ने उस किरदार को कैसे निभाया यह दर्शाने के लिये लेखक उस नाटक के कुछ टुकड़ों के अन्तर्पाठ को पुनः उद्धृत करता है :

(17) "वर्षा ने अपनी समझ से चरित्र–निरूपण किया था। "मेरे पास नकली कुछ भी नहीं" के साथ इतराते हुये उसने अपने कंगन खनकाये थे। "ऐसी भी क्या प्यास" कहते हुये अपने होठों पर हथेली की ओट सहित वह पीछे हटी थी और "मैं दुपट्टा हटाकर एक झलक दिखा भी दूँ" के साथ उसने टुपट्टे से अपने को अच्छी तरह ढक लिया था।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 97)

इसी अंश के अन्तर्पाठ को लेखक ने रीटा के डबल रोल के साथ पुनः उद्धृत किया है। पर, वही अन्तर्पाठ रीटा की मुद्राओं के सहारे एक नयी अर्थवत्ता प्राप्त कर लेता है :

(18) वर्षा के साथ रीटा की डबल कास्टिंग थी। यह दृश्य करते हुये रीटा ने अपनी युवा देह के सौन्दर्य, चाल एवं भाव भंगिमा का चपलता के साथ प्रभावी इस्तेमाल किया। संवाद अदायगी के कृत्रिम भोलेपन ने अदाओं को मोहक धार दी। "मेरे पास नकली कुछ भी नहीं" कहते हुये उसने हल्की लचक से अपने वक्ष की मूल्यवत्ता रेखांकित कर दी। "ऐसी भी क्या प्यास".... के साथ उसने निसार के पास आ अपने अधखुले होठों को चुंबनामंत्रण के लिये प्रस्तुत कर दिया, पर निसार के लपकने से पहले ही सीत्कार भरती हुई तुरन्त पीछे हट गयी, "और मैं दुपट्टा हटाकर एक झलक दिखा भी दूँ" कहते हुये उसने सचमुच अपने पुष्ट उरोजों का क्षणिक पर भरपूर नजारा दिखाकर निसार को उत्तेजना के चरम तक पहुँचा दिया। अंत में अपनी माँ का हवाला देकर बनावटी कमसिनी से परिहास को ऐसी रंगत दी कि कुछ लोग हँस पड़े।"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 97)

'मुझे चाँद चाहिये' में लेखक ने अन्तर्पाठों की मजलिस–सी लगा दी है। पर इन सारे अन्तर्पाठों का उपयोग कथ्य को उभारने के लिये किया गया है। पूरा कथ्य इन्हीं अन्तर्पाठों के सहारे गतिशील होता है। असल में इस उपन्यास में अन्तर्पाठ कथ्य की अन्तरंग वस्तु बनकर आये हैं, वे

अलग से अपना एहसास नहीं कराते।

एक स्थल पर 'अपने—अपने नर्क' नाटक के अनूदित अंशों के अन्तर्पाठ के उद्धरण तो नहीं हैं पर इसके पहले, दूसरे, तीसरे दृश्यों का विवरण देते हुये उसके अंशों की व्याख्या, विवेचना अपने अनुसार की गयी है। उनका सारांश दिया गया है और उन पर टिप्पणी की गयी है।

'अपने—अपने नर्क' की शान्या चर्च क्यों जाना चाहती है ? इसके उत्तर में उस नाटक के इस अंश को उद्धृत करते हुये उसके निर्देशक चतुर्भुज यों टिप्पणी करते हैं :

(19) ''चर्च उसके लिये ईश्वरीय सत्ता से जुड़ा है — मनुष्य से ऊपर की नियामक शक्ति के साथ। पहली बार इसका जिक्र उस दिन होता है, जब अपने काम में शान्या ने असत्य को प्रश्रय दिया है और अपनी आत्मा के एक अंश का भरना महसूस किया है, ''काश मैं चर्च जा सकती।'' किसलिये ? आत्म—स्वीकार एवं आत्म—भर्त्सना द्वारा उस मरे हुये हिस्से को जिंदा करने की कोशिश में। दूसरी बार चर्च का उल्लेख आशा और उल्लास के साथ होता है, ''मैं फिर चर्च जा सकूँगी।'' यहाँ चर्च व्यक्ति—स्वातंत्र्य के लगभग ईश्वरीय होने का प्रतीक है और इसलिये यह संवाद ऐसी पावन—लालसा के साथ बोला जाता है, मानो शान्या को कोई दैवी चीज मिलने वाली हो। तीसरी बार चर्च का जिक्र अंत में है, जहाँ शान्या दुमेगो से पूछती है, ''उस बंदीगृह के अहाते में चर्च है क्या ?'' और उत्तर मिलता है, 'नहीं'। यानी जीवन के अन्त में भी अब ईश्वरीय सत्ता से अपनी पीड़ा के एकाकार होने की उम्मीद नहीं। उसे अपने व्यक्तिगत नर्क का बोझ ढोते हुये अकेले, घिसट—घिसट कर मरना है।''

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 111)

प्रतिपाद्य उपन्यास में ऐसे कई वाक्य बंध या टुकड़े हैं जिनका उपयोग प्रोक्ति स्तर पर तो किया ही गया है किंतु इन्हीं टुकड़ों का उपयोग सन्दर्भ विशेष को उभारने के लिये अन्तर्पाठ के रूप में भी किया गया है। शैली वैज्ञानिक दृष्टि से 'मुझे चाँद चाहिये' की शैली इससे पूर्ण है। लेखक अन्तर्पाठों का संयोजन भाव रूप में, ज्यों—के—त्यों उद्धरणों के रूप में, उन्हें बदलकर, उनके भावों का हरण कर, उन्हें संशोधित कर, उन पर टिप्पणी कर, उन्हें स्मृति पुंज बनाकर कई रूपों में करता है।

संदिग्धार्थता

अर्थमूलक शैलीय उपकरणों में अर्थ की संदिग्ध, अस्पष्ट, दुर्बोध, ग्राम्य, अश्लील, अप्रतीत्वयुक्त अभिव्यंजना के कारण पाठकों को लेखक के व्यंग्यार्थ तक पहुँचना कठिन हो जाता है। यह प्रेमचंदीय शैली का उपन्यास नहीं है। इसमें ऐसी शब्दावली, जुमले, प्रतीक, सन्दर्भ पग—पग पर मिलते हैं जिनका अर्थ दुर्बोध्य, संदिग्ध, अस्पष्ट रहता है। कई स्थलों पर अँग्रेजी के ऐसे वाक्य, टुकड़े अथवा पैरा—के—पैरा हैं जिनका अर्थ बोध सामान्य पाठक के लिये कठिन है। कुछ उदाहरण नीचे दिये जा रहे हैं।

संदिग्धार्थता – यह ऐसे वाक्य होते हैं जिनमें प्रयुक्त शब्दावली का अर्थ संदिग्ध अथवा दुहरे अर्थ वाला होता है। पाठक यह तय नहीं कर पाता कि कौन–सा अर्थ अभिप्रेत है :

"इससे माँ को बहुत राहत मिली, क्योंकि 'जिंदगी भर कोल्हू में जुटे रहने के बाद अब बचा–खुचा समय तो सीताराम–सुमिरन में लगे'' (मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 14)

इस वाक्य के दो अर्थ निकलते हैं एक, वर्षा की माँ को बहुत राहत मिली और उसकी बहिन यहाँ कोल्हू के बैल–सी जुती रहती थी, ससुराल जाकर उसके दिन अब सीताराम–सुमिरन में कटे। इसका दूसरा अर्थ यह है कि गायत्री ने विवाह की प्रतीक्षा में पढ़ना छोड़ दिया और घर के कामों में माँ का हाथ बटाने लगी, जिससे माँ को बहुत राहत मिली और वह सोचने लगी कि कोल्हू के बैल की तरह जुते–जुते बहुत–सा समय गया, अब थोड़ा समय सीताराम–सुमिरन में लगे। इस वाक्य में अर्थीय संदिग्धता का ही शैलीगत वैशिष्ट्य है अथवा इसे अर्थीय दोष कहिये।

एक और वाक्य है : "उन्होंने वर्षा के सँकरे–से संसार में नये क्षितिज खोले थे, साहित्य के अध्ययन में ऐसी अर्थवत्ता भरी थी, जिसका कोर्स के पाठ से उतना ही सम्बन्ध था, जितना अपने सौन्दर्य–बोध को समृद्ध करने से।" (मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 19)

यहाँ पर अर्थीय संदिग्धार्थता भी है और अस्पष्टता भी है। उन्होंने साहित्य के अध्ययन में ऐसी अर्थवत्ता भरी थी इसका एक अर्थ तो यह है कि अपने साहित्यिक अध्ययन में ऐसी अर्थवत्ता भरी थी, दूसरा इसका अर्थ है वर्षा के अध्ययन में साहित्यिक अर्थवत्ता भर दी थी। अर्थ की अस्पष्टता इस टुकडे में है : जिसका कोर्स के पाठ से उतना ही सम्बन्ध था, जितना अपने सौन्दर्य बोध को समृद्ध करने से .... अपने सौन्दर्य बोध को समृद्ध करने अर्थात् दिव्या कत्याल के अपने सौन्दर्य बोध को समृद्ध करने से अथवा वर्षा वशिष्ठ के सौन्दर्य बोध को समृद्ध करने से अथवा अपने शारीरिक सौन्दर्य–बोध को समृद्ध करने से।

प्रवाह में बड़े–बड़े लेखकों द्वारा अर्थ सम्बन्धी ऐसी भूलें हो जाती हैं।

एक और वाक्य द्रष्टव्य है :

"मैं सिर्फ मादा नहीं हूँ।" (मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 45)

यह वर्षा का कथन है। वह अपनी बहन गायत्री से कहना चाहती है कि मैं सिर्फ मादा नहीं हूँ और भी कुछ हूँ जो सिर्फ शारीरिक सुख से तृप्त नहीं हो सकती। इसका दूसरा अर्थ यह है कि तुम सिर्फ मादा हो जो पुरुष–सुख से तृप्त हो, मैं उससे नहीं हो सकती। यही कारण है वर्षा का उत्तर सुनकर गायित्री उसकी ओर देखने लगी, जैसे पहचानने में भूल कर बैठी हो।

मोहिनी ने अपने नाम को चरितार्थ किया था, या स्त्री–संसर्ग से धन्य हुए निम्न मध्यम वर्गीय भारतीय नौजवान की यही गति होती है, यह तो नहीं मालूम। पर इतना जरूर हुआ कि सिलबिल को लेकर पत्नी के दृष्टिकोण से महादेव बिल्कुल सहमत पाये गये।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 75)

इसके दो अर्थ हैं मोहिनी के मोहजाल में पड़कर उसके दास हो गये। इसका दूसरा अर्थ है मोहिनी के विचारों से सहमत हो गये। यहाँ पर अर्थ में अस्पष्टता भी है। पहले वाक्यखंड से यह स्पष्ट नहीं होता कि मोहिनी ने अपने नाम को किस तरह चरितार्थ किया। दूसरे वाक्य खंड से भी यह स्पष्ट नहीं होता है कि स्त्री–संसर्ग से धन्य हुये निम्न मध्यम वर्गीय भारतीय नौजवान की कौन–सी गति होती है ?

एक और वाक्य दृष्टव्य है :

बढ़ती उम्र के साथ मेरी अकेली स्थिति अब माँ के लिए त्रासद बन गयी है।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 99)

दिव्या–वर्षा का संवाद है। वह विवाह क्यों कर रही है इसका कारण बताती हुई उपर्युक्त वाक्य का प्रयोग करती है। इसके दो अर्थ निकलते हैं एक, बढ़ती उम्र मेरी माँ के लिये त्रासद बन गयी है, दूसरा, मेरी अकेलेपन की स्थितयाँ के लिये त्रासद बन गयी है।

यहाँ अस्पष्टता भी है। होना चाहिये था बढ़ती उम्र और मेरी अकेलेपन की स्थिति मेरी माँ के लिये त्रासद बन गयी है।

अनुष्टुप बिना 54 सुल्तानगंज का पोर्ट्रेट पूरा नहीं होता।

इस वाक्य से पढ़ते ही यह स्पष्ट नहीं होता कि अनुष्टुप किसका नाम है। ऐसा लगता अनुष्टुप भी शर्मा परिवार का कोई सदस्य है। (मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 14)

यह अस्पष्टता दूसरे वाक्य में भी बनी रहती है, जिसे स्पष्ट करने के लिये कोष्ठक में टिप्पणी करनी पड़ती है : यह हरा जीवधारी अपने नाम को सार्थक करते हुये मुँह अँधेरे से चालू हो जाता था, 'झल्ली सीताराम बोलो', 'किशोर गायित्री–मंत्र पढ़ लिया है''

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 14)

इस नाम का क्या अर्थ है इसे लेखक कोष्ठक में यह टिप्पणी देकर स्पष्ट करता है – ''इस छंद को काव्यशास्त्र में उपदेश देने के लिये सबसे उपयुक्त माना गया है।'' लेखक को यह पता था कि मैं तोते का नाम अनुष्टुप रख तो रहा हूँ पर इसका अर्थ साधारण पाठकों के लिये दुर्बोध ही रहेगा। हाँ, इससे संस्कृत साहित्य से चुने गये शब्दों के प्रति लेखक के रुझान का पता चलता है। उसकी शैली के वैशिष्ट्य का भी ज्ञान होता है। ''मुझे चाँद चाहिये'' की शैली अर्थीय गुणों से अत्यन्त समृद्ध है, पर उसमें कहीं–कहीं संदिग्धार्थता, अप्रीततत्व, दुर्बोधता भी मिलती है।

इसका कारण सयानी बेटी के लाभार्थ साहित्य को ओट देने वाली पिता की सेंसर–दृष्टि थी। (मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 17)

'यहाँ साहित्य को ओट देने वाली' वाक्य बंध का अर्थ स्पष्ट नहीं होता है। इसका अर्थ सामान्य पाठक के लिये दुर्बोध्य ही ठहरता है। लेखक कहना चाहता है कि सयानी बेटी को ऐसा साहित्य पढ़ना चाहिये अथवा सयानी बेटी क्या पढ़े इस पर पिता की सेंसर–दृष्टि लगी रहती थी।

पर उपर्युक्त वाक्य से यह सरलार्थ बहुत देर में निकलता है।

अनिरुद्ध ने अपने बस्ते से लिफाफा निकालकर उसे दिया। इस वाक्य से यह अस्पष्ट रह जाता है कि यह लिफाफा प्रेमपत्र का था या इस लिफाफे में और कुछ था। पिछले साल की तरह इस बार भी संस्थापक दिवस पर एक नाटक का प्रदर्शन आयोजित किया जा रहा है। जिस छात्र तथा छात्रा की रुचि हो, वह मिस दिव्या कत्याल को अपना नाम दे दे।''

अपने लिये इस विचार को अस्वीकृत करने में वर्षा को एक पल भी नहीं लगा।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 27)

यह वाक्य बहुत अटपटा है। 'इस विचार' का अर्थ भी अस्पष्ट है। प्रश्न उठता है किस विचार को ? नाटक में भाग लेने के विचार को। पर पहले यह विचार उसके मन में जागे तो ? इसलिये यह वाक्य अस्पष्ट अर्थ से युक्त है।

करीब पन्द्रह आलोकांक्षी अपने संवाद बोल चुके थे।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 29)

यहाँ आलोकांक्षी शब्द का अर्थ स्पष्ट नहीं है। अपनी कला का मंच पर प्रदर्शन करने वाले को यहाँ आलोकांक्षी कहा गया है। पर आलोकांक्षी उसे भी कहते हैं जो प्रकाश चाहता है, जो पथ प्रदर्शन चाहता है, पर उसके लिये 'गाइडेन्स' शब्द है न कि आलोकांक्षी। अप्रचलित शब्द के प्रयोग ने यहाँ लेखक की शैली को अस्पष्ट अर्थ से युक्त कर दिया है।

इस उपन्यास में अनेक अन्तर्पाठों, जुमलों का संयोजन किया गया है। जहाँ लेखक उन्हें मूलभाषा में प्रयुक्तकर ज्यों–का–त्यों छोड़ देता है वहाँ अर्थीय अस्पष्टता अथवा दुर्बोधता संक्रमित हो जाती है।

कल से तेरी रिहर्सलबन्द ! और वह बड़े क़दमों से नीचे उतरने लगे। सिलबिल ने आवेश से कहा, ''दद्दा, टू बी ऑर नॉट टू बी, दैट इज द क्वैश्चन।''

यह हेमलेट नाटक का जुमला है। सामान्य पाठक के लिये जिसका अर्थ अस्पष्ट ही रहता है।

रविवार को सुबह के शो में कोई अंग्रेजी फिल्म होती तो दिव्या कत्याल और वर्षा दोनों देखने जातीं। फिर यहाँ लेखक उन अंग्रेजी फिल्मों के नाम और उनके किरदारों का उल्लेख करता है। पर इन फिल्मों के कलात्मक महत्त्व को समझना सामान्य पाठकों के लिये दुर्बोध है। कारण, ये फिल्में विशिष्ट दर्शक वर्ग में ही प्रचलित हैं, आम दर्शक वर्ग में नहीं।

'सिटीलाइट', 'ब्रिज ऑन दी रिवर क्वाइ', 'जायंट्स', 'ए प्लेस इन द सन', टू कैच ए थीफ', 'क्लियोपेट्रा', इत्यादि ने एक नया अनुभव–संसार उसके सामने खोला।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 51–52)

सब अप्रचलित फिल्मों के नाम हैं।

यह रोहन का लचीलापन है कि मेरा अतीत जानते हुये भी उनका रुख नहीं बदला।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 72)

यहाँ पर लचीलापन का अर्थ दब्बूपन से है जो उपयुक्त नहीं है। लचीलापन के बजाय यहाँ होना चाहिये उदारता या विशालहृदयता – लेखक अर्थीय अस्पष्टता से स्वयं वाकिफ था इसीलिये कोष्ठक में वह विशालहृदयता शब्द का प्रयोग करता है। असल में उसकी रुचि टिप्पणियाँ कर चौंका देने की है, पर इससे अर्थ बोध में कठिनाई उत्पन्न होती है।

शहनाज, पिंकी और अनुपमा मुझे भाव नहीं देतीं, क्योंकि मैं मुहावरेदार अंग्रेजी नहीं बोल पाता। (मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 108)

चतुर्भुज 'अपने–अपने नर्क' में वर्षा वशिष्ठ को लेना चाहते हैं। चाय घर में वर्षा से कहते हैं कि तुम मेरे नाटक में इसलिये काम करो कि मैं अन्य अभिनेत्रियों को नहीं लेना चाहता क्योंकि वे मुझे 'भाव' नहीं देतीं। यहाँ पर 'भाव' शब्द का प्रयोग सम्मान, महत्त्व या इज्जत देने के अर्थ में किया गया है। पर इस अर्थ में भाव शब्द हिन्दी जगत में प्रचलित नहीं है। इसलिये इस अप्रचलित शब्द के प्रयोग से यहाँ दुर्बोधता आ गयी है।

दस मिनट के विवाद में मुझे एक बार भी डिक्शनरी कंसल्ट नहीं करनी पड़ी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 108)

चतुर्भुज ने वर्षा के सम्बन्ध में डॉ. अटल से अनुमति ले ली है। इसके लिये उन्हें डॉ. अटल से दस मिनट तक विवाद करना पड़ा। वे कहना चाहते हैं कि मुझे उनसे वाद–विवाद करने के दौरान एक बार भी डिक्शनरी कंसल्ट नहीं करनी पड़ी। यहाँ डिक्शनरी कंसल्ट करने से क्या तात्पर्य है यह स्पष्ट नहीं होता है। विनोद का वातावरण जरूर उत्पन्न होता है, पर यह स्पष्ट नहीं होता है कि चतुर्भुज की अंग्रेजी कमजोर थी और बातचीत में अंग्रेजी शब्द आने पर वे डिक्शनरी कंसल्ट अवश्य किया करते थे।

'अपने–अपने नर्क' में वर्षा वशिष्ठ के श्रेष्ठ अभिनय को देखकर डॉ. अटल कहते हैं :

वर्षा मुझे खुशी हुई कि तुम **'आइसबर्ग'** निकलीं। (मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 112)

यहाँ 'आइसबर्ग' शब्द व्यक्तित्व की गुह्यपर्तों की ओर संकेत करता है। पर सामान्य पाठक के लिये इसका अर्थ अस्पष्ट है। लेखक कहना चाहता है कि जिस प्रकार 'आइसबर्ग' का बहुत सा अंश समुद्र में नीचे समाहित रहता है, उसका थोड़ा–सा भाग ही ऊपर दिखाई देता है, वैसे ही व्यक्ति की प्रतिभा 'आइसबर्ग' की तरह अन्दर छिपी रहती है, उसका छिपा भाग कभी ही व्यक्त होता है। डॉ अटल कहना चाहते है कि तुम तो आइसबर्ग की तरह छिपी हुई प्रतिभा निकलीं। पर, यह अर्थ शब्द को पढ़ते ही सहज बोधगम्य नहीं है।

वर्षा के साथ ठंडक चली आ रही थी, इसलिये हर्ष थोड़ा अचकचा गया।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 193)

सन्दर्भ यह है कि रिपर्टरी में रिहर्सल चल रहा है। वर्षा बाहर बैठी है और वह हर्ष को बुलाती है। इस पर हर्ष अचकचा जाता है। उसके अचकचाने का कारण उन दोनों के बीच चलने वाला हल्का मतभेद था। इसी को व्यक्त करने के लिये लेखक ने 'वर्षा के साथ ठंडक चली आ रही थी' इसका प्रयोग किया है। यहाँ ठंडक शब्द का प्रयोग अंग्रेजी के इस वाक्य का अनुवाद है कि देयर वाज ए कोल्डनेस विटवीन वर्षा एण्ड हर्ष। हिन्दी में यह मुहावरा प्रचलित नहीं है। इसलिये 'वर्षा के साथ ठंडक चली आ रही थी' इस वाक्यबंध का अर्थ सरलता से समझ में नहीं आता है।

चंद दिनों बाद ही उनका सॉफिस्टीकेटिड न होना, उनकी अर्थीनैस, उनका सेंस ऑफ ह्यूमर .... सब खलने लगा। (मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 309)

प्रतिपाद्य उपन्यास में अंग्रेजी के ऐसे शब्दगुच्छों, वाक्यखंडों का प्रयोग किया गया है जो बिना कोश देखे समझ में नहीं आ सकते। ऐसे प्रसंगों में दुर्बोधता का दोष आना स्वाभाविक है।

इस प्रकार अर्थीय शैली उपकरणों की दृष्टि से संदिग्धार्थता, अप्रतीतत्व, दुर्बोधता के कारण प्रतिपाद्य उपन्यास की शैली में कहीं–कहीं कमियाँ आ गयी हैं।

प्रकरण – 5

प्रतिपाद्य उपन्यास में वाक्यात्मक शैलीय उपकरण

प्रकरण–5

प्रतिपाद्य उपन्यास में वाक्यात्मक शैलीय उपकरण

वैसे तो भाषा का अध्ययन तीन स्तरों पर किया जाता है– शब्द भेदात्मक, रचनात्मक और बंधात्मक। शब्द भेदों के स्तर पर संज्ञा, सर्वनाम, विशेषण, क्रिया और अव्यय एवं निपात की अभिव्यंजकता का मूल्यांकन किया जाता है। वर्माजी के उपन्यास 'मुझे चाँद चाहिये' की भाषा में विभिन्न व्याकरणिक कोटियों का अध्ययन अति आवश्यक है इस अध्याय में इन्हीं तत्त्वों का अध्ययन किया जायेगा।

व्याकरणिक शब्द भेद

संज्ञा : संज्ञा वह विकारी शब्द है जिससे सृष्टि की समस्त वस्तुओं का निष्पादन किया जाता है। इसकी परिभाषा को निम्न पहलुओं पर रख सकते हैं –

(क) इस परिभाषा के अन्तर्गत यदि वस्तु का प्रयोग व्यापक अर्थ में किया जाये तो वह केवल पदार्थ व प्राणी का ही वाचक नहीं है, किन्तु उनके धर्मों का सूचक अवश्य है। यद्यपि संज्ञा का पर्यायवाची शब्द "नाम" है। अतः इसे नाम का पर्यायवाची शब्द भी कहते हैं।

(ख) संज्ञा का प्रयोग मात्र वस्तु के लिये नहीं होता वस्तु के लिये ही होता है यदि कहा जाये "उपन्यास कागज पर छापा गया है" तो कागज संज्ञा नहीं है बल्कि पदार्थ है, पर "कागज" शब्द वह प्रतीक है जिसके द्वारा हम उस पदार्थ का नाम सूचित करते हैं। संज्ञा दो प्रकार की होती हैं–

(1) पदार्थवाचक (2) भाववाचक

पदार्थवाचक संज्ञा को दो भागों में विभक्त किया जाता है– व्यक्ति वाचक संज्ञा, जातिवाचक संज्ञा

कुछ लेखक व्यक्तिवाचक संज्ञाओं के चुनाव पर ध्यान देकर उनके वैशिष्ट्य का प्रयोजन–मूलक चयन करते हैं। जिन व्यक्तिवाचक संज्ञाओं का चयन किसी प्रयोजन विशेष पर आधारित होता है, उनके प्रयोजन का निर्धारण तथा मूल्यांकन शैली विज्ञान में किया जाता है।

प्रसिद्ध जर्मन शैली विज्ञानी लियो स्पित्जर ने डान क्विग्जाट के पात्रों के नामों पर ही अपना अध्ययन केन्द्रित किया है, तथा स्पष्ट किया है किस प्रकार पात्रों के नामों में विरोध मूलकता पाई जाती है। इस विरोध मूलकता के प्रभाव की वृद्धि के लिये उक्त उपन्यास के लेखक सरवांतीस ने व्युत्पत्ति शास्त्र की सहायता लेकर पात्रों का व्यंग्यात्मक नामकरण किया है। स्पित्जर ने इसे भाषिक परिवेशवाद का नाम दिया है।[1]

वेलेक और वारेन के अनुसार, पात्रों के नामकरण को चरित्र चित्रण के उपकरण के रूप

---

1. लियो स्पित्जर : लिंगस्टिक्स ऐंड लिटरेरी हिस्टरी, पृ.सं. 41

में प्रयुक्त करना एक साहित्यिक परिपाटी है। 'नाम' के अंदर पात्र को जीवन्त करने की शक्ति होती है, वह उसके समस्त कार्य व्यापार का प्रेरणा स्रोत होता है तथा उसके व्यक्तित्व को एक स्वतंत्र अस्तित्व प्रदान करता है।[1]

वर्माजी की व्यक्तिवाचक संज्ञायें ऐसी हैं जिनका निर्माण या चयन उन्होंने प्रयोजनपूर्वक किया है। उनकी व्यक्तिवाचक संज्ञायें चरित्र व्यंजना के साथ ही अनेकानेक प्रकार के प्रभावों की भी निष्पत्ति करती है, जिससे रचना का सम्पूर्ण वातावरण अभिव्यंजक हो उठता है।

शैली की दृष्टि से वर्माजी की प्रयोजनवती व्यक्तिवाचक संज्ञाओं को प्रधान रूप से दो वर्गों में रखा जा सकता है : सामंजस्य मूलक और विरोध मूलक। सामंजस्य मूलक संज्ञाओं के नामों तथा चरित्र में सामंजस्य दिखाई देता है। एक–दो विरोधी भावों वाले चरित्र भी दृष्टिगोचर होते हैं जो अपने नाम के विपरीत गुणों वाले हैं। वर्माजी ने कुछ इतिहास–प्रसिद्ध संज्ञाओं का भी प्रयोग प्रतीकात्मक रूप में किया है।

शीर्षक तथा नामकरण में लेखक की दृष्टि

सुरेन्द्र वर्मा ने अपने उपन्यास में शीर्षकों तथा पात्रों के नामकरण में पर्याप्त कल्पनाशीलता और नयेपन का परिचय दिया है। कुछ पात्रों को अगर छोड़ दिया जाये तो उनके नाम विरोधाभासों से भरे हुये हैं। प्रेमचन्द ने जिस प्रकार या तो गुणों के अनुकूल पात्रों के नाम चुने हैं या नामार्थ के विपरीत वैसा सुरेन्द्र वर्मा ने नहीं किया है। उन्होंने रंग जीवन से जुड़े जिस कथ्य को अपने उपन्यास की विषय वस्तु बनाया है उसके रूपायन की दृष्टि से यह सम्भव नहीं था। इसलिये उनके पात्रों के नामों अर्थात व्यक्तिवाचक संज्ञाओं का विभाजन सामंजस्य मूलक और प्रतिकूल इन दो खाँचों में रखकर नहीं किया जा सकता। जैसे वर्षा वशिष्ठ का घर का नाम सिलबिल है। स्कूल का नाम यशोदा शर्मा था जिसे वह बाद में बदल लेती हैं। पर, सिलबिल नाम उसका अन्त तक चलता रहता है। सिलबिल नाम का अर्थ है जो ढीला–ढाला अस्त व्यस्त, कुछ–कुछ सीधा, भोला भाला हो। पर सिलबिल बचपन में चाहे जैसी रही हो बाद में वह अत्यन्त सजग, सावधान, व्यवस्थित हो जाती है। हर्ष के नाम का अर्थ सदा हर्ष से उत्फुल्ल और सबको उत्फुल्ल करने वाला है। पर इसके प्रतिकूल वह सदा दूसरों के दुःख, त्रास, तनाव का कारण बना रहता है। वर्षा स्वयं उसे लेकर आश्वस्त नहीं है। इसलिये अपने प्रतिपाद्य उपन्यास के व्यक्तिवाची नामों का विश्लेषण मैं इन दो खाँचों में बाँधकर न कर स्वतंत्र दृष्टि से करूँगी जिससे उपन्यास के साथ न्याय हो सके।

1. व्यक्तिवाचक संज्ञा –

सिलबिल उर्फ यशोदा शर्मा (वर्षा वशिष्ठ) : वर्षा वशिष्ठ इस उपन्यास की नायिका है। नामकरणों की दृष्टि से वह एक गतिशील चरित्र है। उसका बचपन का नाम सिलबिल है। बचपन

---

1. वेलेक ऐंड वारेन : 'थियरी ऑफ लिटरेचर', पृ.सं. 41

में वह थी भी ऐसी। शैली वैशिष्ट्य की दृष्टि से उसके इस नाम का विश्लेषण देखिये : सिलबिल का घरेलू नामकरण तब किया गया था, जब वह कुछ हफ्तों की थी। लगभग तीन–चार साल तक उसने अपनी संज्ञा की सार्थकता बनाये रखी। चलते समय उसकी चड्डी फिसलती रहती थी, फ्रॉक से ही अचानक बह आयी नाक पोंछने से उसे कोई परहेज न था और कुछ नीचे गिराये बिना उसके लिये खाना–पीना मुश्किल था। लेकिन पाँच की उम्र तक धीरे–धीरे सिलबिल ने अपने संबोधन को निरर्थक सिद्ध कर दिया। वह दूसरों से उल्टे एकांत प्रिय और चिंतनशील थी।[1] उसकी चिंतनशीलता हाईस्कूल का फार्म भरते समय प्रकट हुई जब उसने अपना स्कूल वाला नाम **'यशोदा शर्मा'** बदलकर **'वर्षा वशिष्ठ'** रख लिया। पिता के टोकने पर उसने साफ कहा – मुझे अपना नाम पसंद नहीं था। अपनी पसंदगी–नापसंदगी का इजहार वह जीवन भर दृढ़ता से करती रही।

"तुम्हारे नाम में क्या खराबी थी ?"

पिता के कहने पर उसने कहा – 'अब हर तीसरे–चौथे के नाम में शर्मा लगा होता है। मेरे क्लास में ही सात शर्मा हैं .... और यशोदा ? घिसा–पिटा, दकियानूसी नाम। उन्होंने किया क्या था ? सिवा क्रिश्न को पालने के ?" सिलबिल ने पिता की ओर देखते हुये पल भर का विराम दिया फिर उपसंहार कर दिया, "यशोदा शर्मा नाम में कोई सुन्दरता नहीं।"[2]

लेखक की टिप्पणी ध्यातव्य है और इसी टिप्पणी से नाम का प्रयोग वैशिष्ट्य ध्वनित होता है : पिता ने सपने में भी नहीं सोचा था कि यह बित्ते भर की छोकरी नाम का सौन्दर्य बोधीय विश्लेषण करके उनकी हथेली पर रख देगी। नाम जैसी सरलता से स्वीकृत चीजों के प्रति ऐसा नया दृष्टिकोण उन्हें तिलमिला गया।

फिर वह वर्षा वशिष्ठ का अर्थ बताती है – "वशिष्ठ हमारा गोत्र है। वैसे भी यह एक महान मुनि का नाम है।"

"और वर्षा" ?

वह कहती है : "मैंने तुम्हारी अलमारी से 'ऋतु संहार' लेकर पढ़ी थी। छहों ऋतुओं में मुझे सबसे अच्छी वर्षा लगी। फिर उसने ऋतु संहार से वर्षा सम्बन्धी उद्धरण प्रस्तुत कर दिया। उसके पिता अवाक् रह गये।

फिर सिलबिल नाम उसके साथ जीवन भर क्यों चिपका रहता है ? वह दिव्या कत्याल का भाषण सुनकर उसे पहली बार अनुभूति हुई थी कि जिन्दगी उत्तेजक और सुन्दर भी हो सकती है ! पर कैसे ? किस तरह ? उदासी में डूबते जाने के साथ उसने सोचा था, मैं अपने को चाहे यशोदा कहूँ, चाहे वर्षा पर मुझे हमेशा सिलबिल ही बने रहना है।[3]

---

1. मुझे चाँद चाहिये, पृष्ठ 15
2. मुझे चाँद चाहिये, पृष्ठ 19
3. मुझे चाँद चाहिये, पृष्ठ 128

जीवन में वह सदा अपने इस नाम का स्मरण करती रहती है : डॉ. अटल के अनेक अमृत–वचन सिलबिल के स्मृति–कोश में सुरक्षित हो रहे थे।[1] वर्षा को लगा, जैसे माशा स्वयं सिलबिल के दर्द को स्वर दे रही थी।[2]

असल में वर्षा वशिष्ठ रंग यात्रा में जिस ऊँचाई पर पहुँचती है सिलबिल नाम उसके विरूद्ध है। इस विरोध विधान में ही वाक्यीय शैलीगत चमत्कार है। लेखक यही व्यंजित करना चाहता है। इसलिये इस नाम का उपयोग लेखक अक्सर करता है और स्वयं वर्षा भी आत्म विश्लेषण के समय अपने को सिलबिल नाम से ही संबोधित करती है।

"एक ओर जहाँ चार घंटे की भरपूर नींद को तरसती जिन्दगी का जीवन समतल एवं तृप्त रहेगा, वहीं आठ घंटे की भरपूर नींद के बावजूद सिलबिल कला–लालसा के व्यग्र ज्वार में हमेशा डूबती–उतराती रहेगी।[3]

यहीं पर उसके वर्षा नाम की सार्थकता का संकेत मिलता है। उसमें लालसा का ज्वार है। भावों का विस्फोट है जो व्यक्त होना चाहता है, उमड़ना चाहता है। इसका संकेत दो एक स्थलों पर मिलता है।

'अभिशप्त सौम्य मुद्रा' नाटक में अभिनय करने के बाद दिव्या कत्याल उससे कहती है उसकी अपनी आँखों में भावनाओं का ज्वार दिखायी नहीं देता। बीच–बीच में चेहरे पर गहरे लगाव की लाली जरूर झलकती थी, लेकिन वह और तीव्र होकर पारावार नहीं तोड़ पायी। ऐसा लगता था कि राजकुमारी अपनी सत्तर फीसदी भावनाएँ स्टेट बैंक ऑफ मगध के लाकर में छोड़ आयी हो।'[4]

यही डॉक्टर अटल कहते हैं : तुम्हें अपने यौवन का कम एहसास है और उसके कलात्मक व्यवहार का और भी कम।[5]

वर्षा नाम में वेग है, प्रवाह है, तूफान है, गति है। वर्षा के जीवन में भी एक प्रवाह है, गति है, उसमें कहीं ठहराव नहीं। इसीलिए अनेक विवाह प्रस्तावों को वह ठुकरा देती है यहाँ तक कि हर्ष के माता–पिता, उसकी बहन सुजाता के कहने पर भी वह हर्ष से भी विवाह कर एक मुकाम पर ठहर जाना उचित नहीं समझती।

हर्ष की माँ द्वारा उसके साथ हर्ष की मँगनी कर देने के प्रस्ताव पर 'वर्षा के कान सनसनाने लगे'। सकुचाकर नीचे देखने लगी। कहना चाहा, जी, अभी नहीं। अभी जल्दी है। अभी

---

1. मुझे चाँद चाहिये, पृष्ठ 128
2. मुझे चाँद चाहिये, पृष्ठ 129
3. मुझे चाँद चाहिये, पृष्ठ 176
4. मुझे चाँद चाहिये, पृष्ठ 50
5. मुझे चाँद चाहिये, पृष्ठ 98

मेरे सामने कलात्मक चुनौतियाँ हैं।[1]

वर्षा का पूरा नाम वर्षा वशिष्ठ है। वर्षा में उद्दामता, एक प्रवाह हो सकता है, पर वशिष्ठ एक ऋषि का नाम है। अपने नाम के अनुरूप वर्षा में पर्याप्त विवेक, विश्लेषण बुद्धि और दृढता है। वह अपने कलात्मक लक्ष्य से कभी विचलित नहीं होती। अपने निश्चय पर दृढ़ रहती है। उसके साहित्य अकादमी अवार्ड पाने, पद्मश्री से अलंकृत होने के पीछे यही कलात्मक साधना है। **सिलबिल** नाम धारण कर भी वह कभी लक्ष्य से विचलित नहीं होती। यही उसके नाम का विरोध विधान है। लेखक ने वाक्यीय शैली उपकरणों के रूप में व्यक्तिवाची संज्ञाओं के प्रयोग में इस तकनीक का सहारा लिया है। वह जानबूझकर ऐसे स्थलों पर उसके **सिलबिल** नाम का ही प्रयोग करता है : **सिलबिल** के गले से विदेशी भाषा–निर्झर फूटता देख सभी सकते में आ गये।[2]

व्यक्तिवाची संज्ञाओं के उपयोग में लेखक का एक और वाक्यीय शैली वैशष्ट्य झलकता है, जिस पर ध्यान दिया जाना चाहिये। उसके शैली वैशिष्ट्य का एक यह भी आयाम है।

प्रतिपाद्य उपन्यास में वर्षा वशिष्ठ के तीन नामों पर हमारा ध्यान जाता है वे हैं सिलबिल, यशोदा शर्मा तथा वर्षा वशिष्ठ पर इन तीन नामों के अलावा भी उसके अन्य नाम हैं जिनका प्रयोग लेखक समय–समय पर करता है। ऐसा वह अन्य पात्रों के लिये प्रयुक्त व्यक्तिवाची संज्ञाओं के लिये भी करता है, पर वे प्रयोग बहुत ही व्यंजनापूर्ण हैं। जैसे :

"तीसरे सप्ताह एक नयी **वर्षा** का जन्म हो चुका था।

"उठते–बैठते, सोते–जागते उसकी चेतना पर **सौम्यदत्ता** ही छायी रहती थी।"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 30)

"कपोल के भीगेपन को उँगली पर लेकर वर्षा पल भर देखती रही .... पहले आतंकित हुई, फिर विस्मित फिर विभोर .... सौम्यमुद्रा का आँसू मेरी आँखों में आ गया है।"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 36)

सौम्यमुद्रा के साथ उसका इतना एकात्म्य हो गया कि उसे लोग इसी नाम से पुकारने लगे–"अरे भाई, सौम्यमुद्रा को डिठौना लगा दो।" मेकअप की इंचार्ज मिसेज सिंहल ने हँसकर कहा। (मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 36)

यही नहीं आगे चलकर यही नाम विशेषण बनकर उसकी चेतना में गुँथ जाता है : मुझे यह समझना चाहिये था कि अपना–अपना बोझ अकेले ढोने के लिये हर कोई अभिशप्त (यह उसका प्रियशब्द हो गया था।) है।" (मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 61)

यही नहीं आगे चलकर वर्षा वशिष्ठ अन्य नाम भी ओढ़ लेती है और अपने व्यक्तित्व की पर्तों को वह उनके माध्यम से खोलती है।

---

1. मुझे चाँद चाहिये, पृष्ठ 189
2. मुझे चाँद चाहिये, पृष्ठ 179

'महानारी' नामक छह पात्रों की प्रस्तुति से उसे 'ट्रेजरी क्वीन' माना जाने लगा। उसने कुँती, सीता, गांधारी, राधा, द्रोपदी की वेदनाओं को एकालाप द्वारा मंचित किया। **दिव्या** उससे कहती है : ''हर कलाकार का चरित्र–निरूपण उसकी शरीर–रचना, उसके व्यक्तित्व द्वारा निर्धारित होता है। उसकी भीतरी–बाहरी प्रकृति में कुछ ऐसे तत्त्व होते हैं, जो उसे सुख या दुःख जैसे विरोधी मनोभावों के साथ जोड़ना आसान एवं सहज बना देते है। (मुझे चाँद चाहिये, पृ. सं. 82)

सिलबिल के व्यक्तित्व की यही जटिलता उसे समय–समय पर कई **'नाम'** दे देती है। 'अपने–अपने नर्क' के मंचन के बाद वह शान्या हो जाती है। इसी चरित्र ने उसे अर्थवत्ता दी। फिर चेखब के 'सीगल' में वह **माशा** नाम ओढ़ लेती है। वर्षा को लगा, **जैसे माशा स्वयं सिलबिल के दर्द को स्वर दे रही हो**। फिर उसी नाटक की दूसरी पात्र 'नीना' उसे अपना ही प्रतिरूप लगती है – ''जहाँ तक **नीना** के चरित्र की आन्तरिक बुनावट का प्रश्न है, उसका आधार सिलबिल ही है। तीसरी बार नाटक के वाचन के बाद वर्षा की यह धारणा बलवती हो गयी। **नीना** के चरित्र की पारिवारिक रूपरेखा, रंगकामना और कला–ललक में सिलबिल ही स्पंदित हो रही थी।[1]

वह नीना के इस सिद्धान्त को अपने जीवन में उतार लेती है कि ''जिस चीज का हमारे पेशे में महत्त्व है, वह यश नहीं, बल्कि सहने की क्षमता है – अपना दायित्व निभाओ और विश्वास रखो।''[2]

इस प्रकार एक सिलबिल नाम में कितने अन्य नामों की अनुगूँजें ध्वनित हो रही हैं यही वर्षा वशिष्ठ के नाम का अन्तर्विरोध है और यही वाक्यात्क शैलीय उपकरण की दृष्टि से व्यक्तिवाची संज्ञा का चमत्कार है।

मोहिनी : मोहिनी वर्षा वशिष्ठ की भाभी एवं महादेव की पत्नी है। यह अत्यन्त तेज एवं लड़ाकू है। वह अपने नाम के अनुरूप अपने पति एवं ससुरालीजनों को अपनी मोहिनी से वश में किये रहती है। बस अपनी ननद वर्षा से बहुत ईर्ष्या रखती है। लेखक लिखता है– मोहिनी ने अपने नाम को चरितार्थ किया था या स्त्रीसंसर्ग से धन्य हुए निम्न मध्यमवर्गीय भारतीय नौजवान की यही गति होती है, यह तो नहीं मालूम। वर्षा के सन्दर्भ में मोहिनी का व्यवहार बहुत ही कटु था। यह इन पंक्तियों से स्पष्ट हो जायेगा– ''पर एक और तीखी अनिवार्यता दो–ढाई महीनों के भीतर ही उजागर होने लगी, जिसके चलते उसने अपने–आपको ऐसी अंधी गली की अंतिम दीवार से चिपका पाया जो सामने से पैने सींग हवा में लहराये, धरती रौंदते, मुँह से फेन बिखराने वाले बौराये साँड़ से बचने की कोशिश में हो।[3]

'मोहिनी' नाम का अर्थ है मोहित करने वाली। पर दूसरा अर्थ भुलावे में डालने वाली

---

1. मुझे चाँद चाहिये, पृष्ठ 130
2. मुझे चाँद चाहिये, पृष्ठ 135
3. मुझे चाँद चाहिये, पृष्ठ 75

भी है। अपने मोहित करने वाले, भुलावे में, फन्दे में फँसाने वाले अर्थ का प्रयोग तो वह अपने पति **महादेव** को वश में करने के लिये करती है पर, बाकी सबके लिये उसका व्यवहार अपने नाम के एकदम विपरीत था। वर्षा के साथ उसका व्यवहार कैसा था, इसका संकेत ऊपर किया जा चुका है। पर, अन्य के साथ भी उसका छल और कपटपूर्ण व्यवहार था। हृदय की दृष्टि से मोहिनी जरा भी मोहक नहीं थी। उसके नाम का यह विरोधाभास ही वाक्यीय शैलीगत उपकरण की दृष्टि से चमत्कृत कर देता है।

लेखक की टिप्पणी दृष्टव्य है :

"मोहिनी इटावा के गयाप्रसाद की आठ संतानों में से पाँचवीं बेटी थी। उसे अपने पिता की कुटिल व्यवहार–बुद्धि घुट्टी में मिली थी जो अब हेड कांस्टेबिल के रौबदार पद तक पहुँच गये थे। उसने अपने मायके में ही 'नौटंकीबाज' नन्द के बारे में सुन लिया था और उसकी रणनीतिक योजना बना ली थी।"

एक स्त्री दूसरी को नहीं सह सकती, अगर यह सच है, तो मोहिनी इसका सटीक नमूना साबित हुई। घर के तेज पर्यवेक्षण के बाद वह तुरन्त सिलबिल के प्रति उदासीनता से रूखाई पर उतर आयी। इस कार्यशैली की सुन्दरता यह थी कि सामने मुँह से एक शब्द नहीं कहा गया। सिलबिल का सुखाया गया कपड़ा गुड़ीमुड़ी करके छत पर फेंकने, उसकी किताबों को तितर–बितर करने, सिलबिल के सामने खाने की थाली पटकने और रोटी जलाकर देने जैसी बारीकियों से **मोहिनी** ने संप्रेषण के नये प्रतिमान स्थापित किये।[1]

और यह सब कार्य जो सम्पन्न करती थी उसका नाम था मोहिनी जिसके इतने अमोहक काम थे।

डॉ. अटल : डॉक्टर अटल नेशनल स्कूल ऑफ ड्रामा के निर्देशक एवं उपन्यास के प्रमुख पात्र हैं। एवं अपने नाम के अनुरूप व्यक्तित्व की विशेषताओं से युक्त हैं।

'मुझे चाँद चाहिये' में वर्षा वशिष्ठ द्वारा लेखक ने उनकी विशेषताओं की ओर ध्यान आकर्षित कराया है– वर्षा ने अब तक डॉक्टर अटल का पर्याप्त अध्ययन कर लिया था। कड़ा अनुशासन एवं कठोर परिश्रम उनकी जीवन शैली का आधार था। सुबह आठ बजे उनकी सफेद फिएट डी.एल.बी. 7391 बहावलपुर हाउस के गैरेज में आ खड़ी होती थी।

डॉ. अटल पूरे उपन्यास में अपने नाम के अनुरूप अपने कार्यक्रम में पक्के हैं। पूरे उपन्यास में एक सक्रिय पात्र के रूप में उभरते हैं।

डॉ. अटल नेशनल स्कूल ऑफ ड्रामा के निर्देशक हैं। उन जैसा तेजस्वी व्यक्तित्व वर्षा ने पहली बार देखा। वे अपने सिद्धान्तों पर सदा अटल रहते हैं। उनके नाम का अर्थ है अटल, कभी विचलित न होने वाला। अपने नाम के अनुरूप पूरे उपन्यास में अटल सदा दृढ़ रहते हैं, वे कभी

1. मुझे चाँद चाहिये, पृष्ठ 76

विचलित नहीं होते। इसके साथ ही वे रंगकर्मियों के प्रति अत्यन्त उदार और सहानुभूति सम्पन्न हैं। वे अपने लक्ष्य के प्रति सदा समर्पित रहते हैं। उनका काम है नेशनल नाट्य विद्यालय में आयी प्रतिभाओं के नाट्य गुणों का विकास करना। वे कहते हैं, "शुरू में आपको हमारी प्रशिक्षण–पद्धति बेहद श्रमसाध्य, कठिन और आक्रामक लगे। पर मैं आपको विश्वास दिलाता हूँ, रंगमंचीय सर्वश्रेष्ठ के लिये और कोई विकल्प नहीं।" इसके साथ ही उनकी उदारता, सहानुभूति इन पंक्तियों में व्यक्त होती है – "स्टाफ का हर सदस्य हमेशा आपके लिये उपलब्ध है और मैं भी। किसी की मदद, जरूरत या शिकायत के लिये .... चाहे वह मेरे ही खिलाफ क्यों न हो! .... आप जब चाहें, मेरे दरवाजे पर दस्तक दे सकते हैं। एक बात से मैं आगाह कर दूँ। मुझे काहिली, वक्त की बर्बादी और बहानेबाजी से सख्त नफरत है। .... बेस्ट ऑफ लक !"[1] कड़ा अनुशासन एवं कठोर परिश्रम उनकी जीवन–शैली का आधार था। सुबह आठ बजे उनकी सफेद फिएट डी. एल. बी. 739। बहावलपुर हाउस के गैराज में आ खड़ी होती थी। प्रति सप्ताह विविध विषयों की तीस–चालीस कक्षाएँ वह स्वयं लेते थे।[2] डॉ. अटल के व्यक्तित्व का व्यवहार पक्ष जहाँ उदार, मौन सहायता का विश्वासी था, वहीं उनका वैचारिक पक्ष अत्यन्त दार्शनिक था। जीवन का उन्हें गम्भीर अनुभव था और कला–क्षेत्र में रहकर भी उनका पारिवारिक और व्यक्तिगत जीवन कड़े अनुशासन और सुख–समृद्धि में बँधा हुआ था।

वाक्यीय शैली उपकरणों की दृष्टि से उनका नाम अटल उनकी प्रवृत्तियों के अनुकूल पर अत्यन्त उदारता के गुणों से युक्त होने के कारण पाठकों को आनन्द देता है।

दिव्या कत्याल : वर्षा वशिष्ठ से जुड़ी **दिव्या कत्याल** वह चरित्र है, जिसने सिलबिल को वर्षा वशिष्ठ बनाया। उसके अन्तर्निहित व्यक्तित्व की पर्तें खोलीं।

दिव्या 'मुझे चाँद चाहिये' उपन्यास की प्रमुख पात्र है। दिव्या अपने नाम के अनुरूप श्रेष्ठ व्यक्तित्व की विशेषताओं से युक्त हैं। मिस कत्याल नाम से ये पूरे उपन्यास में एक सक्रिय भूमिका निभाती हैं। वे खूब गोरी और आकर्षक थीं। वे अपनी शिष्या एवं इस उपन्यास की नायिका वर्षा के जीवन में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। जब वर्षा के भाई मिस कत्याल के बारे में जानना चाहते हैं तो वह कहती है– "मेरी टीचर............. मेरी सहेली .... मेरी सब कुछ..........। ये वर्षा के सम्पूर्ण व्यक्तित्व को उभारने में पूरा सहयोग देती हैं।

उनके व्यक्तित्व में एक दिव्यता है, एक अलौकिकता है, एक जादू है जो वर्षा पर छा जाता है। वह उन्हीं के प्रभाव में ढल जाती है। यह दिव्यता आध्यात्मिक नहीं विशिष्टता सूचक है।

दिव्या कत्याल शाहजहाँपुर के मिश्रीलाल डिग्री कॉलेज में अंग्रेजी की प्रवक्ता होकर आती हैं। वर्षा वशिष्ठ ने उसी वर्ष बी. ए. में प्रवेश लिया था। दिव्या कत्याल कैसी थीं इसके लिये

---

1. मुझे चाँद चाहिये, पृष्ठ 93–94
2. मुझे चाँद चाहिये, पृष्ठ 127

यह दृश्य पर्याप्त है : "मिस कत्याल ने मिश्रीलाल डिग्री कॉलेज के इतिहास में भावपक्ष और कलापक्ष दोनों दृष्टियों से नया स्वर्णिम अध्याय जोड़ा था। वे खूब गोरी और आकर्षक थीं। कभी चूड़ीदार कमीज पहनकर लावण्यमयी युवती बन जाती, कभी लहराते पल्लू वाली साड़ी बाँधकर गरिमामय महिला। कभी बालों की दो चोटियाँ पीछे डोलतीं, कभी बड़ा–सा जूडा बन जाता। वेश कोई भी हो, लेकिन जैसे लक्ष्मी के साथ समृद्धि चलती है, वैसे ही अपने विषय का अधिकार उनके साथ–साथ चलता था। कॉलेज की वह अकेली अध्यापक थीं, जिनके हाथों में नोट्स की कापी नहीं देखी गयी। मिस कत्याल जब कॉलेज के गलियारों में चलतीं, तो विद्यार्थी समुदाय की निगाहों से सम्मान की रेड कार्पेट बिछती जाती।"[1]

कॉलेज के संस्थापक दिवस को उन्होंने 'ध्रुवस्वामिनी' के मंचन के रूप में मनाया। शहर, जो एक सलोनी युवती के कुशल कार–संचालन से चौंका हुआ था, इस नाटक के प्रदर्शन से स्तब्ध रह गया। मिस कत्याल की प्रसिद्धि मिश्री लाल डिग्री कॉलेज की सीमाएँ पार करके नगर को आलोड़ित करने लगी।[2]

उनके व्यक्तित्व में नाम के अनुरूप असाधारणता थी। यह असाधारणता, पहनावे, समृद्धि और विद्वत्ता के साथ अपनी कलात्मक रुचि के कारण भी थी। पर उनका जीवन दिव्य था ऐसा नहीं। वे भी मानवी थी और नाम के विपरीत उनका जीवन दुःख की एक व्यथापूर्ण कहानी थी। "गलियारे में रजिस्टर लिये जातीं, अभिवादन का मुस्कान से जबाब देतीं। मिस कत्याल को देखकर क्या कोई सोच सकता है कि ऐसी मोहक युवती के साथ निद्राहीन रातें जुड़ी है और उनके पीछे एक प्रेमी है।[3]

कोश में दिव्य शब्द के अलौकिक, अति सुन्दर, भव्य अर्थ दिये हुये हैं। इसके अनुसार दिव्या कत्याल अति सुन्दर और भव्य थीं। वे सुशील थीं, पर उनका जीवन निष्कलंक और सदाचारपूर्ण नहीं था। सामान्य नारी से असाधारण गुण सम्पन्न जरूर थीं पर वे अलौकिक पवित्र आचार वाली नहीं थीं। यही विरोधाभास उनके दिव्या कत्याल नाम को चमत्कारपूर्ण बना देता है। उनका एक संवाद इसका प्रतीक है : मिस कत्याल हँसते–हँसते लोट–पोट हो गयीं। फिर उसकी चिबुक उठाकर कृत्रिम क्रोध से पूछा, "कहाँ था वह पाप का चिह्न ?"

वर्षा ने इंगित किया, तो उन्होंने अपने नर्म–नर्म होंठ वहाँ रख दिये, "लो तुम फिर से शुद्ध हो गयी।"

वर्षा और उनकी घनिष्ठता संदेह की सीमा तक हो जाती है। उनका खान–पान भी आधुनिक है। वे वर्षा से कहती हैं : अब तुम मेरी जितनी अन्तरंग हो, उतना कोई भी व्यक्ति नहीं हुआ, इसलिये यह एक वर्ष मेरे इस अनुपम रिश्ते को समर्पित है।"[4]

---

1. मुझे चाँद चाहिये, पृष्ठ 13
2. मुझे चाँद चाहिये, पृष्ठ 13
3. मुझे चाँद चाहिये, पृष्ठ 53
4. मुझे चाँद चाहिये, पृष्ठ 61

शिवानी : शिवानी अहमदाबाद से बिजनेस मैनेजमेंट का कोर्स किये हुये एक मल्टीनेशनल में एक्जीक्यूटिव और हर्ष के डैडी के एक सहयोगी मित्र की बेटी है तथा अपने नाम के अनुरूप ही सौंदर्य से युक्त है। यह हर्ष की मित्र है। पहले यह उपन्यास की नायिका वर्षा वशिष्ठ की विरोधी थी लेकिन बाद में जब वह वर्षा को जान जाती है तो उसकी गहरी मित्र बन जाती है। यह अत्यंत सुन्दर है। वर्षा की तुलना में शिवानी का कद काफी छोटा था। वर्षा ने संतोष के भाव से लक्ष्य किया कि शिवानी की आँखें और वक्ष–रेखायें भी उसके आगे वैसी ही हैं, जैसी उज्जयिनी की श्री के सामने विदिशा। पर शिवानी न सिर्फ बड़े पावन ढंग से गोरोचन–सी गोरी थी, बल्कि उसमें गहरा सहज आकर्षण था।

शिवानी नाम का अर्थ है पार्वती। भगवान शंकर की प्रिया। पर, इसके नाम में और इसके व्यक्तित्व में दो–एक समानताओं के बाद असमानताएँ–ही–असमानताएँ हैं। असल में मुझे चाँद चाहिये की चरित्र–सृष्टि और पात्र संरचना प्रेमचंद से हटकर है। यहाँ केवल नाम की व्युत्पत्ति से ही पात्र के व्यक्तित्व की रेखाएँ स्पष्ट नहीं होती हैं। उनके व्यक्तित्व का निर्माण अत्यन्त जटिल और आधुनिकता बोध से सम्पन्न है। शिवानी का व्यक्तित्व मोहक है। वह हर्ष की पहली प्रेमिका है। पौराणिक नाम होते हुये भी वह पाश्चात्य रंग में रंगी पूरी आधुनिका है। उनके नाम के साथ यही विरोधाभास है। शिवानी को देखकर वर्षा को कुमार सम्भव की पार्वती याद आ गयी – "फिर पार्वती में यह यौवन फूट पड़ा, जो शरीर–लता का स्वाभाविक श्रृंगार है, जो मदिरा के बिना ही मन को मतवाला बना देता है और कामदेव का बिना फूलों वाला बाण है।" कुमार सम्भव की ये पंक्तियाँ याद आते ही उसने अपनी तुलना कर डाली – "नहीं, नवयौवन ने मेरी देहलता पर ऐसे रंग नहीं बरसाये, उसने ठंडी साँस के साथ सोचा।"

अपने नाम के अनुरूप शिवानी की वेशभूषा सादगी भरी न होकर एकदम मॉडर्न थी – "शिवानी ने बैलबॉटम और फ्रिल वाला टॉप पहन रखा था। कानों में बड़े–बड़े कुंडल। पीठ पर लहराते हुये बाल। काले लाइनर से हाइलाइट की गयी आँखें, और स्वप्निल से 'लुक' के लिये ग्रे शैडो। सनसेट पिंक लिपस्टिक में भरे–भरे होंठ ऐसे लगते थे, जैसे पकी हुई कलियाँ टूटने को मचल रही हों।"(1)

शिवानी के नाम में कोमलता थी पर अगर कोई उसे चुनौती दे या उसका हक छीने तो वह क्रुद्ध शेरनी भी थी – "जैसे वह घने जंगल में कई दिनों तक भूखी शेरनी हो और उसने कुलाँचे मारते हिरन को देखकर अपने नथुने फुला लिये हों।"(2)

वह मम्मी की विरासत ग्रेटर कैलास वाले सुसज्जित बंगले में रहती थी। वह हर्ष की बचपन की दोस्त थी पर वर्षा के बीच में आ जाने और हर्ष के अस्तव्यस्त जीवन के कारण उससे

1. मुझे चाँद चाहिये, पृष्ठ 160
2. मुझे चाँद चाहिये, पृष्ठ 207

दूर हो जाती है। पर, हर्ष की उदासीनता के पीछे वर्षा को कारणीभूत मानने से पहले वह वर्षा से खिंची खिंची रहती है, बाद में वास्तविकता जानने पर उसके निकट आ जाती है। वह अपने वायवी प्रेम को नहीं, सुरक्षित जीवन को अधिक महत्व देती है और अश्विनी से विवाह कर लेती है।

वह कहती है : हम तुम्हारे जैसे संगदिल नहीं। बुद्ध की तरह दुःखी मानवता के लिये हमारा मन करुणा से भरा है।[1]

अपने पौराणिक नाम के विपरीत शिवानी बहिर्मुखी है इसीलिये अपने में डूबा हर्ष उसे उतना अच्छा नहीं लगता जितना उसकी साज–सज्जा, उसके सौन्दर्य को सराहता अश्विनी। वह कहती है : ''हर्ष अपने आप में और अपनी कला में इतना डूबा रहता था कि उसने शायद ही कभी मेरे कपड़ों, मेरे गहनों पर ध्यान दिया हो। अश्विनी हैं कि सबसे पहले मेरी साड़ी, मेरे लॉकेट, मेरे सेंट का जिक्र करते हैं। उनसे दस मिनट मिलकर मेरे अंदर की स्त्री उमंग में आ जाती है। मेरी चाल बदल जाती है, मेरा आत्मविश्वास मेरी आँखों में चमकने लगता है ....''[2]

अंत में वह कहती है तुमसे मैंने काफी दिनों ईर्ष्या की है। अब तुम्हारे लिये मेरे मन में शुभचिंता रह गयी है।[3] दिल से इतनी अच्छी होते हुये उसका खान–पान पूरा आधुनिक है। इस प्रकार उसका नाम शिवानी है पर शिवत्व से वह काफी दूर है। बाद में वह विनय से विवाह करती है।

कंचनप्रभा : कंचनप्रभा का अर्थ है स्वर्ण की चमक। उसके पास यह स्वर्ण है अपना दैहिक सौन्दर्य और अपनी देह का इस हद तक प्रदर्शन कि टिकट–खिड़की पर कोहराम मच जाये। ड्रेसिंग गाउन पहने कंचनप्रभा कुर्सी पर बैठी थी – राजमहिषी जैसी गरिमा के साथ। उसका स्वभाव अपने दैहिक प्रदर्शन से मुग्ध करना था। इस दृष्टि से उसका नाम उसकी प्रवृत्ति के अनुकूल है। फिल्मों की हावभाव वाली कंचनप्रभा भूमिका के निर्वाह में भी अपनी व्यक्तिगत चाल ही चलती थी। चेहरा अधिकतर कोरा रहता था। हाँ, जिस्मानी प्रदर्शन में वह खूब माहिर थी। पर, कंचनप्रभा नाम में एक जो गरिमा, सुरुचिपूर्ण सौन्दर्य है, उसके साथ कंचनप्रभा का कोई सम्बन्ध नहीं था। उसका पूरा व्यवहार इतना फूहड़, कुरुचिपूर्ण और अहं–उद्‌घाटन करने वाला था कि उससे वर्षा को घृणा होने लगी थी। ऐसे विरोधाभास वाले नाम में शैलीगत सौन्दर्य पर्याप्त मात्रा में मिलता है।

यह उपन्यास में एक फिल्म अभिनेत्री के रूप में चित्रित हुई है। कंचनप्रभा वर्षा को अपने सौंदर्य से तौलती है और उसके चेहरे पर तिरस्कार का भाव आ जाता है। यह अपने नाम के अनुरूप ही गोरी, रूपवान है। यह अत्यंत अहं वाली है किन्तु जितनी सौन्दर्यवान है, उतनी ही स्वभाव से कटु है। बाद में यह वर्षा की प्रशंसक बन जाती है।

चारुश्री : यह अपने नाम के अनुरूप सौंदर्य से युक्त है तथा स्वभाव से भी अच्छी है। वर्षा जब

---

1. मुझे चाँद चाहिये, पृष्ठ 271
2. मुझे चाँद चाहिये, पृष्ठ 272
3. मुझे चाँद चाहिये, पृष्ठ 274

उससे मिलती है, उस समय का वर्णन निम्न प्रकार किया गया है—फिर खुशबू के झोंके के साथ साड़ी पहने बहुत आकर्षक युवती आयी, "हमें चारुश्री कहते हैं।" उसने मोहक नजाकत से हाथ आगे बढ़ाया। चारुश्री की वेशभूषा मूल्यवान होने पर भी सुरुचिपूर्ण थी। आभूषण कम, पर सौन्दर्य को उभारने वाले थे।

उसकी आँखों में सदा अनुराग की आभा रहती थी। वह बहुत हल्का पर प्रभावी मेकअप करती थी। उसमें गजब का आत्मविश्वास था। वह विनम्र है। वर्षा से प्रशंसा चाहती है। हर्ष और वर्षा की अन्तरंगता की सीमा क्या है, यह वह जानना चाहती है। उसमें थोड़ी स्त्रियोजनित ईर्ष्या भी है। वह वर्षा और हर्ष के सम्बन्धों को तोलने वाली निगाह से देखती है। चारुश्री की इमेज एक सेक्सी डांसर की है। उसमें और उसके नाम में यही असामंजस्य है और शैली तात्विक दृष्टि से सौन्दर्य भी यही है। उसकी चारुता रुचि की सुरुचिता के साथ दैहिक चारुता पर आधारित है।

सुशीला : चतुर्भुज की पत्नी है। यह अपने नाम के अनुरूप ही सुशील है। इसके पति चतुर्भुज पहले अनुपमा, फिर रंभा राजवंशी से विवाह करते हैं। किन्तु यह अपने माथे पर शिकन भी नहीं लाती। और भारतीय परम्परा के अनुरूप ही यह अंत तक अपने पति का साथ देती है।

सुकुमार चटर्जी : सुकुमार 'मुझे चाँद चाहिये' उपन्यास के पात्र एवं नाटक की अभिनेत्री रीटा के पति हैं। ये अपने नाम के अनुरूप ही कोमल स्वभाव वाले हैं। और ये अपनी पत्नी से विपरीत स्वभाव रखते हैं और उसके गुस्से का सामना भी समझदारी पूर्वक करते हैं। सुकुमार चटर्जी से रीटा ने वर्षा को मिलवाया था। वह जेफर्सन इंडिया में एक्जीक्यूटिव था। शांत, मितभाषी, गंभीर। नाम और स्वभाव का सामंजस्य ही इनके व्यक्तित्व का सौन्दर्य है।

वे शांत, मितभाषी और गम्भीर थे। चुलबुली, शोख रीटा के बिल्कुल विपरीत सुकुमार के व्यक्तित्व में गहराई थी। उनके सान्निध्य में आते ही रीटा की चंचलता शांत होने लगती है। उसे चुप्पी अच्छी लगने लगती है। वाक्यीय शैली उपकरणों की दृष्टि से व्यक्तिवाची नाम सुकुमार चटर्जी के सौन्दर्य का आधार कार्य और भावना का सामंजस्य है। रीटा में अन्तर्विरोध है पर सुकुमार में नहीं।

विमल : विमल अपने नाम के अनुरूप ही साफ, सच्चे ह्रदय वाले हैं। यह फिल्म स्टार हैं किन्तु इनमें कोई अहं भाव नहीं है एवं अत्यंत अच्छे इंसान हैं। ये वर्षा से कहते हैं मैं अपने को स्टार नहीं मानता, माथे की लकीरों ने स्टार बना दिया है।

चतुर्भुज : अपने नाम के अनुरूप ही गुण रखते हैं। ये विभिन्न प्रकार के वाद्यों, गीतों, नाटक के निर्देशन करने में निपुण हैं। ये उपन्यास में तीन स्त्रियों से विवाह करते हैं, सुशीला, अनुपमा, रंभा राजवंशी। किन्तु इनकी पहली पत्नी ही इनका अंत तक साथ देती है।

चतुर्भुज एक पौराणिक नाम है जिसका अर्थ है विष्णु भगवान। पर चतुर्भुज के व्यक्तित्व में पौराणिक नाम का कोई भी गुण नहीं है। अगर चतुर्भुज नाम का प्रतीकात्मक अर्थ लगाया जाये तो चतुर्भुज की प्रतिभा अपने कार्यक्षेत्र में चारों ओर फैली हुई थी। जिसका साक्षात्कार पहली बार

नाट्य विद्यालय में होता है : शाम पाँच बजे स्टाफ के छह सदस्यों के सामने चतुर्भुज का परीक्षण हुआ। पहले उन्होंने लोकधर्मी नाट्य, संगीत परंपरा, ख्याल, तुर्रा, कलगी, भगत, स्वाँग और नौटंकी आदि से सबंधित धुआँधार प्रश्नों के खटाखट उत्तर दिये। फिर हरमोनियम, सितार, बाँसुरी करताल, मंजीरे, तबला, ढ़ोलक, सारंगी इत्यादि बजाये (बायोलिन माँगा गया, पर वह था नहीं)। फिर शाहजहाँ, चाणक्य, मजनूँ, चन्द्रगुप्त, औरंगजेब, मुमताज, लैला, पुतलीबाई इत्यादि की भूमिकायें निभाते हुये अपने कई नाटकों के दृश्य दिखाये। फिर कुछ नाट्यगीत एवं लोकगीत गाये और अंत में जब अपनी बुलंद, सधी आवाज में 'रोयें खड़े दिलगीर, हमार गौने की तैयारी' में विदा लेती दुल्हिन की पीड़ा को वाणी दी, तो भीतरी प्रांगण में 'बैजू बावरा' के दृश्यबंध पर चहकते पंछी सहसा चुप हो गये।

कुछ–कुछ विदूषक जैसे चतुर्भुज ने वर्षा वशिष्ठ के कैरियर को 'ब्रेक थ्रो' दिया। उनमें गम्भीरता और विनोद का अद्भुत सामंजस्य था। अब उनके इन गुणों का और उनके पारंपरिक नाम में कोई तालमेल न होने से यह व्यक्तिवाची अभिधान वाक्यीय शैली उपकरण का एक मजेदार उदाहरण बन गया है। चतुर्भुज होते हुये भी उनका जीवन एक व्यथा और भटाकाव की कहानी है।

प्रिया : प्रिया दिव्या की बेटी है जो अपने पिता रोहन एवं माँ दिव्या, वर्षा तथा सभी की प्रिय है। वह अपने नाम के अनुरूप प्रिय गुणों से युक्त है। माँ की मृत्यु के बाद वह वर्षा की अत्यन्त प्रिय हो जाती है।

गायित्री : यह उपन्यास की प्रमुख पात्र है, यह अपने नाम के अनुरूप स्वभाव से सरल एवं सुन्दर है। इसे सीता, उर्वशी, और अन्नपूर्णा की संज्ञा दी जाती है। गायित्री वर्षा वशिष्ठ की बड़ी बहन है। यह अपने परिवार, अपने माता–पिता सभी की प्रतिष्ठा की रक्षा करती है।

पहले इसके विवाह को लेकर पूरा परिवार तनाव में रहता है। शर्मा परिवार में गायित्री–विवाह का मुद्दा अब तक का सबसे घनघोर मुद्दा था। नकद बिल्कुल नगण्य था, पिता की कोई सामाजिक प्रतिष्ठा नहीं थी, लड़की के पास ऊँची शिक्षा नहीं थी – सिर्फ रूप था। चार–पाँच प्रस्तावों की असफलता के बाद माँ–बाप और भाई की व्यवहार–बुद्धि चौकन्नी हो गयी थी। गायित्री में इन गुणों का समावेश किया जाता है : लड़की क्या है, साच्छात उर्वशी है। सीता मैया–सा तेज है चेहरे पर। अन्नपूर्णा की तरह पूरी गृहस्थी सँभालती है। जिस घर में जायेगी उजाला हो जायेगा।''[1]

तीन–तीन देवियों की मिलीजुली के बावजूद कोई गुण ग्राहक नहीं मिला। यही उसके नाम का विरोधाभास है। शिकोहाबाद की मुँगेरी देवी को अपने चिरंजीव दीनदयाल उपाध्याय के लिये दो साल से 'सुंदर, सुशील और सात्त्विक' कन्या की तलाश थी। उन्हें गायित्री के चेहरे पर

1. मुझे चाँद चाहिये, पृष्ठ 23

'गाय जैसा भाव लगा था।[1] वह अपने विवाह से संतुष्ट है। उसके व्यवहार से उसका पति व सास भी। उसके जीवन में अपने नाम के अनुरूप कोई अन्तर्विरोध नहीं है। पर उसमें गायित्री मंत्र जैसा तेज न होकर वह अत्यन्त विनम्र है।

नैनरंजन : नैनरंजन बंबई के व्यवसायी का पुत्र है एवं अपने नाम के अनुरूप ही नैनों को प्रसन्नता देने वाला है। पहली बार नैनरंजन से मिलकर ही वर्षा प्रमुदित हो गयी है। उसका मनोहारी रूप, निश्छलता और विनयशीलता देखते ही बनती थी। यह वर्षा की बहिन गौरी उर्फ झल्ली से प्रेम करता है, बाद में उसी से इसका विवाह भी होता है। हर्ष की मृत्यु के बाद यह वर्षा को बहुत सहारा देता है। नैनरंजन के नाम व गुणों में पूरा सामंजस्य है।

आदित्य : अपने नाम के अनुरूप ही एक प्रसिद्ध फिल्म अभिनेता है। पहले ये नाटकों में अभिनय करते हैं बाद में फिल्मसिटी चले जाते हैं। ये अपने मित्रों के प्रति अच्छा व्यवहार रखने वाले हैं।

कल्याणी : कल्याणी करमाकर उपन्यास की एक पात्र है। यह एम.बी.बी.एस. पास किये थी एवं एम.डी. करने की सोच रही थी कि नाट्य विद्यालय में एडमीशन ले लिया था। वह पूना के 'एक्सपेरिमेंटल थिएटर' की अच्छी अभिनेत्री मानी जाती थी।

गौरी उर्फ झल्ली : यह अपने नाम के अनुरूप गोरी एवं सुन्दर है। यह वर्षा की छोटी बहिन है। पहले यह मध्यमवर्गीय लड़की के समान रहती है बाद में इसका विवाह बंबई के एक व्यवसायी के पुत्र से हो जाता है। यह अत्यंत स्नेही स्वभाव वाली है।

स्नेह : खादी का कुर्ता–पजामा, कंधे पर खादी का झोला और छोटी सी दाढ़ी वाले स्नेह 'निर्झर' 'पंचमवेद' के दूसरे संस्थापक सदस्य थे। वह अभिनय, निर्देशन, मंच–व्यवस्था नाट्य–समीक्षा सभी कुछ करते थे।

स्नेह भागलपुर में 'निराला के काव्य में वेदना' विषय पर शोध कर रहे थे। यह जानकर सिलबिल का मनोबल टूटा कि संज्ञा–परिवर्तन के क्षेत्र में नाट्य विद्यालय में स्नेह बहुत पहले अगुआई कर चुके हैं। उनका वास्तविक नाम बटुक दयाल पीपल वाले 'पथिक' था। वह निराला काव्य को समझने की कुंजी इन पंक्तियों को मानते थे – 'स्नेह–निर्झर बह गया है। रेत ज्यों तन रह गया है, जो कालांतर में उनकी नयी पहचान बनीं।[2] वे स्नेह निर्झर जरूर हैं पर उनके जीवन में गतिशीलता का अभाव है। वे कहते हैं, 'मैं रंग अजगर हूँ। न मैं चाकरी कर सकता हूँ, न मंडी हाउस की सांस्कृतिक बाँबी के बाहर साँस ले सकता हूँ।''[3] उनके नाम का यही विरोधाभास उनके व्यक्तिवाची संज्ञा का चमत्कार है। बाद में उनका विवाह पुरबाई से होता है और उनके जीवन की एकरसता टूटती है। पुरबाई में बहाव है। यही बहाव स्नेह के जीवन में आ जाता है।

---

1. मुझे चाँद चाहिये, पृष्ठ 26
2. मुझे चाँद चाहिये, पृष्ठ 144–145
3. मुझे चाँद चाहिये, पृष्ठ 187

स्नेह भागलपुर से आये हैं। ये उपन्यास के प्रमुख पात्र हैं एवं अपने नाम के अनुरूप ही स्नेही स्वभाव वाले हैं।

वर्षा विवाह के बाद उसकी पत्नी की आशंका को देखकर कहती है कि वे एक मुलायम पति साबित होंगे। क्या आपने स्नेह सामान्य व्यवहार में भी रफ होते देखा है।

वर्माजी ने अपने उपन्यास में कुछ ऐसे चरित्रों को भी लिया है जो अपने नाम के विपरीत गुण एवं स्वभाव वाले हैं–

सतवंती : सतवंती का जीवन अपने नाम के अनुसार सत्यपूर्ण होने पर भी उसकी जीवनगत परिस्थितियाँ एकदम प्रतिकूल थीं। स्वयं सत्यनिष्ठ थी, पर उसका जीवन 'अबला जीवन हाय तुम्हारी यही कहानी' का सटीक उदाहरण था। शादी से पहले सतवंती ने प्राइवेट तौर पर बी. ए. किया था, पर स्वभाव और फिर प्रतिकूल परिस्थितियों के कारण उसमें आत्मविश्वास बिल्कुल नहीं था। जरा सी बात पर उसके टप–टप आँसू बहने लगते थे। अपनी लगन तथा वर्षा के निर्देश एवं प्रोत्साहन से सतवंती की हीनभावना क्षीण हुई थी।

उसके पति के जीवन में दूसरी नारी आ गयी थी इसलिये उसकी ऐसी दुर्दशा थी। पर गृहस्थी की दृष्टि से वह सतवंती ही थी। वह स्वयं कहती है :

"जालंधर के उनके हरे–भरे संसार में भूचाल ला देने का कारण कुमारी कौशल्या बाली थीं। उस 'बालकटी' ने दफ्तर में आते ही पति पर कुछ 'टोटका' कर दिया। देखते–देखते पति को सतवंती में खोट–ही–खोट दिखायी देने लगे। सतवंती आज भी स्तब्ध हैं कि उन जैसी गृहस्वामिनी पर कोई उँगली कैसे उठा सकता है ! मेरा घर चम–चम चमकता था। मेरी रसोई में आपको एक मक्खी भिनभिनाती मिल जाये, तो बेशक आप मुझे सूली पर लटका दो। छः किस्म के अचार तो आप कभी भी माँग लो। मजाल है जो एक पैसे की बर्बादी हो।"

ऐसी सतवंती के जीवन में सुख नहीं था, पति का प्रेम नहीं था। अपनी बच्ची पिंकी को लिये दिल्ली चली आयी और किसी तरह वर्षा के सम्पर्क में आकर कुछ टाइपिंग आदि सीखती है।

उसके नाम और जीवन का यह विरोधाभास नियति का विरोधाभास है। वाक्यीय शैली उपकरणों की दृष्टि से उसके नाम का यही महत्त्व है।

फूलवती : 'फूलवती' अपने नाम के विपरीत गुणों वाली है। यह वर्षा वशिष्ठ की माँ की सहेली है। यह पूरे उपन्यास में विरोधी वातावरण बनाये रहती है। यह वर्षा की माँ से कहती है–"महोबा वाली तुमने सारी उमर हड्डियाँ घिसी हैं। अब वो घड़ी आ गयी है कि तुम पीढ़े पर बैठी–बैठी बीड़ा चबाओ और बहू की चुटिया खेंचो।"

सुजाता : सुजाता हर्षवर्धन की बहिन है। पहले अपने नाम के अनुरूप वर्षा से भी मित्रता का रिश्ता रखती है, बाद में इसका व्यवहार वर्षा के प्रति बदल जाता हैं यह हर्ष की मृत्यु के बाद वर्षा पर आरोप लगाती है।

ममता : यह उपन्यास की एक पात्र है एवं अपने नाम के विपरीत स्वभाव वाली है। यह वर्षा से ईर्ष्या करती है।

भास्कर : यह सूर्य का एक नाम भी है किन्तु यह अपने नाम के विपरीत व्यक्तित्व वाला है। यह अत्यंत धनवान है किन्तु दुर्बल, हकलाने वाला तथा बैसाखी से चलता है। वर्षा के भाई इसे वर्षा के पति के रूप में पसंद कर लेते हैं। किन्तु वर्षा इसका विरोध कर दिल्ली के नेशनल स्कूल ऑफ ड्रामा में एडमीशन ले लेती है।

महादेव : वर्षा के बड़े भाई एवं अपने नाम के अनुरूप गुणों वाले हैं। किन्तु बाद में यह वर्षा के सबसे बड़े विरोधी बन जाते हैं। लेकिन उपन्यास के अंत में वर्षा अपने भाई के तबादले में मदद करती है और उसका भाई उससे प्यार करने लगता है।

हर्ष : हर्ष इस उपन्यास का नायक है। वर्षा वशिष्ठ का जीवन उसी के साथ गुँथा हुआ है। उसके नाम का अर्थ है प्रसन्नता, खुशी, आह्लाद पर सच बात यह है कि उसके जीवन में हर्ष या आह्लाद के छींटे कभी–कभार ही आते हैं। वह अपने परिवार और अपने मित्रों के लिये सदा तनाव और बेचैनी का कारण बना रहता है।

ऐतिहासिक चरित्र हर्षवर्धन और मेरे प्रतिपाद्य उपन्यास के मुख्य पात्र हर्षवर्धन में इतना ही साम्य है कि एक आई.ए.एस. अफसर का पुत्र होने के कारण राजकुमार की तरह इसका पालन–पोषण होता है, पर अभिजात और कुलीन होते हुये भी यह अपने अहं, क्रोध और उग्रता, आड़ियल, जिद्दी स्वभाव से कभी छुटकारा नहीं पा पाता। इसके साथ ही टूटन और तनाव के कारण वह अबाध रूप से नशे का सेवन करने लगता है। अस्थिर स्वभाव के कारण वह अपना कैरियर भी नहीं बना पाता है। एम.ए. की पढ़ाई अधूरी छोड़कर राष्ट्रीय नाट्य स्कूल में अभिनय का प्रशिक्षण ले एक अच्छा अभिनेता बन जाता है। पर, एक अच्छे अभिनेता बने रहने के लिये जो अनुशासन, व्यवस्थित जीवन, विनम्रता, निर्देशक और सह अभिनेताओं से तालमेल, समझौतावादी दृष्टिकोण, अपनी सीमा का ज्ञान चाहिये उससे वह कोसों दूर है। वर्षा वशिष्ठ से उसकी अन्तरंगता है, पर बात उसकी भी नहीं मानता है। उसकी सफलता, यश और कीर्ति से उससे भी ईर्ष्या करने लगता है।

उसे माडेस्ट तो पसन्द हैं, पर डॉ. अटल के समझाने पर भी अपना इस्तीफा वापस नहीं लेता है। वह कई बार झगड़ा कर लेता है। उसके विचार किसी से नहीं मिलते। यहाँ तक कि मतभेद के कारण वर्षा भी उससे विवाह नहीं करती है। उसकी बहन सुजाता से साफ मना कर देती है।

हर्ष का व्यक्तित्व बहुत आकर्षक था वह नाट्य विद्यालय में कई सुन्दरियों की दृष्टि का केन्द्र बना रहता है : वरिष्ठ आई.ए.एस. पिता का अकेला बेटा बेहद आकर्षक व्यक्तित्व वाला और अपनी कक्षा का सर्वश्रेष्ठ अभिनेता था। वह राजकुमार और अभिनेता दोनों था वर्षा की दृष्टि में। 'खड़िया का घेरा' में अजदक की भूमिका में उसने अपनी धाक जमा दी थी। राजदूत मोटर साइकिल पर आते–आते सौम्य, मितभाषी हर्षवर्धन से वर्षा की ''हैलो' हो जाती थी। (वर्षा को मालूम था पहले

वर्ष की वर्तिका देसाई से लेकर रिपर्टरी कम्पनी की 'ए' क्लास अभिनेत्री ममता लहरिया तक .... स्कूल में अनेकानेक अनुराग भरी आँखें हर्षवर्धन का पीछा करती हैं।"[1]

हर्ष के सान्निध्य से वर्षा सुख से विभोर हो जाती है। उसका साथ पाकर उसे अभेद्य दुर्ग की सुरक्षा का अनुभव हुआ। उसने महसूस किया कि पुरुष के साथ तादात्म्य ऐसे कवच की तरह काम करता है; उसे आश्चर्य हुआ। वह उसके सबसे गुणात्मक बिंदुओं को बाहर ले आता है। वह उसके साथ से बहुत हर्षित–प्रफुल्लित थी।

उसकी यही खुशी आगे चलकर वैचारिक विरोध के कारण तिरोहित हो जाती है। यही नहीं जो हर्ष बहन और माता की आँखों का तारा था वही उनके दुःख का कारण हो जाता है। वर्षा से उसकी दूरी का एक कारण हर्ष की उसके ऊपर हावी होने की प्रवृत्ति थी।[2] अब तक वे भावात्मक रूप से एक–दूसरे के काफी निकट आये थे, पर दूसरे स्तर पर विरोधी विचारों की नोंकें भी चुभने लगी थीं।[3] हर्ष की विचार–पद्धति और जीवन–शैली के ताने–बाने और साफ और सुलझे हुये नहीं थे। आगे चलकर उसका स्वभाव कटु और अतर्क संगत होता चला गया। उसमें आत्म निरीक्षण की शक्ति खत्म हो जाती है। उन दोनों के बीच तनाव आ जाता है। उसकी माँ को आशा थी कि वह बाप से भी आगे जायेगा, खानदान का नाम रोशन करेगा, पर ईश्वर की लीला देखो .... [4] उसकी बहन की टिप्पणी ध्यातव्य है : हर्ष का ईगो किंग साइज है, पर वह भूल जाता है कि अब डैडी नहीं हैं। उसकी इन्हीं प्रवृत्तियों के कारण घर में ही उसका अवमूल्यन शुरू हो जाता है।

बेवाक् बयानों से हर्ष की इमेज एक मुँहफट अहं–केन्द्रित अभिनेता की बन गयी। वह बात–बात में उत्तेजित होने लगा। धीरे–धीरे हर्ष विनाश के पथ पर बढ़ने लगता है। वर्षा सम्हालने की कोशिश करती है, पर, हीरोइन की लत के कारण उसकी आदतें और व्यवहार अजीब हो गया है। नशे के कारण वह कभी भी बेहोश होने लगा।

हर्ष और वर्षा के नाम की अगर संवेगीय और भौगोलिक व्याख्या की जाये तो दोनों की प्रवृत्ति अपरिमित विस्तार में फैलना है। मनुष्य को अपनी सीमा समझकर अपनी कामनाओं को लगाम देनी चाहिये। महत्त्वाकांक्षा के चाँद को दोनों छूना चाहते हैं फलतः उनका सामना एक अंधेरी गुफा से होता है। हर्ष के जीवन को देखकर वर्षा सोचती है : हर्ष दिल्ली और रंगमंच तक सीमित रहता है, तो छोटे एवं विशिष्ट कला क्षेत्र में सफल और संतुष्ट होता, पर कला–क्षेत्र के विस्तार की ललक उसे................. और वर्षा को................. ऐसे अँधेरे, काले मोड़ तक ले आयी थी। इसके पीछे खलनायक की भूमिका निभाने वाले थे उत्कृष्ट कलामूल्य और समझौता विरोधी कार्यशैली ....[5]"

---

1. मुझे चाँद चाहिये, पृष्ठ 110
2. मुझे चाँद चाहिये, पृष्ठ 163
3. मुझे चाँद चाहिये, पृष्ठ 164
4. मुझे चाँद चाहिये, पृष्ठ 192
5. मुझे चाँद चाहिये, पृष्ठ 524

एक ओर ऊँचे कलात्मक मूल्य जिद और स्वाभिमान है और दूसरी ओर छुईमुई अहं। ये 'किलिंग फील्ड्स' मोतीलाल नेहरू मार्ग और साउथ ब्लॉक का हिस्सा नहीं हैं, जहाँ लोग बराबर ध्यान रखें कि कहीं राजदुलारे को चोट न पहुँचे। किसी भी दृष्टि से देखो, हर्ष को आकाश पर होना चाहिये था, पर वह चौपाल के धूल भरे फर्श पर सूखी विष्ठा के बीच पड़ा था।

हर्ष के चेहरे पर इस यंत्रणा के चिह्न थे, सूखे, विकृत होंठ, चेहरे की लकीरों में दर्द की टकराहट ....

हर्ष को देखकर दुःख उत्पन्न होता है। उसका स्वयं का जीवन हर्ष रहित और वर्षा समेत उसकी बहन तथा माँ का। जो अपने नाम के अनुसार हर्ष का स्रोत बन सकता था वह दुःख, दर्द और टूटन का स्रोत बन गया। वाक्यात्मक शैलीय उपकरणों की दृष्टि से उसके नामाभिधान का यही वैशिष्ट्य है।

रीटा साहिनी : रीटा अपने नाम के अनुसार चंडीगढ़ जैसे महानगर से आयी ड्रामा स्कूल में वर्षा की रूममेट जरूर थी पर, वह प्रगतिशील, मॉडर्न और किसी पुरुष की बगल में बैठने में झिझकती नहीं थी। जींस, टी–शर्ट के साथ रंगीन चश्मा लगाये घूरने वालों की तरफ वह ध्यान ही नहीं देती थी। उसका प्रेमी कपिल उसकी अंग रेखाओं को अपने अधरों से नापना चाहता है, इस पर सिलबिल की साँस रुक गयी, पर उसे कुछ नहीं हुआ। अभिनय में वह अपने युवा देह के सौन्दर्य, चाल एवं भाव–भंगिमा का चपलता के साथ प्रभावी इस्तेमाल करना जानती हैं। सिलबिल उसकी तुलना में संकोची है। उसमें संकोच है ही नहीं। अभिनय और जीवन दोनों में वह उन्मुक्त, खुली और स्वच्छन्द है। उसका नाम रीटा जरूर है पर, वह किसी रीति को नहीं मानती है। वह एक तरह से चुलबुली थी। सुकुमार चटर्जी का व्यक्तित्व उसे गम्भीर बना देता है।

वह अपने कला–स्वप्न की तुलना में सुकुमार को वरीयता देती है। वह कहती है : ''वर्षा में सुकुमार को नहीं खो सकती और महान अभिनेत्री भी होना चाहती हूँ।''(1)

रीटा (रीता) का एक अर्थ खाली, रिक्त भी है। पर अपने दाम्पत्य जीवन से वह बहुत तृप्त और छलछलायी हुई थी। उसमें अभाव भी था। पर, वह अभाव कला के स्तर पर असुरक्षा और संदेह का था। पर कुल मिलाकर उसका जीवन खुशी से लबालब भरा था। वह वर्षा से कहती है : वर्षा तुम्हें जीवन में पति नाम के इस जन्तु का अनुभव जरूर करना चाहिये।'' रीटा के स्वर में आह्लाद लबालब था, ''तुम्हारे जैसे संवेदनशील व्यक्तित्व में यह अनुभव बड़ा मोहक निखार लायेगा।''(2)

सुकुमार का दार्जिलिंग के लिये ट्रान्सफर और प्रोमोशन होने पर रीटा के सामने अपने कला–स्वप्न सदा के लिये त्यागने का क्षण उपस्थित होता है। उस समय की स्थिति क्रोध के मारे

---

1. मुझे चाँद चाहिये, पृष्ठ 151
2. मुझे चाँद चाहिये, पृष्ठ 196

पागलों जैसी हो जाती है, पर वर्षा को समझाने पर वह मान जाती है। विदाई के समय अटल के संदेश को वह सिर माथे लेती है : ''जीवन जिस रूप में सामने आये, निभाना चाहिये। बहादुर बनो।'' वह सचमुच में बहादुरी से जीवन का सामना करती है।

अनुपमा : अनुपमा का अर्थ है जिसकी उपमा न दी जा सके, जो अतुलनीय हो। इस उपन्यास में अनुपमा का व्यक्तित्व ऐसा ही है। वह वर्षा की सच्ची मित्र है और उसे सहारा देती है। उसके व्यक्तित्व में असाधारणता थी। यह असाधारणता उसके हरफनमौला स्वभाव के कारण थी। यही उनके नाम और उसके व्यक्तित्व में अन्तर्विरोध है।

अनुपमा मूडी और अस्थिर थी। पिता भोपाल में व्यवसायी थे। अनुपमा दस की उम्र से दिल्ली के मदर्स स्कूल में बोर्डर थी। नाट्य विद्यालय में आने से पहले उसने पहले सितार और फिर कत्थक के कोर्स शुरू किये थे, पर कुछ महीनों बाद ही उसका मन उचट गया। इन्हीं दिनों शशांक मुखोपाध्याय से मित्रता हुई, तो वह 'युगांतर' के साथ आसपास के अर्धग्रामीण क्षेत्रों में नुक्कड़ नाटक करने लगी। फिर उसका मन कलात्मक रंगमंच से हटकर 'सोद्देश्य रंगमंच की ओर आकृष्ट हुआ। फिर उसका मन इससे भी उचट गया। फिर वह स्त्रियों के लिये काम करने लगी। शशांक को उसकी वरीयता का यह परिवर्तन पसंद नहीं आया तो तमाम बहस के बाद उसने अपनी 'बिगुल' नाम से अलग संस्था बना ली।

दूसरे वर्ष फिर वह बदलने लगी। अपनी वेशभूषा तथा मेकअप के प्रति उसमें लापरवाही आ गयी थी। फिर उसकी नाट्य विद्यालय में भी कोई रुचि नहीं रही। व्यवहार में वह बहुत आत्मीय थी। अनुपमा बड़े व्यवस्थित बंगले में रहती थी ''भीतरी आँगन के सामने सारे उपकरणों से सज्जित रसोई थी। फिर स्टोर रूम। ड्राइंगरूम के बायीं ओर अनुपमा का बेडरूम था। पूरी तरह फर्निस्ड–डबलबेड, तिपाइयाँ, पढ़ने–लिखने की मेज–कुर्सी, लैंप, गुलदस्ते, तस्वीरें। अटैच्ड बाथरूम। बिल्कुल इसी तरह फर्निस्ड दूसरा बेडरूम था ड्राइंगरूम के दायीं ओर था। बाग वाली खिड़कियाँ खुली थीं।''[1]

अनुपमा में वैचारिक गम्भीरता कम रागात्मक बहाव ज्यादा है। उसमें चतुर्भुज जैसे व्यक्ति से शादी की और बाद में उससे भी उसका मन भर गया। उसने मोहभंग का कारण बताते हुये वर्षा से कहा – ''चंद दिनों बाद ही उनका साफिस्टीकेडिट न होना, उनकी अर्थीनेस, उनका सेंव ऑफ ह्यूमर – सब खलने लगा। दिन में दो घंटो के लिये मिलने वाले एक रंगमंचीय दोस्त के रूप में जो बातें अच्छी लगती थीं, वह बिस्तर पर साथ सोने वाले पुरुष के रूप में नागवार गुजरने लगीं।''[2]

इतना कष्ठ उठाने के बाद अपनी मनोदशा का विश्लेषण करना उसे आ गया।

1. मुझे चाँद चाहिये, पृष्ठ 262
2. मुझे चाँद चाहिये, पृष्ठ 309

अपनी माँ के समझाने पर वह चतुर्भुज से सम्बन्ध तोड़ दूसरा विवाह करने पर सहमत हो जाती है। नाम अनुपमा पर सारे काम बेढंगे, जिनमें कोई ताल–मेल नहीं उसके नाम का यही वाक्यात्मक शैलीय सौन्दर्य है।

सिद्धार्थ : सिद्धार्थ वैसे तो गौतमबुद्ध का बचपन का नाम है। इसका कोशगत अर्थ है जिसने अपने लक्ष्य की सिद्धि कर ली हो। प्रतिपाद्य उपन्यास में सिद्धार्थ फिल्म निर्देशक है। उसी दौरान यह वर्षा वशिष्ठ के सम्पर्क में आता है और अपने सद् व्यवहार, विनम्रता से उसकी निकटता पाने में सफल होता है। सिद्धार्थ ऐसा तीसरा व्यक्ति है जिससे वर्षा के प्रेम सम्बन्ध होते हैं। उसका व्यक्तिगत विश्लेषण करते हुये लेखक कहता है : वर्षा को सिद्धार्थ की कुछ बातें विशेष रूप से पसंद आयी थीं – हर स्थिति में धीरज बाँधे रहना, आपा न खोना – संयम न खोना। जहाज के कप्तान के रूप में वह छोटे–छोटे श्रमिकों के हितों एवं सुविधाओं का विशेष ध्यान रखता था। जब उसकी फीचर फिल्म बन जाती है तब वह वर्षा से कहता है : "बहुत बड़ा सपना पूरा हुआ है वर्षा।" सिद्धार्थ ने गहरी साँस ली, "मेरी पहली फीचर फिल्म की शूटिंग पूरी हो गयी है। फिल्म–निर्माण का यही एक हिस्सा है, जिस पर निर्माता का बस नहीं चलता। तुम्हारे प्रति अपना आभार प्रकट करने के लिये मेरे पास शब्द नहीं हैं।" सिद्धार्थ ने धीमे स्वर में कहा।

फिर सिद्धार्थ के सान्निध्य में उसे जो अनुभूति होती है उसे वह किसी पुराने जन्म की स्मृति–सी लगती है। सिद्धार्थ का वर्षा के व्यक्तित्व पर जो प्रभाव पड़ता है उससे सिद्धार्थ का व्यक्तित्व भी खुलता है और उसके नाम का अर्थ भी। दिव्या पूछती है : सिद्धार्थ कैसा है ?

"बहुत नर्म। बहुत भरोसा जगाने वाला। एक भी शब्द ज्यादा न कहने वाला। उसके स्पर्श में थरथराहट–सा संकोच और आह्लाद है। मुझे ताज्जुब नहीं होगा, अगर मैं उसकी पहली संजीदा प्रेमिका निकलूँ उसकी साँसों में समर्पण का ऐसा स्पंदन होता है कि मेरा रोम–रोम सार्थकता से सिहर उठता है। वह उसका पूरक था फिल्म में।[1]

वाक्यात्मक शैलीय उपकरणों की दृष्टि से सिद्धार्थ व्यक्तिवाची अभिधान एकदम सार्थक हैं। लेखक व्यक्तिवाची संज्ञाओं के प्रयोग में अत्यन्त सावधान और सतर्क है। मिट्ठू, आदित्य, चिंतामणि, सूर्यभान, विमल ऐसी ही संज्ञायें हैं। इसी प्रकार वर्षा वशिष्ठ की छोटी बहन झल्ली है, अनुपमा की नौकरानी झुमकी है। रंजना भी एक नाम है जो अपने नाम के अन्वर्थ सबका रंजन करती है और जिसके जीवन का अर्थ आमोद–प्रमोद करना है।

वर्माजी ने इतिहास प्रसिद्ध संज्ञाओं का भी प्रयोग किया है।

(1) रंभा राजवंशी के सौंदर्य की उपमा इतिहास–प्रसिद्ध रंभा से दी गयी है –

रंभा बाईस–तेईस साल की बहुत सुन्दर युवती निकली। यह उपन्यास की प्रमुख पात्र है एवं फिल्मों में अभिनय करने के लिये बम्बई आई है। यह नवेली ग्लैमर–युक्त कामिनी है। यह

1. मुझे चाँद चाहिये, पृष्ठ 316

अपने नाम के अनुरूप अपने सौंदर्य से चतुर्भुज धनसोखिया को रिझा लेती है और उससे विवाह भी करती है, बाद में एक फिल्म निर्माता के यहाँ रहने चली जाती है। यह अभिनय करना नहीं जानती है।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 445)

(2) डॉ. सिंहल एवं मिसेज सिंहल को हनुमान की उपाधि दी गयी है–
जब वे वर्षा वशिष्ठ के घर पहुँचे तो विरोधी पक्ष डॉक्टर एवं मिसेज सिंहल को देखकर ऐसे चौंका, जैसे रावण के महल में प्रहरियों ने सीता को संदेश देने आये हनुमान को देख लिया हो।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 88)

(3) वर्षा ट्यूशन से मिलने वाले रुपयों को लेकर बहुत उत्सुक है। इस उत्सुकता का वर्णन इतिहास प्रसिद्ध संज्ञाओं का सहारा लेकर किया गया है – एक तारीख काटते हुये वह कैलेंडर को ऐसे देखती, जैसे 'रघुवंश' में लंका से लौटे हनुमान द्वारा सीता से हुई भेंट के प्रमाण स्वरूप उनकी दी हुई चूड़ामणि को राम ने देखा था।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 21)

(4) दिव्या की मित्रता से वर्षा वशिष्ठ में क्या परिवर्तन हुआ उसकी उपमा राजा रघु के राज्य के समय में हुये परिवर्तनों से की गयी है – रघु के सिंहासन पर बैठते ही जल की मिठास अधिक हो गयी, फूलों की सुगंधि बढ़ गयी और पृथ्वी जल, अग्नि, वायु और आकाश...... इन पाँचों तत्वों के गुण भी बढ़ने लगे। मिस कत्याल की मैत्री से वर्षा के जीवन में ऐसे ही सुखद परिवर्तन हुये।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 50)

2. जातिवाचक संज्ञा :

वर्माजी ने जिन जाति वाचक संज्ञाओं का प्रयोग अपने उपन्यास में किया है वे निम्नलिखित हैं–

(1) आत्मपीड़ा और संत्रास की यही प्रक्रिया थी जो वर्षा को **बहन** का अंतरंग बना गयी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 24)

(2) नरोत्तम का तो स्वभाव भी यही है कि बिना कुछ कहे **याचकों** की माँग पूरी करे।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 26)

(3) सिर्फ झल्ली थी, जो बारी–बारी से **बहन** व **बाप** को देख रही थी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 21)

(4) **पिता** ने स्नेह के साथ झिड़का, "जीवन में आयु के अनुसार **मनुष्य** का धर्म निश्चित किया गया है।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 40)

(5) सप्ताह भर घर में **उत्सव**–सा रहा।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 45)

(6) **भाई** ने **सिगरेट** सुलगायी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 47)

(7) "यह तुम क्या कह रही हो ? वंश की एक परंपरा होती है। उसके खिलाफ **आदमी** कैसे जा सकता है ?"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 48)

(8) "वे कैमिकल **इंजीनियर** हैं।"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 52)

(9) "**पुस्तकें** हमारी सच्ची साथी हैं।"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 55)

(10) वह अंदर घुसी और एक **मेज** पर जा बैठी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 91)

(11) तुमने **घर** छोड़कर यह कैसी लीक पकड़ ली है ?

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 112)

(12) पैकअप होते ही वर्षा **अस्पताल** पहुँची।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 441)

(13) "**शहर** कुछ बदल गया है न ?"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 478)

(14) "हर्ष, **ईश्वर** न करे, पर अगर तुम्हें कुछ हो गया, तो ? ......

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 524)

इन सभी जातिवाचक संज्ञाओं में उस समूह में आने वाले सभी प्रकार की संज्ञाओं का बोध होता है। जैसे बहन से सभी बहनों का, नरोत्तम से भगवान का, याचकों से सभी याचकों का, बाप से सभी पिताओं का, मनुष्य से सम्पूर्ण मुनष्य जाति का, उत्सव से सभी उत्सवों का, भाई से सभी भाइयों का, सिगरेट से सभी सिगरेटों का, आदमी से सभी आदमियों का, कैमिकल इंजीनियर से सभी कैमिकल इंजीनियरों का, पुस्तकों से सभी पुस्तकों का, मेज से सभी मेजों का, घर से सभी घरों का, अस्पताल से सभी अस्पतालों का, शहर से सभी शहरों का, ईश्वर से सभी भगवानों का बोध होता है।

3. भाववाचक संज्ञा :

इनसे व्यक्ति, वस्तु के गुण या धर्म, दशा, अर्थ, व्यापार का बोध होता है। वर्माजी ने जिन भाववाचक संज्ञाओं का प्रयोग अपनी भाषा में किया है उनमें से कुछ उदाहरण निम्न लिखित हैं –

(1) सिलबिल ने पिता की ओर देखते हुये पल भर का **विराम** दिया, फिर **उपसंहार** कर दिया, ''यशोदा शर्मा नाम में कोई **सुन्दरता** नहीं।''

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 17)

(2) उसके चेहरे पर जो आक्रामक **तीखापन** था, उससे माँ–बाप सकपका गये।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 41)

(3) हल्की **मुस्कान** के साथ सामने कुर्सी पर बैठे हुये वर्षा ने पाया कि ब्याह से पहले इस घर में जिज्जी **कड़वाहट** व **अपमान** के जिस तन–मन को क्षत–विक्षत कर देने वाले **दौर** से गुजरी हैं, उसकी हल्की–सी **खरोंच** भी उन पर बाकी नहीं रही।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 44)

(4) **घबराहट आशंका** में बदलने लगी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 98)

(5) ''वर्षा, हमारे बीच यह **दूरी** क्यों आ गयी है ?'' स्टेशन पर उसे छोड़ने आये मिट्ठू ने पूछा।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 100)

(6) अंदर कोई नारी–स्वर फोन पर बात कर रहा था– बीच–बीच में **खिलखिलाहट**।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 266)

(7) हर्ष के चेहरे पर इस **यंत्रणा** के **व्यूह** थे......सूखे, विकृत होंठ, चेहरे की लकीरों में **दर्द** की **थरथराहट**....।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 546)

(8) हर्ष ने सिगरेट सुलगायी, ''मेरी और तुम्हारी **मित्रता** की प्रकृति दूसरी है।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 512)

(9) रघु के सिंहासन पर बैठते ही जल की **मिठास** अधिक हो गयी, फूलों की **सुगंधि** बढ़ गयी और पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु और आकाश.....इन पाँचों तत्वों के गुण भी बढ़ने लगे।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 50)

(10) दरवाजे की घंटी बजी–चिड़िया की मीठी **महक** के सुर में। इस समय कौन है ? भीतर **चिड़चिड़ाहट** भर गयी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 350)

(11) ऊँची **झनझनाहट** के साथ वह टकराया और छोटे–बड़े टुकड़े नीचे बिखर गये।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 354)

(12) ''तो कैसे हैं ?'' उसकी **आकुलता** घायल पंछी के परों की **फड़फड़ाहट** की तरह वातावरण में भर गयी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 403)

(13) पिता कुछ **झुँझलाहट** से बोले, "संसार का नैसर्गिक **चक्र** कैसे चलता है, **मृत्यु** के बाद आदमी कहाँ जाता है, यह **जिज्ञासा** है।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 525)

(14) उत्तरोत्तर पीछे हटती सर्दी अपनी मद्धिम पड़ती **छाया** छोड़ गयी थी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 52)

(15) उसमें सारी वांछनीय **भावनायें** थीं......माँ का **अकेलापन** और **पीड़ा**, बहन का **ममत्व**, पुत्र की **कर्तव्यपरायणता**, पर कलात्मक **लालसा** के कारण उपजा संघर्ष।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 240)

(16) हर्ष बोला, "वह किसी भी चिरत्र के साथ तादात्म्य स्थापित नहीं कर पायेगा।"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 427)

इस प्रकार हम देखते हैं कि वर्माजी ने जातिवाचक संज्ञा, विशेषण, क्रिया, सर्वनामों से निर्मित शब्दों से भाववाचक संज्ञाओं का निर्माण किया है। उपर्युक्त उदाहरणों में विराम, उपसंहार, सुन्दरता, तीखापन, मुस्कान, कड़वाहट, अपमान, दौर, खरोंच, घबराहट, आशंका, दूरी, खिलखिलाहट, यंत्रणा, दर्द, थरथराहट, मित्रता, मिठास, सुगंधि, महक, चिड़चिड़ाहट, झनझनाहट, आकुलता, फड़फड़ाहट, झुँझलाहट, चक्र, मृत्यु, जिज्ञासा, छाया, भावना, अकेलापन, पीड़ा, ममत्व, कर्तव्यपराणता, लालसा तथा तादात्म्य आदि भाववाचक संज्ञाओं का प्रयोग कर अपने शैली वैशिष्ट्य का परिचय दिया है। इन प्रयोगों की जीवंतता ने शैली सौन्दर्य को बढ़ा दिया है। तब मात्र ये संज्ञा पद न रहकर जीवन का एक हिस्सा बन जाते हैं।

4. समूहवाचक संज्ञा :

वर्माजी ने जिन समूह वाचक संज्ञाओं का प्रयोग किया है उनमें से कुछ उदाहरण निम्नलिखित हैं –

(1) "देखो, **वो लोग** कैसे घूर–घूर कर देख रहे हैं।" कॉफी हाउस में सिलबिल फुसफसायी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 96)

(2) बंगले पर वैसी ही **भीड़** थी, जैसी सुजाता की शादी पर दिखायी दी थी। अलग–अलग **टुकड़ियों** पर मौन छाया हुआ था।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 190)

(3) बायीं ओर आम के पेड़ के इर्द–गिर्द **बेलों का मंडप** बना था।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 260)

(4) मुख्य अतिथि **पहली पंक्ति** में बीचों बीच बैठे थे।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 27)

(5) दासी आकर सूचना देती है – सीमावर्ती ग्राम से **नटों का समूह** आया है देवि ! अपने खेल

दिखाने की अनुमति चाहता है।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 30)

(6) सीढ़ियों के पास पाँच–छह का **झुंड** था।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 90)

यहाँ उपरोक्त उदाहरणों में **लोग**, **भीड़**, **टुकड़ियाँ**, **मंडप**, **पंक्ति समूह**, **झुंड** आदि शब्दों में समूहवाचक संज्ञा का प्रयोग किया गया है।

5. द्रव्यवाचक संज्ञा :

वर्माजी ने अपने उपन्यास में जिन द्रव्यवाचक संज्ञाओं का प्रयोग किया है, उनमें से प्रमुख उदाहरण निम्नलिखित हैं –

(1) जैसा कि होना था, गायित्री जिज्जी गर्भवती हो गयी थी, इसलिये साड़ी, मिठाई–फल और **चाँदी** की एक कटोरी का शकुन भेजना जरूरी था।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 18)

(2) जब तक सिंहल दंपति वर्षा को स्टेशन पर **चाय** के साथ **पेस्ट्री** खिलायें, गाड़ी आ गयी थी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 88)

(3) स्नेह ने गिलास मेज पर लगा दिये और फ्रिज से **पानी** की बोतल व **बर्फ** निकाली।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 145)

(4) फिर दो टोस्ट, एक अंडा और एक गिलास **दूध** का नाश्ता करती।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 158)

(5) कभी सैंडविच व **कॉफी** का थर्मस लिये शहर से पचास–साठ मील दूर किसी उजाड़ खंडहर में बैठतीं या हरी भरी अमराई में घूमतीं।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 50)

(6) सुनार सुमेरा को पकड़वा देता है और थानेदार से मिलकर **सोना** बांट लेता है।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 288)

(7) फिर कढ़ाई उठाई, उसे चूल्हे पर रखा और **तेल** की बोतल उठायी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं.)

(8) "बम्बई बात हुई ?" सिद्धार्थ नेगी के साथ शाम को **बियर** की क्रेट **व्हिस्की** और **केसर कस्तूरी** की एक दर्जन बोतलों को लेकर लौटे, तो मीरा ने पूछा।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 302)

(9) झुमकी जग में **लस्सी** लेकर आयी, जिसमें बर्फ के टुकड़े तैर रहे थे।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 306)

(10) **शैम्पेन** का प्याला लिये वर्षा बाहर आ गयी। (मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 477)

(11) एक शाम वर्षा ने देखा कि जिज्जी एकटक मिट्टी के तेल की बोतल देख रही है....

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 24)

उपरोक्त उदाहरणों में चाँदी, चाय, पानी, दूध, कॉफी, सोना, तेल, वियर, व्हिस्की, केसर कस्तूरी, लस्सी, शैम्पेन, मिट्टी का तेल ये सभी शब्द द्रव्यवाचक संज्ञाओं के प्रतीक हैं।

सर्वनाम :

सर्वनाम उस विकारी शब्द को कहते हैं जो पूर्वापर सम्बन्ध से किसी भी संज्ञा के बदले आता है। जैसे, मैं (बोलने वाला), तू (सुनने वाला), यह (निकटवर्ती वस्तु), वह (दूरवर्ती वस्तु) इत्यादि।

यथार्थ में 'सर्वनाम' शब्द एक और अर्थ में भी आ सकता है। वह यह है कि सर्व (सब) नामों (संज्ञाओं) के बदले में जो शब्द आता है, उसे सर्वनाम कहते हैं। यथार्थ में सर्वनाम एक प्रकार का नाम अर्थात् संज्ञा ही है।[1] जिस प्रकार संज्ञाओं के उपभेद व्यक्तिवाचक, जातिवाचक और भाववाचक, समूहवाचक एवं द्रव्यवाचक हैं, उसी प्रकार सर्वनाम में एक उपभेद हो सकता है, पर सर्वनाम में एक विशेष विलक्षणता है, जो संज्ञा में नहीं पाई जाती। संज्ञा से उसी वस्तु का बोध होता है, जिसका वह (संज्ञा) नाम है, परन्तु सर्वनाम से, पूर्वापर सम्बन्ध के अनुसार, किसी भी वस्तु का बोध हो सकता है। 'लड़का' शब्द से लड़के का ही बोध होता है, घर, सड़क, आदि का बोध नहीं हो सकता, परन्तु 'वह' कहने से पूर्वापर सम्बन्ध के अनुसार, घर, लड़का, हाथी, घोड़ा आदि किसी भी वस्तु का बोध हो सकता है। सर्वनाम की इसी विलक्षणता के कारण उसे हिन्दी में एक अलग शब्द भेद मानते हैं। 'भाषातत्व दीपिका' में भी सर्वनाम संज्ञा से भिन्न माना गया है, परन्तु उसमें सर्वनाम का जो लक्षण दिया गया है, वह निर्दोष नहीं है। 'नाम को एक बार न कहकर फिर उसकी जगह जो शब्द आता है, उसे सर्वनाम कहते हैं।'[2]

हिन्दी में कुल मिलाकर 11 सर्वनाम हैं– मैं, तू, आप, यह, वह, सो, जो कोई, कुछ, कौन, क्या। प्रयोग के अनुसार सर्वनामों के छह भेद हैं–

(1) पुरुषवाचक– मैं, तू, आप (आदर सूचक)

(2) निजवाचक– आप।

(3) निश्चयवाचक– यह, वह, सो।

(4) सम्बन्ध वाचक– जो।

(5) प्रश्नवाचक– कौन, क्या।

(6) अनिश्चयवाचक– कोई, कुछ।

---

1. हिदी व्याकरण : पं. कामता प्रसाद गुरु (पृ.सं. 64)
2. हिदी व्याकरण : पं. कामता प्रसाद गुरु (पृ.सं. 65)

1. पुरुषवाचक सर्वनाम :

पुरुष वाचक सर्वनामों में जो रूप व्याकरण में आते हैं ये क्रमशः उत्तमपुरुष, मध्यमपुरुष और अन्य पुरुष कहलाते हैं। इन तीनों पुरुषों में उत्तम एवं मध्यम पुरुष ही प्रधान हैं क्योंकि इनका अर्थ निश्चित होता है।[1] अन्य पुरुष का अर्थ अनिश्चित होने के कारण उसमें बाकी की सृष्टि के अर्थ का समावेश होता है। सर्वनामों के तीनों पुरुषों के उदाहरण ये हैं–

उत्तम पुरुष – मैं, मध्यम पुरुष तू, आप (आदरसूचक) सो, जो, कौन, क्या, कोई, कुछ। सब पुरुष वाचक आप (निजवाचक)।

क्षुद्रता की व्यंजना के लिए 'तू' का प्रयोग होता हैं मालिक नौकर को, उच्च वर्ग का व्यक्ति निम्न वर्ग के व्यक्ति को, 'तू' से सम्बोधित करता है, जिससे वक्ता का यह आशय प्रकट होता है कि संबोधित व्यक्ति को वह तुच्छ समझता है। क्रोध, परमेश्वर के प्रति भक्ति भाव प्रकट करने के लिये, छोटों के प्रति स्नेह एवं दयनीय के प्रति दया भाव के द्योतन के लिये 'तू' का प्रयोग होता है। 'तुम' की व्यंजना भी 'तू' के सदृश ही है, परन्तु वह इतनी तीखी नहीं। 'तुम' से 'तू' की अपेक्षा पारस्परिक सम्बन्धों की अधिक समानता और प्रगाढ़ता की व्यंजना होती है। 'आप' के द्वारा समानता, आदर, अधीनता या उच्चता की व्यंजना होती है।[2] संज्ञात्मक प्रयोग की अवस्था में ये सर्वनाम अपनी व्यंजनाओं के बलपूर्ण बाहक होते हैं। इनसे पात्रों की चरित्रगत विशेषताओं का ज्ञान होता है तथा इनसे साहित्यिक प्रभाव की निष्पत्ति होती है।[3] वर्माजी की भाषा में इसके अनेक उदाहरण मिलते हैं।

सरला एक प्रतिष्ठित वकील की बेटी है वह होटल मैनेजमेंट का कोर्स करने दिल्ली जायेगी, इसकी घोषणा वह दर्द भरे स्वर में कर रही है–

(1) "बी.ए. के बाद **मैं** होटल मैनेजमेंट का कोर्स करने दिल्ली जा रही हूँ।" सरला ने कामनरूम में दर्प से घोषणा की थी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 23)

(2) वह क्या होगा, यह **मैं** अभी पक्के तौर पर नहीं कह सकती।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 28)

वर्षा वशिष्ठ अपनी नाटक की प्रतिभा से अनजान है अतः वह अपनी अज्ञानता को प्रकट करती हुई करती है–

(3) "**मैं** तो बिल्कुल अनाड़ी हूँ।" वह संकोच भरी मुस्कान के साथ बोली।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 28)

वर्षा के आवेश को व्यक्त करने के लिये यहाँ 'मैं' का प्रयोग किया गया है–

---

1. हिंदी व्याकरण : पं. कामता प्रसाद गुरु (पृ.सं. 66)
2. 'हिन्दी सेमैटिक्स' पृ.सं. 335
3. शैली विज्ञान और प्रेमचन्द्र की भाषा, डॉ. सुरेश कुमार, पृ.सं. 138

(4) सिलबिल आवेश में आ गयी, "मैं किसी लड़के के साथ नाचती–गाती नहीं हूँ।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 32)

'हम' सर्वनाम का प्रयोग भी वर्माजी ने किया है। वर्षा के भाई उससे भावुक होकर कहते हैं–

(5) उसके सिर पर हाथ रखा और जब बोले, तो आवाज रुँधी हुई थी" **हम लोग** तुम्हारे दुश्मन नहीं हैं– तुम्हें सुखी देखकर **हमें** सुख मिलेगा।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 48)

वर्षा के मित्र मिट्ठू दिव्या के यहाँ लखनऊ से आते हैं, जब वर्षा उनसे विदा लेती है तो वे कहते हैं–

(6) "**हम** तुम्हें छोड़ आयेंगे। जल्दी क्या हैं ?" रोहन बोले।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं.)

'**हम**' का प्रयोग बहुवचन के अर्थ में भी हुआ है। वर्षा के भाई उससे कहते हैं–

(7) इसके सिर पर हाथ रख़ा और जब बोले, तो उनकी आवाज रुँधी हुई थी, "**हम लोग** तुम्हारे दुश्मन नहीं हैं। ....तुम्हें सुखी देखकर, ...**हमें** सुख मिलेगा।..........."

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 48)

'तू' शब्द से निरादर एवं हल्कापन प्रगट होता है इसीलिये एक व्यक्ति के लिये हिन्दी में भी 'तुम' का प्रयोग करते हैं। वर्षा की बड़ी बहिन उससे कहती है कि–

(8) गायित्री ने उसका हाथ अपने हाथ में दबाते हुये कहा, "बहन, **तू** एक बार सात फेरे लगाकर तो देख !

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 45)

प्रेम भाव की अभिव्यक्ति भी **'तू'** के माध्यम से होती है–

अनुपमा ने बांहों में भरकर उसे चूम लिया, "बकरी **तू** पेपर बढ़ती है या उसकी जुगाली करती है। एवार्ड पाने वाली कम उम्र एक्ट्रेस है।"

क्रोध में भी 'तू' सर्वनाम का प्रयोग किया जाता है। वर्षा के पिता जब उससे क्रोधित होते हैं तो उसे 'तू' से सम्बोधित करते हैं–

(9) शर्माजी सिलबिल द्वारा आँखों का ऐसा नाटकीय इस्तेमाल देख तिनककर खड़े हो गये, "तू जा ऊपर और अच्छी साड़ी पहन कर आ!'

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 41)

(10) तू नौटंकी में काम कर रही है ?

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 32)

(11) एक के साथ तू नाचती और गाती है। (मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 32)

कभी–कभी 'तुम' का प्रयोग देवता के लिये भी किया जाता है। यहाँ पर वर्षा वशिष्ठ फिल्म में अभिनय करते समय भगवान को 'तुम' सम्बोधन दे रही है–

(12) पहला मंदिर में कृष्ण के साथ उसकी नाटकीय समक्षता का था, "तुमने मेरे साथ न्याय नहीं किया।" वर्षा कृष्ण पर आरोप लगाती है, "भक्तों के साथ ऐसे व्यवहार किया जाता है ? मैं पच्चीस साल से तुम्हारी उपासना कर रही हूँ। तुमसे कभी कुछ नहीं माँगा। रोज तुम्हें दूध–मक्खन का भोग लगाया। अब पहली बार मेरे मन में प्रेम का बसंत आया है तो तुम कानों में तेल डाले बैठे हो ?"

'वह' अन्य पुरुष सर्वनाम के प्रयोग के उदाहरण निम्नलिखित हैं–

(13) वह हस्बे मामूल अन्दर घुसी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 26)

तिरस्कार दिखाने के लिये यहाँ पर वह का प्रयोग 'कामदेव' के लिये हुआ है।

(14) सिलबिल को लक्ष्य करके आकाश के झरोखे से कामदेव ने अपना सम्मोहन नाम का बाण चढ़ा लिया था और **वह** धीरे–धीरे डोरी खींचने लगा था...........।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 43)

'वे' का प्रयोग आदर सूचक अर्थ में एक वचन के लिये भी किया जाता है–

(15) प्रशांत से मेरे प्रेम सम्बन्ध को करीब चार साल हुये। वे कैमिकल इंजीनियर हैं।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 52)

'आप' मध्यम एवं अन्य पुरुष (बहुवचन) के अर्थ में आता है। इसका प्रयोग मध्यम एवं अन्य पुरुष बहुवचन में आदर के लिये होता है।[1]

वर्षा की टीचर 'दिव्या कत्याल' एवं 'मिस्टर सिंहल' जब उसके पिता से मिलने उनके विद्यालय पहुँचते हैं, तो उसके पिता मिस दिव्या कत्याल एवं सिंहल जी को आदर पूर्वक 'आप' कहकर सम्बोधित करते हैं–

(16) जब **आप** लोग यहाँ तक आये हैं तो **आपका** सम्मान रखना मेरा कर्तव्य है।"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 34)

इसी प्रकार वर्षा राजकुमारी सौम्यमुद्रा से कहती है–

(17) वर्षा मुस्करायी, "**आपका** नाम तो उतना ही मोहक ...." उसने अपेक्षित विराम दिया...." जितनी कि आप। (मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 29)

वर्षा अपनी मिस दिव्या कत्याल को बहुत आदर देती है अतएव वह उनसे कहती है–

(18) वह शरारत से मुस्करायी, "अब आप मिल गयी हैं, तो सीख ही लूँगी।'

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 50)

1. हिन्दी व्याकरण : पं. कामता प्रसाद गुरु (पृ.सं. 71)

अपने से बड़े दरजे वाले मनुष्य के लिये 'तुम' के बदले 'आप' का प्रयोग शिष्ट और आवश्यक समझा जाता है।

यहाँ हुसैन वर्षा के लिये 'आप' का संबोधन दे रहे हैं–

(19) "गुड मॉर्निंग वर्षाजी।" हुसैन कुर्सी से उठ खड़े हुये– चौड़ी मुस्कान के साथ। एक निगाह उसे ऊपर से नीचे तक देखा, "वैरीगुड। आप बिलकुल मेरा कैरेक्टर दिख रही हैं।"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 338)

कभी–कभी 'आप' सर्वनाम का प्रयोग अपने से छोटे दरजे के व्यक्तियाँ के लिये भी किया जाता है–

(20) डॉ. अटल विद्यार्थियों को सम्बोधित करते हैं– अब आप इस कला में विधिवत प्रशिक्षित होंगे, जो बेहद उत्तेजक, अत्यन्त कड़े अनुशासन से युक्त और आपके भावतंत्र एवं व्यक्ति में आमूल परिवर्तन लाने वाली साबित होगी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 94)

कभी–कभी कुछ व्यक्ति अपने से बड़े एवं छोटे दोनों ही दर्जे वाले लोगों के लिये 'श्रीमान' का प्रयोग आप के अर्थ में करते हैं –

(21) "मेरे पास समय नहीं है श्रीमान।" (चपरासी से लेकर निर्देशक तक–सबके लिये यही सम्बोधन था)

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 107)

कभी–कभी प्रेमी भी अपनी प्रेमिका के लिये आदर सूचक 'आप' का प्रयोग करते हैं– यहाँ पर वर्षा का प्रेमी कमलेश 'कमल' अपनी कविता उसे भेंट करता है–

(22) "प्यारी–प्यारी कितनी तुम्हारी मुद्राएँ प्रिये,
सौम्यमुद्रा, पोर–पोर,
मेरे मनमोर हो।
आप रंगमंच पै चुराय लियो
मेरो चैन।"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 42)

'आप' का प्रयोग नीचे दरजे के लोग अपने से बड़े के लिये करते हैं–

(23) वर्षा अपराह्न में ट्यूशन पढ़ा रही थी, जब चपरासी आया, "मैंडम ने कहा है, **आप** जाते हुये बंगले पर आयेंगी ?"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 82)

2. निजवाचक सर्वनाम :

निजवाचक सर्वनाम 'आपका प्रयोग वर्माजी ने निम्नलिखित उदाहरण में किया है–

(1) जिज्जी ने **अपने–आप** ही दुर्गा सप्तशती का पाठ आरंभ किया और रोज शाम मंदिर में जल चढ़ाने जाने लगी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 24)

यहाँ पर अपने–आप का अर्थ 'अपने मन से' है और इसका प्रयोग क्रिया विशेषण वाक्यांशों के समान हुआ है।

वर्षा अभिनेत्री चारु से कह रही है–

(2) "अगर आप ऊँची कलात्मक फिल्मों में काम करें तो मुझे विश्वास है, **आप अपनी** भूमिका के साथ न्याय करेंगी।"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 268)

कभी–कभी 'आप' के साथ उसका दूसरा रूप जोड़ देते हैं –

(3) मुश्किल यह है कि मुझे **अपने–आपको** जानने का अवसर नहीं मिलता।" वर्षा फीके ढंग से मुस्करायी और जताकर घड़ी देख ली।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 215)

(4) उसके मुँह से **अपने–आप** ही सीटी बज गयी, "ऐसा घर रिपर्टरी कम्पनी में किसी का नहीं होगा।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 156)

(5) मैं **अपने–आप** से पूछ–पूछकर थक गयी हूँ कि मेरे भीतर ऐसा भावात्मक शून्य क्यों है ?

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 31)

3. निश्चय वाचक सर्वनाम :

जिस सर्वनाम से वक्ता के पास अथवा दूर की किसी वस्तु का बोध होता है, उसे निश्चय वाचक सर्वनाम कहते हैं। निश्चयवाचक सर्वनाम तीन हैं– यह, वह, सो।[1]

'यह' एकवचन का प्रयोग संज्ञा या संज्ञा वाक्यांशों के बदले किया गया है –

(1) "वशिष्ठ हमारा गोत्र है। उससे **यह** तो मालूम हो ही जाता है कि **यह** ब्राह्मण है। वैसे भी एक महान् मुनि का नाम है।"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 17)

पहले आने वाले वाक्य के स्थान में भी **'यह'** का प्रयोग किया किया गया है–

(2) वैसे भी अपनी मर्जी के विरुद्ध मेनन ऐसा सुझाव मान लेंगे, **यह** मैं स्वीकार नहीं कर सकती

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 169)

(3) इस तरह कहा कि **यह** किसी भी प्रदर्शन का अपनी संवेदना के अनुसार मूल्यांकन कर सकते हैं।" चतुर्भुज द्वारा बढ़ाई गयी सिगरेट के लिये मना करते हुये स्नेह बोले।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 171)

बाद में आने वाले वाक्य के स्थान में भी यह का प्रयोग वर्माजी ने किया है–

(4) **यह** पता नहीं चल पाया कि इस काम के लिये उसका नाम किसने सुझाया था, पर वह जो भी रहा हो, उसे सिलबिल की आर्थिक स्थिति का सही अनुमान था।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 128)

(5) पहली बात **यह** कि वह तुमसे उम्र में बड़े हैं।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 169)

'ये' 'यह' का बहुवचन है। वर्मा जी ने इसका प्रयोग भी किया है।

(6) **ये** मेरे रक्त–सम्बन्धी हैं, इनका सुख–दुख मेरा है, पर मेरा सुख–दुःख मेरा ही रहेगा। **ये** उसे बाँट नहीं सकेंगे।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 26)

(7) **ये** लोग कुछ भी लिख सकते हैं ?'' वर्षा हैरानी से बोली।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 171)

'वह' दूरवर्ती निश्चय वाचक है। 'वह' के प्रयोग के कुछ उदाहरण वर्माजी की भाषा में भी पाये गये हैं–

(8) नैन बैठ गया। **वह** बिलकुल आत्मसजग नहीं था।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 489)

(9) मैं समझ रहा था, **वह** तुम्हारे पास होंगे।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 490)

'वे' सर्वनाम एकवचन में आदरसूचक अर्थ में प्रयुक्त किया जाता है–

(10) ''**वे** दो दिन पहले विदेश चले गये हैं।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 484)

यहाँ पर 'वे' सम्बोधन सूर्यभान डॉ. अटल के लिये कर रहे हैं।

(11) संस्कृति मंत्रालय से भी **वे** नाराज थे, जो उनकी तीन–चार योजनाओं को अरसे से पेपरवेट तले दबाये हैं।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 484)

'वे' वह का बहुवचन रूप है। इसका बहुवचन में प्रयोग देखिये–

(12) **वे** एक–दूसरे के बहुत निकट थे।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 301)

4. अनिश्चयवाचक सर्वनाम :

जिस सर्वनाम से किसी विशेष वस्तु का बोध नहीं होता, उसे अनिश्चयवाचक सर्वनाम

1. हिन्दी व्याकरण : पं. कामता प्रसाद गुरु, पृ.सं. 75

कहते हैं। अनिश्चयवाचक सर्वनाम दो हैं– कोई और कुछ। 'कोई' और 'कुछ' में साधारण अंतर यह है कि 'कोई' पुरुष के लिये और 'कुछ' पदार्थ या धर्म के लिये आता है।[1]

(1) बदकिस्मती से नाट्य विद्यालय से और **कोई** नहीं था, इसलिये वह अधिकतर समय या तो काम में मदद करती रही या सुजाता के आसपास मंडराती रही।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 160)

(2) दुर्भाग्य से तुम्हारा **कोई** नाटक नहीं देख सकी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 160)

(3) **कोई** नाचेगा नहीं ?" पुलक से भरी मम्मी बोलीं, "वर्षा ?"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 162)

(4) "टाँग खींचने के लिये और **कोई** नहीं मिला ?" वर्षा ने मुँह बनाया।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 364)

(5) जिस तरह बेहद सतर्क खूनी से अपराध–स्थल पर **कोई–न–कोई** सुराग छूट जाता है, उसी तरह बहुत चौकसी रहने के बावजूद वर्षा से एक छोटी–सी गलती हो ही गयी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 60)

एवं 'कितना कुछ', 'बहुत कुछ', 'कुछ' एवं कितना कुछ, बहुत कुछ का प्रयोग संज्ञा के बदले में होता है, यहाँ पर वर्माजी ने इसी अर्थ में 'कुछ' का प्रयोग किया है–

(6) **कुछ** चीजें खरीद लेगीं, तो गुजारा कैसे चलायेगी ?

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 155)

(7) पढ़ने के लिये **कितना कुछ** था।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 94)

(8) "आदित्य के बारे में तो **कुछ** अनाप–शनाप नहीं छपता।" सुजाता ने टिप्पणी की।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 239)

(9) पर स्टारडम ने **बहुत–कुछ** बदल दिया था ..... सामान्य आकांक्षायें भी और सामान्य जीवन पद्धति भी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 418)

(10) अंत में अपनी माँ का हवाला देकर बनावटी कमसिनी से परिहास को ऐसी रंगत दी कि **कुछ** लोग हंस पड़े।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 97)

(11) **कुछ** समय तक मौसम बेशक सुहाना रहा।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 395)

1. हिन्दी व्याकरण, पं. कामता प्रसाद गुरु, पृ.सं. 77

(12) पर उसके बारे में **कुछ** कुत्सित सामने बिखरा था।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 403)

कहीं–कहीं 'कुछ' के साथ 'और' का प्रयोग भी किया जाता है–

(13) "वर्षा" सिद्धार्थ ने धीमे स्वर में कहा, "अगर तुम्हारे मन में **कुछ और** था, तो हमारे बीच जो हुआ, उसे मैं क्या समझूँ ?"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं.)

5. सम्बन्धवाचक सर्वनाम :

हिन्दी में सम्बन्धवाचक सर्वनाम 'जो' ही है। इसका प्रयोग वर्माजी ने अपनी भाषा में किया है–

(1) मिस कत्याल के ध्वनि–समूह ने **जो** वितान बनाया था, उसकी भव्यगरिमा के सम्मोहन एवं आतंक ने जैसे सबको मूक बना दिया।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 34)

(2) **जो** काम घर वाले दिन भर में नहीं कर पाये, वह वर्षा ने एक मिनट में सम्पन्न कर दिया।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 14)

(3) सिर्फ झल्ली थी, **जो** बारी–बारी से बहन व बाप को देख रही थी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 21)

(4) वह एक सम्पन्न व्यवसायी की बेटी को, **जो** सिलबिल की हमउम्र थी, पढ़ाकर लौटे थे और दोनों की विपरीत जीवन–स्थितियों से पल भर के लिये विचलित हो गये थे।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 21)

(5) वर्षा ने अपनी मुस्कान और स्निग्धा करते हुये उत्तर दिया, "**जो** आज्ञा देवि।"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 29)

6. प्रश्नवाचक सर्वनाम :

प्रश्न करने के लिये जिन सर्वनामों का उपयोग होता है, उन्हें प्रश्नवाचक सर्वनाम कहते हैं। ये दो हैं– कौन और क्या। 'कौन' प्राणियों के लिये और विशेष कर मनुष्यों के लिये और 'क्या' क्षुद्र प्राणी, पदार्थ व धर्म के लिये आता है।[1]

'कौन' सर्वनाम को प्रयोग वर्माजी ने अपनी भाषा में निम्नलिखित उदाहरणों में किया है–

(1) "यह मिस कत्याल **कौन** हैं ?" भाई ने उसकी ओर देखते हुये पूछा।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 46)

---

1. हिन्दी व्याकरण, पं. कामता प्रसाद गुरु, पृ.सं. 81

(2) वर्षा ने धड़कते दिल से छोटा–सा फासला तय किया। उसकी हथेलियाँ पसीने से नम हो आयी थीं। उससे **कौन**–सी भूल हो गयी ?"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 19)

(3) सिर्फ बी.ए. की डिग्री के सहारे उसे **कौन**–सी नौकरी मिल सकती है ?

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 23)

(4) "जान सकती हूँ कि **कौन** बोल रहा है ?" कमजोरी की झुनझुनी से वर्षा के तलबे लरज गये।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 357)

(5) और पता है निर्णायक समिति के अध्यक्ष **कौन** थे ?" सिद्धार्थ ने सस्पेंस की डोर खींची।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 364)

'क्या' सर्वनाम का प्रयोग वर्माजी ने निम्नलिखित उदाहरणों में किया है–

(6) मेरा **क्या** बनेगा ?

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 23)

(7) पर **क्या** हो सकता है ?

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 23)

(8) "तुम्हारे नाम में क्या खराबी है ?" पिता ने कड़वे स्वर में पूछा।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 16)

(9) सिलबिल सहजता से नीचे आ गयी, "**क्या** है ?"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 15)

(10) उसके जीवन का उद्देश्य **क्या** है ?

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 14)

(11) "दीदी अगर अनहोनी होनी है, तो **क्या** शादी से टल जायेगी ?"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 242)

(12) "वर्षाजी, आप ही बताइये, मेरा **क्या** दोष है ?"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 450)

विशेषण :

जिस विकारी शब्द से संज्ञा की व्याप्ति मर्यादित होती हे, उसे विशेषण कहते हैं। विशेषण के मुख्य तीन भेद किये जाते हैं–

(1) सार्वनामिक विशेषण (2) गुणवाचक विशषेण (3) संख्यावाचक विशेषण।[1]

1. सार्वनामिक विशेषण :

सार्वनामिक विशेषणों का प्रयोग वर्माजी ने अपने उपन्यास में प्रचुरता से किया है, इसके

1. हिन्दी व्याकरण, पं. कामता प्रसाद गुरु, पृ.स.

कुछ प्रमुख उदाहरण निम्नलिखित हैं–

(1) **वह एक** सम्पन्न व्यवसायी की बेटी को, जो सिलबिल की हम उम्र थी, पढ़ाकर लौटे थे और दोनों की विपरीत जीवन–स्थितियों से पलभर के लिये विचलित हो गये थे।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 21)

(2) **यह मम्मी** की विरासत है।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 207)

(3) **ऐसे कुछ नमूने** हमारे यहाँ भी हैं।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 208)

(4) **कोई भाव** नहीं जुड़ने दिया।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 208)

(5) **इतना सारा** समान..........?" वर्षा आँखें फाड़े देख रही थी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 155)

(6) "**यह कोई जीवन** है सिलबिल ?"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 177)

(7) "**क्या बात** है ?" सुजता ने आशंकित होकर पूछा।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 189)

(8) वर्षा पास आकर ठिठकी, "**क्या प्रोग्राम** है ?"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 191)

(9) वर्षा ने पल भर उसे देखा, "**यह सुबह** से ही शुरु करने लगे ?"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 191)

(10) "पुरानी हो जाने से **कोई चीज** अच्छी हो जाती है ?"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 193)

(11) "**कैसा नोटिस** ?"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 205)

(12) "**ऑफिस का माहौल** कैसा है– लड़की होने के नाते ?"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 208)

(13) जब अर्काडीना ने कहा, "ऐसी सूरत और ऐसे सुंदर स्वर के होते हुये अपने को देहात में दफनाना अपराध होगा", तो वर्षा ने फौरन सहमति में सिर हिलाया।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 130)

2. गुणवाचक विशेषण :

इसके अन्तर्गत काल, स्थान आकार, रंग, दशा, गुण आदि से सम्बन्धित विशेषण आते

हैं। वर्माजी की भाषा में गुणवाचक विशेषणों के अनेक उदाहरण दृष्टिगोचर होते हैं, इनमें से प्रमुख उदाहरण निम्नलिखित हैं –

(1) गेट से अंदर घुसते ही बांयी ओर उनका छोटा–सा **सुन्दर** बंगला था।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 13)

(2) पोर्च में उनकी, उन्हीं के जैसी, **नाजुक–सी** सुन्दर कार खड़ी रहती थी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 13)

(3) गायत्री के '**कच्चे अंगूर**–से गोरे रंग' के विपरीत छोटी सांवली थी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 39)

(4) प्रसेनजित : (क्रोधित स्वर में) **दुष्टे**, आधी रात को तेल फँक रही है।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 31)

(5) "कृपया जोर से न डाटें श्रीमान! वर्षा ने पूर्वाभ्यास के दूसरे दिन प्रार्थना की "यह अभिनेत्री **अल्हड़** है, डर जाती हैं"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 111)

(6) पिछले महीने पहले ऐसा अवसर आ गया था।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 40)

(7) वर्तमान का यह क्षण **कठोर** था।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 122)

(8) बड़े लॉन का **बड़ा** बंगला बिल्कुल खामोश था।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 119)

(9) खूब **बड़ा** कमरा था।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 153)

(10) "सोचा, **कलाकार** साली के दर्शन कर लें।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 117)

(11) नीना ! **सुन्दर**, **संवेदनशील**, **उदास**। (मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 134)

(12) उसकी देह्यष्टि नैन–नक्श और भाव–भंगिमायें **बहुत सलोनी** और **प्रभावी** लगीं।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 137)

(13) वर्षा को मालूम नहीं हुआ, पर मम्मी मोहन एवं दिव्या के **त्रिगुट** सम्मेलन में एक मत से स्वीकर किया गया कि वर्षा **बहुत** सयानी हो गयी है।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 140)

(14) वह जेफर्सन इंडिया में एक्जीक्यूटिव था। **शांत**, **मितभाषी**, **गंभीर**।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 150)

(15) आखिरकार नीना उसके पास आती है। **दुबली** हो गयी है।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 135)

(16) **अपरिपक्व** पैदाइश के कारण भास्कर **दुर्बल** एवं **बेडौल** तो था ही, **बुरी तरह** हकलाता और लुंज–पुंज दायी टांग की जगह बैसाखी लेकर चलता था।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 84)

(17) उसने रोजमर्रा की **नीली** जींस और **पूरी बांहों** की कमीज पहनी थी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 160)

(18) शिवानी **चटक बनारसी** साड़ी के साथ जेवरों से लदी हर्ष की मम्मी के ठीक पीछे बैठी थी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 162)

उपरोक्त उद्धरणों में प्रथम, दूसरे आठवाँ एवं नवाँ वाक्य स्थानवाचक, चौथा, पाँचवा, छठा एवं सातवाँ वाक्य कालवाचक, ग्यारहवाँ, बारहवाँ, तेरहवाँ, चौदहवाँ, पन्द्रहवाँ एवं सोलहवाँ उदाहरण गुणवाचक तथा अंतिम दो रंगवाचक, गुणवाचक विशेषण हैं।

3. संख्यावाचक विशेषण :

संख्यावाचक विशेषण के मुख्य तीन भेद हैं–

(क) निश्चित संख्यावाचक (ख) अनिश्चित संख्यावाचक और (ग) परिमाण बोधक।[1]

(क) निश्चित संख्यावाचक विशेषण :

निश्चित संख्यावाचक विशेषणों से वस्तुओं की निश्चित संख्या का बोध होता है। वर्माजी ने अपने उपन्यास में अनेक स्थलों पर निश्चित संख्यावाचक विशेषणों के प्रयोग किये हैं, इनमें से कुछ प्रमुख उदाहरण निम्नलिखित हैं–

(1) **दो साल** पहले उसका तबादला पीलीभीत हो गया था।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 14)

(2) सबसे छोटी **नौ वर्ष** की गौरी उर्फ झल्ली थी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 4)

(3) उसके ऊपर **तेरह वर्ष** का किशोर और बीचों बीच की साँवली, लंबी–छरहरी बड़ी–बड़ी आँखों वाली सिलबिल उर्फ यशोदा शर्मा।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 14)

(4) उनकी खाँसी बढ़ गयी थी, पर वह डॉक्टर के पास नहीं जा रहे थे, जैसे **बीस–पच्चीस रुपये** बचाकर सब कुछ संवार लेंगे।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 18)

(5) **सातवीं** और **आठवीं** क्लास में। (मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 20)

1. हिन्दी व्याकरण, पं. कामता प्रसाद गुरु, पृ. 93

(6) उनको रोज **एक घंटा** ट्यूशन दे सकोगी ?

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 20)

(7) पैसे होंगे **डेढ़ सौ महीना**।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 20)

(8) **दस–दस के पंद्रह नोट** थे ....नये।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 22)

(9) उसने तुरन्त कार्यालय में जाकर **दो महीने** की **तीस रुपये** फीस जमा की और घर जाकर **पाव भर** पेड़ों के साथ–**सौ रुपये** माँ के चरणों में रख दिये।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 22)

(10) फिर जोड़ा, "**पाँच रुपये** का प्रसाद चढ़ाऊँगी, अगर...........

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 37)

(11) खंभे से टिकी खड़ी माँ ने कहा "झल्ली भोग के लिये **आधा पाव** बताशे ले आ।"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 40)

(12) मैं **सात दिनों** से रोजाना **अट्ठारह घंटे** शूटिंग कर रहा हूँ।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 145)

उपरोक्त उदाहणों में दो साल, नौ वर्ष, तेरह वर्ष, बीस–पच्चीस रुपये, सातवीं, आठवीं, एक घंटा, डेढ़ सौ महीना, दस–दस के पन्द्रह नोट, दो महीने, तीस रुपये, पाव भर, सौ रुपये, पाँच रुपये, आधा पाव, सात दिन, अठारह घंटे आदि सभी निश्चित संख्यावाची विशेषण हैं।

(ख) अनिश्चित संख्यावाचक विशेषण :

अनिश्चित संख्यावाचक विशेषणों का प्रयोग वर्माजी ने अपने उपन्यास में कुछ ही स्थलों पर किया है–

(1) **कुछ महीनों** बाद आखिर शर्माजी का अंतर्देशीय आ ही गया।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 112)

(2) बदकिस्मती से नाट्यविद्यालय से और कोई नहीं था, इसलिये वह **अधिकतर समय** या तो काम में मदद करती रही या सुजाता के आसपास मंडराती रही।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 160)

(3) "टांग खेंचने के लिये **और कोई** नहीं मिला ?" वर्षा ने मुँह बनाया।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 364)

(4) पर स्टारडम ने **बहुत–कुछ** बदल दिया था .....सामान्य आकांक्षायें भी और सामान्य जीवन पद्धति भी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 416)

(5) महादेव उत्तेजित–से एक दिन के लिये बुलंदशहर गये।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 85)

(6) ''**एक और** स्टार चमकने से पहले टूट गया।'' पीछे टिप्पणी हुई।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 91)

(7) आज सिलबिल ने पहली बार–चूड़ीदार धारण किया था और उसे लग रहा था कि **सारी** दिल्ली उसे घूर–घूर कर देख रही है।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 95)

उपरोक्त उदाहरणों में कुछ महीनों और कोई बहुत–कुछ, एक दिन, एक और सारी दिल्ली आदि शब्द अनिश्चित संख्यावाची विशेषण के परिचायक हैं।

(ग) परिमाणवाचक विशेषण :

परिणामबोधक विशेषणों से किसी वस्तु की नाप या तौल का बोध होता है।[1] वर्माजी के उपन्यास से परिमाणवाचक विशेषण के कुछ उदाहरण यहाँ प्रस्तुत हैं–

(1) खंभे से टिकी खड़ी माँ ने कहा, ''झल्ली, भोग के लिये **आधा पाव बताशे** ले आ।''

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 40)

(2) **बहुत दिन** हो गये।' जीजाजी हंसे।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 117)

(3) **थोड़ी देर** के लिये वर्षा को भेज दें।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 88)

(4) भीतरी आंगन के सामने **सारे उपकरणों** से सज्जित रसोई थी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 262)

(5) शिवानी खिलखिलायी, ''नहीं **थोड़ा–सा** चुनाव तो करना होता है।'

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 271)

(6) हमें इस **वित्ते भर** की छोकरी की संकल्प शक्ति पर नाज है ?'' स्नेह ने वर्षा के सिर पर हाथ रखा।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 295)

(7) पर स्टारडम ने **बहुत–कुछ** बदल दिया था..........सामान्य आकांक्षायें भी और सामान्य जीव–पद्धति भी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 418)

(8) दर्शक को क्या पसंद है, इसकी **थोड़ी–बहुत** समझ मुझमें हैं।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 517)

---

1. हिन्दी व्याकरण, पं. कामता प्रसाद गुरु, पृ.सं. 103

उपरोक्त उदाहरणों में आधा पाव, बहुत दिन, थोड़ी देर, सारे उपकरण, थोड़ा–सा चुनाव, बित्ते भर, बहुत–कुछ, थोड़ी–बहुत शब्द परिमाण बोधक विशेषण के परिचायक हैं।

क्रिया :

जिस विकारी शब्द के प्रयोग से हम किसी वस्तु के विषय में कुछ विधान करते हैं, उसे क्रिया कहते हैं। क्रिया के द्वारा शैलीय सौंदर्य की निष्पत्ति करने में सहायता मिलती है। वर्माजी की भाषा में क्रिया के अनेक अभिव्यंजक रूप प्रयोगात्मक रूप में मिलते हैं। 'भाव का आवेग या विस्फोटक क्रिया के माध्यम से प्रभावशाली रूप में प्रकट होता हैं भावावेग की स्थिति में या तो क्रियाहीन वाक्य का प्रयोग होता है या क्रिया मुक्त वाक्य का।[1] वर्माजी के उपन्यास में इन दोनों के उदाहरण यथासंभव रूप में मिल जाते हैं यथा–

(1) कुछ सवालों का **डंक** उसे हमेशा **चुभता** था।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 14)

(2) पिता क्रोध से **कांपने** लगे, "सिलबिल, मेरा हाथ **उठ जायेगा** .... **दूर हो जा** मेरी आँखों से ...."

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 65)

(3) "पाप के बोल मत **बोलो** मोहित। **मेरा मन** प्रभु के **चरणों में** है।" वर्षा थरथरायी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 67)

(4) पिता पलभर को **सकपकाये**, फिर **आक्रामक हो** गये, "मुझे सिर्फ अपने घर से मतलब है।"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 32)

(5) "आ हा हा हा, बड़ी धन्ना सेठ **बनी** है।" पिता **भड़क** उठे, "बहुत हो गयी है रामलीला। चुपचाप बैठ घर में.........'

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 65)

(6) वर्षा ने दहलीज पर पाँव रखा और यकायक उनसे लिपटते हुये **बिलख** पड़ी, "मुझे छोड़कर मत जाना..........मैं घुट–घुटकर मर जाऊँगी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 56)

(7) अगले दिनों घर में ऐसा तनाव रहा कि अगर तीली दिखाओं तो **विस्फोट** हो जाये।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 65)

(8) "यशोदा, या तो तू कुयें में **कूद जा**, या हम सबको **जहर दे दो**।" महादेव ने प्रस्ताव रखा।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 122)

(9) "**डर लग** रहा है ?" शिवानी हंसी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 206)

1. अज्ञेय के उपन्यासों की भाषा, शोध प्रबंध, विजय कुमार पाण्डेय, पृ.सं. 90

(10) किशोर मन—ही—मन **सिहर** उठा। (मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 16)

(11) तुम्हारे माध्यम से मैं **संतोष पाती** हूँ, आपने ऊपर **गर्व करती** हूँ कि तुम्हारी प्रतिमा ढूंढ़ने का निमित्त **मैं बनी**।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 228)

(12) 'ट्रेजरी क्वीन **क्या करेगी** दीदी। **आँसू बहा** रही हैं।'' वर्षा हँसी

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 229)

कहीं—कहीं भावावेश में क्रियापद मुहावरात्मक हो गये हैं इनमें से कुछ उदाहरण निम्नलिखित हैं—

(14) स्नेह जी और चतुर्भुज जी सुनेंगें, तो हमें **कच्चा चबा जायेंगे**।'' वर्षा मुस्करायी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 306)

(15) ''एक नहीं, सैकड़ों बातें हैं। यहाँ **कलेजा छलनी हुआ रखा** है।''

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 118)

(16) तीन साल अलग रहने के ख्याल **दाँत की तरह उखाड़ फेंकते** थे।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 213)

(17) कलात्मक लालसा को कुछ लोग **दांत की तरह उखाड़ फेंकते** थे।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 257)

(18) मेरा तो **खून खौलने** लगा।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 511)

(19) वर्षा के **हाथ—पांव फूल गये**।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 535)

क्रियाहीन वाक्यों के माध्यम से भी भावाधिक्य का वर्णन किया गया है—

(20) ....और यशोदा ? घिसा—पिटा, दकियानूसी नाम।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 16)

(21) ''पापिन ! दुराचारिणी। ....बाल—ब्रम्हचारी के मंदिर में स्वच्छंद काम—क्रीड़ा और वह भी मंगलवार को। मिस कत्याल **हंसते—हंसते लोट—पोट हो** गयीं।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 54)

(22) नीना ! सुंदर, संवेदनशील, उदास। मातृहीन, सौतेली माँ और पिता की कड़ी, निर्मम निगरानी में।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 134)

(23) ''हाँ तात्। वीणावादिका लवंगलता के रूप में...............''

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 219)

इस प्रकार क्रियापदों के विविध प्रयोग से मुझे चाँद चाहिये उपन्यास के शैली–वैशिष्ट्य में वृद्धि हुई है। आवेश में क्रियाओं का उत्तेजक, विस्फोटात्मक प्रयोग, कभी–कभी उनका मुहावरों में बदल जाना और कभी–कभी क्रियाहीन अधूरे से वाक्य व्यंजना को और सजीव, गहन और प्रभावी बना देते हैं। वाक्यात्मक शैलीय उपकरणों में विशेषणों और क्रियापदों का प्रयोग अत्यन्त विशिष्ट होता है। क्रिया ही किसी संवेग, भाव या अभिव्यक्ति को जान देती है। क्रिया–पदों से किसी कथा–क्रम की सजीवता, गतिमयता का पता चलता है। सच बात यह है कि क्रिया पद सिर्फ शैली के बाह्य ढाँचे को ही प्रभावित नहीं करते वरन् उपन्यास की आन्तरिक रचना को भी गढ़ते हैं। क्रिया पद वाक्यात्मक शैलीय उपकरणों को एक गति, एक नाटकीयता देते हैं। पात्रों की सजीवता उनके द्वारा प्रयुक्त क्रियापदों में समाहित होती है। इस दृष्टि से अगर किसी उपन्यास के क्रियापदों का ही शैलीय उपकरणों की दृष्टि से विश्लेषण किया जाये तो बड़े ही रोचक तथ्य उजागर होंगे।

निपात् :

उन सहायक शब्दों को निपात कहते हैं जो वाक्यार्थ में नई विवक्षा लाते हैं। निपातों के प्रयोग से अभिव्यंजकता की निष्पत्ति के अनेक स्थल साहित्य में दृष्टिगोचर होते हैं। आचार्य कुंतक ने निपातवक्रता में रसोत्कर्ष की दृष्टि से निपात के प्रयोग का सौंदर्य प्रतिपादित किया है।[1] आचार्य क्षेमचन्द्र ने भी निपात के औचित्य पर बल दिया है। उनके अनुसार उचित स्थान पर प्रयुक्त निपातों से अर्थ की योजना असंदिग्ध हो जाती है।[2]

'क्या' प्रश्नसूचक निपात है इसका प्रयोग वर्माजी ने वाक्य के आरम्भ, मध्य तथा कर्ता के बाद भी किया जाता है, जैसे–

(1) **क्या** इन सबके आत्मसम्मान उसके आत्म–सम्मान के आगे हीन है ?

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 243)

(2) आप **क्या** पियेंगी ?

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 269)

(3) उसके जीवन का उद्देश्य **क्या** है ?

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 14)

नहीं नकारात्मक निपात है, इसका प्रयोग भी वर्माजी ने स्थान–स्थान पर किया है यथा–

(4) मुझे अपना नाम पसंद **नहीं** था। (मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 16)

(5) अगर हाईस्कूल में **नहीं** बदलती, तो आगे चलकर बहुत मुश्किल होती।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 16)

---

1. 'वक्रोक्ति जीवितम्' 2.33
2. "औचित्य विचार चर्चा", पृ.सं. 26

(6) ''वर्षा, तुमने अपना नाम **नहीं** दिया ?''

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 27)

(7) मैं अपनी बेटी को ही **नहीं** बचा पा रहा हूँ, उन्होंने गहरी सांस के साथ सोचा।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 21)

(8) हमारी मित्रता में कोई फर्क **नहीं** आयेगा।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 33)

'न' एवं 'मत' दोनों ही नकारात्मक निपात हैं, जिनका प्रयोग वर्माजी ने निम्नलिखित वाक्यों में किया है–

(9) और अगर दिव्या का सहारा **न** होता, तो वह ऐसे समग्र रूप में यहाँ पहुँच सकती थी ?

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 315)

(10) ''छाया तंग **मत** करो।'' वर्षा कुनमुनायी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 307)

(11) कांपते स्वर में कहा, जो रास्ता आपने मुझे दिखाया है, उसे छोड़ने के लिये **मत** कहिये।''

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 33)

(12) ''ताना **मत** दो शिवानी ! मैं खुद बहुत विचलित हूँ।''

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 363)

'जी' आदर सूचक निपात है। इसका प्रयोग वाक्य के आरम्भ एवं अन्त में किया जाता है। यथा–

(13) ''**जी**'' वर्षा आभार के भाव से मुस्करायी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 240)

(14) ''क्यों नहीं बना लूँगी **जी**।''

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 261)

(15) ''**जी** हाँ।'' हेमा तनिक–सा मुस्का दी, ''कच्ची–पक्की रसोई करती हूँ।'

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 285)

'ही' का प्रयोग अतिरिक्त और भिन्न भाव दर्शाने तथा जोर देने के लिये भी किया गया है–

(16) उसकी पदचाप सुनते हुये पिता गहरी साँस लेकर धीरे–से बोले, ''कविकुल तिलक ने ठीक **ही** कहा है अपने हाथ से सींचे हुए विष–वृक्ष को अपने ही हाथ से कोई कैसे काट दे...''

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 18)

(17) उन दोनों के बीच **ही** सीमित रहा।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 19)

(18) दोनों ने एक–दूसरे को पसंद किया पर दोनों **ही** असमंजस में हैं।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 31)

'तो' निश्चय प्रदर्शन भी करता है जैसे –

(19) अपनी काली मनःस्थिति और पिता से तीखे मत–वैभिन्य के बावजूद उसका मन थोड़ा तरल हो आया, "दो पैसे और आयेंगे, **तो** घर की मदद ही होगी।" उसने नर्मी से कहा।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 21)

(20) नरोत्तम का **तो** स्वभाव भी यही है कि बिना कुछ कहे याचकों की मांग पूरी करें।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 26)

(21) अगर तुम्हारा इरादा बदल रहा हो **तो** ठीक है।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 33)

(22) सौम्यदत्ता : (उदास मुस्कान से) पगली, जानती होती, **तो** उपचार न करती ?

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 30)

(23) "**तो**.........आपका क्या निश्चय रहा ?" बाँके बिहारी आश्वत ढंग से मुस्कराये।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 216)

सिर्फ निपात् का भी प्रयोग वर्माजी ने किया है–

(24) वह स्वयं यह सोचकर खेद से भरे जाती है कि लगभग सोलह की आयु के पड़ाव पर उसकी अनुभव–मंजूषा में सिर्फ एक कानी कौड़ी है।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 53)

'भर' तथा 'तक' निपात् का प्रयोग भी उपन्यास में किया गया है–

(25) उसको सुबह नौ बजे **तक** बाहर निकल जाना चाहिये।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 321)

(26) "दैया रे !" चौंकी हुई झुमकी भोर के झीने उजाले में सामने खड़ी थी, "दोनों दीदियाँ रात **भर** बातें करती रहीं।"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 318)

(27) पल **भर** चुप रही।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 307)

इस प्रकार 'मुझे चाँद चाहिये' उपन्यास में सहायक शब्दों के रूप में लेखक ने 'निपातों' का विविध मुखी प्रयोग किया है। निपातों के प्रयोग से वाक्य का सौन्दर्य बढ़ जाता है। अलग से इन निपातों का कोई अर्थ नहीं होता। ये जब वाक्य में प्रयुक्त होते हैं तो इनसे वाक्य मूलक शैली तत्व का सौन्दर्य बढ़ जाता है। वक्ता इनके प्रयोग से अपने मन के भावों को एक धार देता है। इससे उसके वक्तव्य में रवानगी आ जाती है। इन निपातों का अनुशीलन अत्यन्त रोचक व मनोरंजक होता

है। 'मुझे चाँद चाहिये' की शैली का यह एक विशिष्ट उपकरण है।

वाक्य संरचना

शब्दक्रम :

किसी वाक्य के सार्थक शब्दों को यथास्थान रखने की क्रिया को 'क्रम' अथवा 'पद–क्रम' कहते हैं। वाक्य में शब्द क्रम का मौलिक महत्व है। शब्दों का क्रम स्वैरभाव से ही नहीं अपितु नियमों से भी अनुशासित होता है। हिन्दी, अंग्रेजी एवं संस्कृत, आदि सभी भाषाओं में शब्द क्रम अपना महत्व रखते हैं। संस्कृत के संज्ञापद तथा क्रियापद सम्बन्ध तत्वों के योग से जो व्यवच्छेदक तथा स्वतंत्र व्यक्तित्व धारण कर लेते हैं, उस कारण उनका स्थान परिवर्तन अर्थ को प्रभावित नहीं करता, किन्तु हम अव्ययों के विषय में यह बात नहीं कह सकते। अविकारी होने के कारण वे स्थान और क्रम के अनुसार अर्थभेद के बोधक होते हैं।[1]

वाक्य के दो मुख्य तत्व होते हैं – उद्‌देश्य और विधेय। नियम यह है कि पहले उद्‌देश्य का प्रयोग किया जाता है, बाद में विधेय का। ताकि अर्थ की निष्पत्ति में अराजकता न आ सके। अतएव कहा गया है कि उद्‌देश्य का कथन किये बिना विधेय का कथन न किया जाये।[2]

क्रम–भंग, इसका उद्‌देश्य क्रिया या कर्म में जिस किसी को पहले लाया जाता है, उसे ध्यान का केन्द्र बनाना होता है।[3] भाषा में क्रम का विपर्यय लेखक शैली–सौंदर्य की निष्पत्ति के लिये करता है।[4] शब्दों के क्रम का विषर्यय कथ्यांश पर बल देने, उसका विस्तार करने काव्यात्मक प्रभाव उत्पन्न करने तथा संशक्ति के लिये अनेक प्रयत्न किये जाते हैं। इसीलिये शैली विज्ञान में शब्द क्रम का अध्ययन किया जाता है। शैलीय प्रभाव की निष्पत्ति के लिये विपर्यय करने से जो नवीन शब्दक्रम बनता है, वह चरित्रचित्रण, वस्तुवर्णन आदि के सन्दर्भ में श्रुति मधुरता, बलात्मकता, व्यंग्य, विविधता, चित्रात्मकता आदि अनेक प्रकार के प्रभावों की सृष्टि करता है।[5] शब्द क्रम में विपर्यय की सम्भावना से लेखक को वाक्य के विविध प्रकारों में से उपयुक्त प्रकार के चयन का अवकाश मिल जाता है। इसलिये यह शैली विज्ञान के अध्ययन का प्रमुख विषय है।[6]

सुरेन्द्र वर्मा जी की भाषा में शब्दक्रम के विपर्यय के अनेक प्रसंग मिलते हैं। उन्होंने अपनी भाषा में विपर्यय के द्वारा अनेक स्थानों पर नाना प्रकार के प्रभावों की निष्पत्ति की है। यह विशेष रूप से द्रष्टव्य है कि सुरेन्द्र वर्मा की भाषा में संवादात्मक स्थलों पर विपर्यय का प्रयोग अधिक

---

1. शैली विज्ञान और प्रेमचन्द की भाषा, डॉ. सुरेश कुमार, पृ.सं. 163
2. शैली विज्ञान और प्रेमचन्द की भाषा, डॉ. सुरेश कुमार, पृ.सं. 163
3. रीति विज्ञान, डॉ. विद्या निवास मिश्र, पृ.सं. 76
4. एस. उल्मान : 'स्टाइल इन दि फ्रेंच नाबेल, पृ.सं. 16
5. वही, पृ.सं. 151
6. शैली विज्ञान और प्रेमचन्द्र की भाषा, डॉ. सुरेश कुमार, पृ.सं. 164

पाया जाता है। साथ ही वक्ता के मनोभावों एवं पात्रों के चरित्र चित्रण के अभिव्यंजक उपकरण के रूप में दिखाई पड़ता है।

विपर्यय का प्रमुखतम प्रयोजन है – बलात्मक प्रभाव की निष्पत्ति करना। वाक्यगत अभिव्यंजा को बल प्रदान करने में विपर्यय से बहुत सफलता मिलती है। कुछ स्थलों पर तो विपर्यस्त पदों पर बल देना ही विपर्यय का उद्देश्य होता है, अन्यत्र अभिव्यंजना को पुष्ट करने में विपर्यय की सार्थकता होती है। सुरेन्द्र वर्मा ने विपर्यय द्वारा विशुद्ध बलात्मक प्रभाव की निष्पत्ति निम्नलिखित प्रसंगों में की है–

वर्मा जी जिन वाक्यांशों पर बल देना चाहते हैं, उनका प्रयोग वे वाक्य के अंत में करते हैं –

(1) जब संध्या समय शर्माजी को बाजार में मिश्रीलाल इंटर कॉलेज के अध्यापक जनार्दन राय ने बताया कि सिलबिल ने अपना नाम बदल लिया है, तो कुछ पलों के लिये शर्माजी अवाक् रह गये।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 15)

सिलबिल अपने पिता को अपना नाम बदलने के विषय में तर्क देते समय विपर्यय युक्त वाक्यों का प्रयोग कर रही है–

(2) "अब हर तीसरे–चौथे के नाम में शर्मा लगा होता है। मेरे क्लास में ही सात शर्मा हैं।.....और यशोदा ? घिसा–पिटा, दकियानूसी नाम। उन्होंने किया क्या था ? सिवा क्रिश्न को पालने के?"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 16)

उपर्युक्त उदाहरणों में 'कुछ पलों के लिये' एवं 'और यशोदा' तथा 'किया' 'सिवा' शब्दों के स्थान में परिवर्तन किया गया है, क्योंकि लेखक इन पर बल देना चाहता है।

सौम्यदत्ता की अन्यमनस्क स्थिति का वर्णन इन विपर्यय युक्त शब्दों की सहायता से किया गया है–

(3) सौम्यदत्ता पल भर चुप रहकर कहती है मन नहीं है चारु, उपयुक्त पुरस्कार देकर उन्हें विदा कर दे।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 30)

(4) सौम्यदत्ता–तरंगमाला से मेरी ओर से क्षमा मांग ले चारु। कहना, राजकुमारी स्वस्थ नहीं।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 30)

(5) दासी : (चिंता से) आपको हुआ क्या है देवि ? (मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 30)

उपर्युक्त उदाहरणों में 'चारु', 'हुआ क्या', 'देवि' शब्दों पर बल देने के लिये ही उनका क्रम परिवर्तन किया गया है।

क्रोधावेश की अभिव्यंजना के लिये विपर्यय का सफल प्रयोग होता है। आवेश के कारण वाक्य–विन्यास अस्तव्यस्त हो जाता है तथा इस प्रकार अस्तव्यस्तता के द्वारा आवेश की अभिव्यंजना होती है–

(6) ''आ हा हा हा, बड़ी धन्ना सेठ बनी है। पिता भड़क उठे,'' बहुत हो गयी रामलीला चुपचाप बैठ घर में.........''

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 65)

यहाँ पर 'आ हा हा हा' उपहास की ध्वनि को एवं 'बहुत हो गयी' तथा 'चुपचाप' विपर्यस्त वाक्यांश शर्माजी के आवेश को व्यक्त कर रहे हैं।

(7) पिता क्रोध से काँपने लगे,'' सिलबिल मेरा हाथ उठ जायेगा...दूर हो जा मेरी आँखों से...'

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 65)

यहाँ पर वर्षा के पिता का क्रोध 'दूर हो जा' वाक्यांश के वाक्य में पहले आने की स्थिति में ही व्यक्त हो जाता है।

वर्षा की माँ का क्रोध निम्नलिखित वाक्य से स्पष्ट हो रहा है, वे जिस वाक्यांश पर बल देना चाती हैं उसे वाक्य के अंत में प्रयोग करती हैं–

(8) ''जिज्जी जवाब देने ही वाली थीं कि माँ का कर्कश स्वर आँगन में छा गया, ''जा के मर वहीं, जहाँ महीना भर काटा है......... बड़े, इसकी चुटिया पकड़ के ढकेल दो सड़क पर.... पाप कटे।''

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 74)

यहीं, वहीं, सड़क पर शब्दों का विपर्यय युक्त प्रयोग बल देने के लिये किया गया है।

रीटा अपने आवेश को व्यक्त करने के लिये उस शब्द को वाक्य में पहले प्रयोग कर रही है–

(9) ''छोड़ो मुझे ....बेवकूफ बेशर्म............'' उसका मुँह नोंचते हुये रीटा चीखी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 202)

शशांक जिन शब्दों पर बल देना चाहते हैं उनका प्रयोग विपर्यय पूर्वक करते हैं–

(10) ''पागल की तरह मेरी बात दुहराओ मत।'' उनका स्वर आक्रामक था।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 205)

स्नेह जब नाराज होते हैं तो क्रोधावेश में वे विपर्यय युक्त शब्दों का प्रयोग करते हैं–

(11) स्नेह का मुँह एकदम तमतमा गया, ''नहीं जा सकता। मैंने इन लोगों को खाने पर बुलाया हैं इन्हें छोड़ने नहीं जायेगा वह ?''

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 278)

जिन स्थलों पर उदासी, आवेग, विचलित, व्यग्रता एवं निराशा आदि मनोभावों की

अभिव्यक्ति की जाती है, उन स्थलों पर विपर्यय के प्रयोग मिलतें हैं–

(12) "मुझे छुओ मत।" वर्षा बौखला गयी मेरा कलेजा छलनी हुआ रखा है।"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 351)

(13) "थोड़ी देर रुकोगी डार्लिंग ? मन डूब–सा रहा है।"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 83)

(14) "तू बोल क्या रही है ? पगला गयी है क्या ? जिज्जी ने भर्त्सना की, पर सम्बन्धी का घर होने के कारण स्वर ऊपर नहीं उठा सकीं।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 119)

(15) "जीती रह बेटी !" डैडी के स्वर में आवेग था।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 189)

(16) "उससे मिले तुम ? .... बहुत उदास है।" 'बेचारी' कहते–कहते अपने को रोक लिया।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 236)

(17) "अकेले मेरा दम घुटता है।" मम्मी बोलीं "मैं जिंदगी में कभी अकेली नहीं रही।"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 239)

(18) "हर्ष से नहीं दीदी।" वह करुणा से मुस्करायी," हवाओं से पूछो।"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 243)

(19) फिर नीलकांत उसका हाथ चूमता है, "मेरा कोई नहीं..........तुम्हारे सिवा।"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 246)

वर्मा जी ने प्रसन्नता, आश्चर्य, कड़वाहट, दुःख, व्यंग्य की अभिव्यक्ति करने के लिये विपर्यस्त वाक्यों का आश्रय लिया है–

(20) इस शादी पर मैं बहुत खुश हूँ।" वर्षा के बगल में बैठी अनुपमा फुसफुसायी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 253)

(21) "ऐसी किस्मत कहाँ है मेरी !" वर्षा मुस्करायी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 66)

(22) "सिलबिल, तूने अपना जीवन सँवार लिया बहन !" उसे गले से लगाते हुये जिज्जी बोलीं, "खुशी के मारे मैं रो पड़ी।"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 85)

(23) "यह मैं क्या सुन रहा हूँ ?" भाई हक्के–बक्के रह गये।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 123)

(24) "मुझे खुशी है डैडी कि इस बारे में हम दोनों सहमत हैं।"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 162)

(25) "यह नाटक मुझे नापसंद है। इस रोल से मुझे नफरत है।" शाम को मंडी हाउस के चायघर पर बड़ा–सा घूँट लेकर हर्ष ने कड़वाहट से कहा।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 167)

(26) आओ वर्षा।" जीजाजी हंसकर बोले, "लाल किले पर झंडा फहरा ही दिया तुमने।"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 175)

(27) "जेफर्सन : इंडिया के हीरो बन गये हैं सुकुमार ! रीटा का स्वर ऐसा था कि उसे व्यंग्य भी समझा जा सकता था। और प्रशंसा भी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 216)

इसी प्रकार निम्नलिखित सभी उदाहरणों में विपर्यस्त पदों की अभिव्यंजना पर बल देना ही वक्ताओं का अभीष्ट है :–

(28) "सर, यही है मेरी छोटी बहन..........." महादेव ने अदब से टाई बाँधे, मुँह में सिगार दबाये पुरुष को संबोधित किया। (मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 178)

(29) "पाप के बोल मत बोलो मोहित। मेरा मन प्रभु के चरणों में है।" वर्षा थरथरायी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 67)

(30) "इतना बड़ा अफसर है। राजा है तहसील का .... जो चाहे स्याह सफेद करे।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 76)

सर्वनाम के स्थान–परिवर्तन से दोषारोपण के भाव की सफल व्यंजना होने में बहुत सहायता मिलती है। इसमें प्रायः सर्वनाम अंत में चला जाता है। सुरेन्द्र वर्मा ने भी अपने उपन्यास में इस प्रकार की सफल अभिव्यक्ति निम्नलिखित उदाहरणों में की है–

(31) "बहुत जोम चढ़ गया है तुझ पर ...."

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 66)

(32) भाई भड़क उठे, "फिर वही ढाक के तीन पात। बी.ए. के बाद तुममें क्या सुर्खाव के पर लग जायेंगे ? कौन–सी नौकरी मिल जायेगी तुम्हें ?"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 76)

(33) "लड़के की बराबरी करेगी तू ?"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 181)

(34) अच्छा मेरी ऐसी बदनामी करती हो तुम लोग ? वर्षा ने आरोप लगाया।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 453)

(35) पिता का चेहरा तमतमा गया, "सिलबिल लाज–शर्म बिलकुल बेच खायी है तुमने ...." आवेश में वह उठकर खड़े हो गये।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 533)

क्रिया–विपर्यय का भी प्रभावशाली प्रयोग सुरेन्द्र वर्मा जी ने अपनी भाषा में किया है, इससे शैलीय प्रभाव में हुई वृद्धि पर दृष्टि ठहर–सी जाती है–

(36) भर्त्सना की विवशता में माँ को उससे सीधे बात करनी पड़ी, ''देखो तो कुलच्छिनी को.....अब बुढ़ापे में मुझे कुजात के हाथ का ठुसायेगी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 65)

उपरोक्त वाक्य में 'देखो तो' पर बल देने के कारण उसे वाक्य में पहले स्थान दे दिया गया है।

(37) ''तो करो न, रोका किसने है ? ''भाई ने कहा।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 85)

उपरोक्त वाक्य 'तो करो' एवं 'रोका' पर बल देने के कारण उनका स्थान परिवर्तन कर दिया गया है।

(38) ''चलो वर्षा।'' दिव्या चाय का आखिरी घूँट लेकर उठ खड़ी हुई।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 155)

यहाँ पर 'चलो' शब्द पर बल दिया गया है।

(39) ''लो, भावनायें बेचने वाली बनिया आ पहुँची है।''

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 438)

उपरोक्त वाक्य में 'क्रिया विपर्यय' हो गया है अतएव वाक्य का प्रभाव अधिक प्रभावी हो गया है।

(40) वर्षा ने दो घूँट लिया 'अभी फूलवती मौसी देखें तो ?'' उसने अतिरंजना से नकल उतारी, ''देखो तो महोबा वाली की छोकरियों को .... आसमान पै थिगली लगावे हैं।''

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 412)

उपरोक्त वाक्य में 'देखो तो' शब्द में क्रिया–विपर्यय है जिससे वाक्य का प्रभाव और अधिक हो गया है।

(41) ''हुई तो, पर सीधे पूछना उचित नहीं समझा।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 210)

यहाँ पर 'हुई तो' क्रिया का वाक्य में स्थान–परिवर्तन करके उसी पर बल दिया गया है।

(42) गये किसलिये थे ?'' अनुपमा ने पूछा।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 280)

उपरोक्त वाक्य में बल देने के लिये ही क्रिया का स्थल–परिवर्तन किया गया है।

(43) हर्ष नाटकीय भंगिमा से दरवाजे पर खड़ा था, ''देखो, तर्क कहाँ ले जाता है।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 381)

यहाँ पर हर्ष 'देखो' क्रिया का प्रयोग वाक्य में पहले करके उस पर बल दे रहा है।

तिरस्कार, विवशता, ईर्ष्या, व्यंग्य आदि की पुष्ट व्यंजना के लिये भी विपर्यय का प्रयोग विशेष प्रभावशाली रहता है। वर्माजी की भाषा में इसके कुछ उदाहरण इस प्रकार हैं–

(44) 'कुछ साल पहले जब मैं चंडीगढ़ से आयी थी, तो कैसे अरमान थे मेरे.......'' रीटा के मुँह पर आत्मिक पीड़ा की मुस्कान थी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 216)

(45) गोरी, रूपवान कंचनप्रभा ने निगाह उठाकर उसका सर्वेक्षण किया। चेहरे पर सर्द तिरस्कार का भाव आ गया, ''अच्छा, तो आप ही हैं वर्षा वशिष्ठ। ......ऐसी शक्ल के साथ स्टार बनना चाहती हैं।''

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 346)

उपरोक्त दोनों उदाहरणों में जिन शब्दों पर बल दिया गया है वे तिरस्कार एवं विवशता की सफल अभिव्यक्ति कर रहे हैं।

(46) ''मंच पर अपने प्रेमी को डंसने की भूमिका तुम्हें मिल रही है।''

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 251)

उपरोक्त उदाहरण में ईर्ष्या एवं व्यंग्य दोनों की भावना की अभिव्यक्ति स्पष्ट दिखाई दे रही है।

(47) 'वह तो मैं भी देख रहा हूँ। आँखों से दिखाई देती है मुझे। तुम्हारी तरह शोभा के लिये नहीं लगा रखीं।'' महादेव सिलबिल के साथ अब बारीक संप्रेषण का आनन्द लेने लगे थे।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 87)

(48) सिलबिल ने कड़वाहट छिपाने की कोशिश नहीं की, ''चिंता मत करो। हकला और लंगड़ा हाथ से नहीं निकलेगा।''

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 85)

उपरोक्त दोनों ही उदाहरणों में व्यंग्योक्ति है, जिससे शब्द क्रम में विपर्यय आ गया है। प्रशंसा एवं आनन्द से परिपूर्ण भावोद्गार की अभिव्यक्ति में भी वर्माजी ने विपर्यय का सहारा लिया है –

(49) ''धन्य भाग, सुबह–सुबह कलाकारों के दर्शन हुये।'' गृह स्वामिनी मुस्करा रही थीं।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 248)

(50) अनुपमा ने बांहों में भरकर उसे चूम लिया, ''बकरी, तू पेपर पढ़ती है या उसकी जुगाली करती है। तू एवार्ड पाने वाली सबसे कम उम्र एक्ट्रेस है।''

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 275)

(51) ''वर्षाजी प्रणाम।' सूर्यभान उसे देखते ही हाथ जोड़कर मुस्कान के साथ खड़े हुये, ''आपको

सामने देखकर मेरे पाँव वैसे ही काँप रहे हैं, जैसे रामभरोसे के आगे कालिदास आ गये हों।''

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 276)

(52) ''तुम्हें आभारी होना है अपनी प्रतिभा का'' वह गंभीर स्वर में बोले, ''अपनी लगन का, अपने व्यवहार और व्यक्तिगत गुणों का। आज तुम जहाँ हो उन्हीं के कारण हो।''

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 276)

(53) ''जहेनसीब.........वर्षाजी के दर्शन हुये'' कार्यालय के नथानी गलियारे से आते हुये ठिठक गये और लपक कर सूर्यभान के कमरे का दरवाजा खोला, देखिये तो, कौन आया है !''

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 483)

विपर्यय के प्रयोग वर्माजी ने चरित्र चित्रण के संदर्भ में भी किये हैं। वर्षा की माँ अत्यंत क्रोधी स्वभाव की हैं, अतएव वर्माजी ने वर्षा की माँ की आवेशपूर्ण प्रकृति के चित्रण में विपर्यय का प्रयोग अत्यंत सफलतापूर्वक किया है। वर्षा की माँ के आवेश पूर्ण वाक्यों में पदक्रम का प्रायः विपर्यय हो जाता है–

(54) इस बार पत्नी ने उन्हें सहारा दिया, ''इस छोकरी का कुछ ओर–छोर ही नहीं मिलता। कैसे बाप के सामने तू–तूड़ाक किये जाती है।''

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 41)

(55) भर्त्सना की विवशता में माँ को उससे सीधे बात करनी पड़ी, ''देखो तो कुलच्छिनी को.....अब बुढ़ापे में मुझे कुजात के हाथ का ठुसायेगी।''

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 65)

विपर्यय के अभिव्यंजक तथा चरित्र वैशिष्ट्य व्यंजक प्रयोगों की दृष्टि से वर्माजी की भाषा समृद्ध हैं। उन्होंने विविध प्रकार के शैलीय प्रभावों की दृष्टि के लिये विपर्यय का शैलीय उपकरण के रूप में प्रयोग किया है। उनकी भाषा में विपर्यय से अभिव्यंजकता की निष्पत्ति और पुष्टि दोनों हुई है।

अन्विति :

शब्दक्रम में विपर्यय के समान प्रकार्यात्मक कोटियों में उपलब्ध अन्विति का भंग भी परोक्ष रूप से अभिव्यंजक होता है। यह चरित्र की भाषागत तथा सांस्कृतिक पृष्ठभूमि को मुखरित करने के द्वारा हास्य–विनोद आदि के प्रभाव की निष्पत्ति करता है।[1]

वर्माजी के उपन्यास में अन्विति–भंग वाली वाक्य रचना के अनेक उदाहरण दृष्टिगोचर होते हैं जो अहिंदी भाषी पात्रों की भाषा में दखिाई पड़ते हैं। 'मुझे चाँद चाहिये' में एक बंगलाभाषी महिला का वार्तालाप इसी प्रकार का है–

(1) ''कलकत्ते से 'बहुरूपी' 'राजा' लेकर आया। शंभुमित्र मध्यांतर के खिलाफ हैं। एक घंटा,

1. शैली विज्ञान और प्रेमचन्द्र की भाषा, डॉ. सुरेश कुमार, पृ.सं. 169

बीता, तो ड्रामाक्रिटिक बेचैन होने लगे। उन्होंने बगल की महिला से फुसफुसाकर पूछा, तो वह बोली, 'मध्यांतर होवे ना।' ड्रामाक्रिटिक की सिट्टी पिट्टी गुम.....।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 172)

बम्बई के लोगों की भाषा में भी व्यक्तिक्रम मिलता है इसकी पुष्टि इस बम्बई के व्यक्ति के वार्तालाप से हो जाती है–

(2) "इदर से चला गएला है।"

"कब ?"

"मय उसकी हिस्ट्री नई रखता बाई।"

"कहाँ चले गये हैं ?"

"अपुन कूँ नईं पता।" और फोन बंद हो गया।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 322)

यही विशेषता एहसास हैदराबादी की भाषा में भी मिलती है–

(3) उन्होंने उत्तर देने के बजाय पल भर ध्यान से उसकी ओर देखा। फिर चेहरे की पिघलती रेखाओं के साथ उसके सिर पर हाथ रखते हुये बोले, "जीती रहो बेटी। नामो–रुतवा बुलंद हो।"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 341)

बम्बई भाषी लोगों के वार्तालाप के दो उदाहरण देखने योग्य हैं–

(4) "अजीम भाई ने बोला, अभी होल्ड करने का।" मुलाजिम ने लिफ्ट में बताया," अक्खा बिल्डिंग में बस, तीन फ्लैट दिएला है– बो भी फ्रेंड लोग का वास्ते।"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 373)

(5) वह आदमी क्षण भर रुका, फिर रुखे स्वर में बोला, "बाई तुम टैक्सी में जाके बैठो। अपुन को लफड़ा नईं माँगता।"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 388)

इस प्रकार के वाक्यों के प्रयोग से स्वाभाविकता के साथ कुछ हास्य–विनोद के प्रभाव की भी सृष्टि होती है, जिससे सम्पूर्ण प्रसंग मनोरंजक हो जाता है।

लोकोक्ति :

लोकोक्ति– सं. (स्त्री) (1) कहावत मसला (2) साहित्यिक लोकोक्ति के प्रयोग से काव्य में रोचकता उत्पन्न करने वाला एक अलंकार।[1]

1. लोकोक्ति – स्त्री. (सं. लोक उक्ति, मध्य. सं.)

1. लोक में समान रूप से प्रचलित बात/कहावत/मसला।

1. हिन्दी शब्दकोश, डॉ. हरदेव बाहरी, पृ.सं. 728

2. साहित्य में एक अलंकार जो उस समय माना जाता है जब लोकोक्ति के प्रयोग से काव्य में अधिक रोचकता आ जाती है।[1]

लोकोक्तियों के पीछे कोई कहानी या घटना होती है उससे निकली बात बाद में लोगों की जुबान पर जब चल निकलती है तो 'कहावत' हो जाती है।[2] इसी को लोकोक्ति भी कहते हैं। वास्तव में लोकोक्ति स्वतंत्र वाक्य होती है और अपना स्वतंत्र अर्थ रखती है, किसी कथन को पुष्ट करने के लिये उदाहरण के तौर पर अलग से इसका प्रयोग किया जाता है।[3]

सुरेन्द्र वर्मा जी ने लोकोक्ति का प्रयोग बड़े पैमाने पर किया है। उनके लोकोक्ति प्रयोग के प्रयोजन भी अनेक रहे हैं। प्रमुखतम प्रयोजन है अपने कथन को समर्थन का बल प्रदान करना। लोकोक्ति का ऐसा प्रयोग वर्माजी ने संवादगत प्रसंगों में ही प्रधान रूप से किया है। वक्ता अपने कथन को लोकोक्ति के द्वारा मुद्रांकित कर उसे अतिरिक्त बल प्रदान करता है, जिससे उसका कथन विशेष प्रभाव से युक्त हो जाता है। सुरेन्द्र वर्माजी के इस उपन्यास में इस प्रकार के प्रसंगों की बहुलता मिलती है। वर्माजी द्वारा प्रयुक्त कहावतों के कुछ उदाहरण निम्नलिखित हैं–

(1) पर जब उसने विद्यार्थियों और अभिभावकों से खचाखच भरे हाल को देखा, तो उसका दिल दहल गया। जैसे ही तालियों की ऊँची गड़गड़ाहट के साथ दर्शकों ने पहले प्रतियोगी का स्वागत किया, सिलबिल कमान से छूटे तीर की तरह ग्रीनरूम को भागी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 27)

(2) फिर हल्के–से खांसकर गला साफ करते हुये वह धीरे–धीरे बोले.....किसी की ओर देखे बिना, "मैने बाहर जो सुना उसके आधार पर वर्षा को मना किया। मैं छोटा आदमी हूँ और मुश्किल से अपनी जिम्मेदारियाँ निभा पाता हूँ। मेरी आशायें भी मेरे ही अनुरूप हैं। बरसाती बावड़ी गंगा की ओर देखेगी, तो मलिन ही होगी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 34)

(3) शर्माजी ने बिल्कुल नहीं सोचा था कि इस मुद्दे पर वर्षा इतनी दृढ़ता से मोर्चा लेगी। इस बात के लिये ऐसी दृढ़ता उनके तर्क की सीमा में नहीं आती थी। रात को जब वह सोये, तो एक ठंडी साँस लेकर पत्नी से बोले, "मुझे इस लड़की के लच्छिन ठीक दिखायी नहीं देते। करोंदे की झाड़ी दोहद के बाद का खिला अशोक बनना चाहती है......."

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 34)

(4) इस बार पत्नी ने उन्हें सहारा दिया, "इस छोकरी का कुछ ओर–छोर ही नहीं मिलता। कैसे बाप के सामने तू–तड़ाक किये जाती है। एक गायित्री भी थी। जहाँ बोलो, बेचारी सुग्गे–सी

1. मानक हिन्दी कोश, चौथाखण्ड, पं. रामचन्द्र वर्म्वा, (पृ.स. 599)
2. आधुनिक हिन्दी व्याकरण और रचना डॉ. वासुदेव नन्द प्रसाद, पृ. 254
3. हिन्दी मुहावरे, पृ.सं. 3

बैठ जाती थी।''

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 41)

(5) वह स्वयं यह सोचकर खेद से भर जाती है कि लगभग सोलह की आयु के पड़ाव पर उसकी अनुभव–मंजूषा में सिर्फ एक कानी कौड़ी है।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 53)

(6) ''आ हा हा हा, बड़ी धन्ना सेठ बनी है।'' पिता भड़क उठे, ''बहुत हो गयी रामलीला। चुपचाप बैठ घर में.......''

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 65)

(7) जैसे साँप अपनी केंचुल छोड़ देता है, कुछ–कुछ वैसे ही वह पिछले दिनों में अपना अतीत विस्मृत किये हुये थी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 71)

(8) भाई भड़क उठे, ''फिर वही ढाक के तीन पात। बी.ए. के बाद तुममें क्या सुर्खाव के पर लग जायेंगे ?

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 76)

(9) निरुपाय सिलबिल रुआँसी हो गयी, ''तुम लोग जून तक नहीं ठहर सकते ? मेरी दो रोटियाँ इतनी भारी हैं ?

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 85)

(10) इस बार चुप्पी कुछ ज्यादा रही। 'जनमजली' ने दुखती रग पर उँगली रख दी थी। विरोधी पक्ष किंचित् अपराध भाव से भर उठा पर यह भी साफ था कि इस अवसर को छोड़ना नहीं है। अगर अभी सिलबिल को नहीं बाँध पाये, तो बरसाती नदी की तरह कूल–किनारे तोड़ देगी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 85)

(11) आदित्य के प्रभावशाली चेहरे पर आयु, थकान एवं आक्रोश की रेखायें इस तरह फुँकारते हुये खड़ी हो गयीं, जैसे सोये हुये नाग को निर्ममता से छेड़ दिया हो।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 148)

(12) ''दीदी।'' वर्षा अचरज से भर उठी,'' आइए आइए..... गंगू तेली के घर में राजा भोज पधारे हैं।''

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 159)

(13) कई सालों के बाद पिता ने उसे सीधे पत्र लिखा था, 'महादेव ने कहा तो है कि घर की सहायता करते रहेंगे, यह तो समय ही बतायेगा। छप्पर की लकड़ी की पहचान भादों में ही होती है।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 200)

(14) ''मैं तुम्हें दोष नहीं दे रहा हूँ। आदित्य भी 'कंसूज' के शोज के लिये ऐसे ही कहकर गया था। फिर कभी नहीं लौटा।'' स्नेह करुणा से मुस्कराये। यह गौतम बुद्ध जैसी मुस्कान थी– रंगमंचीय मानव–समुदाय के लिये सरोकार से भरी हुई, ''दो घोड़ों की एक–साथ सवारी नहीं हो पाती।''

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 235)

(15) कला–फिल्म कृपणता एवं वंचना के अर्थशास्त्र की शोभा थी। यहाँ निर्देशक दो दर्जन चाय का भुगतान भी ऐसे देता था, जैसे कमाठीपुरा की नगरवधू उधार करने वाले ग्राहक को आतिथ्य दे रही हो।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 439)

(16) ''एक ने उसे 'लव लैटर' देने के बाद जब रूठे हुये प्रेमी की तरह आँखें फेर लीं तो पांडे बोले ''मैं स्टे ऑडर लाकर रिलीज रुकवा देता हूँ।'' वर्षा ने हँसकर मना किया, ''पांडेजी, आर्ट–फिल्म डायरेक्टर की आह दुर्वासा के शाप से भी भयंकर होती है''

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 439)

(17) धारावाहिकों का सैलाब आते ही 'भारतीय सिनेमा के पुनरुत्थान' में जुटे कला क्रियाशाली वैसे ही बौरा गये, जैसे मद बहने से हाथी उन्मत्त हो जाता है।''

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 439)

(18) कनिष्ठ होने पर भी वर्षा को फोन कर दिया इसलिये गीले कोयले–सी धुआँ दे रही है, वर्षा ने सोचा।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 536)

(19) ''कोई भागेगा कि मुँह और हाथ के निबाले में चार सूत का फासला होते हुये भी आदमी भूखा मर सकता है ?'' एंड्री वेदना भरे तनाव की मुस्कान से कह रहा था, ''मैं निगम के दफ्तर से होकर आया हूँ।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 536)

(20) वर्षा ने दो बड़े घूँट लिये, ''अभी फूलवती मौसी देखें तो ?'' उसने अतिरंजना से नकल उतारी, ''देखो तो महोबा वाली की छोकरियों को..........आसमान पै थिगली लगावे हैं।''

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 412)

(21) ''मैडम, इस बार तो अपने हद ही कर दी। ''शाम को पांडे के साथ नाटकीय समक्षता संपन्न हुई, ''आप जिस डाल पर खड़ी हैं, उसी पर कुल्हाड़ी मार रही हैं।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 553)

(22) ''आप जानते–बूझते मक्खी निगल रही हैं'' मैडम मैं मुँह पर ताला कैसे लगा लूँ ?

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 554)

सूक्ति :

किसी भी लोकोक्ति, पहेली, कहावत के जन्म के पीछे कोई–न–कोई घटना या व्यापार की कल्पना की जा सकती है। वक्ता किसी विचार को अभीष्ट अभिव्यक्ति देने के लिये दैनन्दिन जीवन–व्यापारों से उपमानों, उदाहरणों का चुनाव–चयन करता है। किन्तु सूक्तियाँ अपने सर्जक के निजत्व में नहीं, बोध एवं संवेदन में निहित होती हैं जो अपनी अभिव्यंजना से लोक में सार्थकता सिद्ध करती है। सूक्ति, यानी सुन्दर वाक्य, कथन। जो कथन, अपने सूक्ष्म निरीक्षण–परीक्षण और अनुभवायामों में से नव–चिन्तन को व्यंजित करे, वस्तुतः वही सूक्ति है। सूक्ति एक प्रकार से प्रज्ञा–उक्ति है–अर्थात् प्रज्ञोक्ति/प्रशंसोक्ति से अभिप्राय है प्रतिभावान की उक्ति। इसलिये हिन्दी विश्वकोश में सूक्ति को उत्तम शोभनोक्ति, विशिष्ट कथित वाक्य भी कहा गया है। बाबू श्याम सुन्दर दास ने सूक्ति को सुन्दर–बंधन माना है। उन्होंने कहा है – "मैं यहाँ सूक्ति को परिभाषित करने के किसी पचड़े में न पड़कर इतना ही कहना उचित समझता हूँ कि सूक्ति सुखद–सुन्दर नीति पर, काव्यमय कथन है, अर्थात सूक्ति एक ऐसा संक्षिप्त सारगर्भित काव्यमय कथन है, जिससे सामान्यतः सत्य की सरल अभिव्यक्ति होती है। सूक्तियाँ कल्पतरु अभिव्यक्ति होती हैं जो जीवन–संघर्षों के पथिकों का पथ प्रशस्त करने में सहायक होती हैं।"(1)

सूक्ति– स्त्री. (सं.प्रा.सं.) अच्छे और सुन्दर ढंग से कही हुई बढ़िया बात। अच्छी उक्ति।(2)

सूक्ति– सं. (स्त्री.) अच्छी उक्ति, बढ़िया बात।(3)

वर्माजी की भाषा में सूक्तियों का भी बड़े ही सुन्दर ढंग से प्रयोग किया गया है। वर्माजी ने सूक्तियों का प्रयोग उपकरण के रूप में भी किया है, नवनीत के रूप में भी। नवनीत के रूप में वे निष्कर्ष के स्थान पर प्रयुक्त हुई हैं। उनका निष्कर्षात्मक प्रयोग हुआ है, तथा ऐसे प्रसंग प्रधानतः वर्णनात्मक रहे हैं। जिनमें वस्तुवर्णन और चरित्र वर्णन दोनों के संदर्भ हैं –

वर्षा अपना नाम स्कूल में यशोदा से वर्षा परिवर्तित कर लेती है, इसे तार्किक ढंग से सही सिद्ध करने के लिये अपने पिता को स्पष्टीकरण देती हुई कहती है –

(1) "अब हर तीसरे–चौथे के नाम में शर्मा लगा होता है। मेरे क्लास में ही सात शर्मा हैं।.....और यशोदा ? घिसा–पिटा, दकियानूसी नाम। उन्होंने किया क्या था ? सिवा क्रिश्न को पालने के? सिलबिल ने पिता की ओर देखते हुये पल भर का विराम दिया, फिर उपसंहार कर दिया, "यशोदा शर्मा नाम में कोई सुंदरता नहीं।"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 17)

1. शिवमंगल सिंह 'सुमन' संधान 84 : 1999, पृ.सं. 9
2. मानक हिन्दी कोश, संपादक रामचन्द्र वर्मा, पाँचवा खण्ड पृ.सं. 429
3. हिन्दी शब्द कोश, डॉ. हरदेव बाहरी, पृ.सं. 844

वर्षा के तर्क का प्रभाव उसके पिता पर भी होता है। और वे अपनी प्रतिक्रिया को इस संस्कृत–सूक्ति के माध्यम से प्रकट करने में सफल हुये हैं–

(2) उसकी पदचाप सुनते हुये पिता गहरी साँस लेकर धीरे–से बोले, ''कविकुल–तिलक ने ठीक ही कहा है अपने हाथ से सींचे हुए विष वृक्ष को अपने ही हाथ से कोई कैसे काट दे........''

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 18)

इस सूक्ति का आशय यही है कि व्यक्ति अपने हाथ से सींचे विष के वृक्ष से इतना प्रेम करता है। अतः उसके बुरे प्रभाव को जानते हुये भी, उसे अपने हाथ से काट नहीं पाता। ऐसा वर्षा वशिष्ठ के लिये उसके तिपा का सोचना बिल्कुल ठीक ही है।

जब वर्षा की टीचर मिस कत्याल उसके सामने दो छात्रों को ट्यूशन पढ़ाने का प्रस्ताव रखती हैं, तो उसकी मनःस्थिति को वर्माजी ने इस सूक्ति के माध्यम से अभिव्यक्ति दी है–

(3) वर्षा की साँस रुक गयी। .....लगा कि अभी कोई नस तड़केगी और गर्म–गर्म, खून का फब्बारा फूट निकलेगा...... काले, निर्मम अंधकार में से कहीं इस तरह आलोक के कपाट खुलते हैं ?

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 20)

अर्थात् वर्षा के जीवन में प्रकाश की किरण फूटती है, उसके धनाभाव की पूर्ति किस प्रकार होगी, यह भी यहाँ स्पष्ट हो जाता है।

वर्षा ट्यूशन करने लगती है और उसके पिता उसी की उम्र की लड़की को पढ़ाकर लौटते हैं, वर्षा को अपनी पढ़ाई के लिये पैसे के अभाव के कारण जो संघर्ष करना पड़ रहा है उसका परिचय निम्नलिखित सूक्ति के माध्यम से स्पष्ट हो जाता है–

(4) कविकुल–दीपक की पंक्ति उन्हें याद आयी, 'वृक्ष अपने सिर पर गर्मी सह लेता है, परन्तु अपनी छाया से दूसरों को बचाता है।'

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 21)

यहाँ पर वर्षा के पिता की अपनी जिम्मेदारी का पूर्णतया निर्वाह न कर पाने के दर्द की अभिव्यक्ति हो रही है। वर्षा नाटक 'अभिशप्त सौम्यमुद्रा' में सौम्यमुद्रा का अभिनय कर रही है, उसी के संवाद को यहाँ सूक्ति रूप में अभिव्यक्ति दी गयी है–

(5) ''मधुरभाषिणी, तुम्हारे वचन अमूर्त ध्वनियाँ नहीं, पुष्पों की लड़ियाँ हैं, जो तन–मन को सुवासित कर देती हैं।''

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 30)

वर्षा के पिता मध्यमवर्गीय रूढ़िवादी मानसिकता के हैं वे वर्षा के नाटकों में अभिनय के प्रबल विरोधी हैं इसी तथ्य को यहाँ वर्माजी ने स्पष्ट किया है–

(6) पिता पल भर को सकपकाये, फिर आक्रामक हो गये, ''मुझे सिर्फ अपने घर से मतलब है। तेरे साथ लड़के भी काम कर रहे हैं। इन के साथ तू नाचती और गाना गाती है। कल के दिन

कुछ ऊँच–नीच हो गया, तो हमें मुँह छिपाने को जगह नहीं मिलेगी। ....लड़की की लाज मिट्टी का सकोरा होती है।''

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 32)

(7) उनके नाप नोट करने के दौरान वर्षा ने बता दिया कि जैसे समुद्र के हृदय में बड़वानल जला करता है, वैसे ही उसके भीतर पिता का आदेश धधक रहा है।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 33)

यहाँ वर्षा अपने पिता के नाटक के प्रति आक्रोश को व्यक्त करने में उपरोक्त सूक्ति का आश्रय ले रही है। वर्षा 'अभिशप्त सौम्यमुद्रा' नाटक में अभिनय करती है, और अपनी भावनाओं की अभिव्यक्ति अधिक गहराई से करती हुई कहती है–

(8) मयंक दत्त से गुलदस्ता लेने के बीच 'यह कुसुम स्तवक नहीं, मेरी कामनाओं का इंद्रधनुष है' कहते हुये वह हमेशा उसे 'मास्क' कर लेती थी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 35)

नाटक में जब कवि मयंकदत्त की मृत्यु हो जाती है तो सौम्यदत्ता दुखी होकर विष पी लेती है इसी तथ्य की अभियक्ति निम्नांकित सूक्ति के मध्यम से लेखक ने की है–

(9) 'ओ मेरे अभिशप्त सपने, खिलने के लिये मुँहबंद कलियों में स्फुरण हुआ ही था कि डूबती हुई रश्मियाँ मुर्झाने का संदेश ले आयीं' कहते हुये वह विषपात्र एकदम पी जाती थी।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 36)

वर्षा लखनऊ में एक नाटक करने जाती है और उसे वहाँ नाटक की सफलता पर काफी प्रशंसा भी मिलती है। इसी की अभिव्यक्ति यहाँ लेखक ने सफलतापूर्वक की है–

(10) नाटक के बारे में रायें अलग–अलग थीं। पर निर्देशन ऊँचे स्तर का है, इस बारे में सब सहमत थे। एक ने वर्षा में 'ऊँची संभावनायें' देखी थीं, दूसरे ने उसके 'संवेदनशील अभिनय को प्रदर्शन का प्राण' माना था और तीसरे ने प्रमाणपत्र दे दिया था– 'शाहजहाँपुर की मुमताज पर लखनऊ को भी नाज है।'

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 73)

वर्षा की मिस दिव्या कात्याल शाहजहाँपुर से वापस लखनऊ जा रही हैं अतएव उनकी प्रशंसा में डॉ. सिंहल एवं छगनलाल जी की प्रशंसोक्ति का लेखक ने इस प्रकार वर्णन किया है–

(11) डॉ. सिंहल और छगनलाल जी का पूरा परिवार दिव्या को विदा देने के लिये आया था। ''मिश्रीलाल डिग्री कॉलेज का स्वर्णिम अध्याय समाप्त हो गया।'' छगनलाल जी ने भाव भरे स्वर में घोषणा की, ''लेकिन जिस पौधे को आपने सँवारा है, वह फलते–फूलते हमें हमेशा सुगंधि देता रहेगा।''

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 87)

वर्षा अपने परिवार के सदस्यों की इच्छा के विरुद्ध नाटकों में अभिनय करने के लिये दिल्ली आ जाती है। अतः उसके पिता वर्षा को पत्र लिखकर अपनी मनःस्थिति से परिचित कराते हुये संतान का कर्तव्य बता रहे हैं–

(12) कुछ महीनों बाद आखिर शर्माजी का अन्तर्देशीय आ ही गया। कविकुल–गुरु की परम्परा में आरम्भ ही उपमा से हुआ था, 'संतान कमान से छूटा हुआ तीर है, जो कभी प्रत्यावर्तन नहीं करती, ऐसा वाङ्मय में कभी दृष्टिगत नहीं हुआ।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 112)

आदित्य फिल्म अभिनेता हैं, वे जब दिल्ली में नाटकों के अभिनेता थे, उस समय को याद करते हुये वे कहते हैं–

(14) पिता आवेश में आकर 'रघुवंश' का उद्धरण देने लगे, "राजा दशरथ के समान अब मेरी दशा प्रातःकाल के उस दीपक जैसी हो गयी है, जिसका तेल चुक गया हो और जो बस बुझने ही वाला हो।"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 499)

वर्षा अपनी बहन के विवाह में पूर्णतया सहयोग करती है। जिससे वर्षा के पिता उसे आशीर्वाद देकर अपनी अभिव्यक्ति को सफल बना देते हैं–

(15) बारात की विदा के साथ पिता की आँखों में दो आँसू आ गये, "सिलबिल, तुमने झल्ली को उबार लिया........." उन्होंने रुँधे स्वर में कहा, "जैसे विश्वजित यज्ञ के बाद रघु को चारों लोकों का पुण्य मिला था, वैसे ही तुम्हें मिले बेटी........"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 501)

वर्षा पर सिने–पत्रिकायें तरह–तरह के अश्लील आरोप लगाती हैं। उसी की प्रतिक्रिया स्वरूप वर्षा के पिता अपने दुःख की अभिव्यक्ति निम्नलिखित सूक्ति के माध्यम से करते हैं–

(16) जब पंक–प्रवाह अपने चरम तक पहुँचा, तो पिता का पत्र आया, कविकुल गुरु ने लिखा है, 'सीता पर लगाये हुये भीषण कलंक की बात सुनकर राम का हृदय वैसे ही फट गया, जैसे घन की चोट से तपाया हुआ लोहा फट जाता है।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 556)

वर्माजी ने कुछ प्रसंगों में सूक्तियों का शैली की दृष्टि से सूत्रात्मक प्रयोग किया है। प्रसंग का आरम्भ एक सूक्ति से होता है, तथा उसकी व्याख्या के रूप में प्रसंग प्राप्त घटना की चर्चा होती है। सूत्रवृत्ति शैली का यह रूप प्रसंग को एक गरिमा तथा प्रमाणिकता से युक्त कर देता है। उसमें शास्त्रीय स्पर्श आ जाता है। वर्माजी की भाषा में से कुछ प्रसंग इस प्रकार हैं –

(17) "जीवन–चक्र चलता रहता है।" पिता बोले, "दुःख के काँटे उगते हैं। फिर उल्लास के अंकुर फूटने लगते हैं। कवि कुलगुरु ने कहा है कि एक ज्योति का बुझना और दूसरी का उभरना–

यही जीवन का नियम है।''

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 286)

(18) ''कर्तव्य और भावना का द्वंद्व है'' वर्षा उसे सीधे देखती है। ''अंतरात्मा को जिलाये रखना चाहती हूँ, तो मनोरम कामना का संहार होता है। मन की ऊष्मा को आँचल की ओट देती हूँ, तो............''

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 222)

(19) 'यह ईश्वर का घर है। यहाँ कामना की चीत्कार मना है।'' वर्षा पीठ फेरकर दृढ़ता से बोली। ''अनुराधा, बार–बार ईश्वर का नाम दुहराकर तुम जिन कलियों की चटख अनसुनी करना चाहती हो, उन्होंने मेरे मन में नंदन–कानन की सुगंध भर दी है।''

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 67)

(20) ''यह एक कलाकार की दूसरी को श्रृद्धांजलि है।'' शायद कवि भी कुछ तनाव में था।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 42)

(21) ''ऐसा कैसे कहा जा सकता है ? उसने दिव्या के समक्ष आपत्ति की, ''मैं हल्की–फुल्की भूमिकायें भी करना चाहती हूँ।'' ''हर कलाकार का चरित्र निरूपण उसकी शरीर–रचना, उसके व्यक्तित्व द्वारा निर्धारित होता है। उसकी भीतरी–बाहरी प्रकृति में कुछ ऐसे तत्व होते हैं, जो उसे सुख या दुःख जैसे विरोधी मनोभावों के साथ जोड़ना आसान एवं सहज बना देते हैं। पर मैं तुम्हारी इस आकाक्षा से असहमत नहीं कि तुम हल्की–फुल्की भूमिकायें भी करना चाहती हो।''

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 82)

(22) डॉक्टर अटल अंग्रेजी में भड़के, ''तुम चंद्रमुखी बनने की कोशिश करती हुई पारो लग रही हो– जबकि तुम्हें कॉक–टीजर बनना है।''

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 98)

(23) छगनलालजी ने गर्व से घोषणा की, ''वर्षा कॉलेज का अभिमान है।''

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 62)

(24) ''डबलरोल आत्मरति की पुष्पशैया है।'' हर्ष ने उसे छेड़ा।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 460)

(25) इस विशिष्ट पीड़ा में ऐसी क्या बात है ? दुख व्यक्ति में गंभीरता, गहराई और गरिमा लाता है। दुख व्यक्ति का आध्यात्मिक परिष्कार कर देता है।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 297)

(26) अब रमन के स्वर में दर्प की रंगत आ गयी, ''हिचकॉक की यह धारणा कि अभिनेता मवेशी है, बिल्कुल सही है। मैं इसमें थोड़ा संशोधन करते हुये कहना चाहूँगा कि उन्हें विनीत मवेशी

होना चाहिये, ताकि चरवाहा अपनी मनपसंद दिशा में उसे हाँक लगा कर ले जा सके।'

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 427)

(27) "घर में विरोधी विचार धारा के साथ सह–अस्तित्व युवा पीढ़ी के लिये हमेशा चुनौती रही हैं" अनुभवी राजनीतिज्ञ के समान वर्षा बोली, "तुम जाते ही लिकर–केबिनेट में बोतलों के पीछे छिपा दो। आगे क्राकरी लगा दो। ताला लगाकर चाबी झुमकी को दे दो। जब तक दद्दा हैं, 101 'सिलवर सेंड' गुजरात बना रहेगा।"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 498)

वर्माजी की सूक्तियों के प्रयोग में एक प्रमुख विशेषता यह है कि यहाँ पर उन्होंने वर्षा के पिता के मुँह से जितना सूक्तियों का प्रयोग करवाया है वे सभी संस्कृत के महाकवि कालिदास के विभिन्न संस्कृत ग्रंथों से उद्धृत हैं। क्योंकि वर्षा के पिता स्वयं संस्कृत के अध्यापक हैं अतः उनके मुँह से इनका प्रयोग उचित ही लगता है। बाकी सूक्तियाँ अंग्रेजी, उर्दू के किसी ग्रन्थ से हैं अथवा स्वयं लेखक द्वारा सृजित हैं। इसमें दो राय नहीं कि सूक्तियों के प्रयोग ने 'मुझे चाँद चाहिये' की भाषा को गरिमा दी है और वाक्यात्मक शैलीय उपकरणों को एक सौन्दर्य से भर दिया है। इनके प्रयोग से चिन्तन का पक्ष भी उभरा है जो उपन्यास को एक वैचारिक गहराई देता है।

वाक्य बंध :

वाक्य रचना से ऊपर का स्तर वाक्य बंध का है। अनेक वाक्यों का समूह मिलकर अभिव्यंजना की दृष्टि से जब एक इकाई का रूप धारण कर लेता है, तब वह वाक्यबंध कहलाता है।(1) वस्तुतः वाक्यबंध का स्तर ही भाषा विज्ञान और शैली विज्ञान का भेदक आधार है। भाषा विज्ञान की दृष्टि से वाक्य भाषा की चरम सीमा है। वह वाक्य के अन्तर्गत भाषिक अंगों के पारस्परिक सम्बन्धों का विवेचन करता है। यह कार्य वाक्यबंध के स्तर पर होता है। वाक्यबंध के वाक्यों का एकदूसरे के साथ भी सम्बन्ध होता है, तथा कुल मिलाकर भी उनमें एक समग्रता पायी जाती है। यह समग्रता ही प्रधान वस्तु है। शैली विज्ञान इस समग्रता में पर्यवसित होने वाले वाक्य–सम्बन्धों का अध्ययन करता है। इस दृष्टि से वाक्यबंध के स्तर पर अनुच्छेद और गीत शैली विज्ञान के विषय हैं।

सुरेश कुमार जी ने अपने 'वाक्यबन्ध संरचना तथा साहित्यिक व्याख्या' नामक निबन्ध में भी प्रोक्ति पर 'वाक्यबन्ध' के नाम से विचार किया है। इस निबन्ध में उन्होंने कहा है कि वाक्यबंध की परिभाषा पाठ के अभिव्यक्ति पक्ष से भी दी जा सकती है और वस्तु पक्ष से भी। (भाषागत संरचनावाद जो पाठ के अभिव्यक्ति पक्ष से सम्बन्धित हैं) के अनुसार वाक्यबन्ध एक ऐसी संघटना है जो स्वयं किसी का घटक नहीं है। इसकी सीमायें आकार और नियमों की संख्या की दृष्टि से बँधी हुई नहीं हैं। एक अनुच्छेद या छंद अथवा उसके तुल्य कोई अंश वाक्यबन्ध की इकाई होता है जिसे हम श्रव्य (मौखिक माध्यम) यति एवं अनुतान के एक विशिष्ट पैटर्न से और तदनुसार दृश्य

1. शैली विज्ञान और प्रेमचन्द की भाषा–डॉ. सुरेश कुमार, पृ.सं. 175

(लिखित) माध्यम से छूटे हुये स्थान से पहचान सकते हैं। यह द्रष्टव्य है कि इन लक्षणों का सह सम्बन्ध पाठ की तर्कमूलक और लयमूलक अन्विति से होता है। साहित्यिक संरचनावाद (जिसका सम्बन्ध पाठ के वस्तुपक्ष से है) के अनुसार वाक्यबंध एक स्वनिष्ठ आन्तरिक अन्विति तथा सामंजस्य होता है।[1] अपने द्वारा दी गयी इन दोनों परिभाषाओं तथा संरचनावाद को उन्होंने एक–दूसरे का पूरक ही माना है। स्पष्ट कहा गया है कि ये दोनों परिभाषायें परस्पर विरोधी न होकर परिपूरक हैं।

इस सन्दर्भ में वे आगे कहते हैं कि 'यह एक अर्थमूलक प्रकार्य व्यवस्था है एक ऐसी व्यवस्था है जिसके प्रकार्य को वाक्यरूप की दृष्टि से न समझ कर अर्थतत्व की दृष्टि से समझना उचित होगा।[2] तदनुसार वाक्य–बन्ध को आकार के आधार पर परिभाषित न कर प्रकार्य के आधार पर परिभाषित करना चाहिये।

अनुच्छेद :

अनुच्छेद व्यवस्था के मूल में तीन प्रवृत्तियां कार्य कर रही होती हैं तार्किकता, शारीरिक सुविधा, और लय निष्पत्ति।[3] पहली दो प्रवृत्तियां प्रधान रूप से शास्त्रीय गद्य में पाई जाती हैं, तथा तीसरी प्रवृत्ति ललित गद्य में मिलती है। तार्किकता से प्रेरित अनुच्छेद व्यवस्था का प्रयोग वहाँ होता है जहाँ एक विषय के विभिन्न पक्षों का प्रतिपादन करना होता है। एक पक्ष का प्रतिपादन एक अनुच्छेद में होता है, तथा इस प्रकार विषय का पूरा बिम्ब बन जाता है। अन्य प्रसंगों में लेखक प्रधान रूप से शारीरिक सुविधा से प्रेरित होकर अनुच्छेदों का विभाजन करता है। लंबे–लंबे अनुच्छेदों को पढ़ना पाठक के लिये श्रम साध्य होता है, अतः लेखक एक लम्बे अनुच्छेद को अनेक छोटे अनुच्छेदों में विभक्त कर देता है। परन्तु यह खंडीकरण तार्किकता को पूर्ण उपेक्षित नहीं कर देता। अपितु उसे साथ लेकर ही चलता है। इन दोनों प्रकारों को हर्बट रीड ने निर्जीव अनुच्छेद व्यवस्था कहा है। इसके विपरीत उन्होंने सजीव अनुच्छेद व्यवस्था वहाँ मानी है, जहाँ वह लय निष्पत्ति के द्वारा प्रेरित होती है।[4] लय प्रधान अनुच्छेदों के वाक्य एक दूसरे से सम्बद्ध होते हैं। यह संबद्ध श्रृंखला सुस्पष्ट होती है। इस प्रकार, सारा अनुच्छेद एक इकाई मालूम होता है। वह संगठन कलात्मक होता है। तार्किकता और शारीरिक यांत्रिकता प्रधान होने से निर्जीव प्रतीत होती है, और इसके विपरीत लय प्रधान अनुच्छेद व्यवस्था कलात्मक होने से सजीव प्रतीत होती है।

वस्तुतः अनुच्छेद ही गद्यलय की प्रथम स्वतंत्र और पूर्ण इकाई है।[5] कलात्मक दृष्टि से लय प्रधान अनुच्छेद व्यवस्था का अध्ययन अपेक्षित होता है।

---

1. डॉ. सुरेश कुमार, शैली विज्ञान, पृ.सं. 224
2. डॉ. सुरेश कुमार, शैली विज्ञान, पृ.सं. 114
3. हर्बड रीड 'इंगलिश प्रोज स्टाइल', पृ.सं. 52
4. हर्बड रीड 'इंगलिश प्रोज स्टाइल', पृ.सं. 62
5. हर्बड रीड 'इंगलिश प्रोज स्टाइल', पृ.सं. 59

वर्माजी की भाषा में अनेक स्थानों पर लयप्रधान अनुच्छेद व्यवस्था पाई जाती हैं। यही विशेषता वर्माजी के निम्नलिखित अनुच्छेद में पायी जाती हैं–

(1) मिस कत्याल ने मिश्रीलाल डिग्री कॉलेज के इतिहास में भाव पक्ष और कलापक्ष .... दोनों दृष्टियों से नया, स्वर्णिम अध्याय जोड़ा था। वे खूब गोरी और आकर्षक थीं। कभी चूड़ीदार–कमीज पहनकर लावण्यमयी युवती बन जाती कभी लहराते पल्लू वाली साड़ी बाँधकर गरिमामय महिला। कभी बालों की दो चोटियाँ पीछे डोलतीं कभी बड़ा सा जूड़ा बन जाता। वेश कोई भी हो, लेकिन जैसे लक्ष्मी के साथ समृद्धि चलती है, वैसे ही अपने विषय का अधिकार उनके साथ–साथ चलता था। कॉलेज की वह अकेली अध्यापक थीं, जिनके हाथों में नोट्स की कॉपी नहीं देखी गयी। मिस कत्याल जब कॉलेज के गलियारों में चलती, तो विद्यार्थी समुदाय की निगाहों से सम्मान की रेड कार्पेट बिछती जाती।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 13)

उपरोक्त अनुच्छेद में सर्वप्रथम मिस कल्याल के मिश्रीलाल डिग्री कॉलेज में आने पर होने वाले परिवर्तन का वर्णन किया गया है। उसके पश्चात उनके रूप–सौन्दर्य तथा वेशभूषा का वर्णन मिलता है। बाद में उनके विषय के अधिकार का, तत्पश्चात विद्यार्थी समुदाय से मिलने वाली सम्मान भरी निगाहों का वर्णन किया गया है।

वर्माजी के निम्नलिखित अनुच्छेद में भी एक तारतम्य पाया जाता है–

(2) मध्य दिसंबर के दिन थे। खुली खिड़की से क्षत–विक्षत चाँद दिखायी दे रहा था....... उजाला, ठंडा। आसपास गहरी नीरवता थी। हवा का हल्का–सा झोंका आया, तो किताब के पन्ने पलट गये। यह सौम्यमुद्रा और मयंक के बीच का दृश्य था। वह बोलने लगी, "मयंक, मेरे जीवन को निपट अंधकार बनाकर, चले गये तुम।....... तुम तो हमारे वंश का इतिहास लिखने आये थे। उस वंश को बचाने के लिये तुमने अपने प्राणों की आहुति दे दी......कितने सपने देखे थे हमने साथ–साथ ....अब क्या होगा उनका ?

प्रेत बनकर विकराल गिद्धों की तरह मेरी काया नोच–नोचकर खायेंगे। तुम्हारे विछोह की पीड़ा के दंश के साथ वे सुलगते अंगारे–सी दहक उठेगी....... आठों पहर मेरी भावना को झुलसायेंगी.......... मैं मूर्तिमान तुम्हारा समाधिलेख हूँ मयंक।.......... तुम्हारे बिना मेरी सार्थकता कैसी...... "और एक नन्हा–सा आँसू उसके कपोल पर बह आया।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 36)

उपरोक्त अनुच्छेद में पहले सर्दियों के समय का वर्णन किया गया है, फिर चाँद एवं शांतिपूर्ण वातावरण का। तत्पश्चात् हवा चलने पर नाटक के पन्ने पलट जाने का, फिर दृश्य को पढ़ने पर वर्षा को जो भावुकता की अनुभूति हो रही है, उसका वर्णन किया गया है।

निम्नलिखित गद्य अनुच्छेद भी गद्यात्मक लय का उत्कृष्ट नमूना है–

(3) उजली चाँदनी के नीचे सब कुछ ठहरा हुआ था। वर्षा का जी चाहा, वह खुद भी ठहर जाये। इस अनुभूति को कहीं गहरे संजो ले। दृष्टि की सीमाओं पर दुनियां सिमट–गयी सी लगती थी। रेत के उजले विस्तार में और असमतल ढूहों के बीच जैसे वही दो चेतन प्राणी थे। शेष बस मिथ्या था......... किसी पुराने जन्म की स्मृति की तरह। इस एक क्षण अपने बाहरी निजी संसार का भान भी अवास्तविक लगा।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 305)

उपरोक्त अनुच्छेद में वर्माजी ने सर्वप्रथम रात्रि होने से चाँदनी का वर्णन किया है। फिर वर्षा के मन की इच्छा का, तत्पश्चात् दृष्टि सीमा का। फिर वह रेत और अपने तथा सिद्धार्थ के विषय में सोचती हैं तथा सभी कुछ उसे मिथ्या लग रहा है। इसमें एक सूत्रता में वाक्य इस तरह पिरोये गये हैं कि सम्पूर्ण दृश्य दृष्टि के आगे साकार हो उठा है। व्यक्ति सहज ही उसकी कल्पना में खो जाता है।

एक और अनुच्छेद इस दृष्टि से उल्लेखनीय है–

(4) चारुश्री खिलखिलायी। उन्मुक्त हँसी थी जैसे मुद्दत से बंद पंछी को नीले–नीले बादलों के बीच यकायक मुक्त किया गया है। और उसने बंदूक से छूटी गोली की तरह निर्बाध उड़ान भरी हो। हँसी धीरे–धीरे थमी तीन–चार अवस्थाओं में। पर उसकी छाया बनी रही।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 268)

यहाँ चारुश्री की हँसी का वर्णन क्रमशः पूरे अनुच्छेद में किया गया है।

निम्नलिखित अनुच्छेद में वर्माजी ने वाक्यों का वर्णन इस प्रकार एक सूत्रता में पिरोकर किया है कि सम्पूर्ण दृश्य आँखों के सामने साकार हो उठा है–

(5) दोपहर ढलने को थी, आकाश में बादल थे। प्रकाश ऐसे मद्धिम हो रहा था, जैसे पर्दों से छनकर आ रहा हो। खाई में एक कोयल कूकी और उसकी सुरीली गूँज आसपास भर गयी। सिलबिल को लगा, जैसे यह उसकी विकराल, कुरूप जिन्दगी के लिये सौंदर्य के साथ एकाकार हो जाने का आह्वान है। छत की मुंडेर पर हाथ रख वह नीचे दखेती रही......... क्या अंतिम घड़ी आ गयी है ? वह रीते आँचल की कचोट के साथ विदा ले ले ? क्या उसके बाकी बचे जीवन में सौंदर्य के साथ एकाकार हो जाने की आशा है ? क्या वह जून तक का अवसर लेकर देखे ?

आँखों में आये एक नन्हें आँसू के साथ उसने महसूस किया, वह मरना नहीं चाहती। अभी भी उसके भीतर उम्मीद के दिये की टिमटिमाहट है..........

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 79)

पहले अनुच्छेद में वातावरण का वर्णन किया जा रहा है, दूसरे अनुच्छेद में कोयल की गूँज एवं वर्षा के मन में उत्पन्न होने वाली आशा का वर्णन किया गया है तथा तीसरे अनुच्छेद में

वर्षा के भावुक होकर आशान्वित होने का वर्णन किया गया है। इस खंड का प्रभाव दृश्यात्मक है।

निम्नलिखित अनुच्छेद भी इसी प्रकार का है–

(6) नाट्यदल के लोगों में सबसे पहले भेंट हुई मिट्ठू से। पहुँचने के पहले दिन वर्षा दिव्या के सुसज्जित ड्राइंगरूम में सोफे पर अधलेटी नाट्य की अपनी प्रति पढ़ रही थी और संवाद के कुंजी–शब्दों के नीचे पेंसिल से लकीरें खींचती जाती थी। पृष्ठभूमि में स्टीरियो पर धीमा सितार चल रहा था। तभी बाहर अहाते में कार रुकने की आवाज सुनायी दी। कुछ क्षणों बाद कुर्ता–पाजामा में एक युवक सहज भाव से अंदर घुसा। वर्षा ने 'नमस्ते' की तो वह 'हलो' के साथ सामने रुका।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 68)

यहाँ पर सर्वप्रथम मिट्ठू से भेंट के दृश्य का बहुत ही तारतम्य के साथ वर्णन किया गया है। पहले तो मिट्ठू से भेंट की बात यहाँ की जा रही है, फिर वर्षा के नाटक पढ़ने की, तत्पश्चात् वर्षा के द्वारा संवाद के कुंजी–शब्दों को आउट लाइन करने की बात की जा रही है। फिर पृष्ठभूमि का वर्णन तत्पश्चात कार रुकने की आवाज सुनायी देती है। फिर एक युवक कुर्ता–पाजामा में अंदर आता है। तत्पश्चात् उन दोनों के आपस में परिचय करने की बात का वर्णन यहाँ किया गया है।

यहाँ पर अपने विवेच्य उपन्यास में मैंने जिन अनुच्छेदों को चुनकर प्रस्तुत किया है। वे सभी ललित गद्य के नमूने लगते हैं। अगर उनका विवेचन किया जाये तो उनमें एक अन्तर्लय गुँथी हुई मिलेगी। यों तो भाषा की दृष्टि से हमारा विवेच्य उपन्यास लयात्मक अनुच्छेदों की एक मंजूषा है। इस लयात्मकता तथा तारतम्य से पूर्ण वाक्यबंधों, उनसे निर्मित अनुच्छेदों के कारण पूरा उपन्यास लयात्मक वाक्यीय शैली उपादानों से सम्पन्न हो गया है। इसकी शैली गद्यात्मक गीत–सी लगती है।

गीत

वाक्य बंध के स्तर पर गीत का भी शैलीगत उपकरण के रूप में प्रयोग किया जा सकता है। वर्माजी के उपन्यास में गीत का शैलीय उपकरण के रूप में प्रयोग हुआ है। गीत द्वारा अभिव्यंजकता की निष्पत्ति हुई है। अभिव्यंजकता की दृष्टि से गीतों का प्रयोग उन्हीं स्थलों पर हुआ है जहाँ पात्र को अपनी मानसिक स्थिति की व्यंजना अभीष्ट है। वह परोक्ष ढंग से अपने भावलोक की झाँकी दिखाता है, क्योंकि अपने आशय का स्पष्ट कथन वह नहीं कर सकता या करना नहीं चाहता। ऐसे स्थलों पर गीत एक शैलीय उपकरण बनकर आया है जिसमें व्यंजना तथा भावात्मकता का वैशिष्ट्य मिलता है।[1] साथ ही वस्तु स्थिति के स्पष्टीकरण में भी गीत से सहायता ली गयी है।

वर्माजी ने अपने इस उपन्यास में स्थान–स्थान पर कई नाटकों का वर्णन किया है और

1. शैली विज्ञान और प्रेमचन्द्र की भाषा, डॉ. सुरेश कुमार, पृ.सं. 179

इन्हीं नाटकों के पात्रों द्वारा अभिनय करते समय 'गीतों' का प्रयोग किया गया है, जिससे इन नाटकों को गति मिली है। अतएव वर्माजी ने पूरे उपन्यास में गीत को शैलीय उपकरण के रूप में प्रयुक्त किया है। इसलिये हमारे प्रतिपाद्य उपन्यास में गीत अन्तर्वस्तु बनकर आये हैं।

जब मिश्रीलाल डिग्री कॉलेज में संस्थापक–दिवस मनाया जाता था उस समय एक कविता वहाँ के संस्थापक सेठ मिश्रीलाल की प्रशंसा में पढ़ी जाती थी, यहाँ पर उस कविता को मंगलाचरण की संज्ञा दी गयी है। जिस प्रकार से किसी नाटक के प्रारम्भ में किसी देवता की स्तुति की जाती है –

(1) संस्था–दिवस पर भाषण होते थे, जिसके प्रारम्भ में मंगलाचरण के समान यह कविता पढ़ी जाती थी,

'जीवन में मिश्री घोल गये तुम,
मिश्रीलाल पालरवाले।
जड़ता के फाटक खोल गये तुम,
ज्ञान–जड़ी झालरवाले।'

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 13)

(2) वर्षा अपनी अंग्रेजी की अध्यापिका मिस दिव्या कत्याल के यहाँ पहुँचती है तो वहाँ ये दो गाने रिकॉर्ड में बज रहे थे–

देखते–देखते 'अभी तो मैं जवान हूँ' की तान लिुप्त होने के साथ रिकॉर्ड नीचे खिसक गया और अपरिचित वाद्यों के साथ 'हार्ड डेजनाइट' शब्द बाहर उभरने लगे।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 20)

(3) वर्षा की मिस दिव्या कत्याल अंग्रेजी कवि वर्ड्सवथ की यह कविता कुछ समय पहले क्लास में सुनाती हैं, उसका वर्णन लेखक ने अपने उपन्यास में किया है–

'थ्री इयर्स शी ग्रियु इन सन एंड शॉवर
दैन नेचर सैड, ए लवलियर फ्लॉवर
ऑन अर्थ वाज नेवर सीन.........'

कुछ समय पहले ये पंक्तियाँ सुनाते हुये मिस कत्याल ने बताया था, वर्डसवर्थ ने लूसी को इस कविता में कालजयी बना दिया था।

(4) वर्षा के सामने उसका सहपाठी कमलेश 'कमल' अपनी भावनाओं की अभिव्यक्ति करना चाहता है तो वह अपनी प्रेम की अभिव्यक्ति इस कविता के माध्यम से करता है और अपनी सहपाठी वर्षा को भेंट में कविता दे देता है–

मन की गहनतम सतह पर भावविभोर होते हुये वर्षा पढ़ती रही–

'प्यारी–प्यारी कितनी तुम्हारी मुद्रायें प्रिये,

सौम्यमुद्रा, पोर–पोर मेरे मनमोर हो।।
आप रंगमंच पै चुराय लियो मेरा चैन,
चित्त झकझोर, ओ सलोने चितचोर हो।।
जहाँ–जहाँ देखूं वहाँ दीख पड़े तेरी छवि,
सूरजमुखी रबी की, चाँद के चकोर हो।।
मिश्रीलाल कॉलेज के प्रांगण की विद्युत्लता
शाहजहाँपुर के हिरदय की हिलोर हो।।"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 42)

चूँकि वर्षा 'अभिशप्त सौम्यमुद्रा' नाटक में 'सौम्यमुद्रा' का अभिनय करती है, उसी से प्रभावित होकर कमलेश वर्षा को यह कविता समर्पित करता है जो उसकी प्रेमाभिव्यक्ति को स्पष्टतः व्यक्त कर देती है।

(5) किसी बालक पर उसके पारिवारिक वातावरण का अत्यधिक प्रभाव पड़ता है। चतुर्भुज का जब जन्म हुआ तो उनका परिवार तीन पीढ़ियों से इंद्र टूरिंग थिएटर का संचालक था, अतएव वे अपने पिता के ओजस्वी स्वर से ओतप्रोत इस कविता से आनंदित होने लगे–

"बस गये द्वारका में मोहन वृंदावन आना छोड़ दिया।
बंशीधर क्यों बंशीवट पर वंशी का बजाना छोड़ दिया।
वे सपनों की सी बातें थी जो अपनों को तुम भूल गये।
वेदना सही नहीं जाती है तुम छेद हृदय में शूल गये।
तुम सच्चे प्रेमी बनते हो पर प्रेम निभाना छोड़ दिया......"

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 105)

(6) पिता के इस ओजस्वी स्वर का प्रभाव चतुर्भुज पर भी पड़ा, जिससे वे बचपन में ही संवाद अदायगी करने लगे। उनकी इसी कला का परिचय वर्माजी ने इस स्थल पर दिया है–

"जैसे ही मैं धरती पर आया,
मादर ने यमपुरी का टिकट कटाया।
जिस दाई ने दूध पिलाया,
उसको काल ने खाया।
वालिद ने पाला,
तो उनकी जान का निकल गया दिवाला।
किस्मत से एम.ए. का इम्तिहान दिया,
तो बीबी ने अदम को कूच किया।
रेलवे में जो नौकरी पायी,

तो सुबह–शाम रिश्वत खायी।''

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 105)

उपरोक्त गीत से चतुर्भुज की काव्य प्रतिभा का भी परिचय मिलता है।

(6) चतुर्भुज जब चौदह वर्ष के हुए तो उन्हें मजनू की भूमिका मंच पर निभाना पड़ी, इसी भूमिका का आरंभ उन्होंने निम्नलिखित गीत से किया–

''इंकार की अदा है इक,
इकरार बहुत हैं।
सच तो ये है कि,
प्यार में आजार बहुत हैं।
फरहाद जूये शीरी में,
डूबा तो क्या किया।
यां डूबने की चाह में,
तैयार बहुत हैं...... ।''

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 105)

उपरोक्त गीत में चतुर्भुज ने मजनू के प्रेमाभिनय में इस गीत में बड़े ही सुन्दर ढंग से अपने प्रेम की अभिव्यक्ति की है।

(7) वर्माजी ने यहाँ एक ऐसे गीत को भी स्थान दिया है जिसे वामपंथी धारा के शशांक के हर प्रदर्शन में सारे कलाकार गाते हैं–

वामपंथी शशांक 'युगांतर' के संचालक थे और अपनी विचारधारा के अनुरूप सिर्फ प्रतिबद्ध मंचन करते थे। उनके हर प्रदर्शन की शुरुआत में सारे कलाकार मंच पर आकर सामूहिक रूप से 'ब्रेश्ट' की कविता 'ड्रामा का नग्मा' का पाठ करते थे,

''मैं हूँ नाटककार, दिखाता हूँ।
जो मैंने देखा है, देखा है मैंने।
कैसे इंसान को बेचा जाता है,
इंसानों के बाजारों में।
मैं वही दिखाता हूँ............. ।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 164)

(8) वर्षा एवं स्नेह खेमका जी से मिलने उनके यहाँ जाते हैं। वे अपने कालेज की साहित्यसभा के मंत्री रह चुके हैं और उसी समय की अपनी रची कविता को यहाँ सुना रहे हैं–

''एकबार अंबर में लगी नुमाइश भारी।
गीतकार को ईश्वर का आमंत्रण आया।

आओ स्वर के साधक, बेटे सरस्वती के।

तुमने कविता का प्रकाश जग में फैलाया''

प्रस्तुत गीत से खेमकाजी की काव्य–प्रतिभा का ज्ञान वर्षा एवं स्नेह जी को होता है।

(9) विवाह के समय हमारे यहाँ विभिन्न अवसरों पर गीत गाने की परंपरा रही है। यहाँ वर्माजी ने वर्षा के शादी के शगुन के अवसर पर गाये जाने वाले औरतों के गीत को उद्घृत किया है–

उसे घेरे औरतें ढोलक की थाप पर गा रही थीं...

'बन्ना मेरा रंग बिरंगा छैलों का सरताज''

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 85)

यहाँ पर वर्माजी ने इस गीत के माध्यम से विवाह की तैयारी को साकार कर दिया है।

(10) वर्षा फिल्म 'आकाशद्वीप' के अभिनय के समय एक बंजारन जुगनी से यह गीत सीखती है और उसी को अपनी अध्यापिका एवं मित्र दिव्या कत्याल को सुनाती है–

वर्षा ने जुगनी की अनुकृति में तान ली,

''मैं कब करूँ सोलह सिंगार ?

मुँह अंधेरे निकल जाना होता है मुझे।

जलती दोपहर तक पहुँचती हूँ भीड़भरे कुँयें पर।

दो घड़ों को भरते–भरते शाम ढल जाती है।

चाँद फीका होने लगा है घर पहुँचते–पहुँचते।

ओ पगड़ी वाले साजन, मैं कब करूँ सोलह सिंगार ?

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 314)

उपरोक्त गीत में एक पत्नी जिसे एक घड़ा पानी लेने के लिये सुबह शाम तक कितना कड़ा संघर्ष करना पड़ता है उसका पति उससे पूँछता है कि तू श्रंगार क्यों नहीं करती, तो वह बताती है कि सारा समय तो मेरा पानी भरने में बीत जाता है, मैं सोलह श्रंगार कब करूँ।

(11) जब चतुर्भुज दिल्ली में एन.एफ.डी.सी. में प्रशिक्षण हेतु इंटरव्यू देने आते हैं तो वे अपनी काव्य–क्षमता को प्रकट करते हुये एक विदा लेती दुल्हन की पीड़ा के भाव की अभिव्यक्ति करते हैं–

'रोयें खड़े दिलगीर हमारे गौने की तैयारी'

इसमें चतुर्भुज विदा लेती दुल्हन की पीड़ा को स्पष्ट कर रहे हैं।

(12) वर्षा एक फिल्म में बारिश का सीन कर रही है तो वह निम्नलिखित गीत के माध्यम से अपनी भावनाओं को अभिव्यक्ति देती है–

'भाभी मोरी पीली सारी, बेदर्दी तेरी पिचकारी' गीत के बोल टेप से उभरने लगे।

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 457)

(13) वर्षा अपने घर पर फिल्म 'मुक्ति' का गीत सुन रही है इस गीत के माध्यम से नायक का दर्द स्पष्ट हो रहा है–

"इस समुंदर में मौजें बिखरती रहीं।
कुछ तमन्ना–ए–रंगी निखरती रहीं।
ऐसे गुलजार जंगल में मारे गये..........'

(मुझे चाँद चाहिये, पृ.सं. 420)

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि प्रातिपाद्य उपन्यास में वाक्यात्मक शैलीय उपकरणों के अन्तर्गत व्याकरणिक कोटियों में व्यक्तिवाची नामाभिधानों के अन्तर्गत पात्रों की सार्थक नामाभिरचना का शैलीय दृष्टि से किया गया है। संज्ञा के विभिन्न रूपों, सर्वनाम, विशेषण, क्रिया, निपात्, वाक्य संरचना, शब्द क्रम, अन्विति, लोकोक्ति, सूक्ति, वाक्यबंध, अनुच्छेदों के विभाजन की दृष्टि से वाक्यात्मक शैलीय उपकरणों की दृष्टि से प्रस्तुत उपन्यास अत्यन्त समृद्ध है। लेखक की वाक्य संरचना अत्यन्त नवीन, रूढ़ि से हटकर और अभिव्यंजक गुणों से युक्त है।

प्रकरण – 6

उपसंहार

प्रकरण – 6

उपसंहार

अपने शोध प्रबन्ध को मैंने विषय प्रवेश सहित छह प्रकरणों में विभाजित किया है। शोध की दिशाओं पर विचार करते हुये भूमिका में यह संकेत किया जा चुका है कि प्रस्तुत शोध की प्रकृति एकायामी अथवा केन्द्रगामी है। इस शोध में मैंने सुरेन्द्र वर्मा के चर्चित उपन्यास ''मुझे चाँद चाहिये'' की भाषा संरचना का शैली तात्त्विक अनुशीलन प्रस्तुत किया है। इस अनुशीलन से ''मुझे चाँद चाहिये'' की भाषा संरचना के परिप्रेक्ष्य में लेखक की शैली की अनेक विध विशेषताओं का उद्‌घाटन हुआ है। इस उपन्यास ने छपते ही पाठक और समीक्षक वर्ग में हलचल मचा दी थी। उपन्यास के ढाँचे और भाषा–संरचना तथा प्रस्तुतीकरण शिल्प में लेखक ने एक ऐसे नवीन प्रतिमान को अपनाया है जो कुछ सीमा तक आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी के उपन्यास ''बाणभट्ट की आत्मकथा'' जैसा है।

इस उपन्यास में वर्षा वशिष्ठ जैसी एक महात्त्वाकाँक्षी नारी की जीवनगाथा है। नाट्यरंग और सिनेमा, साहित्य और पत्रकारिता, रूढ़ि और रूढिमुक्ति आदि सभी कुछ इसमें समेटा गया है। लेखक स्वभाव और कर्म से रंगकर्मी है, इसलिये इस उपन्यास की कथा–भूमि में नाट्यशैली का पुनरावर्तन स्वभाविक रूप से होता है। इसी शैली वैशिष्ट्य ने इस उपन्यास को नई भाषा–भंगिमा और शब्दों की नई व्यंजना दे दी है। इसलिये इस उपन्यास को विशिष्ट बनाने वाले तत्वों में जहाँ संघर्ष शीला एक नारी की जीवन्त गाथा है, वहीं इसकी भाषा भी अनेक खूबियों से पूर्ण है।

पहले प्रकरण में कथा भाषा की अवधारणा और उसके स्वरूप पर विस्तार से विचार किया गया है।

उपन्यास जीवन की गाथा है। इस गाथा को कैसे कहा गया है इसके दो पक्ष होते हैं– एक कहने का ढंग अर्थात् शैली और दूसरा उसकी भाषा।

कथा साहित्य में भाषा का स्वरूप कथाकार के व्यक्तित्व और उसकी दृष्टि पर आधारित होता है। प्रयोक्ता की दृष्टि कैसी है, वह भाषा के साथ कैसा ट्रीटमेंट करना चाहता है उसके उपन्यास की भाषा उसी प्रकार की हो जायेगी। वह अपने भाषा–स्रोतों का दोहन उसी दृष्टि से करेगा। अर्थात् कथा साहित्य में भाषा का प्रयोग अथवा उसका रचनात्मक दोहन प्रयोक्ता के दृष्टिकोण और उसके कथात्मक रूप पर निर्भर होता है। मसलन उपन्यास यथार्थवादी दृष्टि से लिखा गया है या आदर्शवादी दृष्टि से। फिर उपन्यास किस क्षेत्र से सम्बद्ध है ? सामाजिक, ऐतिहासिक, आंचलिक, ग्रामीण जीवन से संबद्ध अथवा शहरी जीवन पर आधारित है। फिर इसके पात्र किस वर्ग के हैं ? मध्यम वर्ग के, अभिजात वर्ग के, शहरी, बुद्धिजीवी या गँवई गाँव के। फिर उपन्यास की मुख्य समस्या क्या है ? पात्रों का आन्तरिक संघर्ष या बाह्य घटनाओं का घात–प्रतिघात? या अपने आदर्श, लक्ष्य पाने के लिये व्यक्ति की जद्दोजहद ? उपन्यास की भाषा इन्हीं से रूप ग्रहण करती है और उसकी शैली भी इसी से आकार लेती है। फिर, भाषा में बदलाव उसके प्रस्तुतीकरण

शिल्प के कारण भी आ जाता है। प्रत्यक्ष, परोक्ष, पत्रात्मक, डायरी अथवा आत्मकथात्मक प्रस्तुतीकरण शिल्प भी उपन्यास की भाषा के स्वरूप–निर्धारण में बहुत कुछ सहायक होता है।

उपन्यास की भाषा अत्यन्त लचीली, यथार्थपरक और अपने कथ्य को प्रेषित करने में सक्षम होती है। उपन्यास में भाषा का महत्त्व इतना अधिक समझा जाता है कि शैली से कभी–कभी हम भाषा का ही अर्थ समझ बैठते हैं। विभिन्न साहित्य रूपों के अनुसार भाषा की प्रकृति में परिवर्तन होता रहता है। विषय प्रवेश में उपन्यास और भाषा की प्रकृति पर इतना विचार करने के बाद उपन्यास और साहित्य की अन्य विधाओं की भाषा में क्या अन्तर होता है इस पर प्रकाश डाला गया है। साहित्य की अन्य विधाओं की अपेक्षा उपन्यास एक सशक्त विधा है। गीत काव्य की भाषा अत्यन्त भावाकुल और अत्यन्त वैयक्तिक आसंगों से पूर्ण होती है। कहानी का परिसर अत्यन्त लघु होने के कारण उसमें भाषा प्रसार की कम सम्भावना है।

महाकाव्य, नाटक, एकांकी, आख्यान काव्य की अपेक्षा उपन्यास में भाषा संप्रयोग की अपरिमित सम्भावनायें हैं।

उपन्यास और भाषा उपशीर्षक से इसी प्रकरण में उपन्यास में प्रयुक्त भाषा की अनन्त सम्भावनाओं पर प्रकाश डाला गया है। उपन्यास को एक भाषात्मक कला माना गया है। भाषा की सारी शक्तियाँ उपन्यास–रचना में कार्यरत रहती हैं। इसी कारण उपन्यास को विराट जीवन की स्वतन्त्र अभिव्यक्ति कहा गया है। उपन्यास में शब्द सौन्दर्य और भाव–प्रकाशन के अतिरिक्त वाक्य के स्थापत्य की गरिमा भी होती है।

आज के उपन्यास की भाषा पर यथार्थ जीवन का बहुविध दबाब है। डॉ. रामस्वरूप चतुर्वेदी के मत से आज के कथाकार को भाषा के स्तर पर दो तरह के संघर्षों से जूझना पड़ता है। उसे वर्णन भी करना है और आज के जीवन के जटिल अनुभवों को संप्रेषित भी करना है। इसलिये आज के उपन्यास की भाषा में कविता की सर्जनात्मक भाषा और गद्य की सामान्य वर्णन प्रधान भाषा दोनों का समन्वय स्थापित हो गया है। इसी कारण अब उपन्यास के बदलते रूपों में भाषा के बहुस्तरीय प्रयोग मिलते हैं। इस दृष्टि से आधुनिक उपन्यासों की भाषा के साथ–साथ गोदान आदि उपन्यासों की भाषा का एक संक्षिप्त सर्वेक्षण कर इस निष्कर्ष पर पहुँचा गया है कि प्रवाह रचनात्मक भाषा का आवश्यक गुण नहीं है। स्थिर तनाव की भाषा भी रचना की समूची क्षमता में सार्थक, गुणात्मक अन्तर उपस्थित कर सकती है। उपन्यास की भाषा में यथार्थ से मुठभेड़ की विचारोत्तेजक सम्भावनायें तो हो सकती हैं, पर उपन्यास मात्र की भाषा से यह माँग करना कि वह इन्हीं सम्भावनाओं को चरितार्थ करे एक गलत माँग होगी।

हिन्दी में प्रेमचन्द के बाद उपन्यास की भाषा को नये ढंग से गलाने का काम किया जैनेन्द्र ने। उनकी 'सुनीता' तथा 'त्यागपत्र' में इसके साक्ष्य हैं और इस स्तर पर 'शेखर एक जीवनी', 'नदी के द्वीप' और 'अपने अपने अजनबी' में भाषा का एक नवीन स्तर है। इन्हीं सब उपन्यासों की

भाषा–संरचना के संक्षिप्त उल्लेख से यह निष्कर्ष निकाला गया कि ''मुझे चाँद चाहिये'' की भाषा–संरचना वर्णन और संप्रेषण, वस्तु और संवेदना, गद्य भाषा और काव्य भाषा दोनों के बीच से होकर पाठक के सामने प्रस्तुत होती है।

''मुझे चाँद चाहिये'' की भाषा–संरचना और शैली तत्त्व के विश्लेषण के पहले विषय प्रवेश शीर्षक प्रकरण में प्रतिपाद्य उपन्यास का संक्षिप्त कथानक भी दिया गया है।

यह उपन्यास एक मध्यमवर्गीय परिवार की लड़की वर्षा वशिष्ठ की महत्त्वाकांक्षा की महागाथा है। वह एक रंगकर्मी के रूप में यश के चाँद को छूना चाहती है। इसी प्रयास में वह हर्ष और सिद्धार्थ से जुड़ती है। हर्ष अपने अहंकेन्द्रित व्यक्तित्व के कारण टूट जाता है और आत्महत्या कर लेता है। वर्षा उसकी याद के सहारे जीवन में आगे बढ़ने का संकल्प लेती है।

लेखक का उद्देश्य अपने इस वृहदाकार उपन्यास में असम्भव को पाने की आकाँक्षा से उद्वेलित वर्षा वशिष्ठ और हर्ष के बहाने रंगमंच तथा फिल्मों से जुड़े जीवन का चित्रण करना है। उपन्यास के प्रारम्भ में कालीगुला का जो उद्धरण दिया गया है वही इस उपन्यास रचना के पीछे विद्यमान प्रेरक सूत्र है। इस उद्धरण में कहा गया है अचानक मुझमें असम्भव को पाने की आकांक्षा जागी। अपना यह संसार काफी असहनीय है, इसलिये मुझे चन्द्रमा या खुशी चाहिये – कुछ ऐसा जो वस्तुतः पागलपन–सा जान पड़े।''

अमर उजाला में प्रकाशित इस उपन्यास की रचना–शैली के बारे में लेखक ने कहा है कि मैंने इसे रोचक शैली में लिखा है और इस रोचकता के लिये इसकी शैली में उसे कई तरह के प्रयोग करने पड़े हैं।

इन प्रयोगों की चर्चा करते हुये इस अध्याय में उन पर संक्षेप में प्रकाश डाला गया है। उपन्यास के ढाँचे को लचीला बनाते हुये लेखक ने उपन्यास में नाटक के तत्त्वों का समावेश किया है। लेखक की स्वतन्त्रता का उपयोग सूत्रधार जैसी टिप्पणियाँ करने में किया गया है।

इस दृष्टि से इस उपन्यास ने गोदान, मैला आंचल के बाद उपन्यास साहित्य में एक नया क्षितिज खोला है। इस नये क्षितिज का आधार इसकी भाषा संरचना और शैली की विशिष्टता है। यहाँ तक इस उपन्यास की कथा भाषा के स्वरूप निर्धारण के बाद शैली तात्त्विक अध्ययन की सीमायें निर्धारित की गयी हैं। प्रारम्भ में शैली और शैली विज्ञान पर प्रकाश डाला गया है।

शैली लिखने का एक ढंग है। यह रचना की एक पद्धति है। आधुनिक शैली विज्ञान यूरोप से आगत साहित्य के अध्ययन की एक प्रणाली है, यह रीति विज्ञान से सर्वथा पृथक है यद्यपि डॉ. विद्यानिवास मिश्र ने शैली विज्ञान को रीतिविज्ञान ही कहा है।

शैली विज्ञान में जिन भाषिक उपकरणों के सहारे किसी कृति का अनुशीलन किया जाता है प्रस्तुत प्रकरण में उन पर विस्तार से प्रकाश डाला गया है।

इस उपन्यास की भाषा–संरचना का ध्वनिमूलक शैलीय उपकरण, शब्द रूपात्मक

शैलीय उपकरण, अर्थगत शैलीय उपकरण और वाक्यात्मक शैलीय उपकरणों के आधार पर अनुशीलन किया गया है। इन सरणियों का स्वरूपगत अर्थ क्या है इस प्रकरण में संक्षेप में इन्हें दर्शाया गया है।

आखिर शैली वैज्ञानिक विश्लेषण का महत्त्व क्या है इस प्रकरण में इसका भी संकेत किया गया है। 'मुझे चाँद चाहिये' के पीछे लेखक की रचना दृष्टि क्या है, उसने उसका ढाँचा ऐसा क्यों बनाया, विधागत छूट लेते हुये इसकी शैली को नया आयाम देने की उसने कोशिश क्यों की इसका विवेचन करने के बाद शैली तात्त्विक अनुशीलन की उन सरणियों का उल्लेख किया गया है जिनके निष्कर्ष पर अपने प्रतिपाद्य उपन्यास के शैली वैशिष्ट्य का मैंने निरूपण किया है। शैली वैज्ञानिक अनुशीलन के लिये जिन मानकों का निर्धारण किया गया है वे ध्वनिमूलक शैलीय उपकरण, शब्द रूपात्मक शैलीय उपकरण, अर्थमूलक शैलीय उपकरण और वाक्यात्मक शैलीय उपकरण हैं। इन उपकरणों की परिभाषा, भेदों आदि का निरूपण तद् तद्–अध्यायों में किया गया है। इस रूपरेखा के साथ विषय प्रवेश नामक पहले प्रकरण में भूमिका प्रस्तुत करने के बाद अगले प्रकरणों में प्रतिपाद्य वस्तु का विस्तार से अनुशीलन किया गया है।

शैली और शैली विज्ञान क्या है, शैली वैज्ञानिक अनुशीलन के मानकों का निर्धारण तथा प्रतिपाद्य उपन्यास की रचना के पीछे लेखक को कौन–सी प्रवृत्तियाँ प्रेरित करती रही है, उसने ढाँचागत और शैलीगत इतनी छूट किन कारणों से ली इसका विवेचन करने के बाद अपने अनुशीलन के क्रम में प्रकरण–दो में ध्वनीय शैली उपकरणों के परिप्रेक्ष्य में प्रतिपाद्य उपन्यास का अनुशीलन किया गया है।

ध्वनि का अर्थ व भेद क्या हैं, ध्वनि के खंडीय और खंडेतर उपादान क्या हैं, इनकी संक्षिप्त विवेचना के बाद खंडीय ध्वनियों में लय, अनुकार ध्वनि समूह अनुप्रास, रीति, व्यक्ति वैशिष्ट्य सूचक ध्वनियों का विवेचन किया गया है। ये सभी शैलीय उपकरण मुझे चाँद चाहिये में पुष्कल रूप में मिलते हैं।

लय के विविध अर्थ देने के बाद प्रतिपाद्य उपन्यास में कथावस्तु और लय, लय के कलात्मक प्रयोग, गीतात्मक लय, गद्यात्मक टुकड़ों में लय, संवादों में आरोह अवरोह, अलंकारात्मक लय, लय और अनुकार ध्वनि समूह, रीति या वृत्ति, ओज, प्रसाद, माधुर्य गुणों की शैली में उपस्थिति और प्रयोग और अन्त में व्यक्ति वैशिष्ट्य सूचक भाषण ध्वनियों के निष्कर्ष पर 'मुझे चाँद चाहिये' की शैली का विवेचन किया गया है। इस विवेचन से यह निष्कर्ष निकलता है कि मुझे चाँद चाहिये का गद्य रूखा न होकर ललित गद्य का एक नमूना है।

प्रकरण–तीन में शब्द रूपात्मक शैलीय उपकरणों को प्रतिपाद्य उपन्यास में खोजा गया है।

शब्द रूपात्मक शैलीय उपकरणों में भावात्मक प्रत्यय, भावात्मक रूप विकार, नवनिर्मित

शब्द, शब्दालंकार, विशिष्ट शब्द समूह, पारिभाषिक शब्द, अभिजात शब्द, वेशभूषा सम्बन्धी शब्दावली, सौन्दर्य सम्बन्धी शब्दावली, भोजन सम्बन्धी शब्दावली, कला–संस्कृति सम्बन्धी शब्दावली, विदेशी शब्द, ग्राम्य शब्द प्रयुक्त किये गये हैं। इनके प्रयोग से शैली में विशिष्टता और भावाभिव्यक्ति में विविधता आ गयी है।

भावात्मक प्रत्यय लगाकर जिन शब्दों का प्रयोग किया गया है, उनके कारण शैली में सहजता आ गयी है। जैसे पुछल्ला, खुल्लम–खुल्ला, छुटकी, मुटल्ली, कुलच्छिनी, कुजात, सुपात्र आदि। इसी तरह भावात्मक रूप विकार युक्त शब्दों में रानी, बिटिया, बड़े, बेटा, राजा बेटे, पगले, ज्वेल, झल्ली, नैन, सौम्या आदि भावात्मक रूप विकार युक्त शब्दों के प्रयोग से जिन्हें इन नामों से संबोधित किया गया है उनके प्रति विशेष प्रेम झलकता है।

शब्द रूपात्मक शैलीय उपकरणों में नवनिर्मित शब्द भी आते हैं। इनके प्रयोग से 'मुझे चाँद चाहिये' की शैली में नयी दीप्ति आ गयी है। लेखक ने अपने कथ्य को विशिष्ट व्यंजना से युक्त करने के लिये कई नये शब्दों का निर्माण कर उन्हें प्रयुक्त किया है। ऐसे शब्दों में बौड़म–सी, पगली, छोकरी, तू–तड़ाक, कुड़बुड़ाई, मसला–तुसला, शब्द चितेरे, बीर–बहूटी–सा चेहरा, बंगलिया, मुलामियत, टिल–टिल करके, धज, विराजिये, बतियाते हुये, हँसी–ठट्टा, उमगी हुई आदि आते हैं। इनसे शैली का सौन्दर्य बढ़ गया है। इन बोलचाल के शब्दों के प्रयोग से भाषा की लोकधर्मी रंगत प्रकट हुई है।

शब्दालंकारों में कुछ का संकेत प्रकरण एक में किया जा चुका है। वहाँ ध्वनीय शैलीय उपकरणों में लयात्मकता के विवेचन में अनुप्रास के भेदोपभेद मिलते हैं। यहाँ पर श्लेषात्मक या द्विअर्थक शब्दों के प्रयोग में शोभाधायक धर्म निहित है। मेरा प्रतिपाद्य 'मुझे चाँद चाहिये' में अलंकृत प्रयुक्ति उतना नहीं है जितना शैलीय उपकरणों का विवेचन है। इसलिये अन्य अलंकारों उपमा, रूपक, अपह्नुति, उत्प्रेक्षा आदि का विश्लेषण अर्थगत शैलीय उपकरणों में किया गया है।

शब्द रूपात्मक शैलीय उपकरणों में सुरेन्द्र वर्मा ने अपने उपन्यास में विशिष्ट शब्द समूह का प्रयोग किया है। ऐसा करने से लेखक ने दो उद्देश्य सार्थक किये हैं। एक तो इससे शैलीगत विविधता आयी है, दूसरे उपन्यास में परिवेश निर्माण में सहूलियत हुई है। सन्दर्भ और प्रसंग की सटीकता के लिये लेखक ने अपेक्षानुसार पारिभाषिक, अभिजात, सौन्दर्य, कला–संस्कृति, वेशभूषा सम्बन्धी शब्दों के अतिरिक्त भोजन–सम्बन्धी और ग्राम्य शब्द समूह का प्रयोग किया है।

पारिभाषिक शब्दों के प्रयोग से विशिष्ट साहित्यिक प्रभाव की सृष्टि हुई है। ऐसे शब्दों में मंगलाचरण, वंदनवार, कलश, निरंकार नरोत्तम, दोहद, अशोक, हाल की स्थिति, त्रिशूल, भावोन्माद, भावतंत्र, ठूँठ, शल्य क्रिया, कोल्ड स्टोरेज, राजा, कायाकल्प, अग्निपरीक्षा भक्त, मधुर भाषिणी, देवि, कोमलांगी, कमान, प्रत्यावर्तन, वाङ्मय, मध्यकालीन, रम्य कामनियों, शत्रु–संहार, युद्धोन्मत्त, मधुरभाषिणीय आदि आते हैं।

अभिजात शब्दों की बहुलता से 'मुझे चाँद चाहिये' उपन्यास के अधिकतर पृष्ठ भरे हुये

हैं। इसमें जिस कला, संस्कृति, नाटक की पृष्ठभूमि पर पात्र और घटनाचक्र आवर्तन–विवर्तन करते हैं उसकी सजीव अभिव्यक्ति इसी जगत की शब्दावली द्वारा सम्भव थी। इसलिये लेखक ने बड़े परिमाण में संस्कृत ग्रन्थों से आगत अभिजात शब्दों के प्रयोग से अपनी शैलीय अस्मिता को सँवारा है। इसके बिना उपन्यास का वातावरण उभरता नहीं है।

वेशभूषा सम्बन्धी शब्दों के प्रयोग से पात्रों की अभिजात रुचि और उनकी सभ्यता के स्तर का पता चलता है। पात्रों के स्तर, रुचि के अनुकूल वस्त्रों के नाम और उनकी विशिष्टता से युक्त शैली ने इस उपन्यास को एक यथार्थ का रंग दे दिया है।

यथास्थान सौन्दर्य बोधात्मक शब्दावली के प्रयोग से शैली की रूप समृद्धि और सुरुचि का पता चलता है। लेखक का सौन्दर्य बोध नारी रूप चित्रण में अधिक जाग्रत हुआ है। सौन्दर्य के अधिकांश उपमान उसने संस्कृत से लिये हैं।

सांस्कृतिक शब्दावली के अन्तर्गत भोजन और खानपान सम्बन्धी शब्द भी आ जाते हैं। इन शब्दों के प्रयोग से प्रतिपाद्य उपन्यास के शैलीय उपकरणों का जायका बढ़ गया है। भोजन सम्बन्धी शब्दों में दूध, मक्खन, घी, पनीर, परांठे, अंडा–करी, सैंडविच, कॉफी, चाय, लड्डू, रोटी, मूँग की दाल, पेस्ट्री, बिस्किट, फल, बड़ा–साँवर, पॉपकार्न, तन्दूरी, मुर्गी, मटन, बिरयानी, काजू, बैफर्स, सब्जी, केक, भरवाँ बैंगन, अरहर की दाल, सरसों का साग, राजमा–चावल, विभिन्न प्रकार के अचार–चटनी आदि प्रयुक्त किये गये हैं।

कला–संस्कृति सम्बन्धी शब्दावली तो 'मुझे चाँद चाहिये' उपन्यास की जान है। इस शब्दावली की बहुलता से इस उपन्यास का वातावरण प्राचीन और नवीन, पुरातन और आधुनिक जीवन का वातायन बन गया है। देखने योग्य वस्तु यह है कि शैली की दृष्टि से इस उपन्यास में प्रयुक्त शैलीय उपकरण जिस शब्दावली के उपादानों से सज्जित हैं, उनमें प्राचीन और आधुनिक अभिव्यक्ति के दोनों मुहावरे गुँथे हुये हैं। लेखक का शैली की दोनों भंगिमाओं पर असाधारण अधिकार है। इस उपन्यास की शैली में अवसर और सन्दर्भ के अनुकूल विदेशी शब्दों में उर्दू, फारसी और अंग्रेजी शब्दों का भी भूरिशः प्रयोग हुआ है। कुछ ग्राम्य भाषा के भी शब्दों का प्रयोग किया गया है।

तीसरे प्रकरण की सीमा यही है। यहाँ तक मैंने अपने प्रतिपाद्य उपन्यास में शब्द रूपात्मक शैलीय उपकरणों की छानबीन की है।

चतुर्थ प्रकरण का विवेच्य विषय शैली के अर्थ मूलक उपकरणों के माध्यम से प्रस्तुत उपन्यास का विवेचन है।

पर्यायवाचिता का प्रयोग अनवीनत्व के परिहार और भावाभिव्यक्ति को धार देने के लिये किया जाता है। 'मुझे चाँद चाहिये' में भी थोड़े बहुत रूप में यह प्रवृत्ति मिलती है। पर्यायों के प्रयोग से भाव गहरा जाता है। कोई भी शब्द किसी का पर्याय होते हुये पूर्ण पर्याय नहीं होता है क्योंकि उनकी अदला–बदली नहीं की जा सकती है। इसलिये शास्त्रों को छोड़कर साहित्य में आंशिक पर्यायवाचिता

ही मिलती है। लेखक पर्यायों का प्रयोग मात्र भर्ती के लिये नहीं अपने प्रयोजन को सिद्ध करने के लिये करता है। इनके शैलीगत प्रयोग से या तो वातावरण सजीव होता है अथवा पात्र की चारित्रिक विशेषता का उद्‌घाटन होता है अथवा परिस्थिति के प्रभाव का पता चलता है अथवा संवेगात्मक अभिव्यक्ति में तीव्रता आ जाती है। जैसे चौंकना और स्तब्ध हो जाना। चौंकने में क्षणिकता है और स्तब्ध रहने के भाव में व्यापकता तथा गहरायी है। इसी तरह जलने और धधकने में अन्तर है। कमियाँ और गलतियाँ ऊपर से पर्याय लगते हैं किन्तु कमियाँ स्वभावगत और गलतियाँ क्रियागत होती हैं। आँखें और नैन में भी ऐसा ही अन्तर है। आँखों से जो भाव व्यक्त नहीं हुआ उसे लेखक ने 'ऐसे सुदर, मन में सेंध लगाने वाले खंजन नैन' कहकर व्यक्त किया है। 'सेंध लगाने वाले खंजन नैन' से आँखों की बेधक शक्ति व्यंजित होती है। दर्द और गम में भी यही बात है। गम दर्द की गहरी चुभन होती है। पर्यायवाचिता के अन्तर्गत इसी तरह के पर्यायों की भिन्नता का विश्लेषण कर विभिन्न पर्यायों के प्रयोग से 'मुझे चाँद चाहिये' की शैली में जो धार, प्रभविष्णुता आयी है उसे रेखांकित किया गया है। सुरेन्द्र वर्मा ने श्रृंखलाबद्ध और संचयन मूलक पर्यायों का भी प्रयोग किया है।

पर्यायवाचिता की विपरीत आवृत्ति मूलकता है। एकार्थक शब्दों की आवृत्ति को पर्यायवाचिता तथा एक ही शब्द की बारम्बारता को आवृत्ति की प्रवृत्ति कहा जाता है। पर्यायवाचिता में जो एकरसता आ जाती है उससे मुक्ति आवृत्ति परकता से साधित होती है। इसका उद्देश्य अभिव्यंजकता और औचित्य की माँग होती है। आवृत्तिमूलक व्यंजनों, शब्दों से अनुप्रास, यमक, वीप्सा आदि अलंकारों की भी सृष्टि होती है, किन्तु औचित्यपूर्ण, अभिव्यंजक आवृत्ति शैली विज्ञान के अन्तर्गत परिगणित होती है। इस तरह की आवृत्ति का अनुशीलन इस प्रकरण में किया गया है। उससे यह निष्कर्ष निकलता है कि 'मुझे चाँद चाहिये' उपन्यास में शब्दों की आवृत्ति अभिव्यंजक और औचित्यपूर्ण है। इससे भावाभिव्यक्ति तीव्र और प्रभावी हुई है।

वर्मा जी ने आवृत्ति के साधारण प्रयोगों के साथ भय, आवेग, दुःख, पीड़ा, आक्रोश के भावों को व्यक्त करने के लिये तत्तद भावों के द्योतक शब्दों की भावामिव्यंजक प्रयुक्ति की है। उन्होंने प्रेम, खुशी, आशा एवं स्नेह के भावों की अभिव्यक्ति के लिये भी शब्दों की आवृत्ति की है।

यही नही 'मुझे चाँद चाहिये' उपन्यास में एक साथ प्रयुक्त होने वाले शब्दों की भी पुनरावृत्ति की है। इसमें दो उद्देश्य अथवा दो विधेय एक साथ साधित करने की प्रवृत्ति दृष्टिगोचर होती है। ऐसा करने से भावों की अतिशयता द्योतित होती है। लेखक ने ऐसे शब्द युग्मों में **साथ–साथ, धीरे–धीरे, होते–होते, खड़े–खड़े, अलग–अलग, कभी–कभी, अभी–अभी, घर–घर, बार–बार, कुछ–कुछ, कदम–कदम, सुबह–सुबह, एक–एक, अपने–अपने, जल्दी–जल्दी, कौन–कौन, रात–रात, छिपाते–छिपाते, निकलते–निकलते, हँसते–हँसते, डरते–डरते, सुनते–सुनते, क्या–क्या, अपना–अपना, दूर–दूर,** आदि का प्रयोग कर अपनी अभिव्यंजनात्मक क्षमता का परिचय दिया है।

यही नहीं एक साथ प्रयुक्त होने वाले भिन्नार्थी शब्द युग्मों की भी आवृत्ति की गयी है। ऐसे शब्दों में **अता–पता, लुके–छिपे, सड़ा–गला, भाई–बहन, लुंज–पुंज, माँ–बाप, ताने–बाने, सुख–दुःख, आ–जा, तन–मन, उठते–बैठते, पढ़–लिखा, थोड़ी–बहुत, ऊपर–नीचे, ऊँच–नीच, नाचती–गाती, ओर–छोर, आते–जाते, लेन–देन, यहाँ–वहाँ, स्याह–सफेद, लेखा–जोखा, हल्की–फुल्की, उथल–पुथल, हक्का–बक्का, नाचना–गाना, जब–तब, काले–उजले, धूप–छाँह, उतार–चढ़ाव, अस्त्र–शस्त्र, अपने–पराये, अनाप–शनाप, इर्द–गिर्द, गिने–चुने** आदि आते हैं। ऐसे शब्दों के प्रयोग से जहाँ लेखक ने अपने आशय की अतिशय अभिव्यंजना की है वहीं उसके शैलीतत्त्व की अर्थ–सम्बन्धी विशेषता द्विगुणित हुई है। शैली का अर्थ पक्ष भास्वर होकर कई दिशाओं में ध्वनित हो उठा है। इन प्रयोगों के कारण ही इनमें जीवन की बहुलता, संवेगों के उत्थान–पतन की प्रक्रिया, अनुभव की समृद्धि और जीवन्तता उजागर हुई है। शब्दों के बहुआयामी प्रयोग ने इसके भाषा पक्ष को समृद्ध किया है और शैली के अर्थगत उपादानों ने इस महज शब्द–प्रयोग का कोश न बनाकर भाषा के सृजनात्मक उपयोग का निदर्शन बना दिया है।

शैली के अर्थ सम्बन्धी उपकरणों में शब्द शक्तियाँ भी एक सबल पक्ष हैं। प्रस्तुत उपन्यास में अभिधा के अलावा लक्षणा और व्यंजना की अनेक विध प्रयुक्तियों ने इसे एक प्रकार के लक्षक, व्यंजक शब्दों का कोश बना दिया है। देखने में यह वृहद् आकार का उपन्यास है पर शब्द शक्तियों की औचित्यपूर्ण प्रयुक्तियों के कारण यह उपन्यास एक अर्थ संवलित कृति बन गई है। यदि इसमें प्रयुक्त गद्यखण्डों में संवलित लक्षणा, व्यंजना पूर्ण उक्तियों, कथनों, वाक्य विन्यासों का विश्लेषण किया जाये तो इसमें ऐसे अनेकानेक गद्य खण्ड हैं जिनका अर्थ खोलने में इसका टीका भाग और वृहद् हो जायेगा। इसकी भाषा सपाट, सीधी, सरल न होकर वक्र और व्यंजना के पथ का अनुसरण करने वाली है। शब्द शक्तियों में वैसे लक्षणा और व्यंजना के ही उदाहरण बहुत हैं। इस प्रकरण में उनका संक्षिप्त विवेचन ही विधेय समझा गया है। **लक्षणा और व्यंजना–बहुल प्रयोगों के कारण इस उपन्यास की भाषा कहीं–कहीं दुरूह हो गयी है।**

अर्थमूलक शैलीय उपकरणों में गुण भी आते हैं। इनकी सत्ता वाचक शब्द और वाच्य अर्थ दोनों में होती है। ये उभयगत हैं। अर्थगुण के रूप में ये दस गुण अर्थमूलक शैलीय उपकरणों के रूप में विवेचित होते हैं। अर्थ गुणों में प्रतिपाद्य उपन्यास में सुकुमार और मंगलाभाषित शब्दों के सहारे सौकुमार्य और मंगलाभाषित का प्रयोग किया गया है। ओज और प्रसाद की उपस्थिति भी अनेक स्थानों पर उपलब्ध होती है। इनके कारण शैली के आर्थी सौन्दर्य में वृद्धि हुई है।

अर्थमूलक शैलीय उपकरणों में अर्थालंकार भी परिगणित होते हैं। "मुझे चाँद चाहिये" उपन्यास में अर्थालंकारों की बहुलता ने कहीं–कहीं इसे कविता बना दिया है। इसके वाचन से कविता का आनन्द आता है। इन अर्थालंकारों का प्रयोग इतना सहज है कि ये कथ्य की माँग और विवक्षा के आन्तरिक अंग बनकर आये हैं। प्रतिपाद्य उपन्यास में अर्थालंकारों के प्रयोग से अभिव्यंजना

को बल मिला है और अर्थात्मक शैलीय उपकरणों के सौन्दर्य की वृद्धि हुई है।

मुझे चाँद चाहिये में सादृश्य मूलक अलंकारों के साथ अपह्नुति और विरोधाभास का प्रयोग अधिक हुआ है। वस्तु स्थिति, चारित्रिक विशेषताओं के उद्‌घाटन, सौन्दर्य चित्रण, अनुभूति और भावामिव्यंजना में लेखक ने उपमा, रूपक और उत्प्रेक्षा का विशिष्ट प्रयोग किया है। संस्कृत की उपचार वक्रता अथवा मानवीकरण भी इस उपन्यास में भूरिशः प्रयुक्त हुआ है। इसमें कोई सन्देह नहीं कि इस उपन्यास में अर्थालंकारों के प्रयोग ने शैली को चमकदार और अभिव्यक्ति को बहुत सटीक और प्रभावी बना दिया है।

'झील–सी आँखों में सपनों के अक्स ढूँढ़ना', 'सर्प–कुंडली के समान उसके अभिव्यक्ति–द्वार पर संकोच एवं झिझक का पहरा', 'संतान कमान से छूटा तीर', 'राग जै जैवंती की तरह बजना', 'पकी हुई कलियों का टूटने की तरह मचलना', 'माधवी लता के समान विकसित रूप', आदि सादृश्य विधान के प्रयोगों से भाषा में सजीवता और वस्तु में अर्थवत्ता समाहित हो गयी है। वर्मा जी के उपमान भावात्मक, चित्रात्मक और व्यंग्यात्मक हैं। रूपक और उत्प्रेक्षा के प्रयोग से चरित्र चित्रण में भावात्मकता तथा गहरायी की निष्पत्ति हुई है। रूपक अलंकार ने तो इस उपन्यास में शैलीय प्रभावों की सृष्टि कर दी है।

कहावतों और मुहावरों के प्रयोग से प्रतिपाद्य उपन्यास की भाषा में सजीवता और अर्थरूपी शैलीय उपकरणों में एक सहजता आ गयी है। शैली बोल चाल और स्वाभाविकता के निकट पहुँच गयी है।

मुहावरों के द्वारा लेखक ने क्रोध, व्यंग्य, दुःख, प्रशंसा, विवशता, आश्चर्य, प्रसन्नता, क्षोभ आदि अनेक भावों की अभिव्यंजना की है।

मन–ही–मन सिहर उठना, छुटकारे की साँस लेना, घोड़े बेचकर सोना, ढाक के तीन पात, सुर्खाव के पर लगना, कलेजा छलनी होना, अचरज से भरना, खून के आँसू रोना, अपने पाँव पर कुल्हाड़ी मारना, हाथ–पाँव जोड़ना, काटो तो खून न होना, सूर्य को दीपक दिखाना, सोने में सुहागा, बाल–बाल बचना, दर्द से लरज उठना, नींद उड़ना, हड्डी–पसली एक करना, बर्तन खटकना, दो घोड़ों पर सवारी करना, घर में सेंध लगाना, दुम हिलाना, गले लगाना, कलेजे पर पत्थर रखना, आपा न खोना, लोहे के चने चबाना, मुँह न फेरना, सीने में छुरा भोंकना, पौ बारह होना, घावों पर नमक छिड़कना आदि मुहावरों के प्रयोग से भावों की अभिव्यक्ति में तीव्रता भाषा में जिंदादिली, रचना में एक प्रवाह और अर्थ में चोट करने की शक्ति आ गयी है।

अर्थीय शैलीगत उपकरणों में विचलन का स्थान अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। 'मुझे चाँद चाहिये' उपन्यास में विचलन के अनेक विध उदाहरण मिलते हैं। इस अध्याय के अन्तर्गत विचलन के अर्थ और स्वरूप के विवेचन के बाद इसके ध्वनिगत, व्याकरणिक कोटियों में संज्ञा, विशेषण, क्रिया–विशेषण, वाग्भाग विचलन, मानक विचलन, लिंग विचलन, अन्वय विचलन, क्रम–विचलन,

अर्थ–विचलन, आदि रूपों को खोजने का प्रयास किया गया है। निष्कर्ष यह है कि प्रतिपाद्य उपन्यास की भाषा विचलन से पूर्ण है। विचलन–बहुल प्रयोगों के कारण ही 'मुझे चाँद चाहिये' की भाषा सर्जनात्मक मुद्राओं से युक्त हो गयी है।

साहित्य, विशेष रूप से रचनात्मक विधाओं की भाषा प्रचलित भाषा से एकदम भिन्न, विशिष्ट, अनुपम होती है। भाषा यही होती है, शब्दावली यही प्रयुक्त होती है, पर उसका विन्यास प्रसंगोचित प्रयोग ऐसा होता है कि उसके कोणों में, सेटिंग में, अर्थवत्ता में एकदम अन्तर, नवीनता, चमक आ जाती है। इस प्रयोजन की सिद्धि के लिये उसे व्यावहारिक भाषा से हटकर प्रयोग करने पड़ते हैं। भाषा के सामान्य मार्ग से विचलित होकर हटकर किये गये प्रयोग ही विचलन हैं। विचलन में शब्द को पूर्व आसंगों से मुक्तकर नये सन्दर्भों में प्रयुक्त करना पड़ता है। 'मुझे चाँद चाहिये' के लेखक ने ऐसे विचलित प्रयोग कर अर्थमूलक शैलीय उपकरणों को समृद्ध किया है। रचनात्मक भाषा–संरचना में प्रस्तुत उपन्यास एक उपलब्धि है।

विचलन के बाद इसी प्रकरण में चयन के अर्थ, स्वरूप और प्रकार का विवेचन किया गया है, अपने प्रतिपाद्य उपन्यास 'मुझे चाँद चाहिये' में मैंने चयन को ध्वनि, शब्द, वाक्य और अर्थ आदि सभी स्तरों पर खोजकर विवेचित करने का प्रयास किया है। ध्वनीय चयन के अन्तर्गत लेखक ने 'साच्छात', 'लडियाँ', 'बेशरम', 'ढढोलना', 'लच्छिन', 'झकझोरा', 'रुआँसा', 'आशाओं–स्वप्नों', 'आँसुओं–मुस्कानों', 'कुड़बुड़ाई', 'चुराय लियो', 'चैन', 'खंजन नैन', 'कतरना', 'चौंधियाना', 'झनझनाना', आदि ध्वनियों से युक्त शब्दों का चयन कर लेखक ने अपनी अभिव्यंजना को प्रभाव युक्त बनाया है। रूप चयन में लेखक ने अपनी अभिव्यक्ति को जोरदार बनाने के लिये प्रचलित रूपों को न चुनकर शब्द के विशिष्ट रूपों को चुना है। ऐसे शब्दों में 'अलोकांक्षी', 'फर्मायें', 'सौन्दर्य', 'स्तब्ध', 'जताकर', 'सूक्ष्मताओं', 'शारीरिकता', 'गर्माहट', 'दीदियाँ', 'बालिके', 'भँवरियों', 'जिज्जियाँ', 'आईनों', 'कितनों', 'संगियों' आदि शब्दों के विशिष्ट, लीक से हटकर रूपों के चयन द्वारा अपनी शैली के अर्थीय पक्ष को समृद्ध बनाया है।

वाक्य संरचना की दृष्टि से प्रतिपाद्य उपन्यास में सामान्य, संयुक्त और मिश्रित तीनों प्रकार के वाक्यों का चयन किया गया है। संयुक्त वाक्यों में भी योगात्मक, वैकल्पिक विरोधमूलक वाक्यों को चुना गया है। इस उपन्यास में प्रसंग के अनुसार तीव्र और समवेत अभिव्यंजकता के लिये छोटे तथा लम्बे दोनों प्रकार के वाक्यों का चयन किया गया है। कहीं–कहीं लेखक ने ऐसे नकारात्मक वाक्यों का चयन किया है कि उसकी भाव व्यंजना में तीव्रता आ गयी है। लेखक अपने मंतव्य के प्रेषण के प्रति अत्यन्त सजग और सावधान है। नकारात्मक वाक्यों में कई ऐसे वाक्य हैं जो ऊपरी तौर पर सकारात्मक लगते हैं पर अपनी अन्तः प्रकृति में वे पूर्णतः नकारात्मक हैं। इससे वाक्य गर्भित अभिव्यक्ति प्रभावी हो गयी है। कुछ अपूर्ण वाक्यों के भी उदाहरण मिलते हैं।

अर्थमूलक शैलीय उपकरणों का विस्तार विचलन, चयन से होता हुआ समानान्तरता

तक फैला हुआ है। अर्थमूलक शैलीय उपकरणों में समानान्तरता एक महत्त्वपूर्ण उपादान है। प्रारम्भ में इसके अर्थ और स्वरूप विश्लेषण के बाद इसके प्रकारों को रेखांकित किया गया है। समानान्तरता को समता और असमता के आधार पर दो श्रेणियों में बाँटा गया है। एक समता मूलक, दूसरा विरोध मूलक। एक तीसरा भेद भी निरूपित किया गया है जिसे मिश्रित समानान्तरता कहते हैं। इन तीनों समानान्तरताओं के उदाहरण विवेच्य उपन्यास में खोजे गये हैं। भाषिक इकाइयों के आधार पर समानान्तरता के छह भेद होते हैं। ये छह भेद हैं : ध्वनीय, शब्दीय, रूपीय, वाक्यीय, अर्थीय और प्रोक्ति स्तरीय समानान्तरता। प्रोक्ति स्तरीय समानान्तरता के अन्तर्गत अन्तर्पाठीय समानान्तरता को भी विस्तार से खोजा गया है।

समता मूलक समानान्तरता में एक ही भाषिक इकाइयाँ, शब्द बंध, वाक्य गुच्छ या एक आशय के वाक्य बंधों, शब्द गुच्छों की आवृत्ति की जाती है। इनके समानान्तर उल्लेख से पात्रों की आवेगगत अभिव्यक्ति, उनकी भावनायें और तीव्रता से व्यक्त होकर उनके भाव संस्थान को हमारे समक्ष और उद्‌घाटित कर देती हैं। विरोध मूलक समानान्तरता में दो विरोधी भावों को व्यक्त करने वाले समानान्तर प्रयोग किये जाते हैं। इस तरह के प्रयोगों से प्रतिपाद्य उपन्यास में चरित्रों के अन्तर्द्वन्द्व को बखूबी व्यक्त किया गया है। भावाभिव्यक्ति की प्रभविष्णुता बढ़ गयी है। विरोध मूलक समानान्तरता के उदाहरणों के साथ मिश्रित समानान्तरता के उदाहरणों की दृष्टि से भी प्रस्तुत उपन्यास समृद्ध है। मिश्रित समानान्तरता से 'मुझे चाँद चाहिये' के पात्रों के आन्तरिक द्वन्द्व की बड़ी धारदार भाषा में अभिव्यक्ति की गयी है। ध्वनीय समानान्तरता के उदाहरणों के विवेचन क्रम में उन स्थलों का विवेचन किया गया है जहाँ गतिशीलता की प्रवृत्ति है। गीतात्मक स्थलों में वर्ण ध्वनि, स्वर ध्वनियों की बार–बार आवृत्ति की जाती है।

प्रतिपाद्य उपन्यास शब्दीय, रूपीय तथा वाक्यात्मक समानान्तरता की दृष्टि से बहुत समृद्ध है। इस प्रकरण में इस समानान्तरता की भी छानबीन कर अर्थात्मक सौन्दर्य को उपन्यस्त किया गया है। अर्थीय समानान्तरता के भी कुछ उदाहरण मेरे प्रतिपाद्य उपन्यास में मिलते हैं। अर्थीय समानान्तरता जिन स्थलों पर है, उनमें मुश्किल और परेशानी, वर्षा और बारिस, कसा–बँधा, मत और नहीं, आत्मीयता और सौहार्द, उजागर करना और झलका देना, धीरज बाँधे रहना और आपा न खोना, ख्वाहिश और चाह, छोटा और संक्षिप्त, स्वामित्व–जागीर, प्रभुता, सब्जी–भाजी, शिष्ट और शालीन, मदद और सहारा, चाह और इच्छा, समान और एक ही आदि एकार्थी और समानार्थी शब्द हैं। इन शब्दों के एक साथ प्रयोग से तत्तद स्थलों पर आर्थी समानान्तरता उत्पन्न हो गयी है। प्रोक्तिस्तरीय समानान्तरता के कारण भी शैली के अर्थगत गुणों में वृद्धि हुई है। इन शब्दों की समानान्तरता से पात्र के हृदय की भावनायें बढ़े–चढ़े रूप में व्यक्त हुई हैं और उनकी अभिव्यंजकता बढ़ गयी है। शैलीय उपकरणों की प्रयुक्ति का यही प्रयोजन है कि लेखक के मंतव्य को अभिव्यक्ति दे और पात्रों की भावनाओं की सार्थक प्रस्तुति करे और हमारे सामने परिवेश की सजीव छवि खड़ी

कर दे। प्रोक्तिस्तरीय समानान्तरता में एक ही वाक्यबंध, एक ही शब्द बंध की दो बार प्रयुक्ति होती है। विवेच्य, उपन्यास में अन्तर्पाठों की संयोजना ने भी 'मुझे चाँद चाहिये' के अर्थात्मक शैलीय उपकरणों की विशेषता में वृद्धि की है।

ये अर्न्तपाठ लेखक ने प्राचीन काव्यग्रन्थों मेघदूत, रघुवंश, कुमार सम्भव, ऋतुसंहार, गालिब की शायरी आदि से लिये हैं। मूल उद्धरण कम उनका अनुवाद, सारांश, आशय अधिक दिया गया है। सारे अन्तर्पाठ प्रसंगोचित और पात्र के मनोभावों के अनुकूल हैं। एक प्रकार से उपन्यास का कथासूत्र और पात्रों की चारित्रिक विशेषताओं का उद्घाटन, परिवेश की रचना इन्हीं अन्तर्पाठों की समानान्तरता से साधित होता है। 'मुझे चाँद चाहिये' उपन्यास अन्तर्पाठों की चित्र पटी है। लेकिन सारे अन्तर्पाठ 'मुझे चाँद चाहिये' उपन्यास की अन्तर्वस्तु बनकर आते हैं।

प्रस्तुत उपन्यास का मुख्य प्रतिपाद्य रंगमंच और फिल्मों से जुड़ा जीवन है। रंगमंच पर अभिनीत नाटक और फिल्में दर्शकों में चाहे जितनी लोकप्रियता अर्जित कर लें पर रंगमंच कला और फिल्मों का कलात्मक विवेचन, अर्न्तराष्ट्रीय फिल्मों के सन्दर्भ दुर्बोध, अप्रचलित प्रयोगों में आते हैं। यह भी वाक्यात्मक शैलीय उपकरणों का एक पक्ष है। जिसका विवेचन इसी प्रकरण में किया गया है।

प्रकरण पाँच में वाक्यात्मक शैलीय उपकरणों की दृष्टि से प्रतिपाद्य उपन्यास की विवेचना की गयी है। वाक्य के शैली वैज्ञानिक अध्ययन की दृष्टि से तीन स्तरों पर काम किया जाता है। एक तो शब्द भेदों के स्तर पर अर्थात् संज्ञा, सर्वनाम, विशेषण क्रिया, क्रिया विशेषण अव्यय, निपात आदि की अभिव्यंजकता कहाँ तक प्रभावी हुई है इस दृष्टि से। वाक्य रचना की दृष्टि से शब्द क्रम, और अन्विति का शैली वैज्ञानिक विश्लेषण किया जाता है, और तीसरे वाक्यबंध के स्तर पर यह छानबीन की जाती है कि वाक्य के संगठित समूहों से जो अभिव्यंजना झलकती है उसमें कहीं कोई शैलीगत विशेषता है या नहीं।

प्रस्तुत प्रकरण में शब्द भेद में पहले व्यक्तिवाचक संज्ञाओं का शैली वैज्ञानिक अनुशीलन किया गया है। व्यक्तिवाची संज्ञाओं में प्रतिपाद्य उपन्यास के पात्रों के नामों का विश्लेषण किया गया है। उनमें यह दिखाने का प्रयास किया गया है कि इसके प्रमुख पात्रों के जिन नामों का लेखक ने चयन किया है, उसके पीछे उसकी कौन सी दृष्टि काम कर रही थी। नाम क्या विरोधी प्रवृत्तियों को धार देता है अथवा अपने नाम के अन्वर्थ है। या नामों के पीछे कोई व्युत्पत्ति शास्त्र काम कर रहा है।

असल में 'मुझे चाँद चाहिये' बीसवीं शताब्दी के अन्तिम दशक का उपन्यास है। इसलिये इसकी पात्र–रचना वर्गगत कम, व्यष्टिगत अधिक है। इसलिये इस उपन्यास के पात्र प्रेमचन्द की तरह सीधी रेखा में चलने वाले पात्र नहीं हैं। उनमें अन्तर्विरोध अधिक है। यह अन्तर्विरोध का अनुशीलन ही शैली विज्ञान के अन्तर्गत आता है। कुछ पात्रों के नाम उनके गुणों, उनकी व्यक्तिगत विशेषताओं के अनुकूल हैं और कुछ के प्रतिकूल। कुछ के नामों के साथ एक स्थिति तक सामंजस्य

आगे चलकर यह सामंजस्य भंग हो जाता है और उनमें दूसरी विशेषतायें प्रकट होने लगती हैं। शैली तत्त्व की दृष्टि से यही रोमांचकर और चमत्कारपूर्ण है।

इस उपन्यास की मुख्य व्यक्तिवाची संज्ञायें वर्षा वशिष्ठ, हर्ष, चतुर्भुज, डा. अटल, सूर्यभान, रीटा, सुकुमार, अनुपमा, दिव्या, शिवानी, मोहिनी, गायित्री, झल्ली, झुमकी, सुजाता, रोहन, मिट्ठू, सिद्धार्थ, आदि हैं। वाक्यात्मक शैलीय उपकरणों की दृष्टि से प्रस्तुत प्रकरण में उपर्युक्त संज्ञाओं के नाम, उनके अर्थ, उनको धारण करने वाले व्यक्ति के जीवन की प्रवृत्तियों की दृष्टि से उनका तुलनात्मक विवेचन किया गया है। डॉ. अटल, सुकुमार, सिद्धार्थ इन तीन नामों को छोड़कर सभी व्यक्तिवाची संज्ञायें विरोधाभासों से पूर्ण हैं। सुजाता सदा सुजाता रहती है पर हर्ष सदा हर्षदायक नहीं रहता है। वह बाद में तनाव, अशांति और दुःख, चिंता का स्रोत सिद्ध होता है। सर्वाधिक गतिशील नाम वर्षा वशिष्ठ है। वह प्रारम्भ में सिलबिल जैसे स्वभाव की लगती है, पर होश सम्हालते ही वह अपना पारम्परिक, घिसा–पिटा नाम यशोदा त्यागकर वर्षा वशिष्ठ बन जाती है। उसके जीवन में वर्षा की तरह प्रवाह है पर वशिष्ठ नाम के अनुसार, विचार–शक्ति, विश्लेषण की प्रवृत्ति और एक संयम भी है। वर्षा ऋतु की तरह ट्रेजडी क्वीन भी बनती है। जिन पात्रों का वह किरदार निभाती है उन्हीं के गुणों को धारण कर लेती है। उनकी अच्छी बातें ग्रहण कर लेती है। उसका प्रेम तीन व्यक्तियों से होता है पर वह घनिष्ठ सिर्फ हर्ष की बनती है। उसके प्रति निष्ठावान भी बनी रहती है। उसका पूरा समर्पण अपने कैरियर, अपने कलात्मक मूल्यों के प्रति है।

डॉ. अटल अपने सिद्धान्तों के प्रति पूरे अटल हैं। उन्हें अनुशासन, कर्मठता, विनय, नम्रता पसन्द है। वे पूर्ण व्यवस्थित, अनुशासन–बद्ध, दूसरों के प्रति उदार हैं। वे अपने नाम के अनुरूप अटल हैं।

दिव्या कत्याल असाधारण सुन्दरी, अपने विषय की अधिकारी विद्वान, कलात्मक जीवन को समर्पित और एक स्नेही महिला है। यशोदा उर्फ सिलबिल को वर्षा वशिष्ठ बनाने वाली वही हैं। वे रोहित से विवाहकर एक सफल गृहणी अवश्य बनती हैं पर, अपने पूर्व प्रेम को नहीं भूल पाती हैं। उनका जीवन अपने नाम के अनुसार दिव्य न होकर एकदम आधुनिक है। वे वर्षा की सखी, सहेली, गुरु और मित्र हैं।

सर्वाधिक चौंकाने वाला नाम चतुर्भुज है। जिसकी चार भुजायें हों। इस अर्थ के अनुसार रंगमंच के वे हर फन में माहिर कलाकार हैं। उनकी प्रतिभा चारों दिशाओं में फैली है। उनका नाम जैसा है वैसे वे जीवन में नहीं हैं। वे तीन स्त्रियों से विवाह करते हैं। सुकुमार सचमुच में सुकुमार स्वभाव के हैं पर रीटा बिल्कुल पाश्चात्य संस्कृति में पगी है। अनुपमा मूडी और अस्थिर चित्त है। इसी क्षेत्र में उसमें असाधारणता है। वह आवेश में चतुर्भुज से विवाह कर लेती है। चतुर्भुज के रफ जीवन को देखकर वह उससे अलग हो जाती है। शिवानी गौरी की तरह एक निष्ठ नहीं, चारों तरफ बहने वाली है। निष्कर्षतः व्यक्तिवाची संज्ञाओं के प्रयोग में विरोधाभास, गतिशीलता और काव्य के

अनुरूप व्यंजना है।

प्रतिपाद्य उपन्यास में अन्य संज्ञाभिधानों का भी यथास्थान प्रयोग किया गया है। सर्वनाम, विशेषण, क्रियापदों और निपातों के प्रयोग में भी पर्याप्त शैली वैशिष्ट्य मिलता है।

इसी प्रकरण में वाक्य संरचना के अन्तर्गत शब्द–क्रम के विपर्यय युक्त प्रयोगों, अन्विति–भंग, लोकोक्ति, सूक्ति, वाक्यबंधों में, परिच्छेदों, गीतों के शैली वैशिष्ट्य युक्त प्रयोगों का विवेचन किया गया है।

निष्कर्षतः शैली विज्ञान के तात्विक अनुशीलन की दृष्टि से मेरा प्रतिपाद्य उपन्यास अत्यन्त समृद्ध है।

अपना शोध कार्य करते हुये मुझे प्रस्तुत उपन्यास "मुझे चाँद चाहिये" में शोध की दृष्टि से कई दिशायें खुलती नज़र आती हैं। अगर वस्तु और शिल्प की दृष्टि से इस उपन्यास का विवेचन किया जाये तो शोध की एक महत्त्वपूर्ण दिशा खुलेगी। उपन्यास को एक अत्यन्त लचीली विधा माना जाता है। इसमें ढाँचागत कई प्रयोग किये जा सकते हैं। "मुझे चाँद चाहिये" के लेखक ने इस उपन्यास में ढाँचागत जो महत्त्वपूर्ण प्रयोग किया है, वह है नाट्य विधा का प्रत्यावर्तन। लेकिन इस विधा का प्रत्यावर्तन इस खूबी के साथ किया गया है कि वे सारे प्रयोग इसके पात्रों की जीवन–संरचना और इसकी मुख्य संवेदना के केन्द्र बनकर आते हैं। इसमें शोध की एक अन्य दिशा का भी इंगित मिलता है और वह है इसकी भाषा का संवेगात्मक अभिव्यंजना पक्ष। संवेगों की अभिव्यक्ति भाषा व्यवहार को किस तरह बदल देती है इसकी रंगत अगर देखनी हो तो 'मुझे चाँद चाहिये' को पढ़ना चाहिये। मानवीय संवेगों की भाषिक अभिव्यंजना की दृष्टि से प्रस्तुत उपन्यास की भाषा पर एक और शोध की दिशा खुलती है। अपने शोध कार्य के क्रम में मैंने यह बराबर महसूस किया कि नारी का वैवाहिक जीवन और उसकी कलात्मक लालसा उसे किस तरह एक द्वन्द्व का अखाड़ा बना देती है इस दृष्टि से यदि इस उपन्यास की पात्र–संरचना और प्रेम संवेदना का तुलनात्मक अध्ययन किया जाये तो बदलते नारी जीवन के सामाजिक मूल्यों के परिप्रेक्ष्य में शोध की एक नयी दिशा खुल सकती है।

अपने शोधकार्य के दौरान मुझे कुछ ऐसे शब्द प्रयोग मिले हैं जिनके कारण मेरे प्रतिपाद्य उपन्यास का शैली पक्ष बहुत समृद्ध हुआ है। इस दृष्टि से इस उपन्यास में ग्रन्थ नाम, स्थानाभिधान, व्यक्तिनाम और पेड़–पौधों, पहाड़ तथा नदियों के नामों की परिशिष्ट में एक महत्वपूर्ण तालिका दी गई है। इस तालिका से नामाभिधानों के प्रयोग के प्रति लेखक की रुचि का पता चलता है। इससे यह ज्ञात हो जाता है कि अपनी शैली के सौन्दर्य वर्धन के लिये उसने किस–किस क्षेत्रों से शब्दों को चुनकर उनका रचनात्मक विनियोग किया है।

परिशिष्ट

परिशिष्ट – एक

सन्दर्भ ग्रन्थ

क्र.सं.	पुस्तक का नाम	लेखक का नाम	प्रकाशक	वर्ष
1.	अच्छी हिन्दी	रामचन्द्र वर्मा	लोकभारती, इलाहाबाद	
2.	आधुनिक हिन्दी : व्याकरण और रचना	डॉ. वासुदेव नन्दन प्रसाद	भारती भवन, पटना	1973
3.	उपन्यास और लोक जीवन	रैल्फ फॉक्स	पीपुल्स पब्लिशिंग हाउस (प्रा.) लिमिटेड	1980
4.	उपन्यास की भाषा	डॉ. जगदीश नारायण चौबे	बिहार राष्ट्रभाषा परिषद	1985
5.	उपन्यास का यथार्थ और रचनात्मक भाषा	डॉ. परमानन्द श्रीवास्तव	नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली	1976
6.	औचित्य विचार चर्चा	आचार्य क्षेमेन्द्र		
7.	काव्य प्रकाश	मम्मट	ज्ञान मण्डल, वाराणसी	
8.	गोदान	प्रेमचंद	सरस्वती प्रेस इलाहाबाद	
9.	चित्रलेखा का शैली वैज्ञानिक अध्ययन	डॉ. जसपाली चौहान	भावना प्रकाशन, दिल्ली	1999
10.	ध्वन्यालोक	आनन्दवर्द्धन		
11.	ध्वनि–सिद्धान्त तथा तुलनीय साहित्य चिंतन	डॉ. वच्चू लाल अवस्थी 'ज्ञान'	मध्य प्रदेश हिन्दी ग्रंथ अकादमी	1972
12.	नयी कविता : स्वरूप और समस्याएँ	डॉ. जगदीश गुप्त	भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन	1969
13.	निराला की काव्य–भाषा	डॉ. शिवशंकर सिंह		
14.	पल्लव की भूमिका	पन्त		
15.	परिष्कृत हिन्दी व्याकरण	डॉ. बदरीनाथ कपूर	मीनाक्षी प्रकाशन, मेरठ	
16.	भारतीय कहावत संग्रह	सं. विश्वनाथ दिनकर नरवणे	प्र. विश्वनाथ दिनकर नरवणे, पूना	
17.	भाषा तत्व दीपिका			
18.	मुहावरा–मीमांसा	डॉ. ओमप्रकाश गुप्त	बिहार राष्ट्रभाषा परिषद, पटना	1960

क्र.सं.	पुस्तक का नाम	लेखक का नाम	प्रकाशक	वर्ष
19.	मानक हिन्दी का स्वरूप	भोलानाथ तिवारी	प्रभात प्रकाशन, दिल्ली	1986
20.	मानक हिन्दी कोश प्रथम खंड	सं. रामचन्द्र वर्मा	हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग	1966
21.	मानक हिन्दी कोश द्वितीय खंड	सं. रामचन्द्र वर्मा	हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग	1966
22.	मानक हिन्दी कोश तृतीय खंड	सं. रामचन्द्र वर्मा	हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग	1966
23.	मानक हिन्दी कोश चौथा खंड	सं. रामचन्द्र वर्मा	हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग	1965
24.	मानक हिन्दी कोश पाचवाँ खंड	सं. रामचन्द्र वर्मा	हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग	1965
25.	रीति विज्ञान	डॉ. विद्यानिवास मिश्र	राधाकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली	1973
26.	वेंकटेश्वर से विश्वनाथ	पं. जगन्नाथ तिवारी डॉ. नगेन्द्र	राजपाल एण्ड सन्स	1980
27.	'वक्रोक्ति जीवितम्'	डॉ. हरवंश लाल शर्मा डॉ. सत्येन्द्र	राधाकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली	1973
28.	शैली	डॉ. रामचन्द्र प्रसाद	बिहार हिन्दी ग्रंथ अकादमी	1973
29.	शिव प्रसाद सिंह : सृष्टा और सृष्टि	डॉ. शीतांशु,	वाणी प्रकाशन नई दिल्ली	
30.	शैली विज्ञान	डॉ. भोलानाथ तिवारी	शब्दकार	1977
31.	शैली विज्ञान और प्रेमचन्द्र की भाषा	डॉ. सुरेश कुमार	दि मैकमिलन कंपनी ऑफ इंडिया लि.	1978
32.	शैली और शैली विश्लेषण	डॉ. पाण्डेय शशिभूषण 'शीतांशु'	वाणी प्रकाशन दिल्ली	1996
33.	श्री लाल शुक्ल के उपन्यासों का शैली वैज्ञानिक विश्लेषण	डॉ. कश्मीरी लाल सैनी	अमृतसर	
34.	संधान 84	सं. जीवन प्रकाश जोशी	दिल्ली	

क्र.सं.	पुस्तक का नाम	लेखक का नाम	प्रकाशक	वर्ष
35.	संरचनात्मक शैली विज्ञान	डॉ. रवीन्द्र नाथ श्रीवास्तव	आलेख प्रकाशन, दिल्ली	1979
36.	सामाजिक यथार्थ और कथाभाषा	सं. सच्चिदानन्द वात्स्यायन	नेशनल पब्लिशिंग हाउस	1986
37.	सर्वनाम, अव्यय और कारक चिह्न	डॉ. सीता किशोर	आराधना ब्रदर्स, कानपुर	1989
38.	समांतर कोश, भाग 1	अरविन्द कुमार कुसुम कुमार	नेशनल बुक ट्रस्ट, इंडिया	
39.	समांतर कोश भाग 2	अरविन्द कुमार कुसुम कुमार	नेशनल बुक ट्रस्ट, इंडिया	
40.	साहित्य वर्ष 11, अंक 4, फरवरी 1961			
41.	साहित्यदर्पण	विश्वनाथ	नागरी प्रचारिणी सभा	
42.	साहित्यालोचन	श्याम सुन्दर दास	नागरी प्रचारिणी सभा	
43.	हिन्दी व्याकरण	पं. कामता प्रसाद गुरु	नागरी प्रचारिणी सभा	1992
44.	हिन्दी शब्द कोष	डॉ. हरदेव बाहरी	राजपाल एण्ड सन्स	1991
45.	हिन्दी भाषा संरचना	डॉ.चन्द्रिकाप्रसाद दीक्षित डॉ. प्रेमनारायण अवस्थी	साहित्य रत्नालय, कानपुर	1995
46.	हिन्दी भाषा : स्वरूप तथा विकास	कैलाश चन्द्र भाटिया मोतीलाल चतुर्वेदी	प्रभात प्रकाशन, दिल्ली	1989
47.	हिन्दी उपन्यास : शिल्प और प्रयोग	डॉ. त्रिभुवन सिंह	हिन्दी प्रचारक संस्थान	1973
48.	हिन्दी व्याकरण	डॉ. जाल्मन दीमशित्स	रादुगा प्रकाशन मास्को	1983
49.	न्यू इंग्लिश डिक्शनरी			
50.	लेंग्वेज आफ दी फिक्शन	डेविड लोज		
51.	दी लेंग्वेज एंड दी रेस्पोन्सिबिलिटी			
52.	रीडिंग ए नोवेल	वाल्टर एलेन		
53.	लिंग्विस्टिक्स एण्ड स्टाइल	जोन स्पेन्सर एण्ड माइकेल ग्रेगोगी		
54.	द साइन्स ऑफ इंग्लिश वर्स	सिडनी लेमियर		

क्र.सं.	पुस्तक का नाम	लेखक का नाम	प्रकाशक	वर्ष
55.	एनाटोमी ऑफ ड्रामा	मार्जरी बोल्टन		
56.	A Linguistic guide to English	G.N. Leech		
57.	कम्परेटिव एस्थेटिक्स, खण्ड 1			
58.	नोवलिस्ट ऑन दी नोविल	आँन्द्रे ग्रिड		
59.	डॉयलॉग्स : रोमन याकोब्सन एवं क्रिस्टिनापोमोर्स्का		लंदन प्रेस कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी,	1980
60.	इंगलिश प्रोज स्टाइल	हर्बट रीड		
61.	लिंगुस्टिक एण्ड लिटरेचर	रेमण्ड		
62.	हिन्दी सेमैंटिक्स	हरदेव बाहरी		
63.	ओरिजिन ऑफ लैंग्वेज			
64.	Oxford Advanced Learner's Dictionary			
65.	'स्टाइल इन दि फ्रेंच नावेल	एस. उल्मान		
66.	सैमेंटिक्स	एस. उल्मान		
67.	थियरी ऑफ लिटरेचर	वेलेक एण्ड वारेन		

पत्र पत्रिकायें

1. दस्तावेज 68, गोरखपुर
2. भाषा – केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय
3. अमर उजाला 4 जुलाई 1998
4. हंस, जुलाई, 1994

परिशिष्ट–दो

नामानुक्रमणिका

प्रतिपाद्य उपन्यास में प्रयुक्त ग्रन्थ, व्यक्ति नाम, स्थान नाम

स्थानाभिधान

व्यक्ति नाम

पेड़ पौधे

पहाड़

नदियाँ